KERALA JYO

Vol. 22 1987-88

केरल ज्योति

नई दिल्ली में राजभाषा सम्मेलन का उद्घाटन

केरल हिन्दी प्रचार सभा

केरल ज्योति

लेखकों से निवेदन

हिन्दी प्रचार, हिन्दी शिक्षण, भारतीय भाषायें, भारतीय साहित्य, भारतीय संस्कृति जैसे विषयों पर लिखे गये उच्च स्तरीय सचित्र लेखों व संगोष्ठी समाचारों का स्वागत किया जायेगा ।

हिन्दीतर प्रान्तों की सांस्कृतिक, साहित्यिक, कलात्मक विशेषताओं पर लिखी गयी मौलिक और अनूदित रचनाओं को और हिन्दीतर भारतीय भाषाओं की उत्तम रचनाओं के अनुवादों को प्राथमिकता दी जायेगी ।

पांडुलिपियाँ साफ अक्षरों में लिख कर या टाइप करके भेजें । कार्बन प्रतियाँ स्वीकृत नहीं होंगी ।

मुखचित्र : अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ के तत्वावधान में नई दिल्ली में मार्च 1987 में आयोजित राजभाषा सम्मेलन का उद्घाटन श्रीमती० कृष्णा साही (राज्य मंत्री, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार) कर रही हैं। उनकी दायीं ओर संघ के सचिव प्रो० रामलाल पारीख और बायीं ओर संघ के कार्यालय सचिव श्री० जगदीश प्रसाद शर्मा खडे हैं ।

दूरभाष : 61378 तार : "जय हिन्दी"

पुष्प 22
दल 1
एक प्रति—1 रु०
वार्षिक—10 रु०

सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका

अप्रैल 1987

आवश्यकता है आत्मविश्वास की

हॉल ही में केन्द्र सरकार के वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग के तत्वावधान में तिरुवनन्तपुरम में एक संगोष्ठी आयोजित हुई। संगोष्ठी का विषय था 'विश्वविद्यालय स्तर पर शिक्षा माध्यम-भारतीय भाषायें'।

संगोष्ठी ने कुछ महत्वपूर्ण तथ्य हमारे सामने उपस्थित किये हैं जो आगे के हमारे कार्यक्रम निश्चित करने में सहायक हो सकते हैं।

संगोष्ठी का उद्घाटन करते हुए केन्द्र संसदीय कार्य राज्य मंत्री श्री. एम. एस. जेकब ने यह संदेह उठाया कि भारतीय भाषायें उच्च शिक्षा का माध्यम बनने में सक्षम हो चुकी हैं अथवा नहीं। उन्होंने यह सुझाव भी दिया कि भारतीय भाषाओं के शीघ्रतम विकास केलिए पर्याप्त धन लगाया जाये।

भारतीय भाषाओं के विविध विद्वानों ने संगोष्ठी में जो विचार व्यक्त किये उन से स्पष्ट है कि गत बीस वर्षों के प्रयत्न से भारतीय भाषायें वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावलियों एवं ग्रन्थों से इस हद तक विकसित हो चुकी हैं कि विश्वविद्यालय स्तरीय शिक्षा भी इन भाषाओं से अनायास दी जा सकती है। पैन इन्डियन टेरमिनोलजी के अनेकों ऐसे शब्द भी उपलब्ध हैं जो सभी भारतीय भाषाओं में समान रूप से प्रयुक्त किये जा सकते हैं।

संगोष्ठी में इस बात पर भी ज़ोर दिया गया कि जिस प्रकार जापान, चीन, रूस जैसे देशों में स्थानीय भाषाओं को विज्ञान सहित सभी

इस अंक में

विषयों की शिक्षा का माध्यम बनाया गया है उसी प्रकार भारत में भारतीय भाषाओं को सभी विषयों के हर स्तर के अध्यापन का माध्यम बनाया जाय ताकि औपचारिक व अनौपचारिक शिक्षा द्वारा ज्ञान पाने और व्यक्तित्व को विकसित करने का समान व पूर्ण अवसर हर इच्छुक व समर्थ नागरिक को मिल सके और तद्वारा देश को प्रजातंत्र के सुपरिणाम भोगने को मिल सकें। इस कारण भी यह अत्यंत आवश्यक बताया गया कि मातृभाषा द्वारा सिखाये जाने पर ही विद्यार्थी किसी विषय का गहरा ज्ञान प्राप्त कर सकेगा और उस विषय को अपने मौलिक अनुसंधान से संपुष्ट कर सकेगा।

जैसे संगोष्ठी में वैज्ञानिक व तकनीकी शब्दावली आयोग के अध्यक्ष पद्मश्री डा० मलिक मुहम्मद ने बताया आज आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय शिक्षकों एवं शिक्षा विदों में यह आत्मविश्वास उत्पन्न किया जाये कि भारतीय भाषायें आज किसी भी स्तर पर किसी भी विषय की शिक्षा का उचित और प्रभावी माध्यम बन सकती है।

यह आत्मविश्वास कैसे उत्पन्न करें ? यही समस्या है।

नयी दिल्ली में आयोजित राजभाषा सम्मेलन की उपलब्धियाँ

अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ, नई दिल्ली द्वारा दिनांक 21–22 मार्च, 1987 को नई दिल्ली के सप्रू हाउस, के सभागार में राजभाषा सम्मेलन का आयोजन किया गया। सम्मेलन में संघ की सदस्य संस्थाओं के प्रतिनिधियों के अतिरिक्त भारत सरकार के मंत्रालयों के हिन्दी अधिकारियों, भाषा संस्थानों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन का उद्घाटन श्रीमती कृष्णा साही, शिक्षा एवं संस्कृति राज्य मंत्री ने किया। संस्था संघ के अध्यक्ष श्री गंगाशरण सिंह ने समारोह की अध्यक्षता की। प्रारंभ में श्रीमती बी. एस. शांताबाई एवं श्रीमती एस. सुलोचना द्वारा प्रस्तुत सरस्वती प्रार्थना से कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। संघ के सचिव, प्रो० रामलाल पारीख ने सम्मेलन के मुख्य अतिथियों एवं उपस्थित प्रतिनिधियों एवं महानुभावों का स्वागत किया। प्रो० पारीखजी ने संघ की स्थापना तथा उसके उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए संघ के कार्यक्रमों पर प्रकाश डाला। उन्होंने राज्य शिक्षा मंत्री, श्रीमती कृष्णा साही तथा संयुक्त सचिव श्रीमती कुमुद बंसल के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त किया।

उद्घाटन भाषण : श्रीमती कृष्णा साही

समारोह का उद्घाटन करते हुए राज्य शिक्षा मंत्री श्रीमती कृष्णा साही ने अपने भाषण में कहा :—

"अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ के तत्वावधान में आयोजित राजभाषा सम्मेलन का उद्घाटन करने में मैं गौरव और हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव कर रही हूँ। गौरव इसलिए कि इस अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ की स्थापना

स्वर्गीय प्रधान मंत्री नेहरूजी की प्रेरणा के इस स्रोत को स्वर्गीय प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने सिंचित, पल्लवित एवं पुष्पित किया है।

श्रीमती० कृष्णा शाही

हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार की यह महत्वपूर्ण संस्था राष्ट्रीय भावना का संचार एवं सभी भारतीयों के हृदय में एकात्मकता के उद्देश्य से स्थापित हुई है। "एक हृदय हो भारत जननी" को मूल मंत्र माना है।

इसकी स्थापना 1964 में हुई। स्वर्गीय प्रधान मंत्री नेहरूजी की प्रेरणा के इस स्रोत को स्वर्गीया प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने

राष्ट्रशिल्पी पं० जवाहरलाल नेहरू

राष्ट्रमाता श्रीमती इन्दिरा गांधी

सिंचित, पिल्लवित एवं पुष्पित किया है।

1972 व 1976 में राजभाषा सम्मेलन किया गया था। इस सम्मेलन के पश्चात ही हिन्दी संस्था संघ की

महत्ता का एहसास लोगों को हुआ और तब से सेवा भावना से प्रेरित यह कार्यरत है।

हमारे बहुभाषा-भाषी विशाल देश के विभिन्न प्रदेशों में सैकड़ों स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाएँ इस शताब्दी के पूर्वार्द्ध से ही हिन्दी प्रचार प्रसार का कार्य करती आ रही है। उन्हें एक मंच पर लाने, उनके कार्यों में समन्वय स्थापित करने, उनकी मान्यता प्राप्त हिन्दी परीक्षाओं में स्तरीय एकरूपता निर्वाह कराने एवं भारतीय जनमानस में राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति आस्था और अनुकूलता बढाने में अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ का ऐतिहासिक योगदान है।

सचमुच, यह संस्था भारत के संविधान की धारा 351 के तहत हिन्दी के प्रचार और विकास केलिए अर्पित एक प्रतिनिधि और समर्थ राष्ट्रीय मंच है। बाबू गंगाशरण सिंह जी जैसे तपःपूत वरिष्ठ हिन्दी सेवी का नेतृत्व और पारीख जी एवं शंकरराव लोंढ़े जी जैसे राष्ट्रभाषा के लिए समर्पित व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त है। यह संस्था संघ जिस निष्ठा और दूरदर्शिता के साथ हिन्दी के विकास तथा राजभाषा के रूप में कार्य कर रहा है, वह प्रशंसनीय है। प्रचारात्मक साहित्यिक तथा शैक्षणिक कार्यक्रमों को आगे बढ़ा रहा है, उसके लिए मैं इस संस्था संघ की हार्दिक सराहना करती हूँ। मुझे विभिन्न स्रोतों से इस बात की प्रामाणिक जानकारी है कि संस्था संघ द्वारा समय समय पर आयोजित क्षेत्रीय शिविरों, कार्यकर्ता शिविरों, हिन्दीतर प्रदेशों के विद्वानों की भाषणमालाओं तथा हिन्दीतर भाषी

भारत में विभिन्न भाषाओं के बीच में जैसी समानता मिलती है वैसी विश्व में कहीं भी नहीं।

वरिष्ठ साहित्यकारों की हिन्दी प्रदेशों में सद्भावना यात्राओं का अपार स्वागत केवल हमारे साहित्य-प्रेमी बन्धुओं ने ही नहीं, आम जनता ने भी किया है।

मुझे आशा ही नहीं, विश्वास भी है कि यह संस्था संघ इसी तरह हिन्दी सेवा के माध्यम से हमारे विशाल देश के विभिन्न प्रदेशों के बीच एक उर्वर सांस्कृतिक संबंध बनाए रखेगा और हमारे राष्ट्र को उस भावात्मक एकता को दृढ़तर बनाएगा, जिसे कमजोर करने केलिए अनेक पृथकतावादी तथा विखण्डनकारी

प्रवृत्तियाँ हमारे देश में अभी नए सिरे से अपना सिर उठा रही हैं।

भारत एक विशाल और बहुभाषी राज्य है। यहाँ आर्य, द्रविड़, केरल किरात आदि परिवारों की अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं। सामान्यत: भारत की बहुभाषिकता से अधिक उल्लेखनीय यह है कि भारत में विभिन्न भाषाओं के बीच में जैसी समानता मिलती है वैसी विश्व में कहीं भी नहीं। यही कारण है कि एक भाषा के बोलनेवाले व्यक्ति अपने आसपास की सभी दूसरी भाषाओं को सहज ही समझ लेते हैं और थोड़े से प्रयास से उनमें अपने आपको अभिव्यक्त भी मान लेते हैं। इसलिए भारत में एक कोने से दूसरे कोने तक सम्पर्क सूत्र कहीं टूटता। चंद नासमझ लोग देश की इस विलक्षण शक्ति को नहीं पहचानते और क्षेत्रीयता के मायाजाल की ओर आकर्षित होते हैं। लेकिन सर्वपल्ली डॉ० राधाकृष्णन ने ठीक ही कहा है "भविष्य की आस्था सहयोग में है, अपनी पृथक पहचान में नहीं। आपका, हमारा और सभी सजग लोगों का कर्तव्य है कि इस सहयोग की भावना को प्रोत्साहित करें।

कुछ लोगों की यह भ्रान्त धारणा है कि केवल सरकार के संरक्षण से किसी भाषा का विकास हो सकता है या राजकीय भाषा के रूप में किसी भाषा को शत-प्रतिशत प्रतिष्ठित किया जा सकता है। मैं समझती हूँ कि इस दिशा सरकारी स्तर पर तेज कदम, कोशिशों की जरूरत तो है ही, हमारे जनतान्त्रिक ढाँचे में हमारे भाषाई लक्ष्य की प्राप्ति केलिए स्वैच्छिक संस्थाओं के विशेष योगदान की बहुत बड़ी आवश्यकता है ताकि हमारी राष्ट्रभाषा हिन्दी के विकास और प्रयोग केलिए देश के कोने कोने में अपेक्षित जनमानस तैयार हो सके।

हमारे जनतान्त्रित ढाँचे में हमारे भाषाई लक्ष्य की प्राप्ति के लिए स्वैच्छिक संस्थाओं के विशेष योगदान की बहुत बड़ी आवश्यकता है ताकि हमारी राष्ट्रभाषा हिन्दी के विकास और प्रयोग के लिए देश के कोने कोने में अपेक्षित जन-मानस तैयार हो सके।

हमें इसके लिए हर्ष है कि स्वैच्छिक संस्थाओं की इस अहम भूमिका के प्रति अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ सतत् जागरूक है ।

हम सभी इस तथ्य से अवगत हैं कि हिन्दी भारत की कुल जनसंख्या में बहुत बडे प्रतिशत द्वारा बोली और समझी जाती है । इतना ही नहीं,

हिन्दी इन दिनों चक्रव्यूह में फंसी हुई है, जैसे अभिमन्यु फँसा हुआ था उसमें से साफ निकल आना वाँछनीय ही नहीं, अपितु आवश्यक भी है ।

हिन्दी भारतवर्ष के सर्वाधिक विस्तृत क्षेत्र में बोली जानेवाली भाषा है । देश के समूचे क्षेत्रफल के आठ प्रतिशत भू-भाग में हिन्दी बोली जाती है । इन आंकडों और तथ्यों से स्पष्ट है कि हिन्दी वस्तुत: हमारे देश की सर्वाधिक प्रचलित भाषा है । हिन्दी इन दिनों चक्रव्यूह में फँसी हुई है, जैसे अभिमन्यु फ़ँसा हुआ था उसमें से साफ निकल आना वाँछनीय ही नहीं, अपितु आवश्यक भी है ।

स्वामी दयानन्द, महात्मा गांधी, एनी बेसेंट, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, काका कालेलकर इत्यादि हमारे सभी राजनैतिक और सांस्कृतिक नेता इस बात से सहमत थे कि हिन्दी के द्वारा ही सम्पूर्ण भारतवर्ष को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है । एनी बेसेंट तो यहाँ तक कहा करती थी कि हिन्दी सीखने का कार्य एक ऐसा त्याग है, जिसे भारतवासियों को राष्ट्रीय एकता के हित में करना चाहिए ।

आज़ादी के पहले से ही हिन्दी अघोषित रूप में हमारे देश की संपर्क भाषा रही है । हमारे तीर्थ स्थान चाहे दक्षिण में हों, पूर्व या पश्चिम के सागर तट पर हों अथवा पश्चिम के मरु तीर्थ हो या हिमाचल के पर्वतीय अंचल में हों, भारत के इन सभी तीर्थ स्थानों में लोक व्यवहार की भाषा हिन्दी ही रही है । हिन्दी को प्रादेशिकता से ऊपर उठाकर उसे सार्वदेशिक रूप देने में हमारे देश के साधु संतों ने बहुत बड़ी भूमिका अदा की है, जिसका प्रमाण हमें सघुक्कड़ी और केरल की गोसाई भाषा के रूप में मिलता है । सम्भवत: हिन्दी के इस व्यापक प्रचार प्रसार और उसका अन्तर्निहित सामर्थ्य को दृष्टिगत रखते

हुए भारत की कई देशी रियासतों ने भारतीय संविधान सभा द्वारा हिन्दी को राजभाषा घोषित किए जाने के पूर्व से ही हिन्दी को अपने प्रशासन की भाषा का गौरवपूर्ण स्थान दे दिया था।

हम सभी भारतीयों का, भारतीय संविधान के प्रति उत्तरदायी नागरिकों का यह पुनीत कर्तव्य है कि

हिन्दी एक समर्थ राष्ट्रभाषा, राजभाषा या सम्पर्क भाषा के रूप में तभी प्रतिष्ठित हो सकेगी, जब इसका सम्बन्ध देश के अर्थतंत्र, वाणिज्य, व्यवसाय, मौद्रिक प्रचलन, अधिकोषण, राजनय, दूर संचार, समुद्री यातायात इत्यादि के विभिन्न प्रभागों से घनिष्ठ रूप में जुड़ सकेगा।

हम हिन्दी को अपने राष्ट्र के पहचान चिह्न के रूप में एक मौलिक राष्ट्र की अस्मिता के अभिव्यक्ति माध्यम के रूप में तथा एक समर्थ राष्ट्रभाषा के रूप में सतत् विकसित करते रहे। हमें यह स्मरण रखना है कि हिन्दी एक समर्थ राष्ट्रभाषा, राजभाषा या सम्पर्क भाषा के रूप में तभी प्रतिष्ठित हो सकेगी, जब इसका सम्बन्ध देश के अर्थतंत्र, वाणिज्य, व्यवसाय, मौद्रिक प्रचलन, अधिकोषण, राजनय, दूर संचार; समुद्री यातायात इत्यादि के विभिन्न प्रभागों से घनिष्ठ रूप में जुड़ सकेगा।

मुझे महर्षि अरविन्द की एक पंक्ति याद आ रही है—मनुष्य की महत्ता इसमें नहीं है कि वह क्या है, इसमें है कि वह क्या कुछ सम्भव बन पाता है। हिन्दी की महत्ता भी इस बात में निहित है कि वह क्या कुछ सम्भव बन पाती है। असीम संभावनाओं की निरन्तर आहट हम सुन रहे हैं। हमें लगन और परिश्रम के साथ मंजिल की ओर बढ़ते जाना है। जो आस्थावान हैं वे मंजिल तो पाते ही हैं, भले ही कितनी भी कठिनाइयों का सामना करना पड़े। गुरुदेव रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने आस्थावान की लगनशीलता के बारे में लिखा है:—

ऊँची, पहाड़ी, पथरीली राह पर
निर्मम, जलती हुई बालू पर पाँव रख
आगे बढ़ता है आस्थावान व्यक्ति।

समय समय पर जब भी हिन्दी का राजनीतिक क्षेत्रों में विरोध हुआ है तब हिन्दी के राष्ट्रीय व्यक्तित्व को स्पष्ट करते हुए हिन्दी केलिये अनुकूल जनमत प्राप्त करने की दिशा में इन

समय समय पर जब भी हिन्दी का राजनीतिक क्षेत्रों में विरोध हुआ है तब हिन्दी के राष्ट्रीय व्यक्तित्व को स्पष्ट करते हुए हिन्दी के लिये अनुकूल जनमत प्राप्त करने की दिशा में इन संस्थाओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही है।

संस्थाओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही है।

इन स्वैच्छिक संस्थाओं के कार्यकर्ता राष्ट्रीय भावना और सेवा भाव से प्रेरित होकर हिन्दी की सेवा में डटे रहे हैं।

हिन्दी आज राजभाषा बनी है तो इसके पीछे एक लम्बी कहानी त्याग और संघर्ष की है। आज विदेशों में भी हिन्दी पनप रही है, लोग शोध कर रहे हैं। प्रसन्नता और उत्साह की बात है कि दूतावासों में भी हिन्दी पदाधिकारियों की नियुक्तियाँ हुई हैं।

दोषपूर्ण शिक्षानीति में परिवर्तन कर नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में बनाई गई है।

मैं इन्हीं शब्दों के साथ अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ के तत्वावधान में आयोजित इस राजभाषा सम्मेलन का उद्घाटन करती हूँ। दूर दूर से आए हुए विद्वानों, हिन्दी सेवियों और हिन्दी प्रचारकों का आदरपूर्वक अभिवादन करती हूँ तथा हिन्दी संस्था संघ का धन्यवाद करती हूँ।

श्रीमती कुसुम बंसल

इसके बाद मानव संसाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा विभाग में संयुक्त सचिव, श्रीमती कुसुम बंसल ने कहा कि संस्थाओं के कार्यकर्ता निष्ठा और लगन से जुटे हुए हैं। संस्थाओं ने हिन्दी के प्रचार प्रसार में महत्वपूर्ण कार्य किया है। उन्होंने सुझाव दिया कि हिन्दी प्रचार प्रसार के साथ साथ अन्य भाषाओं एवं अन्य क्षेत्रों में काम करनेवाले लोगों को छोटी छोटी संगोष्ठियाँ आयोजित कर आपस में आदान प्रदान, संगोष्ठी आदि को बढ़ावा देना चाहिए। हिन्दी के प्रचार प्रसार के साथ साथ संस्थाएँ अन्य रचनात्मक कार्यों को भी अपनाएँ तो अच्छा होगा। उन्होंने आश्वासन दिया कि शिक्षा मंत्रालय हिन्दी के प्रचार प्रसार में संस्थाओं की आवश्यक मदद करता रहेगा। हिन्दी प्रचार प्रसार के कार्य में कोई रुकावट या कठिनाई हो तो आप

लोग कभी भी मिल सकते हैं। अपनी समस्याओं के बारे में, कार्यों के बारे विचार विमर्श कर सकते हैं।

डा० गंगाशरण सिंह

संघ के अध्यक्ष डा० गंगाशरण सिंह ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि संस्था संघ की ओर से आयोजित इस राजभाषा सम्मेलन में राज्य शिक्षा मंत्री, श्रीमती कृष्णा साही की उपस्थिति से संस्थाओं को प्रेरणा और मार्गदर्शन मिला है। संघ की ओर से मैं उनका आभार मानता हूँ। राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन के बारे में मूल्यांकन करने के उद्देश्य से राजभाषा सम्मेलन का आयोजन किया गया है। विभिन्न प्रदेशों में वहाँ की भाषाओं के द्वारा काफी कार्य किया जाने लगा है। प्रदेशों में जब प्रादेशिक भाषाओं की मांग बढ़ेगी, कार्य बढ़ेगा तो निश्चित रूप से केन्द्र में भी हिन्दी के कार्यान्वयन की दिशा में गति आएगी। उन्होंने आशा व्यक्त की कि श्रीमती कृष्णा साही जी के आने के बाद "हिन्दी चक्रव्यूह को तोड़कर बाहर निकल आएगी।"

प्रदेशों में जब प्रादेशिक भाषाओं की मांग बढ़ेगी, कार्य बढ़ेगा तो निश्चित रूप से केन्द्र में भी हिन्दी के कार्यान्वयन की दिशा में गति आएगी।

गंगा बाबू जी ने कहा कि हिन्दी में काम करनेवाले अपने आपको हीन भावना से दूर रखें। वे एक राष्ट्रीय महत्व के कार्य में लगे हैं। अब तक संस्थाओं के कार्यकर्ता हिन्दी को एक राष्ट्रीय काम मानकर इस कार्य में लगे हैं।

श्री. शंकर राव लोंढे

संघ के कोषाध्यक्ष एवं राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के सचिव श्री. शंकरराव लोंढे ने मुख्य अतिथियों, संस्थाओं के प्रतिनिधियों एवं उपस्थित महानुभावों के प्रति धन्यवाद ज्ञापित किया। उन्होंने आशा व्यक्त की कि राज्य शिक्षा मंत्री एवं संयुक्त शिक्षा सचिव की उपस्थिति से हिन्दी प्रचार व प्रसार को बल मिलेगा। शिक्षा मंत्रालय में भी हिन्दी के कार्य में गति आएगी।

अपराह्न में "राजभाषा के रूप में हिन्दी एवं प्रादेशिक भाषाओं के प्रयोग में आनेवाली कठिनाइयाँ और उनका समाधान" विषय पर संगोष्ठी आयोजित की गई। गोष्ठी में डॉ० राजकिशोर पाण्डेय, सचिव, हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद ने

विषय का प्रवर्तन किया श्री. एम. सुब्रह्मण्यम, पूर्व सचिव, कृषि मंत्रालय, मुख्य अतिथि थे। श्री. हरिबाबू कंसल, पूर्व उपसचिव, गृह मंत्रालय, डॉ० महेशचन्द्र गुप्त, निदेशक, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय तथा श्री. मदन गुप्त, निदेशक, राजभाषा विभाग, लघु उद्योग संस्थान विकास संगठन ने अपने वक्तव्य प्रस्तुत किए।

इसके बाद गीत एवं नाट्य प्रभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय के विभागीय कलाकारों द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया जो बहुत ही आकर्षक एवं समय सापेक्ष था। विभिन्न प्रदेशों के लोक नृत्य प्रस्तुत किए गए।

हिन्दी की स्थिति और विस्तार के उपाय

दिनांक 22 मार्च, 1987 को प्रातः 10 बजे "सरकारी कामकाज के व्यवहार के माध्यम के रूप में हिन्दी की स्थिति और उसके विस्तार के उपाय" विषय पर संगोष्ठी आयोजित की गई। संगोष्ठी का विषय प्रवंतन डा० मो. दि. पराडकर, कुलपति, बम्बई हिन्दी विद्यापीठ, बम्बई ने किया। संगोष्ठी में संघ के कार्यालय सचिव, श्री जगदीश प्रसाद शर्मा ने राजभाषा का कार्यान्वयन के सम्बन्ध में संविधान में हिन्दी की स्थिति एवं वास्तविक स्थिति की चर्चा करते हुए लिखित भाषण दिया। श्री. वी. के शर्मा, अपर सचिव, राजभाषा विधायी आयोग, विधि एवं न्याय मंत्रालय' डॉ० नारायण दत्त पालीवाल, उप-सचिव (भाषा), दिल्ली प्रशासन एवं सचिव, हिन्दी अकादमी, दिल्ली ने अपने वक्तव्य दिए।

संघ के अध्यक्ष श्री गंगाशरण सिंह ने अध्यक्षीय भाषण दिया। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि राष्ट्रभाषा का प्रश्न राजनैतिकों नें उलझा दिया है। हिन्दी को राष्ट्रभाषा हिन्दीतर भाषी लोगों ने बनाया। जैसे जैसे क्षेत्रीय भाषाओं में क्षेत्रों की सरकारों के कामकाज बढ़ते जायेंगे वैसे वैसे उनका राजभाषा हिन्दी पर भी असर पड़ेगा। उन्होंने कहा कि कर्नाटक सरकार अपने सारे आदेशों पर अमल करनेवाले महालेखा परीक्षक जो भारतीय सरकारों के अधिकारी हैं इस बात का प्रतिवाद स्वीकार करते हैं कि हर एक कन्नड़ आदेश का अंग्रेजी अनुवाद मिलना जरूरी है। अंजाम यह हुआ कि एकाउण्टन्ट जनरल के कार्यालय में अंग्रेजी

यद्यपि यह बात बेकायदा नहीं है लेकिन औचित्य के विरुद्ध अवश्य है।

अनुवाद एकक खुल गया है। जहाँ राज्य सरकार के कन्नड़ भाषा में निकाले गए आदेशों का अंग्रेज़ी में अनुवाद किया जा रहा है तथा उनपर कार्रवाई की जाती है। यद्यपि यह बात बेकायदा नहीं है लेकिन औचित्य के विरुद्ध अवश्य है।

उन्होंने कहा कि प्रदेशों में प्रादेशिक भाषाएँ और केन्द्र में राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन के लिए और अधिक तेजी से कार्य होना चाहिए। यदि प्रदेशों में वहाँ का कार्य प्रादेशिक भाषाओं में होने लगेगा तो केन्द्र में भी हिन्दी को राजभाषा बनाने में सहूलियत होगी। उन्होंने हिन्दी वर्ण-माला की वैज्ञानिकता पर भी प्रकाश डाला। हिन्दी संस्थाओं के कार्य-कर्ताओं को निष्ठा व लगन के साथ कार्य करते रहने का आह्वान किया। उन्होंने बताया कि हिन्दी के कार्यकर्ता कभी भी अपने आपको छोटा या हीन भावना की दृष्टि से नहीं आंकें। हिन्दी प्रचार प्रसार का कार्य राष्ट्र का काम है। राष्ट्र का कार्य महत्वपूर्ण है।

दिनांक 22 मार्च, 1987 को अपराह्न 3 बजे राजभाषा सम्मेलन का समापन समारोह सम्पन्न हुआ।

संघ के सचिव प्रो० रामलाल पारीख ने मुख्य अतिथि एवं उपस्थित महानुभावों का स्वागत किया। राजभाषा विभाग के संयुक्त सचिव, श्री. शम्भू दयाल एवं संघ के अध्यक्ष श्री. गंगाशरण सिंह एवं संघ के कोषाध्यक्ष श्री. शंकरराव लोंढे जी का माल्यार्पण कर स्वागत किया। उन्होंने कहा कि राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन की दिशा में सरकारी

हिन्दी के कार्यकर्ता कभी भी अपने आपको छोटा या हीन भावना की दृष्टि से नहीं आंकें। हिन्दी प्रचार प्रसार का कार्य राष्ट्र का काम है। राष्ट्र का कार्य महत्वपूर्ण है।

स्तर पर काफी काम हुआ है। लेकिन संविधान में हिन्दी की स्थिति, संकल्पों, अधिनियमों, राजभाषा सम्बन्धी कार्यों की प्रगति आदि की जानकारी जनता तक पहुँचनी चाहिए। इसके लिये सारे भारत में

संस्थाओं को हिन्दी प्रचार प्रसार के साथ साथ राजभाषा के कार्यान्वयन में आगे आना चाहिए।

क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन, अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन आयोजित होने चाहिए जिससे जनता में हिन्दी की प्रगति की जानकारी मिले। पत्र पत्रिकाओं में इनकी जानकारी देने के लिए बराबर प्रयास होने चाहिए। उन्होंने कहा कि साहित्यिक, सामाजिक तथा अन्य संस्थाएँ जन सम्पर्क के द्वारा जन-जन को इस बात के लिए प्रेरित करें जिससे राज्यों में वहाँ की राजभाषा में तथा केंद्रीय कार्यालयों में हिन्दी में काम हो।

राजभाषा विभाग के संयुक्त सचिव श्री. शम्भू दयाल जी ने कहा कि राजभाषा विभाग अपने सीमित साधनों से राजभाषा के कार्यान्वयन में पूर्ण सहयोग देने को तैयार है। संस्थाओं और राजभाषा विभाग का कार्य मूलतः एक ही है। राजभाषा विभाग एवं संस्थाएँ संयुक्त रूप से इस संबंध में प्रयास कें। राजभाषा विभाग द्वारा राजभाषा कार्य केलिए स्वतंत्र अनुदान समिति के बारे में कहा कि संस्थाओं को अनुदान दिलाने के लिए राजभाषा विभाग, शिक्षा मंत्रालय से विचार विमर्श करेगा। सम्मेलन में आयोजित भाषणों एवं चर्चाओं के आधार पर तैयार किए गए मंतव्य में उठाई गई बातों के बारे में स्पष्टीकरण दिया।

शिक्षा मंत्रालय के अवर सचिव श्री. जगदीश हरिजन ने अपने भाषण में कहा कि संस्थाओं को हिन्दी प्रचार प्रसार के साथ साथ राजभाषा के कार्यान्वयन में आगे आना चाहिए। उन्होंने कहा कि यदि यह राजभाषा सम्मेलन नहीं होता तो आप से विचार विमर्श करने, राजभाषा के कार्यान्वयन सम्बन्धी समस्याओं एवं उनके समाधान के उपाय आदि का अवसर नहीं मिलता। स्वैच्छिक रूप से संस्थाओं एवं राजभाषा विभाग मिलकर राजभाषा के कार्यान्वयन में आगे आयेंगे, यह तथ्य सम्मेलन से निकला है। यह सम्मेलन की बहुत बडी सफलता है। संस्थाओं को अपने कार्यक्रम समय पर तैयार कर भेजने चाहिए। शिक्षा मंत्रालय उनसे पूरा सहयोग करेगा।

अध्यक्षीय भाषण देते हुए श्री. गंगाशरण सिंह जी ने कहा कि संस्थाओं को कार्य शिक्षा मंत्रालय के

सहयोग और समन्वय से आगे बढाने चाहिए। उन्होंने प्रसन्नता प्रकट की कि यह सम्मेलन व्यावहारिक हुआ है। राजभाषा के काम में राजभाषा विभाग, शिक्षा मंत्रालय एवं संघ की संस्थाएँ मिलकर सहयोगी वातावरण में काम करें तो इसमें बडी सफलता मिलेगी। उन्होंने कहा कि भाषा का काम आज बहुत दुरूह हो गया है। राजभाषा के काम में राजनीति आ गई है। आप लोग ऐसा काम नहीं करें जिससे भाषाओं में संघर्ष हो। उन्होंने कहा कि भाषा का काम सरकार द्वारा नहीं हो सकता है। राष्ट्रभाषा को शक्तिशाली बनाएँ इससे राष्ट्र की शक्ति बढेगी। हीनता की भावना छोडें। देश की शक्ति, एकता एवं उसकी अखण्डता के लिए सदैव निष्ठा से कार्य करते रहें।

श्री. शंकरराव लोंढ़े ने सम्मेलन में सम्मिलित हुए अतिथियों, संस्थाओं के प्रतिनिधियों एवं उपस्थित महानुभावों के प्रति आभार व्यक्त किया। राष्ट्रगान के बाद राजभाषा सम्मेलन समाप्त हुआ।
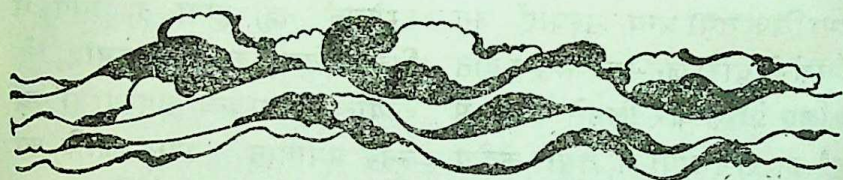
पृथ्वी पर हिन्दुस्तान ही एक ऐसा देश है जहाँ माँ-बाप अपने बच्चों के साथ मातृ-भाषा में न बोल कर विदेशी अंग्रेज़ी में बोलना और अपने बच्चों को अपनी मातृ-भाषा की बनिस्बत अंग्रेज़ी में लिखना पसन्द करते हैं।

—*महात्मा गांधी*

अवाक हये शुनि, केवल शुनि
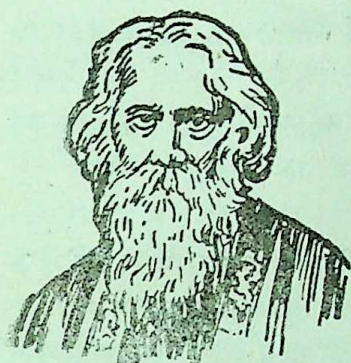
मूल : रवीन्द्रनाथ ठाकुर

संस्कृत रूपांतर : प्रो० एन. गोपाल पिल्लै

मम प्रभो त्वं गायसि कथमिति नैवाहं जाने
शृणोति तदहं गानं सततं विस्मय मौनमयी
त्वत् संगीत ज्योतिर विततं विश्वं भासयते
त्वत् संगीत प्राण समीरो द्रवति दिवश्च दिवं
पुण्यं त्वत् संगीत स्रोतः प्रकट ग्रावोग्रान
प्रति बन्धानपिभित्वा सर्वान पुरतः प्रसावति
सह त्वया संगातुं 'हृदय' मदीयमभिलषति
प्रभो वृथैव प्रयतत एतत् स्वरसिद्ध्ये सहसा
कथमपि वच्यां किन्तु न वचनात् -
प्रभवति गानं रोदिनि दूनं
त्वत् संगीतानन्त, ग्रन्थिषु
बध्नाति विभो ! मामक हृदय

हिन्दी का प्रचार आसान कार्य नहीं है

पद्मश्री डा० एन. बालकृष्णन नायर
अध्यक्ष, राज्य विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी समिति

[केरल हिन्दी प्रचार सभा भवन में आयोजित हिन्दी प्रचारक नवीकरण पाठ्यक्रम के समावर्तन सम्मेलन में 16-3-1987 को दिया गया उद्घाटन भाषण]

डा० एन. बालकृष्णन नायर

मैं ने कई बार दुनिया में भ्रमण किया है और कई बातों का अध्ययन किया है । सबसे बडी चिन्ता मुझे अपने देश के सम्बन्ध में ही हुई है। लिखा है, "सुजलाम् सुफलाम्, मलयज शीतलाम् सस्य श्यामलाम् मातरम्" कितनी भाषायें इस देश में बोली जाती हैं। कश्मीर से कन्याकुमारी तक और कामरूप से कत्यवार तक फैले हुए इस देश में सत्तर करोड लोग रहते हैं जो 1645 भाषायें बोलते हैं। इन में पन्द्रह भाषाओं को हमने राष्ट्रीय भाषा का पद दिया। हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है। इस विस्तृत देश की विविधताओं को देखते हुए हमने एक भाषा को राष्ट्र-भाषा बनाने का बहुत प्रयत्न किया है। लेकिन उस प्रयत्न में अब तक हम सफल नहीं हो पाये हैं। संस्कृत कुछ उदबुद्ध जनों की चगुल में रही।

इन सत्तर करोड जनों में हिन्दी बोलनेवालों की संख्या केवल सत्रह करोड है । सबसे प्रधान कार्य विविधताओं वाले इस देश की जनता को एक सूत्र में बांधने के लिए एक भाषा को विकसित करना है ।

इन सत्तर करोड जनों में हिन्दी बोलने वालों की संख्या केवल सत्रह करोड है । सबसे प्रधान कार्य बिविधताओं वाले इस देश की जनता को एक सूत्र में बांधने के लिए एक भाषा को विकसित करना है।

पाँच वर्ष मैंने सपरिवार अमेरिका में बिताये । भारत के सात परिवार वहाँ बसे हुए थे। बंगला देश के बसुरुद्दीन, पंजाब के सिठ अमार सिंह, कर्नाटक के डा० भट्ट आदि । हम सब आपस में अंग्रेजी में ही वार्तालाप करते थे और कोई माध्यम हमारे लिए नहीं था ।

अंग्रेजी भी कुछ बुद्धिजीवियों की भाषा रह गयी है ।

संस्कृत भाषा को राष्ट्रभाषा का जो स्थान प्राप्त था वह स्थान अंग्रेजी को मिला । अंग्रेजी भी कुछ बुद्धिजीवियों को भाषा रह गयी है । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी को हमने राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकृत किया । उत्तर भारत की अधिकांश जनता आर्य कुल की भाषायें जैसे— पंजाबी, सिन्धी, हिन्दी, बिहारी, राजस्थानी, मराठी, गुजराती, असमिया, बंगला, उडिया, पहाडी, कश्मीरी, संस्कृत आदि बोलते हैं । करीब सत्तर प्रतिशत लोग उपर्युक्त भाषायें बोलते हैं । द्रविडकुल की भाषायें जो दक्षिण में बोली जाती हैं उनमें प्रमुख है तेलुगु । इसके अलावा तमिल, कन्नड और मलयालम हैं । और तुलु, बडगा, तोडा, कोट्टा, कोडगु जैसी कुछ अप्रमुख भाषायें हैं । इस प्रकार भारत भाषाओं का एक बृहत समाहार है । ऐसे एक देश में हम लोग हिन्दी प्रचार की प्रक्रिया में लगे हुए हैं ।

यह आसान कार्य नहीं है । देश के कुछ कोनों में हिन्दी का विरोध भी किया जा रहा है । उदाहरण केलिए तमिलनाड को ल । वहाँ 'हिन्दी' शब्द तक का उच्चारण करने नहीं देते । इसका एक विशेष कारण है । हम बच्चों को दवा देते हैं या किसी व्यक्ति को कुछ समझाना चाहते हैं

> **क्या इन विभिन्न विषयों में निकलने वाले प्रकाशकों का अनुवाद हिन्दी या इतर भारतीय भाषाओं में शीघ्र गति से कर पायेंगे ?**

ऐसे कार्यों में जल्दबाजी करें तो परिणाम अच्छा नहीं निकलेगा। हमें 'स्वीट पर्सुवेशन' के तंत्र से काम लेना होगा। किसी हिन्दी सम्मेलन में जाइये। हिन्दी 'प्रोटोगोनिस्ट' लोगों का इनफेचुएशन, अग्रशन और अग्रसीवनेस देख सकते हैं। यह कभी आप लोगों का मेथेड न होने पावे। कोई भी बात दूसरों को समझानी हो तो उसमें सौम्यता, सारस्य और सौन्दर्य होना चाहिए। नहीं तो हमारा श्रम विफल हो जायेगा।

हिन्दी प्रचार सभा को इस बात का विशेष ध्यान रखना होगा। कोई भी भाषा हो, दूसरों को सिखाते समय काढा पिलाने की सी मनोवृत्ति नहीं होनी चाहिए।

पैंतीस वर्ष तक मैं ने अध्यापन किया है। शिक्षा में विज्ञान का बडा महत्व है। हर पाँच वर्षों में विज्ञान दुगुना या तिगुना हो जाता है। नोलेज एक्स्प्लोशन इतनी तीव्रता से हो रहा है कि मैं अपने विषय-समुद्र शास्त्र—पर प्रकाशित उत्तम ग्रंथों का भी पूरा पूरा अध्ययन नहीं कर पाता। क्या इन विभिन्न विषयों में निकलनेवाले प्रकाशनों का अनुवाद हिन्दी या इतर भारतीय भाषाओं में शीघ्र गति से कर पायेंगे? हमारे भाषा संस्थान इस दिशा में बडा महत्व-पूर्ण योगदान दे रहा है। बीस पृष्ठों की एक अंग्रेजी किताब का मलयालम रूपान्तर डेढ सौ पृष्ठों का हो जाता

> बीस पृष्ठों की एक अंग्रेजी किताब का मलयालम रूपान्तर डेढ सौ पृष्ठों का हो जाता है।

है। उचित शब्दों के चयन में व्यावहारिक कठिनाइयाँ आती हैं। उच्च स्तरीय पाठ्यपुस्तकों का अभाव ही प्रान्तीय भाषाओं को उच्च अध्ययन का माध्यम बनाने में विघ्न उपस्थित करता है। यह हठ धर्मिता भी छोड देनी चाहिए कि हर शब्द का अनुवाद किया जाता है। उदाहरण के लिए 'न्यूक्लियस' शब्द लें। बेंच, मेशा आदि शब्द हमने इतर भाषाओं से लिये हैं। इतिहास, दर्शन जैसे विषयों में यह बडी समस्या नहीं है। पर वैज्ञानिक विषयों में बहुत बडी

दक्षिण में हिन्दी प्रचार में सबसे अधिक रुचि लेनेवाला प्रान्त केरल है ।

आशय संपदा प्राप्त हुई है। इस परिमाण में हिन्दी में अनुवाद निकलें और बच्चों को ये अनुवाद समझाने की क्षमता हम में हो । ऐसे विषयों को सरल ढंग से समझाने की एक भाषा हमें विकसित करनी है । कठिन विषय यदि सरल भाषा में नहीं समझायें तो बच्चे कुछ नहीं समझेंगे ।

अध्यापन तो अति कठिन कार्य है । पहले दर्जे के विद्यार्थी को सिखाना एम. एस्सी, पी-एच. डी. या डी. एस. सी. के छात्र को सिखाने से अधिक दुष्कर है । निचले दर्जों में सिखाने के लिए विशेष कुशलता की आवश्यकता है । इस दृष्टि से इस प्रकार के नवीकरण पाठ्यक्रमों का बड़ा महत्व है । केरल में ऐसे पाठ्यक्रमों में विशेष महत्व है । दक्षिण में हिन्दी प्रचार में सबसे अधिक रुचि लेने वाला प्रान्त केरल है । यहाँ की जनता प्रबुद्ध है । यहाँ की जनता में 73% साक्षर हैं । ऐसी स्थिति में ऐसे पाठ्यक्रमों के प्रशिक्षकों और प्रशिक्षुओं में पारस्परिक भाव संचार से उद्भूत प्रतिक्रिया बहुत ही प्रभावोत्पादक होगी, ऐसा मेरा विश्वास है ।

इन शब्दों के साथ मैं इस प्रमाण पत्र वितरण सम्मेलन का उद्घाटन करता हूँ । ❀

नई दिल्ली में अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ के तत्वावधान में आयोजित राजभाषा सम्मेलन में उपस्थित प्रतिनिधियों का एक दृश्य ।

हिन्दी प्रचारक और वैज्ञानिक दृष्टि

श्री. पी. टी. भास्कर पणिक्कर

[केरल हिन्दी प्रचार सभा द्वारा आयोजित हिन्दी प्रचारक नवीकरण पाठ्यक्रम के प्रमाण-पत्र वितरण समारोह में 16-3-1987 को दिया गया भाषण]

श्री० पी. टी. भास्कर पणिक्कर अध्यक्षीय भाषण दे रहे हैं। श्रीमती एल. ओमनक्कुञ्ञम्मा एवं डा० एन. बालकृष्णन नायर पास बैठे हैं।

गत पन्द्रह दिनों में नवीकरण पाठ्यक्रम का श्रेष्ठ कार्य यहाँ संपन्न हुआ है। इसके क्या परिणाम हैं? क्या प्रयोजन हैं? जो बातें यहाँ सिखायी गयीं उनका प्रयोग और प्रचार होना चाहिए। तभी यह पाठ्यक्रम सफल हो जायगा। इस प्रशिक्षण के फलस्वरूप आप लोगों को हिन्दी अध्यापन शैली में जब वाञ्छनीय परिवर्तन देखने लगेंगे तभी यह प्रशिक्षण सफल माना जायेगा। ऐसे प्रशिक्षणों की उपलब्धि

अगर हिन्दी प्रचार हमारा लक्ष्य है तो इसको सफलता केलिए आवश्यक अनुकूल वातावरण उत्पन्न करना है।

का मूल्यांकन प्रशिक्षुओं को स्वयं करना है। अपने लक्ष्य का सही बोध पाना ऐसे पाठ्यक्रमों का प्रमुख उद्देश्य है।

अगर हिन्दी प्रचार हमारा लक्ष्य है तो इसकी सफलता केलिए आवश्यक अनुकूल वातावरण उत्पन्न करना है। आज सभी भारतीय भाषाओं के प्रति अनादर पाया जाता है और विकसित देशों की भाषाएँ श्रेष्ठ मानी जाती हैं। निश्चय ही वे भाषायें श्रेष्ठ हैं। इसपर ईर्ष्या नहीं करनी चाहिए। पश्चिम में फ्रंच रवल्यूशन, इन्डस्ट्रियल रवल्यूशन, आदि जो महान क्रान्तियाँ हुईं, उनके फलस्वरूप राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्रों में बडी प्रगति हुई। दो शताब्दियों में उन्हें ऐसी कई उपलब्धियाँ प्राप्त हुईं जो हमें नहीं मिल पाईं। इस प्रगति के फलस्वरूप भाषा भी विकसित हुई जब हम चर्खा चलाते रहे और वहाँ स्पिन्निग जेनी का आविष्कार हुआ। फिर सूत्र-कातने की मशीन बनी। बडे कारखाने खोले गए। मशीन के हर स्पेयर पार्ट के अलग-अलग शब्द बने। भौतिकी, शरीर विज्ञान जेसे वैज्ञानिक विषयों में वे आगे बढते गए।

हमारा भारत पुराने जमाने में विज्ञान के क्षेत्र में काफी आगे बढ चुका था। चरक,शुश्रुत जैसे आचार्यों ने आयुर्वेद और शरीर शास्त्र का काफी विकास किया। उस जमाने में शरीर शास्त्र की जो शब्दावली यहाँ बन पायी थी वह इंग्लैंड, रूस जैसे देशों में तब तक नहीं बनी थी। ज्योतिरशास्त्र संबन्धी ज्ञान भी भारत में खूब विकसित हुआ था। दर्शन के क्षेत्र में भारत अन्य देशों से आगे था। इस प्रकार भारत की वैज्ञानिक परम्परा बहुत महत्वपूर्ण है चूंकि इन विषयों के ग्रन्थ संस्कृत में रचे हुए थे इसलिए साधारण जनता जो संस्कृत से अनभिज्ञ थी इन विषयों से भी अनभिज्ञ रही गयी। विषयों का व्यावहारिक ज्ञान जनता तक पहुँचाने का काम हमारे देश में नहीं हुआ। हमारी वैज्ञानिक परम्परा किसी भी देश की वैज्ञानिक परम्परा से श्रेष्ठ है ईसा के पूर्व ही हमने स्टेइनलेस स्टील के स्तंभ बनाये। लेकिन चातुर्वर्ण्य पर अधिष्ठित आर्थिक,

सामाजिक संरचना तथा वर्षों की गुलामी के कारण हम आगे बढ नहीं सके। चातुर्वर्ण्य ने ऐसी स्थिति उत्पन्न की कि ब्राह्मण का ज्ञान शूद्र तक नहीं पहुंच पाता था। रामायण पढने में भी आज की पीढी असमर्थ रह गयी। ऐसी स्थिति यदि बदलती है तो वैज्ञानिक अध्यापक और मज़दूर एक जुट हो कर प्रयत्न करें।

आज हम कम खर्च में कोई घर नहीं बना पाते। मैं ने अपने गाँव में 2000 रुपये खर्च करके एक ग्रंथालय बनवाया था। आज पचास हजार

> क्यों ? हिन्दी-प्रचारक को ये सब बातें जाननी होंगी।

रुपया खर्च करने पर भी वैसा मकान नहीं बनवा पायेंगे। क्यों? क्यों कि लकडी का दाम बढ गया। क्यों हिन्दी प्रचारक को ये सब बातें जाननी होंगी। आप को वन के संबंध में एक पाठ पढाना हो तो समझना होगा कि वन क्या है। यदि किसी राज्य में 25% वन नहीं है तो वह राज्य पिछड जायेगा। प्रकृति ही मनुष्य को बनाये रखता है। कविता कहाँ से आती है? मुख्यत: प्रकृति से। नहीं तो सामाजिक जीवन से। यदि इन दोनों के आधार

> हमारी जडों को खोज निकालने का श्रम होना चाहिए।

पर हमें आगे बढना है तो हिन्दी प्रचारकों को कई वैज्ञानिक बातें समझ लेनी होंगी।

हाल ही में मैं एक अरबी पंडित से मिला। मैंने पूछा—मौलवी, यदि किसी लिशर पीरीड में आप को किसी क्लास में जाना पडेगा तो आप क्या करेंगे? आप को खूब मलयालम सीखनी होगी। नहीं तो उस क्लास में आप कुछ नहीं सिखा पायेंगे। मौलवी ने कहा "ठीक है आप का कहना।" मैंने कहा—इतना ही नहीं, पाठ्य पुस्तक में जिन विषयों से संबंधित पाठ हैं उन विषयों का भी ज्ञान प्राप्त करना होगा। समझ लीजिए 'रेडियो, के बारे में कई पाठ हैं। या नक्षत्र के संबंध में कई पाठ हैं। मलयालम और हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकों में ऐसे पाठ बहुत मिलेंगे। हर भाषा की पाठ्य पुस्तक में पचास प्रतिशत से ज्यादा वैज्ञानिक विषय ही होंगे। अन्यथा नहीं हो सकता। हाँ, संस्कृति संबंन्धी कुछ बातें होंगी। इसकेलिए पुराणों की कथायें जाननी होंगी। हमारी जडों को खोज निकालने का श्रम होना चाहिए।

मान लें, कोई मंत्री कहता है 'हिन्दी नहीं चाहिए'। क्या यह वैज्ञानिक बोध माना जायेगा? नहीं।

यदि डा० बालकृष्णन नायर जैसे श्रेष्ठ वैज्ञानिकों को जन्म देना हो तो विज्ञान को स्वीकृत करनेवाले एक समाज को जन्म देना होगा। हमारे मंत्रियों का, विधान सभा के सदस्यों का, वैज्ञानिक बोध कितना है? "मेरे कहे अनुसार काम चले" यह वैज्ञानिक बोध है? नहीं।

मैं ने यदि बेवकूफी कही तो उस का कार्यान्वयन नहीं होना चाहिए। यही वैज्ञानिक बोध है। मान लें, कोई मंत्री कहता है 'हिन्दी नहीं चाहिए'। क्या यह वैज्ञानिक बोध माना जायेगा? नहीं।

भारत की सत्तर करोड जनता का कभी आपसी संपर्क होना हो तो क्या हिन्दी आवश्यक नहीं? किताबी नहीं। महात्मा गान्धी ने जिस हिन्दुस्तानी की बात की मैं उस के पक्ष में हूँ। हमें अमीरों की हिन्दी नहीं चाहिए। काशी, इलाहाबाद, लखनऊ, राजस्थान और हरियाणा की आम जनता की हिन्दी। जीवन निर्वाह के लिए उन के द्वारा व्यवहृत होनेवाली हिन्दी। उनके बच्चों के उन्नयन के लिए प्रयुक्त होनेवाली हिन्दी। अरे, तू शराब मत पी। अरे, तू बीडी मत पी। देश को प्यार कर। इस प्रकार की बातें समझनेवाली हिन्दी। उसमें व्याकरण का उतना अधिक स्थान नहीं जितना उन्नत देश प्रेम और उन्नत जनस्नेह का है।

भारत की सत्तर करोड जनता का कभी आपसी सम्पर्क होना हो तो क्या हिन्दी आवश्यक नहीं?

इस प्रकार के नवीकरण पाठ्यक्रम के प्रशिक्षुओं को हिन्दी प्रान्तों में भ्रमण करने की सुविधा दिलानी चाहिए। तभी ऐसी हिन्दी का प्रचार होगा। इस केलिए केन्द्र सरकार का अनुदान पाना होगा। तमिलनाड ऐसी योजना नहीं बना सकता। केरल इस केलिए तैयार है।

उस में व्याकरण का उतना अधिक स्थान नहीं जितना उन्नत देश प्रेम और उन्नत जनस्नेह का है।

नहीं हैं । इस देश में बडे परिवर्तन लाने में हिन्दी प्रचारकों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है । जैसे श्री.एम. के. वेलायुधन नायर ने अपने स्वागत भाषण में कहा, गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम में हिन्दी प्रचार का प्रमुख स्थान था । उस समय के हिन्दी प्रचारक फीस नहीं लेते थे ।

मुझे याद है, मैं हिन्दी पढने गया था जब नवीं में पढता था । एक स्थान पर 'हिन्दी प्रेमी मंडल' का

इस देश में बडे परिवर्तन लाने, महत्वपूर्ण में हिन्दी प्रचारकों ने भूमिका निभायी है ।

बोर्ड देखा । अन्दर गया । श्री. सी. जी. गोपालकृष्णन जी वहाँ बैठे थे । फीस क्या थी ? चार आने । नाम के वास्ते । हिन्दी प्रचार के साथ साथ अस्पृश्यता निवारण, कांग्रस का कार्य आदि भी होता रहा होगा । डा० पी. के. केशवन नायर जिन्होंने मलयालम में प्रथम हिन्दी स्वबोधिनी लिखी । उन्होंने तलश्शेरी में हिन्दी प्रचार किया था । श्री. कृष्ण पिल्लै जिन्होंने केरल में साम्यवाद का आरंभ किया पहले वे हिन्दी प्रचारक थे । देश भर घूमकर हिन्दी

मलयालम के उपन्यासों को सामाजिक आधार कहाँ से मिला? हिन्दी, बंगला आदि भाषाओं से अनूदित उपन्यासों से मिला ।

प्रचार से उन्हें विप्लव का जो आवेश मिला वही केरल के साम्यवादी अभियान को जान दी ।

मलयालम के उपन्यासों को सामाजिक आधार कहाँ से मिला ? हिन्दी, बंगला आदि भाषाओं से अनूदित उपन्यासों से मिला । अंग्रेजी उपन्यास से क्राफ्ट मिला था । सामाजिक कथानकों को इतने बडे कैनवास पर चित्रित करने की प्रेरणा उक्त अनुवादों से ही मिली ।

हिन्दी केरलीयों केलिए अन्य भाषा नहीं । केरल की भाषा का एक अंग है हिन्दी ।

हिन्दी केरलीयों केलिए अन्यभाषा नहीं । केरल की भाषा का एक अंग है हिन्दी ।

आज हिन्दी प्रचार में भी सबसे बडी आवश्यकता है वैज्ञानिक बोध की । आज जातीयता की शक्ति देश को छिन्नभिन्न करने पर तुली हुई है । हिन्दी प्रचारक इस समस्या को

यदि भारत नहीं रहा तो हिन्दी भी नहीं रहेगी। तो हिन्दी से प्रमुख है भारत।

सुलझाने के लिए क्या कर सकते हैं? कक्षा में पढाते समय छात्रों को समझायें—"भारत क्या है? धर्मनिरपेक्षता का क्या अर्थ है"? मनुष्यत्व बोध उत्पन्न करना ही वैज्ञानिक बोध का आधार है। गरीबी कैसे हटायें? शिक्षा के द्वारा। सरकार कई योजनायें बनाती है। पर इन का फल जनता तक नहीं पहुंच पाता। यहाँ भी हिन्दी प्रचारक कुछ कर सकते हैं। यदि भारत नहीं रहा तो हिन्दी भी नहीं रहेगी। तो हिन्दी से प्रमुख है भारत।

इसलिए यहाँ मानवता और भ्रातृत्व का विकास करने में हिन्दी प्रचारकों को अपनी भूमिका अदा करनी है। ❀
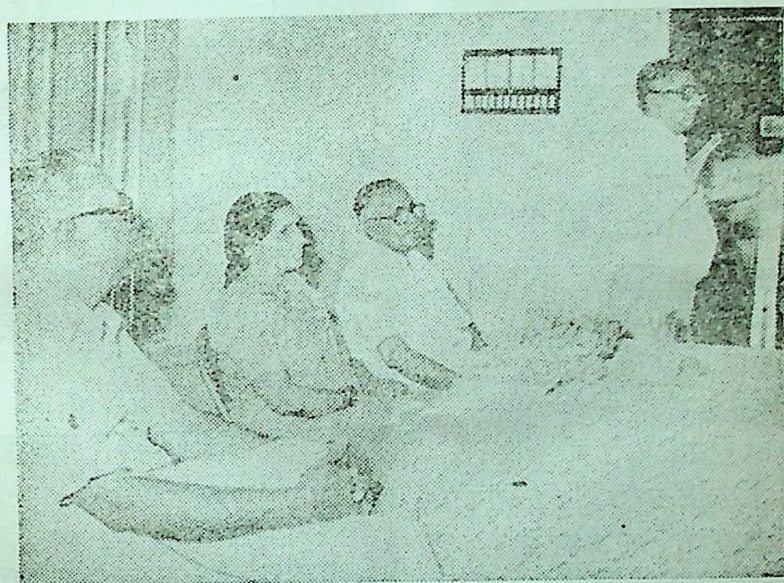
केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् के भूतपूर्व मंत्री एवं 'हिन्दी परिचय' मासिक पत्रिका के संपादक श्री. रघुनन्दन प्रसाद शर्मा केरल हिन्दी प्रचार सभा में भाषण दे रहे हैं। बैठे हैं—(दायें से) श्री. एम. के. वेलायुधन नायर (मंत्री, केरल हिन्दी प्रचार सभा), श्रीमती शर्माजी और श्री. के. केशवन नायर (निदेशक, नवीकरण पाठ्यक्रम)

नाश और निर्माण

श्री. विष्णु प्रभाकर
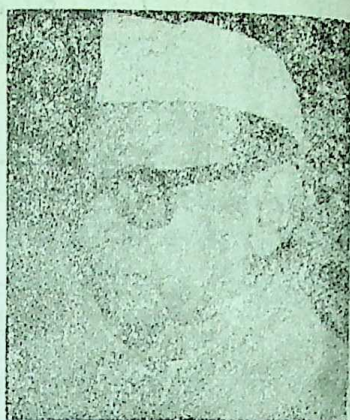
मान्यवर

लीजिए—
ढोल बजाता आया
और चुपचाप चला गया।
यह नया साल था—
या तमाशा—
किसी बाज़ीगर का
एक और वर्ष घट गया
उम्र का।
गिनती किन्तु बढ़ती रही—
जैसे हम बढ़ रहे हैं
इक्कीसवीं सदी की ओर।
जैसे जल मरते हैं कुछ लोग
आतंकवाद की आग में
देश की आबादी
घटाने के लिए।
एक साथ काम चलता है यहाँ
नाश का, निर्माण का।
जैसे पतझर के साथ-साथ
आता है वसंत।

जैसे स्वयं चिन्तित हैं
निर्मात्री महाशक्तियाँ—
अणु अस्त्रों के बढ़ते/भंडार से—
जैसे विधाता स्वयं/लज्जित हो
अपनी दानवी सृष्टि पर।
पर मोहान्ध हैं वे सब।
और मोहान्ध
अपनी कृति को/कभी नष्ट नहीं
कर सकता
तब आओ—
हम प्रतिज्ञा करें/आज के दिन
कि हम नाश कर देंगे,
उस मोह का
क्योंकि/हम निर्माता नहीं हैं।
क्योंकि/हम स्रष्टा नहीं हैं।
हम बस द्रष्टा हैं।
हम बस भोक्ता हैं।

818-कुण्डेवालान
अजमेरी गेट
दिल्ली-110 006

1. तुम्बी

श्री रामेश्वर दयाल दुबे

पांडव चले तीर्थ यात्रा को,
यदि हों पाप, उन्हें धोने।
कहा कृष्ण ने—"चल न सकूँगा,
पुण्य बीज मुझको बोने ॥
सेवा-तीर्थ यहाँ पद-पद पर
उसमें ही मन रमता है।
मुझे तोष जन-सेवा कर लूँ
जितनी अपनी क्षमता है ॥
जाते हो तो इस तुम्बी को
अपने साथ लिये जाना।
जहाँ तीर्थ में स्वयं नहाना
इसको भी नहला लाना ॥"
तीर्थ-तीर्थ में पहुँचे पांडव
नदी-नदी में स्नान किया।
मन्दिर-मन्दिर में वे पहुँचे
दर्शन का शुभ लाभ लिया ॥
जो सौंपा था काम कृष्ण ने
किया पार्थ ने सुख पाया।
पावन जल में स्वयं नहाया
तुम्बी को भी नहलाया ॥
जब लौटे भगवान कृष्ण ने
तुम्बी को पहले काटा।
चूर्ण बना, फिर बड़े प्रेम से
उसका ही प्रसाद बाँटा ॥
भीम हँस पड़े—"यह क्या भगवन
मुँह कड़ुआ हो जावेगा।
थू-थू करते सभी फिरेंगे
तभी मज़ा क्या आवेगा ?"
कहा कृष्ण ने—"तीर्थ नहाकर
पावनता सबने पायी।
कड़ुवाहट क्या बनी रहेगी
तीर्थ नहा तुम्बी आयी ?"
प्रश्न सरल था किन्तु किसी से
देते नहीं बना उत्तर।
धर्मराज ने तब मुँह खोला
वाणी में श्रद्धा भर कर ॥
"धन्य धन्य प्रभु ! समझ गये हम
किस ढंग से उपदेश दिया।
बाहर के उपचार व्यर्थ हैं
यदि न शुद्ध कर लिया हिया ॥
कर सत्कर्म मनुज निज जीवन
धन्य स्वयं कर सकता है।
जनता की सेवा कर के नर
नारायण बन सकता है ॥

2. बस मीठे दो बोल

एक मधु मुस्कान, जुड़ी हो जो
भीतर से
मात्र अधर पर ला कर देखो।

बस मीठे दो बोल कि जिनकी माँ हो ममता
वाणी से कहकर के देखो ॥
बढ़ें तुम्हारे हाथ नहीं लेने को, दो तुम
पर को अपना कर के देखो ।
दर्द किसी का, बने तुम्हारा, आँसू छलके
करुणा में बह कर के देखो ॥
स्नेह भरा संसार सुमन-सा
विहँस पडेगा ।
काँटा भी मृदु कुसुम बनेगा
नहीं गड़ेगा ॥
शब्द जाल यह नहीं यह
कोरी कविता ।
अवगाहन प्रत्यक्ष करो
अनुभव की सरिता ॥ ❀
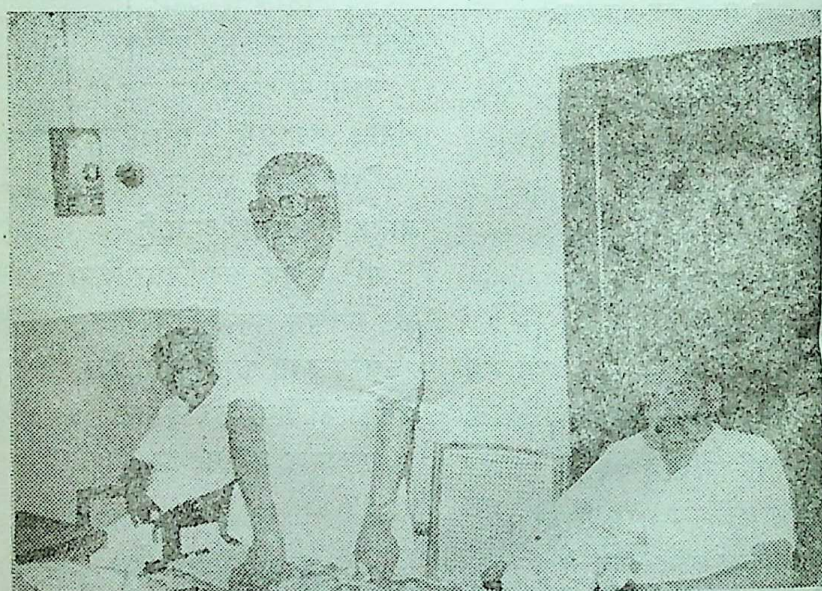
पौरस्त्य भाषा अध्यापक संघ की तिरुवनन्तपुरम जिला शाखा के तत्वावधान में सेन्ट जोसफ्स हाईस्कूल, तिरुवनन्तपुरम में 21-3-1987 को आयोजित बिदाई समारोह में उद्घाटन भाषण दे रहे हैं श्री. एम.के. वेलायुधन नायर, मंत्री, केरल हिन्दी प्रचार सभा। बैठे हैं श्री. जी. सुधाकरन नायर (राज्य अध्यक्ष, पौरस्त्य भाषा अध्यापक संघ) एवं संघ के प्रमुख कार्यकर्ता एवं कविता रगम के सचिव श्री. विल्फ्रेड तोमस ।

रामचन्द्रविलासम् : मलयालम का प्रथम प्रामाणिक महाकाव्य

डॉ॰ कटविल चन्द्रन
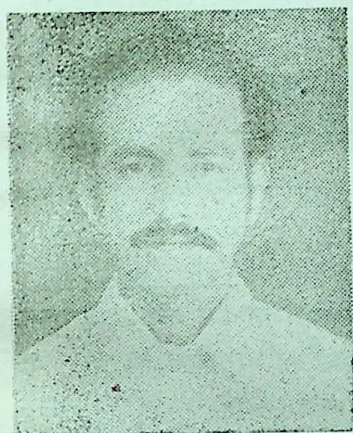
डॉ॰ कटविल चन्द्रन

कवि-परिचय :

अषकत्तु पद्मनाभ कुरुप का जीवन-काल सन् 1868 से सन् 1931 तक था। उनका जन्म करुनागप्पळ्ळि तालूके के चवरा नामक मुहल्ले के अषकत्तु परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम नारायणन एम्प्रांतिरि था और माता का कोच्चुकुञ्ञु कुञ्ञम्मा। उनके पिता कन्नड़, तमिल और हिन्दुस्थानी के अच्छे जानकार थे। पहले उन्होंने संस्कृत के रघुवंशम् का अध्ययन किया। इसके बाद और महत्वपूर्ण कृतियाँ भी पढीं। फिर तिरुवनन्तपुरम के फोर्ट हाई-स्कूल में छः साल अंग्रेजी पढी। उन्होंने स्वपिता से हिन्दुस्थानी की जानकारी ग्रहण कर ली। करमना केशवशास्त्री ने उन्हें संस्कृत-व्याकरण पढ़ाया। आगे चलकर उन्होंने स्वाध्याय से तत्संबंधी ज्ञान सुदृढ़ कर लिया। सन् 1891 के लगभग वे कविता करने लगे। 'विद्याविनोदिनी' मासिक-पत्रिका में उनकी कई अनूदित और मौलिक रचनायें प्रकाशित हुई थीं। सन् 1917 में आप चवरा अंग्रेजी

उन्होंने स्वपिता से हिन्दुस्थानी की जानकारी ग्रहण कर ली।

हाई-स्कूल के मलयालम-अध्यापक बने। सन् 1931 में कास-रोग से पीडित होकर उनका निधन हुआ।

कृतियाँ :

कुरुप् ने प्रतापरुद्र-कल्याणम्, मीनकेतनचरितम् आदि नाटक, कुंभनासवधम्, गंधर्वविजयम् आदि आट्टक्कथायें, रामचंद्रविलासम् महाकाव्य, प्रभुशक्ति खंड-काव्य और श्रीगणेश पुराणम्, मार्क्कंडेय पुराणम् आदि शुक-गीत लिखे हैं। तुलाभार-शतकम् और व्याघ्रालयेश शतकम् अनूदित रचनायें हैं। उनकी और एक मौलिक रचना है, चाणक्य शतकम्। इन रचनाओं में रामचरित-विलासम् व प्रभुशक्ति का महत्वपूर्ण स्थान है।

काव्याध्ययन :

महाकवि अ.षकत्तु पद्मनाभ कुरुप् के पूर्व मलयालम में प्रामाणिक महाकाव्य का एकदम अभाव था। इस की पूर्त्ति पहले-पहल कुरुप् ने की। वे सच्चे राम भक्त थे। तुलसीकृत रामचरित-मानस के पारायण से उन में रामभक्ति जड़ पकड़ गयी थी। ए.षुत्तच्छन की अध्यात्म-रामायण ने उन्हें राम-कथा पर महाकाव्य रचने की प्रेरणा भी प्रदान की थी।[1] 'रामचन्द्र विलासम्' मलयालम का सर्वप्रथम प्रामाणिक महाकाव्य है जिस में संस्कृत-महाकाव्य के सभी लक्षण पाये जाते हैं।

तुलसीकृत रामचरित-मानस के पारायण से उनमें राम-भक्ति जड़ पकड़ गयी थी। ए.षुत्तच्छन की अध्यात्म-रामायण ने उन्हें राम-कथा पर महाकाव्य रचने की प्रेरणा भी प्रदान की थी।

रामचन्द्रविलासम् का इतिवृत्तम लोक-प्रचलित रामायण की ही कथा है। इस काव्य के इक्कीस सर्ग हैं। यद्यपि कवि ने भोज की रामायण-चंपू का अनुकरण किया है और वे वाल्मीकि रामायण, अध्यात्म-रामायण, हनुमन्नाटक, रघुवंश, नैषध, भारतचंपू और आग्नेयपुराण आदि से अत्यंत प्रभावित थे तथापि इस महाकाव्य

1. "कुरुप् एक सच्चे श्रीरामभक्त थे। तुलसी- रामायण के पठन से उनमें तद्विषयक भक्ति सुदृढ़ हो गयी। सन् 1894 से वे अध्यात्म-रामायण का पारायण किया करते थे। इस काव्य (रामचन्द्रविलासम्) के प्रणयन का मूल प्रेरणा-स्रोत भी वही था।

—उल्लूर एस॰ परमेश्वरय्यर, केरल साहित्य चरित्रम भा॰ iv पृ॰ 702

में कवि की मौलिक उद्भावनायें पर्याप्त मात्रा में पायी जाती हैं।[1] यदि उनकी मर्जी होती तो वे पूर्णत: स्वतंत्र रूप से काव्यनिर्माण कर सकते। इसमें संस्कृत-पद्यों के भावार्थ तथा कहीं-कहीं उन पद्यों के ज्यों-के त्यों अनुवाद भी मिलाये गये हैं।

काव्य - सौष्ठव छलकनेवाले कतिपय प्रसंगों पर नज़र डालना आवश्यक है। आठवें सर्ग के अंत में जो प्रार्थना- स्तवक लगाया गया है वह रामचन्द्रपरक है। कवि अपने इष्ट देव से यही बिनती करता है कि हे भगवान, आपकी करुणा प्राप्त करने केलिए मैं अधिक धन दे कर आपको तृप्त नहीं बना सका। जब एक बार पांचाली बड़ी विकट परिस्थिति में पड़ी हुई थी तब वह आपकी बेहद करुणा से अपने को उस दुविधा से बचा सकी। मुझे भी वही करुणा प्रदान करने की कृपा करें। मुझे भली-भाँति मालूम है कि आप भक्ति के वश्य हैं। यहाँ कवि सच्ची भक्ति के सरोवर में गोता लगाता है जब कि अन्य लोग भगवान को भेंट चढ़ाने के बहाने घूस दे कर वशीभूत करने के व्यर्थ प्रयास में तल्लीन हैं।

दसवाँ सर्ग 'सीताविरहम्' एक सुन्दर विरह-वर्णन है। कनक-मृग का वध करके लौटे श्रीराम ने सुनसान पर्ण-कुटी के ही दर्शन किए। दुःखी राम अपने भाई लक्ष्मण के साथ सीता को खोजते हुए जंगल-जंगल मारा-मारा फिरने लगे। रास्ते पर लता-वृक्षों और जन्तु-जानवरों से उनकी भेंट हुई उन सबों से वे पूछ-ताछ करते नज़र आते हैं। ताड़-वृक्ष से वे पूछते हैं: अरे अच्छे ताड़-वृक्ष, सच-सच बोलो। एक सुंदरी जिस का केशभार तुम्हारा फूलों का गुच्छा-सा है, आज तुम्हारे नज़दीक से निकल तो नहीं गयी ?[2]

फिर अशोक के पौधे के प्रति उन की उक्ति है: हे अशोक, बताओ। वह लता (सीता) फुनगी पर खिलते प्रसून लगाये, बीच-बीच में कोंपलें

1. चेन्नित्तला कृष्णअय्यर, मणमरञ्ञ भाषा कविकल् भा० । पृ. 10

2. "परमार्थमुरयूक्क नल्ल साळि
घनये! निन्कुलपोले केशभारम्
परिचोटु वहिच्चोरुतियी नि-
न्नरिकिल्वकूटि वरुन्नतिन्नु कण्टो ?"
—रामचन्द्रविलासम्, सर्ग-10

तथा डालियाँ फैलाए, मुकुलों को लादे, हिले डुले किधर गयी?[3] कवि इस प्रसंग में दग्ध और सुध-बुध खोये श्रीराम का सुन्दर चित्र खींच दिया है। इस प्रकार का विरह-वर्णन समूचे मलयालम साहित्य में अन्यत्र दुर्लभ है।

चित्र-श्लोक-निर्माण में कवि सिद्धहस्त था। अयोध्यापुरी की ऊँची-ऊँची हवेलियों का सुन्दर चित्र उपस्थित किया गया है। देखिए एक वर्णन: चूँकि भगवान को यह शंका

इस प्रकार का विरह-वर्णन समूचे मलयालम साहित्य में अन्यत्र दुर्लभ है।

हुई कि इमारतें ऊपर-ऊपर बढ़कर हमें बाधा पहुँचायेंगी इसीलिए उन्होंने पहले ही अपना निवास-

चूँकि भगवान को यह शंका हुई कि इमारतें ऊपर-ऊपर बढ़कर हमें बाधा पहुँचायेंगी इसीलिए उन्होंने पहले ही अपना निवास-स्थान सब के ऊपर बनाया तो नहीं है ?

स्थान सब के ऊपर बनाया तो नहीं है ?[4] इस प्रकार के अनगिनत शाब्दिक-चित्र इस काव्य में बिखरे पड़े हैं। बीसवाँ सर्ग तो चित्र-श्लोकों से भरा हुआ है।

सुन्दर श्लेष-प्रयोग इस काव्य के महत्व को और बढ़ा देता है। उदाहरणार्थ देखिए: जब नरेंद्र काल योग से मंत्र-शून्य हो चला तब उसने श्रेष्ठ जिह्वा-द्वय से प्राणों का संहार किया[5]। यहाँ नरेंद्र शब्द से दो अर्थ

---

3. "विरियुं मलरच्चूटियग्रभागे
तलिरुं तंटुमिटय्क्किटय्क्कु वीशि
मुकुलङ्ङलुमेंतियङ्ङलञ्ञा
लतयेङ्ङोट्टु गमिच्चशोकमे ! चोल्।
— रामचन्द्रविलासम्, सर्ग-10

4. "सौधङ्ङल् मेल्पेट्टु वलर्न्नु नम्मे-
व्वाधिक्कुमेन्नुललोरु संशयत्ताल्
धातावु पंटे निजलोकवासम्
शाधिच्चतल्लो सकलत्तिनुंमेल्
—वही॰ सर्ग-1

5. नरेंद्रन् कालयोगत्ताल्
मंत्रशून्यनताकवे
वरजिह्वाद्वयं कोंटु
प्राणने संहरिच्चवल्।"
—रामचंद्रविलासम्

स्व० के. टी. गर्वासीस की पुण्यस्मृति में भावभीनी श्रद्धांजली
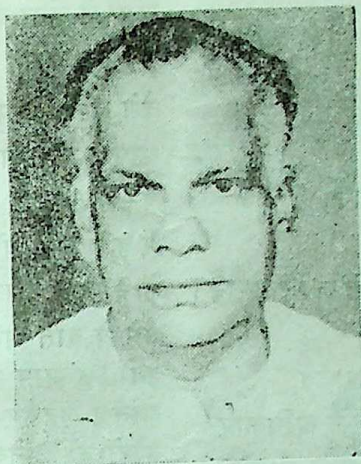
केरल हिन्दी प्रचार सभा की कार्यकारिणी के सदस्य एवं केरल के प्रमुख समाजसेवक श्री. के. टी. गर्वासीस का देहान्त 31-12-1986 को तृशूर में हुआ।

केरल हिन्दी प्रचार सभा की कार्यकारिणी समिति ने 22-2-1987 की बैठक में स्वर्गीय गर्वासीस की पुण्य स्मृति में भावभीनी श्रद्धांजली अर्पित करते हुए शोक प्रस्ताव पारित किया। समिति के सदस्यों ने स्व० गर्वासीस की तपोनिष्ठ हिन्दी सेवा की प्रशंसा की और उनके व्यक्तित्व की विविध विशेषताओं पर प्रकाश डाला।

इस काव्य और तत्कर्ता की अमिट छाप समूचे मलयालम साहित्य पर हरी-भरी रहती है।

निकलते हैं—'राजा' और विष-वैद्य' 'काल-योग', 'मंत्र', 'वरजिह्वाद्वय' आदि शब्द इस कविता के चमत्कार को दुगुना कर देते हैं। इस प्रकार के कई मिसाल इस में प्राप्त हैं।

जैसे अन्यत्र सूचित हो चुका है, इस काव्य में आचार्यो द्वारा निर्धा-रित सभी काव्य लक्षणों का समावेश हुआ है। यमक, उपमा, श्लेष आदि अलंकारों, द्वितीयाक्षरप्रास, दार्शनिक-विचार व लोकोक्तियों का सम्यक् प्रयोग किया गया है। यह काव्य लगभग समस्त काव्य-दोषों से परे है। शब्दार्थों की संयोजना में काफी ध्यान लगाया गया है। इस काव्य और तत्कर्ता की अमिट छाप समूचे मलयालम साहित्य पर हरी-भरी रहती है।

आपका कुत्ता

श्री० जगदीश हरिजन

माना आपका कुत्ता
आपके प्रति वफादार है,
और आप भी
उसकी ज़रूरतों के प्रति खबरदार हैं।
लेकिन जब जंजीर से
उसकी गर्दन जकड़ा आपने,
उसकी स्वतंत्रता, उसके अधिकार
अपनी शख्तमुट्ठी में पकड़ा आपने,
तब स्वतंत्र होने की छटपटाहट
बंधन-मुक्त जीवन जीने की चाहत्,
कभी तो
उठती ही होगी उसके मन में।
आपका नमक खाने,
आपके प्रति वफादारी निभाने
की भावना के भार से दबी,
उसकी आत्मा
उसे रोकती आयी है
हर विद्रोह के विरुद्ध।
आप के बंधनों में बंधा,
बेचारा, मज़दूर, निरीह पशु,
अकेला हिम्मत नहीं जुटा पाता,
स्वतंत्र जीवन जीने की मांग आपसे
करे।

लेकिन बंधन में जब आदमी पक्षी
बंधा नहीं रहना चाहता तो,
कुत्ता जैसा पशु क्यों चाहेगा
जंज़ीरों बंधा रहना,
घर की चहार दीवारी में कैद होना।
वैसे कुत्ता आपका है
आप चाहें उसे बांध कर रखें
घर की चहार दीवारी में कैद रखें,
मैं कुछ नहीं बोलूँगा,
मैं हूँ एक दिगर आदमी।
वैसे ये बातें आपकी समझ से परे है,
क्यों कि आप खुद
स्वतंत्र रहकर
औरों को अनेक बंधनों में
बांधे रखना अपनी शान मानते हैं।
आप खुद अनुशासन क़ानून
नियमों के बंधन को,
ईमानदारी से स्वीकारना नहीं चाहते,
आप चाहते हैं आपका कुत्ता
जंज़ीरों में बंधा रहे।
आपके आश्रित संबंधी,
आपके मातहत कर्मचारी नौकर
आपके रौब-शान से सधा रहे।
वैसे आपके पास
सामर्थ्य है, अधिकार-शक्ति है,
आप गलत भी करें,
फिर भी ठीक ही माना जायेगा।
लेकिन आपके मनमाने व्यवहारों,
के प्रति

दूसरे के मन में उठने वाली
प्रतिक्रियाओं को,
आप रोक नहीं सकते,
भले वे आपके सामने
व्यक्त नहीं कर पायें
जैसे आपका कुत्ता।
लेकिन अपने अन्तर की
प्रतिक्रियाओं को
अपने मन के ज़हरीले गुस्से को
आपके घर आने वाले आगन्तुकों,
उसके नजर के सामने आये
पशुओं अन्य कुत्तों पर,
अक्सर भौंक कर
और कभी-कभी काटकर
जरूर निकलता है।

आप उसके इन हरकतों को
शायद स्वाभाविक मानते होंगे
लेकिन वस्तुस्थिति कुछ और है
वैसे कुत्ता आपका है
आप उसके बारे में
जो भी राय कायम रखें
मैं कुछ नहीं बोलूँगा,
मैं हूँ एक दिगर आदमी।

एस-290, स्कूल ब्लाक
शंकरपुर, दिल्ली-92
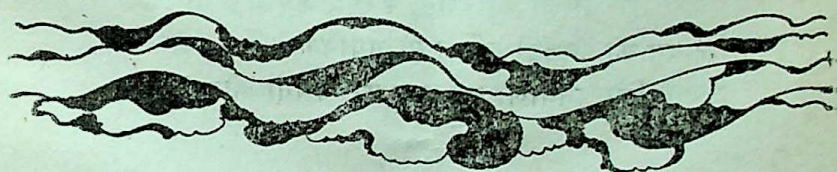
जब तक राजकाज में अंग्रेज़ी की अनिवार्यता समाप्त नहीं होती तब तक भारत की भाषाओं में व्यवहार का प्रारंभ नहीं हो सकता। देश के काम-काज केलिये अपने ही देश की भाषाओं का प्रयोग व्यावहारिक एवं राष्ट्रीय स्वाभिमान दोनों ही दृष्टि से आवश्यक है।

पण्डित दीनदयाल उपाध्याय

समस्या महंगाई की
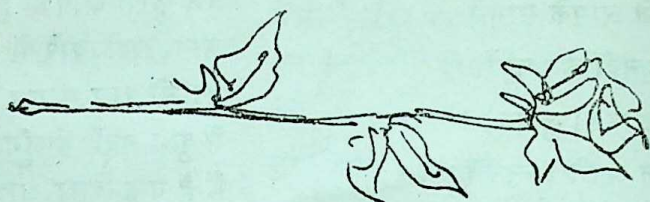
श्री० देव केरलीय

1

इठलाती बलखाती आई है, तू नवेली सी
तेरी गरिमा-वर्णन करेगा, जग में कौन?
खाने को तो अन्न नहीं, पीने को न साफ पानी
म्लान मन जन गण, दुःखड़ा सुनेगा कौन?
सुरसा राक्षसी सम, आई है तू अचानक
तेरी लीला का वर्णन, करेगा, जग में कौन?
जीवन की पगडंडी सर्पिल सी भयानक
फिसलनेवाली वह, उस पर चलेगा कौन?

2

बेटा बोला—बाबू जी से दूना करो जेब खर्च
मिलती नहीं मिठाई, डायन है महंगाई।
फट गई साडी मेरी, चोली का तो रंग उठा
बोली प्रिय पति से यों, मिटी मेरी तरुणाई
पैदल ही जाना होगा, बाबू बोले ड्रैवर से
भाव बढा पेट्रोल का घूर रही महंगाई।
मिट्टी का तो तेल नहीं, चूल्हा जलता भी नहीं
फ्रिज तो है खाली पडा, कुटुंबिनी घबराई

3

सिर धुन बेटा बोला-माता ! मैं तो मर जाऊँ
खाने कुछ देती नहीं, आज तुझे क्या हुआ ?
"सुनो मेरे प्रिय बेटा, तू ने सुनी बात नहीं,
नाच रही महंगाई, भू का यह हाल हुआ
हाय ! हाय ! चिल्लाकर, भाग रहे भूखे जन
जनता-जनार्दन का, यही बुरा हाल हुआ
तन तोड महंगाई ! नानी तेरी मर जाए
प्राण लेने जनता के तेरा अवतार हुआ।

4

सिनेमा थियेटर में दर्शक बहुत कम
जेब जब खाली तब फिल्म क्या देखना।
मन्दिर के पुरोहित भी, बहुत ही परेशान
चढ़ावा बहुत कम, कुटुंब कैसे पालना ?
नौकरी में छंटनी है, ओहदा है खाली पडा
पूछताछ दफ़्तर में, पहुँचने न कामना
आते नहीं मेहमान, मनावे कौन त्योहार
बढ़ती महंगाई में क्या खाना और खिलाना ?

5

आगत अतिथिजन, बिना कहे चले जाते
आप कुछ खाये बिना, हम भी क्या खिलाएँगे ?
अच्छा ही माहौल रहा, हम भी तो मौन रहे
बोतल में तेल नहीं चिराग क्या जलाएँगे ?
मिलती नहीं नौकरी, दरवाज़े सभी बन्द
हाय ! हाय ! कहकर रात दिन बिताएँगे
दीवाला निकला हो तो, पूजा भी किस को होगी ?
हम न सुनेंगे कुछ, अपनी ही सुनाएँगे।

6

हजामत करवाने नाई की दूकान जाते
चार्ज बढा देखकर लोग लौट जाते हैं ।
धोबियों ने बढा दिया, धुलाई का चार्ज अब
लोग स्वयं घरों में ही कपड़े धो लेते हैं ।
वेतन न बढाने से नौकरानी नहीं आती
पति-पत्नी मिलकर झाड़ू लगा लेते हैं
तन-तोड महंगाई ! तेरा तो प्रभाव यह
तीन बार खाते जो थे, एक बार खाते हैं ।

7

मन्दिर का गणपति भूख से तड़प रहा
नारियल, केले आदि भक्त चढाते नहीं
दीप नहीं आरती के गूँजता न शखनाद
ईद, दीवाली, ओणम, लोग मनाते नहीं,
बहुत कम छात्र ही तो पढने को आते हैं
अध्यापक बाकायदा, उनको पढाते नहीं
सभी लोग हैरान हैं, उपाय क्या करें अभी
संकोच में आकर वे दुःख तो बताते नहीं ।

8

अरी, महंगाई तू तो, कल मुँही नागिन है
निर्मम हो डसती है जन जन बार बार
जोंक सी तू जनता के शोणित को चूसती है
परवश होके जन कोसते हैं बार बार
त्राहि, त्राहि बोलकर, भाग रहे चारों ओर
लानत मलामत हो, कहते हैं बार बार
कोई भी उपाय अब कारगर होता नहीं
नियति को दोष देते दुःखित हो बार बार ।

9

माता-पिता हैरान है, कैसे हो, बेटी का व्याह !
आगत बारातियों का कैसे सत्कार होगा ?
लड्डू-पेडे महंगे हैं, चबेने खिलाने होंगे
न बजेगी शहनाई, काम बर्बाद होगा
मिट्टी पलीत होगी, दुत्कार सहना होगा
नियति की चाल देख, चुप रहना होगा
अरी, महंगाई अब चैन न हमारी छीनो
दृष्टि से परे हो जाओ, बडा उपकार होगा ।

10

पंच सितारे होटल, सभी तो हैं बन्द पड़े
भूलकर भी न कोई उस ओर जाता है
बाजे तो बजते नहीं, काँबरे तो होते नहीं
बदला है परिवेश, टूट गया नाता है,
मधुमास बीत गया, चुप हुआ कोकिल है
देखते हैं परस्पर, कोई भी न बोलता है
डालना महंगाई का ऐसा ही प्रभाव है कि
हैरान हो विधाता भी निज को धिक्कारता है ।

11

मन्दिरों से गज भी तो दुर्बल बन गये हैं
खाने के अभाव में वे चाहते हैं वनवास,
बिल्लियाँ कनखियों से देखती नहीं चूहों को
दुःखी बन वे भी अभी चाहती हैं संन्यास,
महंगाई ज्वालामुखी गरजता भयंकर
उसकी ज्वाला में पड, जीने की न कोई आस
ध्यान लीन विश्वनाथ, खोलने अपने नयन
जानते नहीं हो तुम, काँप रहा कैलास ।

12

करों में न कंकण हैं, काजल न नयनों में
मुस्कान न अधरों में रुष्ट हुई कुटुंबिनी
बोली नहीं निकलती कहाँ छिपी चितवन
चेहरा उदास अति, बिगड गई कामिनी;
प्रकट न वारिद हैं, वर्षा का मौसम नहीं
अनहोनी बात हुई, चमक रही दामिनी
पैसों के अभाव में तो, कैसे हो कामना पूर्ति
सुनो प्यारी बात मेरी, मान छोडो मनस्विनी।

13

दहेज तो मिला नहीं, दुःखी हुआ वर अति
आकुल वधू से बोला, हर्णामूण न मनाना
नियति न अनुकूल, मौसम भी प्रतिकूल
ऐसी दशा में न कभी, जशन हमें मनाना,
हर कहीं त्रासदी है, कल होगा जग में क्या
डाँवा डोल सारा जग, कहीं न कोई ठिकाना
बदलता प्रपंच है, उत्थान पतन युत
विपदा से बचे हम, मन में न घबराना।

14

बेकारी और गरीबी, तेरी ही सहेलियाँ हैं
अरी महंगाई तू तो, छायी देश देश में
कर्म कर मज़दूर, विविध धंधों के लोग
भूख से तडप कर घूमते हैं, नगरों में,
इस घोर विपदा से बचाव क्या कभी होगा
बार बार यही चिन्ता उठती है मन में
बरसो कृपा निधान, करुण रस की प्यार
उमडे तुम्हारे प्रति, श्रद्धा रग रग में।

15

उबारो उबारो प्रभु, विपदा जलनिधि से
डूब गये नाक तक, कैसे पार होंगे हम
नमक, चावल, गेहूँ, सभी तो महंगी चीज़ें
केवल आदमी सस्ते, पशुओं से नीच हम,
बढ रही महंगाई द्रौपदी के चीर सम
कन्हैया न सहायक, कैसे पार होंगे हम
नाम न लें शक्कर का, बोला तो टी षाँपवाला
बोले वितौट ही अब, पी तो लेंगे चाय हम।

16

जितने भी जानवर, जा रहे हैं आसपास
चारा नहीं मिलने से पड़े घोर संकट में
किसान है परेशान, बीज नहीं मिलते हैं
जादू है महंगाई का, सभी पड़े चपेट में
बोल ज़रा महंगाई, पेट है या कडाह है?
अजगर बनकर निगलती उदर में
देव, केरलीय, यों ही कह रहा सुन ले तू
नाम-लेता कोई नहीं, तेरा अब भुवन में।

❀

हिन्दी संस्कृत विद्याभवन,
कोट्टयम–686 004

'ऋतुफलक का अभिनव कला महोत्सव'

'ऋतुफलक', इन्दौर का दसवाँ कला महोत्सव वसंत पंचमी से प्रारंभ हुआ। इस कार्यक्रम का उद्देश्य सामूहिक चिंतन द्वारा सृजनात्मक वकास की दिशा तय करना रहा है। इसी परिप्रेक्ष्य में लेखक, कवि, चित्रकार एवं विचारकों ने सृजन-प्रक्रिया पर प्रकाश डालते हुए विभिन्न विषयों पर अपने विचार प्रस्तुत किये।

समारोह का उद्घाटन करते हुए वरिष्ठ चित्रकार एवं लेखक श्री. अमृतलाल बेगड (जबलपुर) ने अपने व्याख्यान 'सौन्दर्य की नदी नर्मदा' में नर्मदा परिक्रमा के रोचक संस्मरणों के साथ-साथ अपनी कला-कृतियों की रंगीन पारदर्शियाँ भी प्रस्तुत कीं। अगले दिन प्रकृति के कवि श्री. रामविलास शर्मा (इन्दौर) ने अपनी काव्य रचना पर प्रकाश डालते हुए 'कविता में रंग और बिम्ब विधान' के सन्दर्भ में अपनी कुछ कविताओं को प्रस्तुत किया।

पाँच फ़रवरी को उदयपुर के जाने माने चित्रकार श्री. परमानन्द चोयल ने अपनी कलायात्रा की झलक प्रस्तुत करते हुए कहा कि 'कला एक अनुभूति है और कलाकार की स्वानुभूति से ही सृजन के आयाम विस्तृत होते हैं।' कलागुरु विष्णु चिंचालकर (इन्दौर) ने कला में

'कला एक अनुभूति है और कलाकार की स्वानुभूति से ही सृजन के आयाम विस्तृत होते हैं।'

'पूर्वाग्रह से मुक्ति' के प्रश्न पर अपने सारगर्भित विचार व्यक्त किए। उनकी मान्यता यह थी कि जो कलाकार सृजन की चौखट में कैद होकर रह जाता है वह प्रकृति से सहज संवाद नहीं कर सकता।

अगले दिन प्रसिद्ध विचारक एवं पुराविद् श्री. रामसेवक गर्ग (इन्दौर)

ने 'भारतीय कला में रस' की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए कहा कि 'भारतीय कला में ही समय और संगीत का चित्रण हुआ है, विश्व में किसी अन्य कला में नहीं। भारतीय कला प्रकृति से रंग और बिम्ब लेते हुए मानवीय मनोभावों को चित्रित करती रही है।

प्रसिद्ध कहानी लेखिका श्रीमती मालती जोशी (भोपाल) ने अपनी सृजन प्रक्रिया पर प्रकाश डालते हुए सृजन में व्यक्तिगत अनुभवों की ईमानदार अभिव्यक्ति पर विशेष बल

जब कलाकार दबाव में सृजन करता है तब उसका स्तर गिर जाता है।

दिया। उनका कहना था कि जब कलाकार दबाव में सृजन करता है तब उसका स्तर गिर जाता है।

समारोह का समापन करते हुए कलाजगत के वरिष्ठ हस्ताक्षर श्री. भाऊ समर्थ (नागपुर) ने 'कला से जीवन में लय तथा संतुलन' के प्रश्न पर जीवन तथा इतिहास की लय को व्याख्यायित करते हुए सामाजिक विसंगतियों तथा राजनीतिक विद्रूप के बावजूद कला, साहित्य एवं सृजन के हर क्षेत्र में लय का महत्ता और अस्तित्व को स्पष्ट किया।

इस अवसर पर देवलालीकर कला वीथिका में जिन कलाकारों की विभिन्न शैलियों में निर्मित कृतियाँ प्रदर्शित की गईं उनके नाम हैं सर्वश्री रामजी वर्मा, मिर्जा इस्माईल बेग, मूलचन्द पुन्यासी, देवेन्द्र अग्रवाल, ऋषीकेश शर्मा, अरुण मौर्य, अजय बी. जैन, आलोक शर्मा, मधु शर्मा, प्रियेशदत्त मालवीय और खंडेराव पंवार। इस आयोजन की अवधि में करीब दो हजार दर्शकों ने भाग लेकर आयोजन को सराहा।

समारोह के आयोजक एवं ऋतु-फलक के अध्यक्ष श्री. देवेन्द्र कुमार अग्रवाल की इस परिकल्पना ने कला जगत के सृजनशील रचनाकारों के साथ साथ रसमर्मज्ञ सामान्यजन के मानस में भी नवचेतना का संचार किया ऐसा निःसंकोच कहा जा सकता है।

प्रस्तुति—चरणसिंह अमी
43, राजमहल कॉलोनी
एक्सटेंशन
इन्दौर-452 004

कविता

अंतर मम विकशित करो

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

अन्तर मम विकशित करो
अन्तर तर हे ।
निर्मल करो, उज्ज्वल करो
सुन्दर करो हे ।
जाग्रत करो, उद्यत करो
निर्भय करो हे ।
मंगल करो, निरलस निःसंशय करो हे ।
अन्तर मम विकशित करो ।
अन्तर तर हे ।

युक्त करो हे सबार संगे
मुक्त करो हे बन्ध,
संचार करो सकल कर्मे
शान्त तोमार छन्द ।
चरणपद्मे मम चित निःस्पन्दित करो हे
नन्दित करो, नन्दित करो,
नन्दित करो हे ।
अन्तर मम विकशित करो
अन्तर तर हे ।

डा० कैलाश चन्द्र भाटिया
प्रोफेसर, हिन्दी तथा प्रादेशिक भाषाएं
राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, मसूरी

'केरल ज्योति' का जनवरी 1987 का अंक मिला, धन्यवाद ।
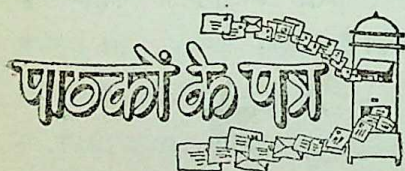
इस बार तो अत्यधिक उपयोगी सामग्री अंक में है । हार्दिक बधाइयाँ स्वीकार करें ।

संयोग यह है कि जिस बात को संपादकीय उठाया गया है उस पर ही मेरे अभिनन्दनार्थ हुए राष्ट्रपति भवन के समारोह में राष्ट्रपति जी ने बल दिया ।

दूरभाष : 6[illegible]8 तार : "जय हिन्दी"

केरल ज्योति

पुष्प 22
दल 2
एक प्रति—1 रु०
वार्षिक—10 रु०

सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका

मई 1987

संपादकीय

पानी चाहिए, जाना है, कमरा नंबर

दक्षिण की साधारण जनता ने हिन्दी को बहुत पहले ही अपनाया है, पर यहाँ के कुछ बुद्धि जीवियों को राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी अब भी स्वीकार्य नहीं लगती। इस का नतीजा यह है कि वे शीर्षक में दिये गये जो वाक्यांश हैं वैसे कुछ वाक्यांश मुश्किल से सीख लेते हैं और उन से हिन्दी प्रान्तों में कार्यनिर्वाह करने के प्रयत्न में हार खा कर हिन्दी के कट्टर विरोधी बन जाते हैं।

इसी अंक में बहुभाषाविद डॉ० वेललायणी अर्जुनन के भाषण का जो सारांश दिया गया है उस में आप ऐसे तीन बुद्धिजीवियों की (एक सांसद, एक कुलपति और एक उपन्यासकार) बात पढ सकते हैं। तलाश करने पर ऐसे अनेकों मिल सकते हैं।

हमें इस वास्तविकता से मुँह नहीं मोडना है। हमें इस याथार्थ्य को स्वीकार करना है और सोचना है कि ऐसी स्थिति किस कारण उत्पन्न हुई और इस का निवारण किस तरह करना है।

साधारण हिन्दी प्रचारक इन बुद्धिजीवियों तक पहुँच नहीं पाते। उन पर साधारण हिन्दी प्रचार अभियान का कोई प्रभाव नहीं पडता।

हिन्दी संबन्धी उन की यह अन्यत्व मनोवृत्ति तभी बदल जायेगी जब हिन्दी जितनी उत्तर की भाषा है उतनी दक्षिण

इस अंक में

की भी भाषा बनेगी। हिन्दी में केवल हिन्दी भाषी प्रान्तों की ही नहीं, हिन्दीतर भाषा भाषी प्रान्तों की बातें भी आ जायें। हिन्दी की कहानियों के पात्र केवल उत्तर भारत से ही नहीं चुने जायें समस्त भारत से चुने जायें। हिन्दी की जीवनियाँ केवल हिन्दी भाषी सज्जनों पर ही नहीं हिन्दीतर भाषा भाषी सज्जनों पर भी लिखी जायें।

इस दिशा में जो प्रयत्न आरंभ हुआ है वह सर्वथा स्वागतार्ह है। स्व० वात्स्यायन जी ने एक कविता 'पेरियार' शीर्षक से लिखी। पेरियार केरल की एक नदी है जिसके किनारे कालटि में जगद्गुरु शंकराचार्य का जन्म हुआ। श्री विष्णु प्रभाकर जी ने "केरल के क्रान्तिकारी" शीर्षक नाटक वेलुत्तंपी पर लिखा। वेलुत्तंपी केरल के एक क्रान्तिकारी थे जिन्होंने 18 वीं सदी में ही अंग्रेजों के षड्यंत्र के विरुद्ध जनता का मोर्चा तैयार किया था और स्वतंत्र भारत केलिए आत्मबलि दी थी। क्या हम आशा करें कि हिन्दी के अन्य प्रतिष्ठित साहित्यकार भी समस्त भारत को अपनी रचना का आधार बनाने का प्रयत्न करेंगे?

वेष और भाषा में हम आज भी गुलाम हैं।

श्री. पी. एस. श्रीनिवासन
राजस्व मंत्री, केरल सरकार

[स्व० के. वासुदेवन पिल्लै जयन्ती के अवसर पर 8-4-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में दिया गया भाषण]

मुझे हिन्दी पसन्द है। हिन्दी थोडा थोडा जानता हूँ।

भारत की प्राचीन परंपरा और नयी स्थिति के बीच करीब दो सौ वर्षों की खाई है। जडों से नयी शाखाओं का संबंध हम जोड नहीं पाये हैं। जोड पायेंगे या नहीं यह भी संदेह की बात है।

संविधान में तीन भाषाओं की बात है। मातृभाषा, राष्ट्रभाषा हिन्दी और सार्वदेशीय भाषा अंग्रेजी। पहले राष्ट्रभाषा के स्थान पर हिन्दी और अंग्रेजी थीं। अब हिन्दी या अंग्रेजी वाली बात है। केरल की जनता को तीन भाषायें सीखनी हैं—मलयालम, हिन्दी और अंग्रेजी। प्राय: सभी राज्यों की जनता केलिए तीन भाषायें सीखना अनिवार्य है। पर हिन्दी प्रान्तों की जनता को केवल एक ही भाषा सीखनी है। केवल हिन्दी। उनकी मातृभाषा है हिन्दी। राष्ट्रभाषा भी हिन्दी है। जैसे हिन्दी या अंग्रेजी वाली बात आ गयी तो उन केलिए अंग्रेजी सीखने की जरूरत नहीं रह गयी। यह बडी सुविधाजनक स्थिति है।

श्री. पी. एस. श्रीनिवासन

पर हिन्दी प्रान्तों की जनता को केवल एक ही भाषा सीखनी है। केवल हिन्दी।

कुछ विभागों द्वारा हिन्दी लादने का जो प्रयत्न हो रहा है, इसलिए कहीं कहीं हिन्दी के प्रति शत्रुता भी हो रही है। एक बार जब हम लोक सभा के ग्रंथालय में गये तब वहाँ के कर्मचारी केवल हिन्दी बोलने लगे। हम मलयालम में बोलने लगे। फिर वे अंग्रेजी बोलने लगे। उस राष्ट्र प्रेम का और भाषा प्रेम का मैं आदर करता हूँ। इस में कोई सन्देह नहीं कि अधिकांश भारतीयों की भाषा होने के नाते हिन्दी ही राष्ट्रभाषा के रूप में विकसित की जा सकती है। यदि हम हठ करें कि हम केवल मलयालम ही बोलेंगे तो हर भाषा की किताबें मलयालम में आ जायेंगी।

इस में कोई सन्देह नहीं कि अधिकांश भारतीयों की भाषा होने के नाते हिन्दी ही राष्ट्रभाषा के रूप में विकसिस की जा सकती है।

जापान में कोई काम मिलना है तो छ! महीने के अन्दर वहाँ की भाषा सीखनी होगी। कई अन्य विदेशी राज्यों का भी यही हाल है। अंग्रेजी से वहाँ काम नहीं चलेगा।

भाषा के प्रति हमारा दृष्टिकोण त्रुटिपूर्ण था। इसलिए आज भी हमारी कोई राष्ट्रभाषा नहीं। उत्तर भारत के हिन्दी प्रान्तों की साधारण जनता अंग्रेज़ी नहीं समझती। उन से केवल हिन्दी में ही बात की जा सकती है। अत: केवल हिन्दी ही राष्ट्रभाषा बन सकती है।

वेषभूषा में भी हम दूसरों का अनुकरण करते हैं। गोरे जब यहाँ आते हैं तो प्राय दिगंबर होकर घूमा करते हैं। पर हम गोरों का वेष-- कोट पतलून और टाई पहनते हैं। वेष और भाषा में हम अब भी गुलाम हैं। गुलामी हमारे मनसे दूर नहीं हुई है। इसलिए हमारा विकास अवरुद्ध हो रहा है। इस में परिवर्तन लाना है।

ऐसे परिवर्तन केलिए प्रयत्नशील थे स्व० के. वासुदेवन पिल्लैजी जिन का जन्म दिन आज मनाया जा रहा है।

बडे संतोष के साथ में इस समारोह का उद्घाटन करता हूँ।

❀

मानविकता की दृष्टि से केरल आगे है ।

प्रो० ओ. एन. वी. कुरुप
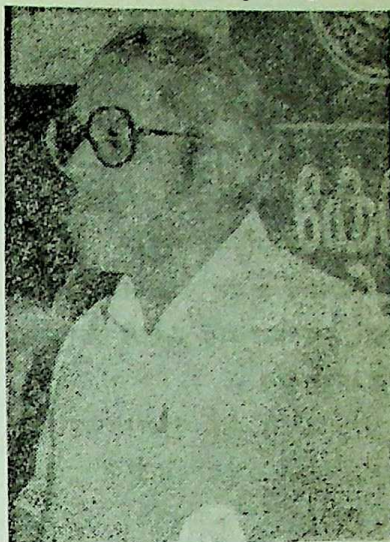
[8-4-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में दिये गये भाषण का सारांश]

एक बार एक हिन्दी कविता का अनुवाद मलयालम में करने में सहायता लेने केलिए मैं वासुदेवन पिल्लै जी के पास गया था ।

हिन्दी प्रेम उस समय विकसित हुआ जब स्वतंत्रता अभियान अत्यंत संशुद्ध था । मुझे स्कूल में हिन्दी पढने का अवसर नहीं मिला। तो भी वासुदेवन पिल्लजी की 'हिन्दी स्वयं शिक्षक' नामक पुस्तक की सहायता से थोडी हिन्दी सीखी ।

मानविकता की दृष्टि से उत्तर भारत की स्थिति केरल की अपेक्षा बहुत पिछडी हुई है। वहाँ आज भी पशुवत जीनेवाले भी हैं और बादशाहों के समान जीनेवाले भी हैं।

केरल की अपनी अनेक विशेषतायें हैं । इतर धर्मों के आराधनालय बनाने के लिए यहाँ के राजाओं ने मुफ्त में जमीन दी थी। उत्तर की भाषा के प्रति यहाँ कोई विरोध नहीं हुआ। हिन्दी का नाम सुनते ही हमें स्वतंत्रता, गांधी, स्वदेशी, भारत

हिन्दी का नाम सुनते ही हमें स्वतंत्रता, गांधी, स्वदेशी, भारत आदि भावों का स्मरण हो आता है ।

आदि भावों का स्मरण ही आता है। हिन्दी भाषा सुशक्त है और साहित्यिक दृष्टि से समृद्ध है। यह भारत की राष्ट्रभाषा है। इस के पीछे मेरा भारत है। जनतांत्रिक व्यवस्था में अधिकांश लोगों की भाषा सब केलिए माननीय है। इन सब कारणों से ही मुझ जैसे केरलीय लेखक हिन्दी से प्रेम करते हैं।

महाभारत का पहला भारतीय भाषानुवाद मलयालम में कुंञिकुट्टन तंपुरान द्वारा किया गया। क्या

महाभारत का पहला भारतीय भाषानुवाद मलयालम में कुंञिकुट्टन तंपुरान द्वारा किया गया। क्या तंपुरान की टक्कर के कोई लेखक हिन्दी में हुए हैं ?

तंपुरान की टक्कर के कोई लेखक हिन्दी में हुए हैं ? किसी राज्य या अकादमी का प्रोत्साहन उन्हें नहीं मिला था।

कोटुंगल्लूर के मंदिर की भगवती को कुछ रुपयों की थैली भेंट चढ़ाकर उन्होंने अकेले वह काम पूरा किया था।

ईस्वी नवीं शताब्दी के करीब मलयालम में 'भाषा कौटलीयम' को

मैं भारत का एक पुत्र हूँ और भारत की जनसाधारण की मातृभाषा हिन्दी से प्रेम करता हूँ।

रचना हुई। कौटिल्य के अर्थशास्त्र का यह पहला भारतीय भाषानुवाद था जो व्याख्या सहित रचा गया।

आज भी केरल में ऐसे अनेकों राजनीतिक प्रयोग चल रहे हैं जो सारी दुनियाँ को चकित कर रहे हैं। यहाँ की धार्मिक सहिष्णुता जल्दी बिगाडी नहीं जा सकती। नेताओं में ललकारें हुआ करती हैं, पर जनता बडे प्रेम से रहती है।

मैं गीता का ही नहीं बाइबिल का भी आदर करता हूँ। खुरान के अनुवाद भी पढ़ता हूँ। यह विचारधारा मुझे कैसे मिली ? हमारा मन स्वतंत्रता संग्राम के समय रूपीकृत हुआ था। उस के पीछे गाँधीजी थे, रवीन्द्रनाथ ठाकुर थे, सरोजिनी नायडु थीं और वासुदेवन पिल्लै जी जैसे अनेकों ऐसे व्यक्ति थे जो राष्ट्रीय अवबोध उत्पन्न करते हुए, निस्वार्थभाव से हिन्दी का प्रचार कर रहे थे। हिन्दी को मैं उस उच्च स्तर पर पाता हूँ। सूर, तुलसी से

लेकर आज के मेरे प्रिय लेखकों तक के हिन्दी लेखकों की भाषा है हिन्दी। मेरे भारत की भाषा है हिन्दी। मैं भारत का एक पुत्र हूँ और भारत का जन-साधारण की मातृभाषा हिन्दी से प्रेम करता हूँ। हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है, हमारी संस्कृति की भाषा है, हमें एक बनानेवाली भाषा है। ऐसी मनोवृत्ति मुझ में परोक्ष रूप से उत्पन्न करनेवाले महात्माओं में एक थे वासुदेवन पिल्लै जी। उनका मैं आदर करता हूँ। उनकी स्मृति अनश्वर रहे।

सूक्तिकाएँ

मिश्रीलाल जायसवाल

1. गांधी जयंती

उन्होंने
गांधी जयन्ती
शानदार ढंग से
मनाई
काकटेल पार्टी
कराई

2. भार

वे पृथ्वी पर भार
नहीं बनना चाहते हैं
इसलिये अपना अधिक समय
हवाई जहाज पर
गुजारते हैं

3. नसीहत

डैडी ने
अपने चारों बच्चों को
शहर में लगी अश्लील फिल्म
न देखने की
नसीहत दी
उनकी जगह खुद उसे
चार बार देख ली

हिन्दी के प्रभुत्व से हिन्दी का विरोध न हो ।

श्री. एम एम. हसन
सदस्य, विधान सभा, केरल

[8-4-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में दिये गये भाषण का सारांश]

श्री० वासुदेवन पिल्लै केवल एक भाषा प्रचारक ही नहीं थे, बल्कि हमारे देश की स्वतंत्रता के लिए और एकता के लिए भाषा प्रचार को उन्होंने अपना जीवनव्रत बना लिया था ।

हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है । जनतंत्रात्मक संस्कृति में राष्ट्रीय एकता का एक मुख्य घटक है भाषा। भारत की आम भाषा बनने की योग्यता हिन्दी में ही सर्वाधिक है ।

स्वतंत्रता संग्राम की गर्मी और आवेश ने हिन्दी प्रचार अभियान को जन्म दिया था। पर आजकल कई लोगों के लिए हिन्दी अध्ययन का उद्देश्य देश की एकता कायम रखना नहीं । नयी पीढी इस आशा से हिन्दी सीखते हैं कि हिन्दी उनके जीवन निर्वाह में और जीवन की प्रगति में सहायक होगी ।

श्री. एम. एम. हसन

हिन्दी लादने के विरुद्ध कहीं कहीं आन्दोलन चल रहे हैं । भाषाप्रेम का पागलपन ही इस का कारण है। दोनों प्रवृत्तियों का विरोध किया जाता है । केरल जैसे राज्यों ने किसी

नयी पीढी इस आशा से हिन्दी सीखते हैं कि हिन्दी उनके जीवन *निर्वाह* में और जीवन की प्रगति में सहायक होगी।

भाषा के विरुद्ध आन्दोलन नहीं चलाया है। यदि कभी कहीं कोई आन्दोलन हिन्दी के विरुद्ध यहाँ चला तो वह राजनीति से प्रेरित था। केरल के लोग, चाहे किसी भी राजनीतिक दल के क्यों न हों, राष्ट्रीय दृष्टिकोण से ऐसी समस्याओं को देखते हैं। पर कुछ अन्य राज्यों की स्थिति ऐसी नहीं है। इस केलिए हम उन्हें पूर्ण रूप से दोषी नहीं ठहरा सकते। भाषा के क्षेत्र में और राजनीति के क्षेत्र में उत्तरवालों का एक प्रकार का प्रभुत्व आज कायम है। एक हद तक यह अनिवारणीय भी है। राष्ट्रीय स्तर के हर सम्मेलन में हम इस प्रभुत्व का अनुभव करते हैं। जहाँ दक्षिण भारतीय प्रतिनिधि भी उपस्थित हैं ऐसे सम्मेलनों में अंग्रेज़ी जाननेवाले हिन्दी भाषी भी केवल हिन्दी में बोलने का हठ करते हैं। दक्षिण के चारों प्रान्तों की जनता एक जुट हो कर प्रयत्न करें तो इस मनोवृत्ति में परिवर्तन लाया जा सकेगा? मुझे सन्देह है।

इन सब के बावजूद बहुमत की भाषा होने के नाते हिन्दी से प्रेम करना और जनता में इस का प्रचार करना नयी पीढी का कर्तव्य है। इस का पथ प्रदर्शन स्व. के. वासुदेवन पिल्लै ने किया था। उन के त्याग निर्भर जीवन पर स्वागत भाषण में काफी प्रकाश डाला गया है। उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के एक भाग के रूप में हिन्दी प्रचार को देखा था। उन से स्थापित केरल हिन्दी प्रचार सभा

इन सब के बावजूद बहुमत की भाषा होने के नाते हिन्दी से प्रेम करना और जनता में इसका प्रचार करना नयी पीढ़ी का कर्तव्य है।

आज केरल की एक विख्यात संस्था बन चुकी है। हम देश प्रेमी और देशाभिमानी कभी उन की सेवायें नहीं भुला सकेंगे। उन के अनुगामी श्री. एम. के. वेलायुधन नायर भी समाज सेवा के रूप में हिन्दी का कार्य कर रहे हैं।

स्व. वासुदेवन पिल्लै जी की पुण्य-स्मृति में अपनी आदरांजलियाँ अर्पित करता हूँ। ❀

हिन्दी स्वतंत्रता-संस्कृति का अंग है।

प्रो० विष्णुनारायणन नंपूतिरी

[केरल हिन्दी प्रचार सभा में 8-4-1987 को दिये गये भाषण का सारांश]

यहाँ जो भाषण हुए वे सब देश की समस्याओं पर ही हुए। यह एक बडी बात है। एक देश की या युग की चेतना को जिन्होंने आत्मसात किया है उनके संबन्ध में बोलते समय ही ऐसा संभव है।

मेट्रिक की परीक्षा के उत्तीर्ण होने के पहले ही मैं ने एक हिन्दी परीक्षा का प्रमाण पत्र पाना चाहा और प्राप्त किया। खादी पहनता हूँ। हिन्दी, खादी, गांधीवाद यह सब स्वतंत्रता-संस्कृति के अंग थे। इस संस्कृति को कैसे बनाये रखें यही आज के भाषणों का विषय था। जैसे श्री. ओ. एन. वी. ने कहा साधारण निरक्षर जनता ही

उत्तर भारत के कई नेता आज अंग्रेजों की वेशभूषा पहनते हैं और अंग्रेजी बोलते हैं।

भारतीय संस्कृति को सुरक्षित रखती है। उत्तर भारत के कई नेता आज
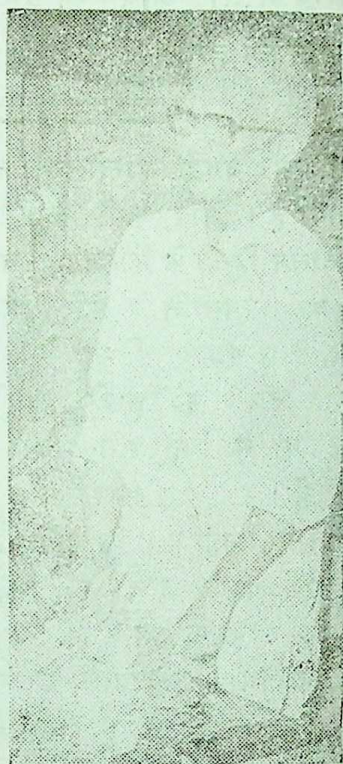
प्रो० विष्णुनारायणन नंपूतिरी

अंग्रेज़ों की वेशभूषा पहनते हैं और अंग्रेजी बोलते हैं।

हिन्दी की प्रभुता का एक कारण केरलीयों की राजनीतिक असमथंता भी है। केरल के शंकराचार्य ने अपनी राजनीतिक प्रतिभा से उत्तर को प्रभावित किया था। ❀

हिन्दी सीखने केलिए केरल आ जायें

डा० एन. ई. विश्वनाथ अय्यर

[8-4-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में दिये गये भाषण का सारांश]

हम स्व० वासुदेवन पिल्लैजी के शिष्यगण और हिन्दी के क्षेत्र में कार्य करनेवाले हिन्दी की गहरी समस्यायें जानते हैं। पर उनसे लडे बिना छोटी सी मोमबत्ती जलाकर अंधेरा दूर करने की कोशिश कर रहे हैं। वही हम लोगों का काम है।

हिन्दी साहित्य संपूर्ण भारतीय साहित्य का प्रतिनिधि बनता जा रहा है।

अभी कुछ दिन पहले हिन्दी के अग्रणी साहित्यकार 'अज्ञेय' का स्वर्गवास हो गया। वे हिन्दी साहित्य के महान लेखक थे। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के लेखक रहे हैं। उनका दृष्टिकोण अखिल भारतीय था। उनका 'शेखर एक जीवनी' केवल हिन्दी प्रदेश के आधार पर लिखा हुआ नहीं है। वे पूरे भारतवर्ष में घूमे थे। मद्रास में उन्होंने शिक्षा पायी थी। ऊटकमंड गये थे। पूरे भारत वर्ष का प्रातिनिध्य उनके उस उपन्यास में है। तो हिन्दी साहित्य संपूर्ण भारतीय साहित्य का प्रतिनिधि बनता जा रहा है।

ओ. एन. वी., विष्णु नारायणन नंपूतिरी जैसे मलयालम के प्रशस्त कवियों की रचनाओं का अनुवाद जब हिन्दी के माध्यम से हिन्दीवालों को मिलता है तो वे आश्चर्य में पडते हैं और बहुत प्रभावित हो जाते हैं। वे कहते हैं कि इतनी अच्छी कविता हमें हिन्दी में देखने को नहीं मिलती। हाल ही में मैं एक मलयालम कहानी का अनुवाद लेकर गया था काशी।

इतनी अच्छी कविता हमें हिन्दी में देखने को नहीं मिलती।

सच्चिदानन्दन की एक कहानी है अंगभंगम। मातृभूमि साप्ताहिक में तीन किश्तों में आयी थी। अनुवाद करने पर मेरा मन नहीं भरा। काशी में काशीनाथ सिंह के साथ दो दिन बैठा। पढने के बाद वे कहने लगे – इस श्रेणी की कहानी अब हिन्दी में ढूँढनी पडेगी।

इस प्रकार की अखिल भारतीय प्रवृत्ति को जन्म देने का स्वप्न देखने का कार्य हमारे आदरणीय वासुदेवन पिल्लैजी ने किया। उनकी 'राष्ट्रवाणी' अर्पण के दिन मुझे अब भी स्मरण है। उनकी स्मृति में हमें ऐसा ठोस काम करना है

इस श्रेणी की कहानी अब हिन्दी में ढूँढनी पडेगी।

कि हिन्दी प्रदेश के लोग हिन्दी अध्ययन के लिये केरल आ जायें।

स्व० पिल्लैजी की स्मृति में एक विद्वत्तापूर्ण व्याख्यानमाला का भी प्रबन्ध होना है। केरल हिन्दी प्रचार सभा में एक अतिथि भवन बने जो हिन्दी के श्रेष्ठ साहित्यकारों का संगम स्थल हो जाये।
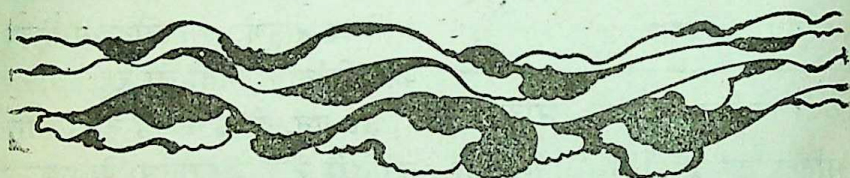
हमें तब तक विश्राम नहीं लेना चाहिए जब तक कि हमारे स्कूलों और कॉलेजों में हमें देशी भाषाओं के माध्यम से शिक्षा नहीं दी जाती।

—महात्मा गांधी

रवीन्द्रनाथ ठाकुर और वल्लत्तोल

श्री. सी. उण्णिराजा

[केरल भाषा संस्थान द्वारा प्रकाशित 'केरलवुम् टागूरुम' नामक ग्रंथ से साभार संक्षिप्त एवं अनूदित]

वल्लत्तोल और ठाकुर दोनों महाकवियों का जीवनकाल और साहित्य सृजनकाल करीब एक ही था। ठाकुर का जन्म 1861 में और वल्लत्तोल का जन्म 1878 में हुआ। ठाकुर का निधन 1941 में और वल्लत्तोल का निधन 1958 में हुआ।

दोनों राष्ट्रकवि माने गये और विश्वविख्यात हुए। लेकिन जो ख्याति ठाकुर को मिली उतनी ख्याति वल्लत्तोल को नहीं मिली है।

वल्लत्तोल

दोनों महाकवियों का तुलनात्मक अध्ययन करना बहुत कठिन है।

महाकवि ठाकुर कलकत्ता के एक धनी जमीन्दार परिवार में पैदा हुए। वह परिवार बंगाल के तत्कालीन सामाजिक और सांस्कृतिक नवीकरण अभियानों का एक संगम स्थान था। रवीन्द्रनाथ ठाकुर के पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने राजाराम मोहन राय के साथ ब्रह्मसमाज का नेतृत्व किया था। बंकिचन्द्र चाट्टरजी, जिन्होंने बंगला साहित्य को एक नई

वल्लत्तोल को बचपन में ऐसी कोई सुविधा नहीं मिली।

सरणी प्रदान की थी, ठाकुर परिवार के संतत सन्दर्शक थे।

1857—1859 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की स्मृतियाँ मिट नहीं चुकी थीं। विदेशी शासन के प्रति जनहृदयों में जो विरोध जल रहा था वह ठाकुर परिवार में भी प्रतिबिंबित था।

बचपन में ही पश्चिमी साहित्य का परिचय पाने का अवसर ठाकुर को मिला। उन दिनों ठाकुर परिवार का सन्दर्शन करते रहे जर्यिस लोंग विख्यात रूसी साहित्यकार इवान तुर्गनोव के मित्र थे।

ठाकुर ने घर में ही अंग्रेजी का अध्ययन किया। परिवार का मुख्य परिचारक शाम को रामायण और महाभारत पढता था तो ठाकुर उसे रुचि से सुनते थे। पिता के साथ हिमालय पर्वत की सैर करके प्रकृति की सुन्दरता का आस्वादन किया।

सत्रह वर्ष की आयु में बडे भाई सत्येन्द्र ने उच्च शिक्षा केलिए ठाकुर को इंग्लैंड भेजा। यद्यपि वे पढाई छोडकर जल्दी लौट आये तो भी अंग्रेज़ी साहित्य की गहराई में पैठने और पश्चिमी संगीत की नई नाद-धारायें आत्मसात करने का अवसर उन्हें मिला।

वल्लत्तोल को बचपन में ऐसी कोई सुविधा नहीं मिली। यद्यपि एक धनी ज़मीन्दार परिवार में उनका जन्म हुआ तो भी तिरूर-पोन्नानी नहर और अरब सागर के बीच एक छोटे गाँव में ही उनका जन्म हुआ और बचपन बीता। वे मलयालम और संस्कृत को छोडकर और कोई भाषा नहीं जानते थे।

वे मलयालम और संस्कृत को छोडकर और कोई भाषा नहीं जानते थे।

वल्लत्तोल मलयालम के विख्यात कवि होने के बाद ही भारत के और विश्व के इतर साहित्यों से परिचय पा सके और भारत में तथा विश्व के अन्य देशों में घूम सकें।

वल्लत्तोल के बचपन में केरल में सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक नवोत्थान का आरंभ नहीं हुआ था। परिवर्तन की हवा बीसवीं सदी के साथ ही केरल में आई।

लेकिन केरल में जब सामाजिक और सांस्कृतिक नवोत्थान के साहित्य की नूतन प्रवृत्तियों के और स्वतंत्रता

संग्राम के अंकुर निकलने लगे तब उनकी प्रधानता समझने में और उनके विकास के लिए अपना योगदान देने में वल्लत्तोल को कोई कठिनाई नहीं हुई ।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कार्यकलापों में और सम्मेलनों में उन्नीसवीं शताब्दी में ही ठाकुर भाग लेने लगे । उन दिनों कांग्रेस में भाग लेनेवाले उन्नत कुलजात प्रतिनिधि पश्चिमी वेष-भूषा पहनकर केवल अंग्रेजी में भाषण देते और प्रस्ताव पास करते थे तब रवीन्द्रनाथ ठाकुर

रवीन्द्रनाथ ठाकुर बंगला वेष-भूषा में आकर इस बात पर जोर देते थे कि सम्मेलन के कार्यक्रम बंगला भाषा में हो ।

बंगला वेष-भूषा में आकर इस बात पर ज़ोर देते थे कि सम्मेलन के कार्यक्रम बंगला भाषा में हो ।

दो दशकों के बाद ही सही महाकवि वल्लत्तोल स्वतन्त्रता के संदेश वाहक के रूप में मंच पर आये। शायद ठाकुर की अपेक्षा राजनीतिक स्वतन्त्रता को किसानों और मज़दूरों की सामाजिक और आर्थिक स्वतन्त्रता से जोडने का प्रयत्न वल्लत्तोल ने ही किया था ।

शायद ठाकुर की अपेक्षा राजनीतिक स्वतंत्रता को किसानों और मज़दूरों की सामाजिक और आर्थिकस्वतन्त्रता से जोडने का प्रयत्न वल्लत्तोल ने ही किया था ।

महाकवि ठाकुर का सबसे प्रसिद्ध कविता संकलन गीताञ्जली है । उसके सभी गीत गेय है । वे वेदों और उपनिषदों के सूक्तों का स्मरण दिलाते हैं ।

पद्मा नदी के तीर पर अपने परिवार के एस्टेट में रहते समय लोकसाहित्य और लोकगीत में वे रुचि लेने लगे थे । उन लोकगीतों की गानमाधुरी ने ठाकुर की अनेक कविताओं को लय प्रदान किया है । वेदोपनिषद सूक्तों और ग्रामीण गानों के इस अपूर्व मिलन से उद्भूत असाधारण अनुभूति ने ही शायद गीताञ्जली के गीतों के अंग्रेजी अनुवाद की ओर पश्चिमी जनता को एकदम आकृष्ट किया था और महाकवि को विश्वविख्यात बना दिया था ओर नौबल पुरस्कार दिलाया था । वल्लत्तोल भी वेद, उपनिषद, पुराण और इतिहास में पारंगत

लेकिन उनमें से प्राप्त भावों की अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने जो शैली अपनायी वह ठाकुर की शैली से विभिन्न थी ।

थे । लेकिन उनमें से प्राप्त भावों की अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने जो शैली अपनायी वह ठाकुर की शैलो से विभिन्न थी । उनकी शैलो ललित, प्रसादात्मक और रियलिस्टिक थी जो उनकी अपनी थी । महाकवि ठाकुर एक प्रवोधक और दार्शनिक थे; कवि और गद्यकार थे; नाटककार और आलोचक थे; इतिहासकार और प्रचारक थे; शिक्षाविद और चित्रकार थे; गायक और गानरचयिता थे; अभिनेता और दिग्दर्शक थे । अपने भारतीय शिक्षा –दर्शन, एकविश्व दृष्टिकोण और कृषि सुधार के लक्ष्यों को सफल बनाने केलिए ठाकुर ने शान्ति निकेतन, श्रीनिकेतन और विश्वभारती की स्थापना की ।

वल्लत्तोल के संबंध में यह सब नहीं कहा जा सकता । काव्यों के अलावा उन्होंने "आत्म पोषिणी" के संपादक रहते समय कुछ आलोचनात्मक निबन्ध भी लिखे हैं । उनके अर्थसंपुष्ट और कवितामय भाषण अपूर्ण रूप में ही लिपिवद्ध किये गये हैं। कथकलि और अन्य केरलीय नृत्य कलाओं के उत्थान के सीमित उद्देश्य से महाकवि ने 'कलामण्डलम' की स्थापना की ।

दोनों महाकवियों को जीवन में बहुत दुःख भोगने पडे हैं । कविताओं के पारिश्रमिक से जीवन निर्वाह करने में वल्लत्तोल को बडी कठिनाई झेलनी पडी । ठाकुर के बाल्य में ही उनकी माता का स्वर्गवास हो गया । भाभी, पिता, पत्नी और सन्तानों के वियोग ने भी उन्हें बहुत दुःखी बनाया । लेकिन दोनों अपने पथ से विचलित नहीं हुए ।

दोनों ने अपने देश और जनता की मुक्ति को मानवसमूह की मुक्ति के अंश के रूप में देखा ।

ठाकुर और वल्लत्तोल बडे देशप्रेमी थे । अपनी अपनी भाषा को दोनों ने संपुष्ट किया, दोनों ने भारतीय जनता की एकता पर ज़ोर दिया और मुक्ति और नवोत्थान के लिए लडने के लिए जनता को उद्बुद्ध किया । दोनों ने अपने देश और जनता की मुक्ति को मानवसमूह की मुक्ति के अंश के रूप में देखा । वे मानवतावाद के वक्ता थे । दोनों ने युद्ध का विरोध किया और विश्व शान्ति के लिए आवाज़ उठायी । ❀

गीतांजली के मलयालम अनुवाद

डा० के. राघवन पिल्लै

[केरल भाषा संस्थान द्वारा प्रकाशित 'टागूरुम केरलवुम' नामक ग्रंथ से साभार संक्षिप्त एवं अनूदित।]

अपने गीतांजली, गीतिमाल्य, नैवेद्य, खेया, शिशु इन बंगला काव्य संकलनों से चुनेहुए एक सौ तीन गीतों का अंग्रेज़ी अनुवाद रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने स्वयं किया था जिस पर उन्हें नोबल पुरस्कार मिला। इसके कई अनुवाद मलयालम में भी निकले। इनमें अधिकांश अनुवादों में उपर्युक्त एक सौ तीन गीत हैं। लेकिन जी. शंकर कुरुप ने गीतांजली का जो अनुवाद किया उस में एक सौ सत्तावन गीत हैं। यह बंगला में प्रकाशित गीतांजली का अनुवाद है, जो सीधे बंगला से किया गया।

नोबल पुरस्कार से सम्मानित गीतांजली का प्रथम मलयालम अनुवाद श्री. की.बेट्टु माधवन नायर का है जिसका प्रकाशन 1921 में मद्रास की माकमिल्लन कंपनी ने किया। फिर 1951 में श्री. एषुकोण शिवशंकरन द्वारा किया गया अनुवद तिरुवनन्तपुरम के श्री विलासप्रेस ने प्रकाशित किया। 1973 में श्री. एल. एम. तोमस का गद्य अनुवाद मंगलापुरम के बासल मिशन ने प्रकाशित किया, जिसके करीब आठ संस्करण अब तक निकले हैं। 1964 में मलयाल गीतांजली नामक अनुवाद जो विद्वान कृष्ण पिल्लै ने तैयार किया, तिरुवनन्तपुरम के सेन्ट जोसफ़्फ्स प्रेस ने प्रकाशित किया। 1959 में श्री. जी. शंकर कुरुप का अनुवाद एरणाकुलम के तिलक प्रकाशकों ने निकाला। श्री. के. सी. पिल्लै और डा० वि. एस. शर्मा ने मिलकर अंग्रेज़ी गीतांजली का गद्य अनुवाद तैयार किया जिसका

सावधान !

श्री. देवराज

हवा
जब वर्दी पहन कर
आवाज दे रही हो
पहाड़ों के शिखरों से
और पानी
बिगुल बजा रहा हो
दिशान्त में
तब समझो
हमारे
सावधान होने का समय
आ गया है
निर्णायक युद्ध के लिए। ❀

हिन्दी विभाग
मणिपुर विश्वविद्यालय, कांचीपुर, इम्फाल

प्रकाशन कोट्टयम के डी. सी. बुक्स ने 1978 में किया।

इनके अलावा एक सुन्दर संस्कृत अनुवाद श्री. एन. गोपाल पिल्लै ने किया जिसका प्रकाशन तिरुवनन्तपुरम में हुआ।

इन में श्री. के. सी. पिल्लै और श्री. शर्मा का अनुवाद अनेक कारणों से प्रमुख है। इसमें गीतांजली के एक सौ तीन गीतों के बंगला रूप का मलयालम लिप्यन्तरण दिया गया है। यह भी सूचित किया गया है कि एक एक गीत गीतांजली, गीतिमाल्य, नैवेद्य, खेया, शिशु इन संकलनों में किस किस संकलन से लिया गया है। बंगला के कुछ वर्णों का विशेष उच्चारण भी इसमें दिया गया है।

❀

[व्यंग्य कहानी]

तुँगी

डॉ० वी. गोविन्द शेणाय

थैला ले तुँगी जा सकती थी या वहीं बेंच पर बैठी भी रह सकती थी मानों बात कुछ भी नहीं हुई हो। दिल धडकने लगा; केवल उसकी ओर तनिक सरक भर गई। इधर उधर देखा, फिर प्लाटफार्म की ओर। माल गाडी भी जा चुकी थी। एक्सप्रेस को आते देख कर ही प्लाटफार्म पर भगदड मच गई और तुँगी के पास बेंच पर बैठे पति-पत्नी गाडी की ओर बेतहाशा दौड़े; अपने थैले की ओर उन का ध्यान ही नहीं गया। गाडी धडधडाती आई और एकदम वैसी ही चल भी दी। तुँगी को पैसन्जर में जाना था; बेंच पर ही बैठी रही, अकेली। गाडी के छूटने पर ही तुँगी का ध्यान थैले की ओर गया था। अन्यथा थैला क्या वह उन तक पहुँचाती? क्या भीड और भगदड में वह स्वयं इतना कष्ट झेलती? ऐसे अवसरों पर आदमी प्राय: अनदेखा ही करता है। तटस्थता ऐसे अवसरों पर ही उपयोगी होती है। अगले स्टेशन पर उतर कर वे लौट आ सकते हैं थैला ले जाने के लिए यदि तब तक उन्हें थैले की बात याद आ गई तो। नहीं, वे लौट नहीं आयेंगे। निपट नादान ही ऐसा करते हैं। प्लाटफार्म पर चीजें क्या कभी सुरक्षित रही हैं जो उन्हें लौटने पर मिल जाय। तुँगी ने सोचा, क्यों न वह एकदम थैला उठा कर वहाँ से चली जाय। काश! पैसेंजर

उस का अपना थैला जिस में टिकट और पैसे थे प्लाटफार्म पर छूट गया था।

गाडी जल्दी ही आ जाती! गाडी जल्दी आ भी गई। तुँगी थैला ले भागी और लोगों से उलझती भिडती डिब्बे में जा बैठी। अंतर अब भी थर्रा रहा था। काश! गाडी जल्दी ही छूट जाती! डिब्बे में सब अजनबी थे; इस पर भी तुँगी आशंकित थी। गाडी जब छूटी तो उसकी जान में जान आई। बडी सावधानी से थैला खोला—चिथडे थे और था प्लास्टिक का टूटा लोटा। द्वार पर टिकट निरीक्षक दिखाई दिया। तुँगी का ध्यान अपने टिकट की ओर गया। उसका अपना थैला जिस में टिकट और पैसे थे प्लाटफार्म पर छूट गया था। ❀

V/13–ए–ओल्लूक्करा
तृशूर, केरल

13 वाँ अखिल भारतीय हिन्दी कार्यकर्ता शिविर

अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ, नई दिल्ली की ओर से 13 वाँ अखिल भारतीय हिन्दी कार्यकर्ता शिविर बम्बई में 11 फरवरी 1987 को प्रारम्भ हुआ। बम्बई हिन्दी विद्यापीठ, बम्बई ने शिविर के आयोजन की व्यवस्था की। शिविर का उद्घाटन समारोह 11 फरवरी, 1987 को अपराह्न 4 बजे बिरला क्रीड़ा केन्द्र सभागार, चौपाटी, बम्बई में आयोजित किया गया। महाराष्ट्र के राज्यपाल डॉ० शंकर दयाल शर्मा ने दीप प्रज्वलित कर शिविर का उद्घाटन किया। प्रारम्भ में छात्राओं द्वारा प्रस्तुत सरस्वती-वन्दना से कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ।

बम्बई हिन्दी विद्यापीठ के कुलपति, डॉ० मो. दि. पराडकर ने राज्यपाल डॉ० शंकर दयाल शर्मा, संस्था संघ के अध्यक्ष बाबू गंगाशरण सिंह, संघ के सचिव, श्री. रामलाल पारीख, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के प्रधानमंत्री एवं संघ के कोषाध्यक्ष श्री. शंकरराव लोंढे, बंबई विश्वविद्यालय के पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष, डा०सी. एल. प्रभात, नाट्य-ग्रन्थ लेखक डॉ० देवेश शर्मा आदि को पुष्प-गुच्छ समर्पित कर उनका हार्दिक स्वागत किया।

राज्यपाल डॉ० शंकरदयाल शर्मा ने डॉ० देवेश शर्मा को उनके द्वारा लिखित नाट्यग्रंथ "हिन्दी रंगमंच के विकास में बम्बई का योग" पुस्तक का प्रकाशनोद्घाटन करते हुए लेखक को नारियल तथा अंगवस्त्रम से सम्मानित किया।

अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ के सचिव श्री. रामलाल पारीख ने संस्था संघ का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करते हुए बताया कि सन् 1964 में राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार प्रसार के उद्देश्य से ही हिन्दी संस्था संघ की स्थापना हुई थी और यह सुखद संयोग की बात है कि अब तक लगभग 5 करोड विद्यार्थी इन संस्थाओं के माध्यम से हिन्दी पढ़ चुके हैं। श्री. पारीख जी ने अपने भाषण में बताया कि हिन्दी संस्था संघ से

आज़ादी के बाद हिन्दी के प्रचार कार्य में शिथिलता आयी। हिन्दी का सवाल जहाँ भावना से जुडा था, आत्मीयता तथा राष्ट्रीयता की मूल में जहाँ हिन्दी थी, वह नहीं रह गयी।

सम्बद्ध बीस संस्थाएँ हैं, जिनका प्रमुख कार्य है—1. परीक्षा के माध्यम से हिन्दी का प्रचार प्रसार करना, 2. हिन्दी राजभाषा के रूप में पनपे, इसके लिए प्रयत्नशील होना, 3. हिन्दी को सांस्कृतिक विनिमय का माध्यम बनाना, 4. हिन्दी को विश्व भाषा के रूप में प्रतिष्ठापित करना। आपने कहा कि सन् 1918 में गांधी जी ने हिन्दी प्रचार प्रसार का कार्य शुरू किया था, जो उत्तरोत्तर गतिशील होता रहा। वस्तुतः हिन्दी का कार्य एकता को बढाना और सांस्कृतिक समन्वय को बल देना है। मिलन और समन्वय ही हिन्दी का मुख्य कार्य है।

अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ, नयी दिल्ली के अध्यक्ष बाबू गंगाशरण सिंह ने समारोह की अध्यक्षता करते हुए अपने अध्यक्षीय अभिभाषण में कहा कि हिन्दी की जो संस्थाएं प्रचार प्रसार का कार्य कर रही हैं, उन्हीं का एक संघ "संस्था संघ" है। बाबू जी ने बताया कि प्रारंभ में राष्ट्रीय आन्दोलन के साथ ही हिन्दी का कार्य भी चल रहा था किन्तु आज़ादी के बाद हिन्दी के प्रचार कार्य में शिथिलता आयी। हिन्दी का सवाल जहाँ भावना से जुडा था, आत्मीयता तथा राष्ट्रीयता की मूल में जहाँ हिन्दी थी, वह नहीं रह गयी। अतएव उस भावना को सुदृढ रखने की दृष्टि से ही सन् 1964 में अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ की स्थापना की गई।

अपने विद्वतापूर्ण अभिभाषण में बाबू गंगाशरण सिंह जी हिन्दी की तकनीकी गतिविधियों की भी चर्चा की। देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता एवं उसकी परिव्याप्ति का उल्लेख करते हुए हिन्दी भाषा की देशव्यापी ही नहीं विश्वव्यापी लोकप्रियता की ओर संकेत किया।

उन्होंने हिन्दी भाषा के साहित्य के प्रसार प्रचार में हिन्दीतर भाषी नेताओं, महात्मा गांधी तथा साहित्यिकों एवं प्रचारकों के योगदान का उदाहरण देते हुए कहा कि केवल हिन्दी को अकेले नहीं बढेगी। उसके साथ समस्त भारतीय भाषाओं के

विकास की ओर भी ध्यान देना होगा। उन्होंने बताया कि हिन्दी किसी प्रान्त विशेष की भाषा नहीं है। वह सुरसरिता की तरह प्रवाह-मान है। उसका स्वरूप गंगा की भांति है जिसकी समृद्धि समस्त भारतीय भाषाओं के संगम से ही संभव है।

शिविर का, उद्घाटन करते हुए महाराष्ट्र के राज्यपाल माननीय डॉ. शंकर दयाल शर्मा ने कहा कि हिन्दी और हमारी स्वतंत्रता की लडाई दोनों जुडी हुई थीं। स्वतंत्रता

स्वतंत्रता के बाद हिन्दी का कार्य जिस गति से बढ़ना चाहिए था, उस गति से नहीं बढ़ पा रहा है।

के पूर्व हिन्दी का कार्य राष्ट्रीयता की भावना से ही अनुप्रेरित था। स्वतंत्रता संग्राम का वह एक अंग माना जाता था। किन्तु स्वतंत्रता के बाद हिन्दी का कार्य जिस गति से बढना चाहिए था, उस गति से नहीं बढ पा रहा है। उसके लिए हमें उसी लगन एवं दृढ संकल्प के साथ कार्य करने की आवश्यकता है।

माननीय डॉ० शर्मा ने कहा कि हिन्दी केवल हिन्दी प्रदेशों की भाषा नहीं है, यह पूरे देश की भाषा है। हिन्दी हमारे देश की एकता का माध्यम है। हिन्दी प्रेम किसी भी भाषा के प्रेम से टकराता नहीं है। हिन्दी समन्वय की भाषा है। हिन्दी जोडने की भाषा है, तोडने की नहीं।

उन्होंने बताया कि हिन्दी को बढाने में अहिन्दी भषियों का बडा योगदान रहा है। हिन्दी को बापू जी तथा विनोबा जी ने ही राजभाषा का दर्जा दिया था। हिन्दी को बढाने में महाराष्ट्रीयों का बडा योगदान रहा है। अतएव हिन्दी सबकी बन जाय, इसके लिए गहराई से सोचना होगा, क्योंकि हमें हिन्दी के विकास को रुकने नहीं देना है।

माननीय डॉ. शर्मा नें देवनागरी लिपि की विशेषताओं की चर्चा करते हुए हिन्दी में भारतीय भाषाओं के उत्कृष्ट साहित्य को प्रकाशित करने पर बल दिया और कहा कि हम सब सद्भावना के साथ हिन्दी के विकास की ओर प्रयत्नशील हो। उन्होंने कहा कि यहाँ से हम सब नई चेतना, नया विश्वास एवं दृढ निश्चय लेकर आगे बढें। भारत की एकता सुदृढ हो और हिन्दी उसके लिए

माध्यम बन सके, यह राष्ट्रीय एकता तथा सांस्कृतिक समन्वय की दृष्टि से महत्वपूर्ण बात होगी।

उद्घाटन समारोह का समापन छात्राओं द्वारा प्रस्तुत राष्ट्रगान से हुआ। बम्बई हिन्दी विद्यापीठ के प्रधानमंत्री प्रो० सी. पी. सिंह "अनिल" ने समारोह का संचालन किया। प्रो० अनिल ने आगत अतिथियों का स्वागत करते हुए धन्यवाद दिया।

तदनन्तर सांस्कृतिक कार्यक्रमों के अन्तर्गत—नृत्य प्रस्तुत किया गया। शिविर में देश के विभिन्न अंचलों से आये हुए हिन्दी संस्था संघ की सदस्य संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने अपना परिचय दिया। संघ के सचिव श्री.रामलाल पारीख ने शिविर के कार्यक्रम, हिन्दी के प्रचार प्रसार को किस प्रकार गतिशील बनाया जाय। हिन्दी के प्रचार प्रसार में जनमत को जागृत करना होगा। संस्थाएँ परीक्षाओं के संचालन के अतिरिक्त किन कार्यक्रमों को अपनाएँ इस दिशा में भी शिविर में विचार करना होगा।

द्वितीय दिवस

प्रात 9.30 बजे
दिनांक : 12 फरवरी, 1987

शिविर का कार्यक्रम श्रीमती बी. एस. शांताबाई द्वारा ईश वन्दना से प्रारंभ हुआ। प्रातःकालीन संगोष्ठी की अध्यक्षता श्री. शंकरराव लोंढे जी ने की। प्रारम्भ में संघ के कार्यालय सचिव श्री. जगदीश प्रसाद शर्मा ने शिविर के कार्यक्रम को सुचारु रूप से चलाने, शिविर कार्यक्रम की रिपोर्ट तथा शिविर का मंतव्य तैयार कराने आदि के बारे में शिविर प्रतिनिधियों से निवेदन किया। इस सम्बन्ध में बुलेटिन, उपसमिति तथा मंतव्य उपसमिति का गठन किया गया।

बुलेटिन समिति—

1. श्री. एम. कृष्णन नायर, मद्रास
2. श्री. त्रिवेणी दत्त शुक्ल, इलाहाबाद
3. श्री. नर्मदाशंकर पाण्डेय, वर्धा
4. श्रीमती बी. एस. शांताबाई, बेंगलूर
5. सुश्री एस. सुजाता, बेंगलूर

मंतव्य समिति—

1. श्री. चमनलाल सप्रू, श्रीनगर
2. श्री. नानुभाई बारोट, अहमदाबाद
3. श्री. बी. एस. राधाकृष्णन, तिरुच्चि

राष्ट्रभाषा का प्रचार करने वाला व्यक्ति चरित्रवान होना चाहिए, गांधीजी ने ऐसा कहा था।

4. श्री. दयाशंकर जोशी,
महेसाणा

5. श्री. राधाकृष्ण बहादुर,
कोलार

प्रारम्भ में श्री. शंकरराव लोंढे जी ने कहा कि विद्यालयों/स्कूलों के अतिरिक्त हम जिन क्षेत्रों में और हिन्दी का प्रचार प्रसार कर सकते हैं यह विचारणीय है। हमें प्रौढ़ शिक्षा के कार्य को बढ़ाने की दिशा में भी प्रयत्नशील होने की आवश्यकता है। प्रौढ़ शिक्षा का कार्य एक राष्ट्रीय कार्य है। साक्षरता को बढ़ाने केलिए प्रौढ़ शिक्षा की अनिवार्यता असंदिग्ध है। इसके लिए हिन्दी सेवी संस्थाओं तथा सरकार दोनों का ही दायित्व है।

पाठ्यक्रम की पुस्तकों के सन्दर्भ में भी विचारणीय है कि हमारी पाठ्य-पुस्तकें ऐसी हों जिससे राष्ट्रीय भावना जागृत हो सके। साथ ही आधुनिक सन्दर्भ से भी जुड़ा हुआ भी पाठ्यक्रम होना चाहिए।

प्रादेशिक भाषाओं का आदा[illegible] प्रदान भी होना चाहिए। ज्ञान की दृष्टि से तो यह आवश्यक है ही इसके साथ साथ सद्भाव जागृत हो सकता है। देवनागरी के माध्यम से वार्ता-लाप गाइडों का निर्माण होना चाहिए।

हमें आत्मालोचन करने की भी आवश्यकता है। राष्ट्रभाषा का प्रचार करने वाला व्यक्ति चरित्रवान होना चाहिए, गांधीजी ने ऐसा कहा था। वस्तुतः यह बात सत्य है। हम अपने चरित्र और निष्ठा के बल पर ही हिन्दी का कार्य कर सकते हैं।

श्री. वी. एस. राधाकृष्णन,
तिरुच्चि

संस्थाओं ने हिन्दी प्रचार प्रसार के लिए योग्य प्रचारक तैयार नहीं किये हैं, यह चिन्ता का विषय है।

हमारी परीक्षाओं में जो पाठ्यक्रम हैं वह इस स्तर का हो जिसे विश्व-विद्यालय मान्यता दे सकें। मान्यता का सवाल बहुत ही महत्वपूर्ण सवाल है। तमिलनाडु में 1937 से ही हिन्दी का विरोध हो रहा है। तमिलनाडु की जनता हिन्दी का विरोध नहीं कर रही है। हिन्दी का विरोध कुछ राजनैतिकों द्वारा किया जा रहा है

हिन्दी विरोध आन्दोलन में इस बार हिन्दी के प्रचारक भाई-बहनों के ऊपर भी आक्रमण हुआ। प्रसन्नता की बात है कि इस बार 40 प्रतिशत हिन्दी विद्यार्थियों की वृद्धि हुई है। आज हिन्दी के प्रचार में बुद्धिजीवी लोग आगे आ गए हैं। तमिलनाडु में दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा ही एक मात्र हिन्दी की संस्था चल रही है। हिन्दी का विरोध वास्तविक हिन्दी विरोध नहीं है। वह राजनीतिक खेल मात्र है। उन्होंने कहा कि बी. ए. स्तर की परीक्षा उत्तीर्ण

तमिलनाडु की जनता हिन्दी का विरोध नहीं कर रही है। हिन्दी का विरोध कुछ राजनैतिकों द्वारा किया जा रहा है।

करने पर विश्वविद्यालयों को बी. ए. परीक्षा में बैठने की अनुमति मिलनी चाहिए।

हिन्दी सीखने में छात्रों को उच्चारण में कठिनाई होती है। इसके लिए छोटे-छोटे कैसेट हों, जिनमें वरिष्ठ साहित्यकारों के भाषण, रिपोर्ट आदि का समावेश हो। इससे छात्रों को सुविधा होगी।

हिन्दी का काम राष्ट्र का काम है, उसे अलग नहीं रखा जा सकता।

श्री. नानुभाई बारोट,
अहमदाबाद

गुजरात में हिन्दी प्रचार की स्थिति अलग है। गुजरात में बापू जी एवं काका कालेलकर ने हिन्दुस्तानी चलाई और आज भी चल रही है। हमारे यहाँ हिन्दी का बड़ा सुन्दर प्रचार प्रसार हो रहा है। हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है, सांस्कृतिक भाषा है।

प्रो० देवनारायण सिंह, देवघर

हिन्दी संस्कृत निष्ठ भाषा है। हिन्दी आधुनिक संस्कृत है इसीलिए सर्वनिष्ठ है। हिन्दी सदैव से संपर्क की भाषा रही है और रहेगी। हिन्दी कभी भी एकात्मक रूप वाली भाषा नहीं हो सकती है। भाषा गतिशील रहती है उसका एक रूप कभी नहीं रह सकता। हिन्दी का काम राष्ट्र का काम है, उसे अलग नहीं रखा जा सकता।

प्रो० अनन्तराम त्रिपाठी, बंबई

हिन्दी के प्रचार प्रसार में प्रौढ़ शिक्षा के योगदान को महत्वपूर्ण माना ।

श्री. हरिमोहन मालवीय, इलाहाबाद

भाषा के स्वरूप के विषय में बातें प्राय: दिग्भ्रमित करनेवाली हैं। हिन्दी के रूप के संबन्ध में हमें आग्रही होना चाहिए। संविधान में व्यवस्थित रूप के आग्रही होना नितान्त आवश्यक है ।

प्रयोग से भाषा का विस्तार होता है। अत: प्रयोजन मूलक हिन्दी की ओर हमें सजग रहने की आवश्यकता है। नई चेतना के साथ हमें हिन्दी के प्रचार में लगना है, तभी कुछ सार्थक प्रयास हो सकता है ।

प्रो० जे. बी. कुलकर्णी, हैदराबाद

हिन्दी के प्रचार प्रसार में हर प्रान्तों में रुकावट आने लगी है। हिन्दी का प्रश्न आज रोज़ी-रोटी से जुडा हुआ है। हिन्दी को बढाने के लिए अंग्रेज़ी को हटाना है ।

प्रो. चमनलाल संप्रू, श्रीनगर

हिन्दी से प्रान्तीय भाषाओं का विकास होगा । हमें हिन्दी की परीक्षाओं को स्तरीय बनाने की आवश्यकता है।

हिन्दी के प्रचार प्रसार में हर प्रान्तों में रुकावट आने लगी है ।

प्रात:कालीन गोष्ठी का प्रथम सत्र समाप्त हुआ ।

द्वितीय सत्र में पूना विश्वविद्यालय की हिन्दी प्रोफेसर डॉ० दुर्गा दीक्षित ने "नयी शिक्षा नीति" के संबन्ध में अपना भाषण दिया। प्रारंभ में उन्होंने विदेशों में हिन्दी अध्ययन के बारे में अपने अनुभवों की जानकारी दी। उन्होंने बताया कि विदेशी लोग भारतीय वेश-भूषा, आचरण, भारतीय संस्कृति के प्रति आदर की भावना रखते हैं। उन्होंने शिविर प्रतिनिधियों को संबोधित करते हुए कहा कि संस्थाओं को हिन्दी प्रचार प्रसार के अतिरिक्त अन्य कार्यक्रम भी अपनाने चाहिए ।

डॉ. दीक्षित ने बताया कि सन् 1968 में जो शिक्षा नीति बनाई गई उसे ही आगे अमल में लाने का निर्णय किया गया है। नई शिक्षा नीति में त्रिभाषा सूत्र को सुचारु रूप से चलाने का कार्यक्रम बनाया

जायगा। इसलिए संस्थाओं को हिन्दी शिक्षण के साथ साथ भारतीय भाषाओं के शिक्षण की ओर भी ध्यान देना चाहिए। संस्थाओं को अपने पाठ्यक्रम में परिवर्तन करना चाहिए। हिन्दी एवं भारतीय भाषाओं में परस्पर आदान-प्रदान के कार्यक्रम को भी चलाना चाहिए। आज हम सबको अंग्रेज़ी के प्रति छात्रों की मनोवृत्ति को बदलना चाहिए। संस्थाओं को हिन्दी के साथ साथ भारतीय भाषाओं की अच्छी पुस्तकें तैयार करनी चाहिए। हिन्दी प्रचार प्रसार के लिए आधुनिक उपकरणों का भी उपयोग करना चाहिए। हिन्दी की संप्रेषण की शक्ति को बढ़ाना चाहिए। उन्होंने सुझाव दिया कि हिन्दी की समान शब्दावली होनी चाहिए।

श्री शंकरराव लोंढ़े जी ने डॉ० दुर्गा दीक्षित को उनके अच्छे भाषण के लिए धन्यवाद दिया।

द्वितीय-सत्र

समय : अपराह्न 3–00 बजे
12 फरवरी, 1987

श्री. दयाशंकर जोशी, गुजरात

हिन्दी प्रदेश की हिन्दी सेवी संस्थाएं प्रौढ शिक्षा का कार्य करें तो वह हिन्दी के प्रचार में उपयोगी सिद्ध होगा। प्रत्येक प्रदेश को जनसंख्या के हिसाब से नवोदय विद्यालय खोले जा रहे हैं उनका दूरगामी परिणाम बहुत अच्छा नहीं होगा। हिन्दी प्रचारकों का सम्मान होना भी अपेक्षित है। संस्थाओं को अनुदान की राशि छात्रों के अनुपात से निश्चित करनी चाहिए। हिन्दीतर प्रदेशों की अच्छी रचनएँ पाठ्यक्रम में लगनी चाहिए। हिन्दी के प्रचार प्रसार में संघ को और अधिक प्रभावी होने की आवश्यकता है।

कर्नाटक में 40 प्रतिशत लोग हिन्दी बोलनेवाले हैं। 4 लाख में से 3 लाख हिन्दी माध्यम से बैठते हैं।

डॉ० सुरेशचन्द्र "नन्द", कटक:

हिन्दी में बहुत सी व्याकरणिक असंगतियाँ हैं जिनके सुधार की आवश्यकता है। हिन्दी लेखन में मात्राओं आदि में विभिन्नता है। इससे छात्रों में भ्रम फैलता है।

श्री. वेदजी

हिन्दी के लिए बहुत सा ऐसा काम जो हम करते हैं उसकी जानकारी

लोगों को नहीं हो पाती है। संस्थाओं को पत्र पत्रिकाओं में जानकारी देनी चाहिए। राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा यह वर्ष "राष्ट्रभाषा वर्ष" के रूप में मना रही है।

श्रीमती सरोजा, कर्नाटक

कर्नाटक प्रदेश की हिन्दी स्थिति का परिचय देते हुए उन्होंने कहा कि कर्नाटक में 40 प्रतिशत लोग हिन्दी बोलनेवाले हैं। 4 लाख में से 3 लाख हिन्दी माध्यम से बैठते हैं।

श्री आर. वेंकटेश्वर राव, आन्ध्र प्रदेश

प्रयोजनमूलक हिन्दी का हमें प्रचार करना है। भाषा के व्यामोह में किस्सा कुर्सी का बना देते हैं। उन्होंने कहा कि हिन्दी थोपी नहीं जा रही है। हिन्दी यदि थोपी जाती तो वह कब की राजभाषा बन गई होती। जनता में फैलाए जा रहे ऐसे भ्रमों का प्रभावी रूप से उत्तर देना चाहिए।

हिन्दी यदि थोपी जाती तो वह कब की राजभाषा बन गई होती।

4.30 बजे संगोष्ठी सत्र समाप्त हुआ। इसके बाद हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, बम्बई में शिविर प्रतिनिधियों के स्वागत का कार्यक्रम आयोजित किया गया। सभा के मानद मंत्री, श्री. शांतिलाल दे. शाह ने हिन्दुस्तानी प्रचार सभा का परिचय दिया। श्री. रामरतन सिंह "भ्रमर" ने सभा का विभिन्न प्रकाशन योजनाओं की जानकारी दी। सभा द्वारा प्रकाशित कहानियों की पुस्तकें तथा विश्व ज्ञान संहिता पुस्तकें शिविरार्थियों को भेंट में दी। शिविर प्रतिनिधियों के लिए चाय-जलपान का व्यवस्था की गई। बम्बई हिन्दी विद्यापीठ के मंत्री, श्री. सी पी. सिंह "अनिल" एवं श्री शंकर राव लोंढे जी ने हिन्दुस्तानी प्रचार सभा के अधिकारियों को धन्यवाद दिया। इसके बाद शिविर प्रतिनिधि व्रज-मण्डल आवास स्थल पहुँचे।

शाम 7.30 बजे कविगोष्ठी का आयोजन किया गया। कविगोष्ठी में स्थानीय कवियों एवं शिविरार्थियों ने भाग लिया।

तृतीय दिवस

दिनांक : 13-2-1987

प्रथम-सत्र

प्रारम्भ में वर दे, वीणा वादिनी वर दे। वाणी वन्दना श्रीमती बी. आर. सरोजा (कर्नाटक) ने प्रस्तुत की। संगोष्ठी की अध्यक्षता श्री. शंकरराव लोंढे जी ने की।

"हिन्दी के प्रचार-प्रसार की रुकावटें"

डॉ० मो. दि. पराडकर

आज़ादी के कितने वर्ष बीत गये हैं किन्तु दुर्भाग्य है कि भाषा की समस्या बनी हुई है। पारिभाषिक शब्द बन गये हैं किन्तु उनका व्यवहार नहीं करते। हिन्दी की आज जो रुकावटें हैं उसमें शासन को ही दोषी मानना उचित नहीं होगा। मन में अंग्रेजी का जो प्रभाव है, वह कर्म नहीं हुआ है। चैक या धनादेश लिखने का सवाल मन का है। हिन्दी का व्यवहार न करना दिमागी दासता का परिणाम है। दिमागी दासता के कारण भी हिन्दी प्रसार में रुकावट है।

आज सभी भाषाओं लिए काम करना है। प्राय: भारतीय भाषाओं के समन्वय का सूत्र कहीं नहीं मिलता

> **पारिभाषिक शब्द बन गये हैं किन्तु उनका व्यवहार नहीं करते।**

जिसे तैयार करने की बहुत आवश्यकता है। हिन्दी के प्रचार प्रसार में हिन्दी की संस्थाओं को बहुत कुछ काम करने की जरूरत है। समन्वयात्मक कार्य करना होगा।

हिन्दी का काम हमारा है। इस भावना के निर्माण में हम अभी सफल नहीं हुए हैं। हिन्दी की भावना हृदयों में नहीं आयी है। मराठी भाषी साहित्यकारों को भी हिन्दी-वालों को सम्मानित करना है।

हम जनता के सामने सही अर्थों में नहीं बन सकते हैं। हमारे दृष्टिकोण अपने होने चाहिए। भारत की हिन्दी ही भारती बनने जा रही है। आज हिन्दी के प्रचारक को श्रद्धावान वक्ता बनने की जरूरत है। अभी व्यवहार में खुद आत्मविश्वास और दृढ़ता हो।

श्री हरिमोहन मालवीय

पारिभाषिक शब्दावली में संशोधन की प्रक्रिया हिन्दी के प्रचार प्रसार में बाधक है। हिन्दी के संबन्ध में सुनिश्चय का भाव होना चाहिए।

आज हिन्दी के प्रचारक को श्रद्धावान वक्ता बनने की जरूरत है। अभी व्यवहार में खुद आत्मविश्वास और दृढ़ता हो ।

श्री. हरिमोहन मालवीय :

अच्छा यह होगा कि देश के समस्त राजधानियों में हिन्दी के विक्रय केन्द्र हों, उनके माध्यम से हिन्दी का प्रचार प्रसार हो सकता है।

प्रो० चमनलाल सप्रू

हमारी सबसे बडी रुकावट है, मानसिक दासता।

डॉ० त्रिवेणी दत्त शुक्ल

हमारे यहाँ विश्वविद्यालयों में हिन्दी की परीक्षाएँ तो होती है किन्तु वहाँ पर हिन्दी अध्यापक नहीं हैं। हिन्दी क्यों पढें? यह सवाल है। इन संस्थाओं का प्रभाव जनता तक बिलकुल नहीं पहुँच पाता।

श्री. टी. माधवराव

पुस्तकों का प्रकाशन सुरुचिपूर्ण ढंग से हो।

श्री. राधाकृष्णन

आज हिन्दी के प्रसार की आवश्यकता है। प्रचार की सीढी से हम आगे बढ गए हैं। विश्वविद्यालयों में भी हमारी पुस्तकों को पाठ्क्रम में रखने की आवश्यकता है।

श्री. सी. मिंगेलीयमी

हम मिजोरम से आये हैं। दक्षिण भारत से हम सर्वथा भिन्न हैं। हमारी मिजो भाषा और हिन्दी में काफी अन्तर है। हमारे यहाँ के लोगों को हिन्दी सिखाना बहुत कठिन काम है। हमारे यहाँ हिन्दी के प्रति रुचि दिलाना भी बहुत कठिन काम है। फिर भी हम प्रयत्न शील हैं, हिन्दी
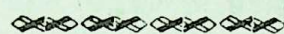
> हमारे यहाँ के लोगों को हिन्दी सिखाना बहुत कठिन काम है।

पढाने और उनमें रुचि पैदा करने के लिए। हमारे यहाँ नौकरी के लिए ही बहुत से लोग हिन्दी पढते हैं। मिज़ोराम में फिलमों के माध्यम से भी लोग हिन्दी सीखते हैं। हमें उसके संबन्ध में कोई अतिरिक्त अनुदान नहीं मिलता।

श्री. शंकरराव लोंढे

(आभार एवं धन्यवाद ज्ञापन)

अंग्रेजी की मनोवृत्ति हमारी अभी तक घटी नहीं है। उस मनोवृत्ति को हटाने की आवश्यकता है।

द्वितीय-सत्र

अपराह्न 3 बजे शिविरार्थियों द्वारा चर्चा गोष्ठी प्रारम्भ हुई। चर्चा गोष्ठी में गतवर्ष वर्धा में आयोजित शिविर में पारित मंतव्य की जानकारी संघ के कार्यालय सचिव, श्री. जगदीश प्रसाद शर्मा ने दी। मंतव्य के सम्बन्ध में की गई कार्यवाई का भी विवरण दिया। शिविरार्थियों ने मंतव्य की विभिन्न मदों की चर्चा की। शिविर प्रतिनिधियों ने सुझाव दिया कि जिन मदों पर अपेक्षाकृत कम कार्रवाई हुई है उन मदों पर प्रभावी कार्रवाई की जाय।

4.30 बजे शिविर प्रतिनिधि बम्बई प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार सभा, बम्बई के कार्यालय गए। सभा के सचिव श्री. कान्तिलाल जोशी ने शिविर प्रतिनिधियों का स्वागत किया। प्रारंभ में शिविर प्रतिनिधियों का परिचय हुआ। परिचय के बाद श्री.बी.एस.राधाकृष्णन(तमिलनाडु), श्री.हरिमोहन मालवीय(इलाहाबाद), श्री. रघुनाथ काशीनाथ जोशी (नागपुर), श्रीमती वी. एस. शांताबाई (बेंगलूर), श्रीमती सुधा दातार (बेंगलूर) श्री. घण्डोराव जाघव (हैदराबाद), श्री. के. पी. के. पिषारटी (तिरुवनन्त-पुरम) आदि ने अपनी संस्थाओं का परिचय तथा हिन्दी की विभिन्न गतिविधियों की जानकारी दी।

श्री. शंकरराव लोंढे, श्रीमती उषा बहन मेहता, उपाध्यक्ष (सभा) ने हिन्दी के प्रचार प्रसार के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किए।

श्री. जगदीश प्रसाद शर्मा ने बंबई प्रान्तीय हिन्दी प्रचार सभा के पदाधिकारियों एवं कार्यकर्ताओं के प्रति आभार व्यक्त किया।

रात्रि 8 बजे शिविर उद्घाटन कार्यक्रम की फिल्म प्रदर्शित की गई। फिल्म के बाद टेलीविजन पर फीचर फिल्म दिखाई गई।

चतुर्थ दिवस

दिनांक : 14 फरवरी, 1987

शिविर कार्यक्रमों के अन्तर्गत दिनांक 14 फरवरी, 1987 को प्रातः काल 9.30 बजे से रात्रि 9.30 बजे तक बम्बई भ्रमण का कार्यक्रम आयोजित हुआ। बम्बई के अनेकानेक धार्मिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक स्थलों का अवलोकन प्रतिनिधियों ने किया। बम्बई का सेक्रेटेरियेट कार्यालय, महाराष्ट्र नगर पालिका दिखाते हुए, गेट वे आफ इण्डिया के रास्ते से रानी बाग गए। रानी बाग से शिविरार्थी 12 बजे नवनीत प्रकाशन

के स्थानीय कार्यालय गए। नवनीत के अधिकारी ने नवनीत प्रकाशन के बारे में विस्तृत विवरण दिया। "नवनीत प्रकाशन" द्वारा चाय-जलपान से शिविर प्रतिनिधियों का स्वागत किया गया। उसके बाद "हेंगिग गार्डन, कमला नेहरू पार्क" देखा। वहाँ की प्रकृति सौन्दर्य ऊपर से बम्बई शहर का दर्शन आदि। कई तरह के फूलों की क्यारियाँ, कई तरह के पौधे, उसमें प्राणियों की जैसी कटाई देखी और एक विशेष आकर्षण लगा, वह है "बूट" माडल, क्योंकि अंग्रेजों के जमाने में एक औरत उस गार्डन की देखभाल करती थी। बूढ़ी होने तक वह एक विशेष प्रकार का बूट पहनती थी। उनकी यादगार के लिए "बूट" का माडल बना दिया है। बच्चों को वह बहुत आकर्षित करता है। दोपहर में "महालक्ष्मी मन्दिर" गए वहाँ दर्शन कर नेहरू तारा मण्डल देखने गए। अन्दर तारा मण्डल का परिचय, ग्रहों का परिचय, वैज्ञानिकों के कार्य का परिचय दिया गया।

4.30 बजे तारा मण्डल गृह से दादर जाते हुए बीच में शिवाजी पार्क, दादर का चौपाटी का दृश्य देखा और वहाँ से "बंबई हिन्दी विद्यापीठ" माहीम पहुँचे। वहाँ शिविरार्थियों केलिए उपहार दिया गया। विद्यापीठ के कार्य का परिचय वहाँ के अधिकारियों ने किया। फिर वहाँ से दादर घूमते हुए "बम्बई हिन्दी संस्था" में पहुँचे। बम्बई हिन्दी विद्यापीठ में जलपान का आयोजन सम्पन्न हुआ। बम्बई हिन्दी विद्यापीठ सभागार में आयोजित विचार गोष्ठी में विद्यापीठ के सांस्कृतिक मंत्री, श्री. गिरीश माथुर एवं कुमारी फ्लोरा आवासकर ने शिविर प्रतिनिधियों का स्वागत किया। प्रसार मंत्री, श्री. बालकृष्ण बागवे ने बम्बई हिन्दी विद्यापीठ का संक्षिप्त परिचय देते हुए हिन्दी प्रसार की दिशा में विद्यापीठ की महत्वपूर्ण भूमिका का उल्लेख किया। परीक्षा मंत्री श्री. ना. ह. मंत्री ने शिविर प्रतिनिधियों को धन्यवाद तथा श्री. रतीलाल शाहीन ने आभार ज्ञापित किया।

अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ के कोषाध्यक्ष, श्री. शंकरराव लोढ़े ने हिन्दी प्रचार प्रसार के क्षेत्र में हिन्दी सेवी संस्थाओं के उल्लेखनीय सतत प्रयास की सराहना की और कहा कि हिन्दी का विकास चारित्रिक निष्ठा एवं संकल्पशील जीवन मूल्यों पर ही आधारित है।

हिन्दी का विकास चारित्रिक निष्ठा एवं संकल्पशील जीवन मूल्यों पर ही आधारित है ।

आपने हिन्दी प्रचारकों तथा बंबई हिन्दी विद्यापीठ के स्तुत्य प्रयासों की चर्चा करते हुए धन्यवाद दिया ।

शिविर प्रतिनिधियों की ओर से दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, तमिलनाडु के मंत्री श्री. राधाकृष्णन जी ने दक्षिण भारत में हो रही हिन्दी प्रचार की कठिनाइयों की ओर संकेत करते हुए बम्बई हिन्दी विद्यापीठ के अधिकारियों एवं सहधर्मी प्रचारकों को धन्यवाद दिया । ओडीसा राष्ट्रभाषा परिषद, पुरी के महामंत्री श्री. नरसिंह नन्द शर्मा जी ने हिन्दी प्रचारकों के ऐतिहासिक एवं समर्पित जीवन मूल्यों की चर्चा की । उसके बाद बम्बई हिन्दी सभा के कार्यालय गए । ढिन्ना वेन बम्बई हिन्दी सभा के कुलपति, महोदया ने शिविर प्रतिनिधियों को उपहार भेंट करते हुए स्वागत किया । बम्बई हिन्दी सभा ने सायंकालीन भोजन की व्यवस्था की । भोजन के उपरान्त शिविर प्रतिनिधि व्रज-मण्डल वापस आए ।

पंचम दिवस

दिनांक : 15 फरवरी, 1987

श्रीमती शांताबाई की प्रार्थना से कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ ।

डॉ० देवेश शर्मा ने "हिन्दी प्रचार प्रसार के नये आयाम" विषय पर अपना भाषण दिया ।

हिन्दी प्रचार का कार्य केवल पुस्तकों के पढने-पढाने से नहीं हो सकता । इसके लिए दृश्य एवं श्रव्य काव्य की नितान्त आवश्यकता है । इसीलिए हिन्दी प्रचार का आज बहुत बडा माध्यम सिनेमा है । सिनेमा के द्वारा हिन्दी का बहुत अधिक प्रचार हुआ है । फिलम, टेलिविजन आदि ऐसे माध्यम हैं जिसके द्वारा छोटे-छोटे बच्चे भी हिन्दी सीख लेते हैं ।

हिन्दी के प्रचार के लिए प्रयोजन-मूलक हिन्दी के अनुवाद की आज आवश्यकता है । इस कार्य में हिन्दी रंगमंच की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है ।

किसी भी चीज के प्रचार को व्यापारिक बनाना आवश्यक होगा । व्यापार के माध्यम से व्यवसाय के स्तर पर भी हिन्दी का प्रचार अच्छा हो सकता है ।

नाटकों के माध्यम से निश्चय ही हिन्दी का प्रचार प्रसार अधिक सहायता से संभव है। अतएव इस में विशेष स्थान देने की आवश्यकता है। हिन्दी रंगमंच के द्वारा इंगलैण्ड और अमेरिका में भी हिन्दी के प्रचार प्रसार में उल्लेखनीय सफलता मिली है। पारसी रंगमंचों की भूमिका भी हिन्दी के विकास में उल्लेखनीय रही है। प्रचार का एक सबल माध्यम विज्ञापन भी हो सकता है जिसे हिन्दी के प्रचार में भी उपयोग किया जाना चाहिए।

हिन्दी रंगमंच के द्वारा इंगलैण्ड और अमेरिका में भी हिन्दी के प्रचार प्रसार में उल्लेखनीय सफलता मिली है।

अनुवाद की प्रासंगिकता अच्छी नहीं लगती। वस्तुतः मौलिकता के लिए छायानुवाद की आवश्यकता है।

भाषा समाज से निर्मित होती है। अतः निश्चय ही रंगमंच, हिन्दी के समाज में रंगमंच की लोकप्रियता जाहिर है। प्रचार प्रसार में अत्यधिक सहायक है। भाषा और हिन्दी के प्रचार के लिए राष्ट्रीय भावना एवं

हिन्दी तब तक प्रतिष्ठित नहीं होगी, जब तक अंग्रेज़ी की कुर्सी पर लोग बैठे रहेंगे।

चरित्र निर्माण की भी आवश्यकता है।

हिन्दी तब तक प्रतिष्ठित नहीं होगी, जब तक अंग्रेज़ी की कुर्सी पर लोग बैठे रहेंगे।

डॉ० त्रिवेणी दत्त शुक्ल, श्री. हरिमोहन मालवीय ने शिविर की विषयोगत चर्चा में भाग लिया।

प्रो० अनिल ने कहा कि हिन्दी का प्रचार-प्रसार करनेवाले हम सीढी के पत्थर हैं, यह मानकर यदि हिन्दी प्रचार करें तो सहज और उपयोगी होगा।

कहानी, कविता, नाटक, स्पर्धा के द्वारा भी आसानी से हिन्दी का प्रचार किया जा सकता है।

श्री. शंकरराव लोंढे ने कहा कि देखने और सुनने की प्रक्रिया से हिन्दी का प्रचार प्रसार अधिक संभव है। यह शहर और देहात दोनों जगहों के लिए उपयोगी होगा। केवल पुस्तकों के माध्यम से ही हम प्रचार प्रसार नहीं कर सकते। हमारा हिन्दी का कार्य ही राष्ट्रीयवृत्ति से अनुप्रेरित है।

शिविर में आयोजित भाषणों और चर्चाओं के आधार पर एक मंतव्य तैयार हुआ। श्री. चमनलाल सप्रू ने मंतव्य का वाचन किया। शिविर प्रतिनिधियों ने मंतव्य की मदों पर विचार विमर्श किया। विचार विमर्श के बाद मंतव्य तैयार किया गया।

अपराह्न 2-30 बजे

शिविर का समापन समारोह कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। श्रीमती बी. एस शांताबाई ने ईश वन्दना प्रस्तुत की।

डॉ० मो. दि. पराडकर ने समारोह के मुख्य अतिथि डॉ० प्रभात (पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, बम्बई हिन्दी विश्व विद्यालय) एवं शिविर प्रतिनिधियों का स्वागत किया। संघ के कार्यालय सचिव श्री. जगदीश शर्मा ने शिविर में तैयार किए गए मंतव्य का वाचन किया। मंतव्य सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ। श्री. जगदीश शर्मा ने शिविर सफलतापूर्वक आयोजित करने के लिए बम्बई हिन्दी विद्यापीठ के पदाधिकारियों/कार्यकर्ताओं के प्रति संघ की ओर से आभार व्यक्त किया। शिविर में उपस्थित संस्थाओं के प्रतिनिधियों के प्रति भी आभार व्यक्त किया।

शिविर में सम्मिलित हुए प्रतिनिधियों को डॉ० प्रभात ने प्रमाण-पत्र वितरित किए। शिविर की व्यवस्था, भोजन, आवास व्यवस्था एवं कार्य संचालन के सम्बन्ध में विचार प्रकट किए। इनमें श्री. बी. एस. राधाकृष्णन, श्री. दशरथलाल शाह, कु० सी हमीगिलयानी, श्री. हरिमोहन मालवीय, श्री. चमनलाल सप्रू आदि ने अपने विचार प्रकट किए।

मुख्य अतिथि के रूप में भाषण करते हुए डॉ० प्रभात ने कहा कि देश में भारत की भाषाओं की स्थिति अच्छी नहीं है क्योंकि हम सब के ऊपर अंग्रेज़ी लदी हुई है। यद्यपि हिन्दी के प्रचार की बहुत सी बातें सरकारी स्तर पर हो रही हैं किन्तु उनसे लाभ नहीं हो पा रहा है। क्योंकि सरकारी वेतनभोगी लोग हिन्दी का प्रचार नहीं कर सकते। हिन्दी का विस्तार सच्चे अर्थों में हिन्दी प्रचारक ही कर सकते हैं।

हिन्दी का सवाल सुविधायोगी तत्वों से है। हिन्दी का सवाल मानसिकता से जुड़ा हुआ है। प्रश्न हिन्दी और अहिन्दी प्रदेश का न तो कभी था, न है ही।

हिन्दी सभी भाषाओं की शब्दावली को आत्मसात करके बढ़ेगी, इस दिशा में प्रयत्न करने की आवश्यकता है, जो संविधान सम्मत भी है। हमारी हिन्दी और भारतीय भाषाओं की प्रवृत्ति किसी भी प्रकार नष्ट न हो इस दिशा में सोचना होगा। थोड़े से प्रत्यय और उपसर्गों से हिन्दी के बहुत से शब्दों को सीखा जा सकता है।

प्रेम दक्षिण भाषा से हो तो उचित है लेकिन न तो तमिल से प्रेम है न तो हिन्दी से। उन्हें अंग्रेज़ी से प्रेम है जो केवल राजनीतिक है, जो सर्वथा अनुचित है।

राजनीतिज्ञों से बचाकर हिन्दी के रथ को आगे बढ़ाना राष्ट्र के लिए, भारतीय संस्कृति के लिए हितकर है, श्रेयस्कर है।

साहित्य के बाहर भी हिन्दी की एक भूमिका है। हिन्दी का जो राजभाषा रूप है उसे हिन्दी सेवी संस्थाओं को अपने पाठ्यक्रम में रखने की आवश्यकता है। प्रयोजनमूलक हिन्दी को पाठ्यक्रम में रखने की जरूरत है। राजनीतिज्ञों से बचाकर हिन्दी के रथ को आगे बढ़ाना राष्ट्र के लिए, भारतीय संस्कृति के लिए हितकर है, श्रेयस्कर है।

श्री. शंकरराव लोंढे

(समारोह के अध्यक्ष)

हिन्दी की परिस्थिति अब बदल गई है। हिन्दी का विस्तार हमारे सम्पूर्ण देश में द्रुतगति से हो रहा है। प्रयोजनमूलक हिन्दी के व्यवहार हेतु हमारी सब संस्थाएँ प्रयत्नशील हैं। आपने बम्बई हिन्दी विद्यापीठ के सम्पूर्ण आयोजन की सुविधाओं आदि के प्रति आभार ज्ञापित किया।

डा० प्रभात ने नारियल और अंग-वस्त्रम से श्री. शंकरराव लोंढे का सम्मान किया। डॉ० मो. दि. पराडकर ने नारियल एवं अंग-वस्त्रम श्री जगदीश शर्मा को भेंट किए। श्री. जगदीश शर्मा ने डॉ० प्रभात एवं डॉ० देवेश शर्मा का पुष्प गुच्छ से सम्मान किया। शिविर को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने के लिए संघ की ओर से स्मृति चिह्न के रूप में एक शील्ड विद्यापीठ को मानार्थ भेंट की गई।

विद्यापीठ के मंत्री, श्री. सी. पी. सिंह "अनिल" ने शिविर में सम्मि-

लित हुए भाषणकर्ताओं, अतिथियों, शिविरार्थियों के प्रति आभार व्यक्त किया। शिविर आयोजित करने का जो भार संघ ने विद्यापीठ को सौंपा उसके प्रति विद्यापीठ की ओर से संघ का आभार व्यक्त किया।

राष्ट्रगान के बाद समारोह समाप्त हुआ।

पारित मंतव्य

1. भारत सरकार की नई शिक्षा नीति के परिप्रेक्ष्य में हिन्दी के प्रचार प्रसार एवं शिक्षण के लिए भी नवीनतम वैज्ञानिक साधनों का प्रयोग करना अनिवार्य है। अतः शिविर संघ से अनुरोध करता है कि संघ से सम्बद्ध संस्थाओं को दृश्य और श्रव्य साधन कम्प्यूटर, वीडियो कैसेट आदि उपलब्ध करवाने की दिशा में कदम उठाए।

2. विश्व विद्यालयों के लिए जिस प्रकार विद्वानों के आदान प्रदान की व्यवस्था है इसी प्रकार से संघ की सदस्य संस्थाओं के पदाधिकारियों, विद्वानों के भी परस्पर आदान प्रदान द्वारा हिन्दी शिक्षण, हिन्दी प्रचार प्रसार सम्बन्धी विविध विषयों पर भाषण कराने की व्यवस्था केलिए संघ आवश्यक कदम उठाए।

नये उत्साही कार्यकर्तागण तैयार करें जिससे भविष्य में हिन्दी प्रचार के लिए योग्य और अनुभवी कार्यकर्ताओं का अभाव न दिखाई दे।

3. उपाधि कक्षाओं में अध्ययन करनेवाले छात्र छात्राओं को अल्प-कालीन तथा दीर्घकालीन कार्यक्रमों के अन्तर्गत हिन्दी प्रदेशों में स्थित संघ की संस्थाओं में हिन्दी का व्यावहारिक ज्ञान, हिन्दी प्रदेशों के त्योहार, जन-जीवन आदि को प्रत्यक्ष से देखने का अवसर उपलब्ध कराये जाएँ। इस सम्बन्ध में संघ आवश्यक कार्रवाई करे।

4. सदस्य संस्थाओं द्वारा अपने अपने प्रदेशों के बारे में स्तरीय पुस्तकों के प्रकाशन की ओर भी ध्यान दिया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त अब तक प्रकाशित साहित्य एवं पुस्तकों को सभी संस्थाएं आदान प्रदान में खरीदें। इससे बड़ी भारी मात्रा में संस्थाओं की बिक्री की समस्या का समाधान होगा। इसके साथ ही केन्द्रीय सरकार तथा हिन्दी भाषी प्रदेशों की पुस्तक चयन समितियों में संस्था संघ के प्रतिनिधि

हिन्दी प्रदेशों की पाठ्यपुस्तकों में हिन्दीतर भाषी प्रदेशों की श्रेष्ठ हिन्दी रचनाओं को भी स्थान दिलाया जाय।

नामित किये जाने चाहिए। इससे संस्थाओं के श्रेष्ठ प्रकाशनों तथा अहिंदी प्रदेशों के हिन्दी साहित्यकारों के प्रकाशनों की खरीद बढ़ेगी और उन्हें प्रोत्साहन भी प्राप्त होगा। शिविर संघ से सिफारिश करता है कि संघ इस संबंध में उचित कार्रवाई करे और आवश्यक कदम उठाए।

5. वर्तमान परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में संस्थाएँ अपने पाठ्यक्रमों में राष्ट्रीय एकता की भावना को उजागर करने, आधुनिक सन्दर्भ में सामयिक विषयों को तथा उपादेयता की दृष्टि से महत्वपूर्ण विषयों को शामिल करें। इसके लिए संघ संस्थाओं का ध्यान आकर्षित करे।

6. सभी संस्थाएँ अपने अपने क्रियाकलापों में गति लाने केलिए नये उत्साही कार्यकर्तागण तैयार करें जिससे भविष्य में हिन्दी प्रचार के लिए योग्य और अनुभवी कार्यकर्ताओं का अभाव न दिखाई दे। इसके लिए संघ सदस्य संस्थाओं का ध्यान आकर्षित करे।

7. भाषा सिखाने के लिए अधिकाधिक सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन और विशेषकर नुक्कड़ नाटक एवं एकाँकी तैयार करके एवं उनके प्रदर्शन की व्यवस्था करने के सम्बन्ध में संघ संस्थाओं का ध्यान आकर्षित करे।

8. हिन्दी प्रदेशों की पाठ्यपुस्तकों में हिन्दीतर भाषी प्रदेशों की श्रेष्ठ हिन्दी रचनाओं को भी स्थान दिलाया जाय। संघ इस दिशा में आवश्यक कार्रवाई करे।

9. संस्था संघ द्वारा पूर्वांचल राज्यों की अब तक जो पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। इस क्रम को और आगे बढ़ाते हुए अन्य पूर्वांचल राज्यों/जनजातीय क्षेत्रों के सम्बन्ध में भी इस प्रकार की सचित्र पुस्तकें तैयार करने की दिशा में कार्रवाई करे।

10. संघ से सम्बद्ध संस्थाओं द्वारा संचालित बी. ए. स्तर की परीक्षाएँ उत्तीर्ण करने पर बी. ए. प्रथम/द्वितीय कक्षाओं में प्रवेश करने की अनुमति प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। संघ इस संबंध में आवश्यक कदम उठाए।

11. संस्था संघ स्वैच्छिक हिन्दी संस्थाओं केलिए हिन्दी प्रचार प्रसार की योजनाओं केलिए अनुदान राशि

में समुचित वृद्धि कराने की दिशा में शिक्षा मंत्रालय का ध्यान आकर्षित करे।

12. संघ से सम्बद्ध संस्थाओं द्वारा संचालित बी. एड. स्तर की परीक्षाओं को राज्य सरकारों तथा केन्द्रीय सरकार द्वारा यथोचित मान्यता दिलवाने के सम्बन्ध में संघ आवश्यक कदम उठाए।

13. संस्थाओं द्वारा टंकक एवं आशुलिपिक परीक्षाओं को भी समुचित मान्यताएँ प्रदान करने के लिए संघ की ओर से आवश्यक कार्रवाई की जाय।

14. सभी संस्थाओं की अपने अपने प्रदेश की भाषाओं द्वारा अपने साहित्य एवं संस्कृति को बोध करानेवाली स्थानीय सुविधा और आवश्यकताओं के अनुसार प्रादेशिक भाषाओं के शिक्षण की भी व्यवस्था करनी चाहिए। इससे प्रादेशिक भाषाओं और हिन्दी के प्रचार प्रसार में जहाँ तालमेल स्थापित होगा, वहाँ इन दोनों के एक-दूसरे के साथ साथ आगे बढ़ाने का अवसर भी प्रदान होगा। संघ इस दिशा में संस्थाओं का ध्यान आकर्षित करे।

15. संघ की सदस्य संस्थाओं द्वारा संचालित मैट्रिक, इण्टर तथा बी. ए स्तर की परीक्षाओं को उसी स्तर के समकक्ष मान्यता दिलाने की दिशा में संघ आवश्यक कदम उठाए
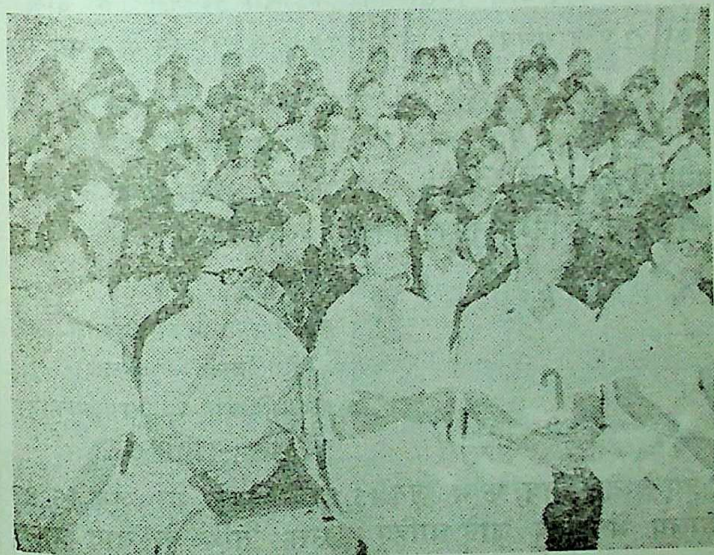
हिन्दी प्रचारकों का नवीकरण पाठ्यक्रम (द्वितीय बैच)—श्रोताओं का एक दृश्य।

डाक द्वारा हिन्दी सीखें

यदि आपकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है और आपकी आयु 15 वर्ष से अधिक है तो केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय का पत्राचार पाठ्यक्रम विभाग निम्नलिखित पत्राचार पाठ्यक्रमों द्वारा आपको अंग्रेज़ी, तमिल, मलयालम या बंगला माध्यम से हिन्दी सीखने का अवसर प्रदान करता है। इन पाठ्यक्रमों का अगला सत्र जुलाई, 1987 से आरंभ होगा। पाठ्यक्रमों में दाखिले की अंतिम तिथि 15 जून 1987 है।

(1) पाठ्यक्रम :

अंग्रेज़ी/तमिल/मलयालम/बंगला माध्यम पाठ्यक्रम :

1. हिन्दी सर्टिफिकेट कोर्स : प्रारंभिक स्तर का (एक वर्षीय) पाठ्यक्रम
2. हिन्दी डिप्लोमा कोर्स : उच्च स्तर का (एक वर्षीय पाठ्यक्रम सर्टिफिकेट कोर्स के आगे का कोर्स

(2) पात्रता : उक्त पाठ्यक्रम अहिंदी भाषी भारतीयों तथा भारत में या बाहर रहने वाले विदेशियों के लिए है।

(3) फीस : भारत में रहने वाले विद्यार्थियों के लिए 35 रुपये तथा विदेशों में रहने वाले विद्यार्थियों के लिए 35 अमरीकी डालर अथवा 22 पौंड अथवा 354 रुपये। यह फीस दाखिले के समय ली जायेगी।

निर्धारित आवेदन पत्र, फार्म और विवरण पत्र की मांग के लिए कृपया (25×10 सें० मी०) के लिफाफे पर अपना पता लिखकर बिना टिकट के निम्नलिखित पते पर भेजें :—

उप निदेशक,
पत्राचार पाठ्यक्रम विभाग
केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय
पश्चिमी खंड-7, रामकृष्णपुरम
नई दिल्ली-110066

भरे हुए आवेदन पत्र, फार्म जून 15, 87 से पहले या जून 15, 87 तक निदेशालय में पहुँच जाने चाहिए। उक्त तिथि के बाद प्राप्त आवेदन-पत्र अस्वीकृत कर दिए जायगे। लिफाफे के ऊपर कृपया अपना माध्यम अवश्य लिखें।

केरल में हिन्दी अध्ययन की अधिक सुविधायें हों

डा० वेल्लायणी अर्जुनन
निदेशक,
राज्य विश्वविज्ञान कोशीय प्रकाशन संस्थान, केरल

[28-3-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में दिये गये अध्यक्षीय भाषण का सारांश]

स्वागत भाषण में श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने ठीक ही कहा कि हिन्दीतर भाषा भाषी सांसदों को संसद की चर्चाओं में भाग लेने में भाषायी कठिनाई बाधक हुआ करती है। भारत जैसे बहुभाषी देश के सांसद यदि संसद में सबकी समझ में आनेवाली किसी आम भाषा में नहीं बोल सकते तो बडी कठिनाई होगी। मैं ने संसद में देखा है कि कई मलयाली सांसद चुपचाप बैठे रहते हैं। एक बार केरल के सांसद स्व० श्री. एन. श्रीकंठन नायर ने मुझ से कहा था—मैं इनसे हिन्दी नहीं बोल पाता। "पानी चाहिए, जाना है, कमरा नंबर" इस प्रकार कुछ शब्द ही बोल पाता हूँ।

डा० वी. के. सुकुमारन नायर ने इस बात पर ज़ोर दिया कि केरल विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग आवश्यक है। कुछ महीने पूर्व मैं जब बर्लिन गया तो देखा कि वहाँ के फ्री विश्वविद्यालय में हिन्दी का अलग विभाग है। वहाँ भाषाविज्ञान को बल देते हुए विद्यार्थी पी. एच-डी.

मैं जब बर्लिन गया तो देखा कि वहाँ के फ्री विश्वविद्यालय में हिन्दी का अलग विभाग है।

ओक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में हिन्दी के एक अंग्रेज प्रोफेसर है।

कर रहे हैं। बर्लिन विश्वविद्यालय के इन्डोलजी विभाग में संस्कृत, हिन्दी और तमिल सिखायी जाती हैं। इंग्लैंड गया तो देखा कि ओक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में हिन्दी के एक अंग्रेज प्रोफेसर हैं। दो रीडर भी हैं जो उत्तर प्रदेश के हैं। स्कूल ऑफ ओरियन्टल एन्ड आफ्रिकन स्टडीस नाम की एक प्रसिद्ध भाषा शोध संस्थान है कि जो लंदन विश्वविद्यालय के अधीन है। वहाँ हिन्दी और मलयालम में भी शोध हो रहा है। रूस के लेनिनग्राड विश्वविद्यालय और मोस्को विश्व-विद्यालय में हिन्दी के बड़े बड़े विभाग हैं। वहाँ हिन्दी और रूसी भाषा का तुलनात्मक अध्ययन हो रहा है। रूसी हिन्दी कोशों का भी वहाँ निर्माण हो रहा है। पर केरल विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग नहीं है। यह अत्यंत अपमानजनक है।

एक बार श्री. एम. के. वेलायुधन नायर, स्व० कुट्टनाट रामकृष्ण पिल्लै आदि के साथ हम करीब पन्द्रह व्यक्ति केरल विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपति डॉ० आर. एस. कृष्णन से मिले और निवेदन किया कि केरल विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग आरंभ करें। उन्होंने उपहास भरे शब्दों में कहा—मलयालम हिन्दी आदि में क्या शोध करना है? तुलसी और सूर पर क्या शोध करना है? विश्वविद्यालय में हिन्दी की कोई आवश्यकता नहीं। आवश्यकता है फिसिक्स, अस्ट्रो फिसिक्स, स्पेस

मलयालम हिन्दी आदि में क्या शोध करना है? तुलसी और सूर पर क्या शोध करना है?

साइन्स जैसे विषयों की।" मैं ने कहा—"ऐसे संकुचित विचारों वाले एक व्यक्ति का कुलपति की कुर्सी पर रहना अपमानजनक है। आपको यह दृष्टिकोण निश्चय ही बदलना होगा। इस देश की जनता की भावना को समझने वाले भाषास्नेही विचारक ऐसा नहीं कह सकते।" वे बेचैन हो गये। आखिर कहा—"मैं इस समस्या का अध्ययन करूँगा। आवश्यक कदम उठाऊँगा।" पर कुछ नहीं हुआ।

उनके बाद डा० श्री. के. सुकुमारन नायर जब कुलपति हुए तब ओरियंटल फैकल्टी में मैंने दो बार यह प्रस्ताव पेश किया कि हिन्दी विभाग आरंभ करना है। प्रस्ताव पारित भी हुआ। पर कुछ नहीं हुआ।

यहाँ केरल हिन्दी प्रचार सभा ही एकमात्र संस्था है जो हिन्दी केलिए कुछ कर रहा है। वह जितना कार्य कर रहा है उतना कार्य कोई विश्व-विद्यालय नहीं कर सकता। केरल हिन्दी प्रचार सभा में केन्द्र सरकार

यदि इन बातों पर सरकार का ध्यान आकृष्ट कर सकें तो हिन्दी का जो मुख आज म्लान है उसे जाज्वल्यमान बनाया जा सकता है।

की सहायता से एक 'सेन्टर ऑफ एडवान्सड् स्टडीस इन हिन्दी' आरंभ किया जा सकता है जहाँ हिन्दी और दक्षिणी भाषाओं पर शोध किया जा सकता है। यहाँ का हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान एक ट्रेइनिंग कालेज में परिवर्तित किया जा सकता है।

केरल के भूतपूर्व मुख्य मंत्री श्री. सी. अच्युत मेनन ने केरल में हिन्दी अध्ययन की सुविधायें विकसित करने की संभावनाओं का अध्ययन करने के लिए एक समिति गठित की थी जिसमें श्री. एम. के. वेलायुधन नायर थे, मैं था, डा० मलिक मुहम्मद थे, श्री. नीललोहित दास थे और भी कुछ व्यक्ति थे। हमने अध्ययन करके जो रिपोर्ट दी उसमें बताया कि हर जिले में एक हिन्दी माध्यम स्कूल हो। हिन्दी अध्यापकों को उत्तर भारत में प्रशिक्षित किया जाये। हिन्दी के अध्यापन के कालांश बढायें। मेट्रिक में हिन्दी परीक्षा को सौ अंक दें। पर कुछ नहीं हुआ। यदि इन बातों पर सरकार का ध्यान आकृष्ट कर सकें तो हिन्दी का जो मुख आज म्लान है उसे जाज्वल्यमान बनाया जा सकता है। मलयालम और हिन्दी की लिपियाँ यद्यपि भिन्न हैं तो भी दोनों भाषाओं की शब्दावली में बडी अद्भुत समानता है। अतः हिन्दी और मलयालम को बहिनें मान सकते हैं। दोनों भाषाओं की कृतियों के भावों में भी बडी समानता है। मलयालम के तकषि और हिन्दी के प्रेमचन्द में बडी भावात्मक समानता मिलती है।

हाल ही में केरल विश्वविद्यालय में दिये गये एक भाषण में मलयालम के विख्यात उपन्यासकार श्री. ओ. वी. विजयन ने कहा—

यदि हिन्दी है भी तो वह केवल दिल्ली के कुछ लोगों की भाषा है। उस हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनायें ?

,,हिन्दी नाम की कोई भाषा है नहीं। बुन्देल खण्डी, अवधी, मैथिली, भोजपुरी, ब्रजभाषा जसी छोटी छोटी बोलियाँ ही हैं। यदि हिन्दी है भी तो वह केवल दिल्ली के कुछ लोगों की भाषा है। उस हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनायें ? कभी नहीं। मलयालम हिन्दी से भी अधिक विकसित भाषा है। इसलिए मलयालम को भारत की आम भाषा बनायें।''

ऐसे विचारों से जो देश की अखण्डता और भावात्मक एकता के लिए बाधक हैं हमें बचे रहना है। एक दूसरे की भाषा के आदान प्रदान द्वारा देश की एकता को सुदृढ करना हिन्दी प्रचारकों का कार्य है।
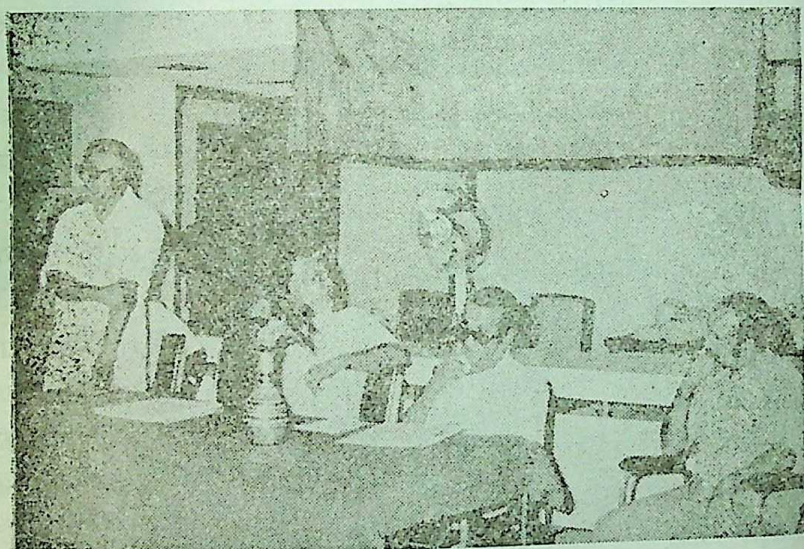
हिन्दुस्थान लैटक्स के तत्वावधान में तिरुवनन्तपुरम में एक हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया था। कार्यशाला के समापन समारोह में केरल हिन्दी प्रचार सभा के सचिव श्री. एम. के. वेलायुधन नायर बोल रहे हैं। बैठे हैं :— हिन्दुस्थान लैटक्स के प्रबन्ध निदेशक डॉ० पी. वी. एस. नंपूतिरिप्पाट, अध्यक्ष श्री. जी. भास्करन नायर (केरल के राज्यपाल के भूतपूर्व सलाहकार) एवं महा प्रबन्धक श्री. जी. राजमोहन।

हिन्दी प्रचारक नवीकरण पठ्यक्रम

केन्द्र मानव संसाधन विकास मंत्रालय की सहायता से केरल हिन्दी प्रचार सभा ने अपने हिन्दी प्रचारकों को हिन्दी अध्यापन और प्रचार की नवीनतम विधियों से परिचित कराने के उद्देश्य से तिरुवनन्तपुरम में नवीकरण पाठ्यक्रमों के दो सत्रों का आयोजन किया। प्रथम सत्र 1987 मार्च 2 से 16 तक और द्वितीय सत्र 1987 मार्च 18 से 28 तक सभा भवन में आयोजित हुआ। दोनों सत्रों में करीब 150 प्रचारक प्रशिक्षित हुए। क्षेत्रीय हिन्दी प्रशिक्षण केन्द्र, तिरुवनन्तपुरम के भूतपूर्व शिक्षक एवं केरल प्रचार सभा की निर्वाहक समिति के सदस्य श्री के. केशवन नायर पाठ्यक्रम के निदेशक रहे।

पाठ्यक्रम में स्थानीय विशेषज्ञों ने विविध विषयों पर चर्चा की। प्रशिक्षुओं से कुछ प्रायोगिक कार्य भी कराया गया। सभी प्रशिक्षुओं ने पाठ्यक्रम को अधिक सफल बनाने में पूर्ण सहयोग दिया।

प्रथम सत्र का प्रमाण पत्र वितरण सम्मेलन 16-3-1987 को आयोजित हुआ जिस का उद्घाटन पद्मश्री डा० एन. बालकृष्णन नायर (अध्यक्ष, राज्य विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी समिति, केरल) ने किया। केरल के विख्यात विचारक, लेखक एवं समाज सेवक श्री पी टी. भास्कर पणिक्कर अध्यक्ष रहे। श्रीमती एल. ओमना कुञ्ञम्मा ने प्रमाणपत्र वितरण

श्रीमती एल. ओमनक्कुंञम्मा

किया और डा० सावेलिक्कुरा अच्युतन ने आशीर्वाद भाषण दिया। श्री. के. केशवन नायर ने पाठ्यक्रम

केरल हिन्दी प्रचार सभा द्वारा तिरुवनन्तपुरम में आयोजित नवीकरण पाठ्यक्रम में सम्मिलित हिन्दी प्रचारक
(18–3–1987 — 28–3–1987)

बैठे हैं :— श्रीमती एम सावित्री, श्रीमती एम. कमलम्माल, श्री के. पी. पद्मनाभन नायर, प्रो० आर. वासुदेवन पोट्टी, प्रो० टी० के. भास्कर वर्मा, श्री. एम. के. वेलायुधन नायर (मंत्री, केरल हिन्दी प्रचार सभा) प्रो० पी. जे. जोसफ (अध्यक्ष, केरल हिन्दी प्रचार सभा) डा० वी. गोविन्द शेणाय, प्रो० के. के. कृष्णन नंपूतिरी, श्री. के. केशवन नायर (निदेशक, नवीकरण

का प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। सभा के मंत्री श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने स्वागत भाषण दिया और सभा के उपाध्यक्ष अधिवक्ता श्री. के पी. अलिकुंजु ने कृतज्ञता प्रकट की।

द्वितीय सत्र का प्रमाण पत्र वितरण सम्मेलन 28-3-1987 को आयोजित हुआ जिस में केरल राज्य विश्व-विज्ञान कोश प्रकाशन के निदेशक एवं बहु भाषाविद डॉ० वेल्लायणी अर्जुनन अध्यक्ष रहे। सम्मेलन का उद्घाटन केरल विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति डॉ० वी. के. सुकुमारन नायर ने किया। केरल सरकार के युवक कल्याण एवं खेल विभाग के निदेशक श्री. जिजी तोम्सण

श्री. जिजी तोम्सन

आइ. ए. एस. ने प्रमाण पत्र वितरण किया और केरल सर्वोदय मंडल के मंत्री श्री. पी. गोपीनाथन नायर ने आशीर्वाद भाषण दिया। श्री. के. केशवन नायर ने सत्र का

श्री. के. केशवन नायर
निदेशक, नवीकरण पाठ्यक्रम

प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। केरल हिन्दी प्रचार सभा के मंत्री श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने स्वागत भाषण दिया और सभा के उपाध्यक्ष अधिवक्ता श्री. के. पी. अलिकुंजु ने कृतज्ञता प्रकट की।

★

जब पश्चिम जर्मनी, रूस और चीन ने अपनी अपनी भाषाओं का इस्तेमाल करके महान उपलब्धियाँ की हैं तो फिर भारत क्यों अंग्रेज़ी का स्थान हिन्दी को देकर इंजिनीयर, डाक्टर और वैज्ञानिक तैयार नहीं कर सकता ? जरूरत यह है शिक्षा संस्थानों के कर्णधार अंग्रेजी का मोह छोड़ दें। क्योंकि इनके इस अंग्रेजी-मोह ने ही अन्तर्राष्ट्रीय मंचो पर रूसी, चीनी और स्पेनी जैसा स्थान हिन्दी को नहीं लेने दिया है।

—ज्ञानी जल सिंह

* * * * * *

जनतंत्र और अंग्रजी साथ-साथ नहीं चल सकती। जब तक सरकार का काम जनता की भाषा में न चले, तब-तक कैसे कहा जा सकता है कि हमारे यहाँ जनतंत्र है। यह तो भाषा के ज़रिये काम करनेवाली गुलामी है। जनतंत्र के लिये यह जरूरी है कि वह जनता की भाषा में काम करे।

—डाक्टर राम मनोहर लोहिया

* * * * * *

शिक्षा में क्षेत्रीय भाषाओं का सहारा लेने से ही हमारी शिक्षा-नीति को 'भारतीय' बनाया जा सकेगा। अभी तक हमारी शिक्षा-प्राणाली की जड़ें विदेशों में है और हम वे जड़ें भारत में नहीं लाना चाहते हैं। क्षेत्रीय भाषाएँ अपनाने से शिक्षा का स्तर ऊँचा हो सकेगा। विश्वविद्यालय और समाज निकट आयेंगे। इसी से शिक्षा में भारतीयता का समावेश होगा।

डॉ० डा. एस. कोठारी

दूरभाष : 61378 तार : "जय हिन्दी"

केरलज्योति

पुष्प 22
दल 3
एक प्रति--1 रु०
वार्षिक—10 रु०

सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका

जून 1987

संपादकीय

नई दिल्ली से तिरुवनन्तपुरम आनेवाली किसी रेल गाडी में जा बैठिए। बच्चों के वार्तालाप पर ध्यान दीजिए। अधिकांश बच्चे आपस में हिन्दी में बात करते मिलेंगे। ऐसी हिन्दी में जो हिन्दी प्रान्तों की गली गली में बोली जाती है। जब ये बच्चे पास बैठे अपने माँ बाप से मलयालम में बोलने लगते हैं तभी पता चल सकेगा कि ये हिन्दी प्रान्तों के नहीं, केरल के हैं। उत्तर भारत में नौकरी करनेवाले मलयालियों के बच्चे जो उनके साथ वहाँ रहते हैं और वहीं पढते हैं, पडोसी बच्चों से और स्कूल से आसपास ही बोलचाल की हिन्दी पर पूरा अधिकार पा लेते हैं।

तिरुवनन्तपुरम के किसी कॉनवेन्ट स्कूल के आंगन में जा के देखिये। वहाँ के छोटे छोटे बच्चे धारा प्रवाह अंग्रेज़ी बोलते मिलेंगे। वे अंग्रेज़ बालक नहीं हैं, मलयाली बालक ही हैं।

केरल के किसी केन्द्रीय विद्यालय में जाइये। बच्चे कभी अंग्रेज़ी में और कभी हिन्दी में वार्तालाप करते मिलेंगे।

इन सब से एक बात असन्दिग्ध रूप से प्रमाणित हो जाती है। बच्चों को मातृभाषा के अलावा दूसरी भाषायें सीखने में कोई कठिनाई नहीं है, बशर्ते उन भाषाओं के अध्ययन केलिए, उचित वातावरण उपलब्ध हो।

भारत के हिन्दीतर प्रान्तों में हिन्दी का अध्ययन कहीं कहीं प्राइमरी कक्षाओं में ही शुरू होता है और कहीं कहीं अप्पर प्राइमरी में। जहाँ प्राइमरी कक्षाओं में हिन्दी का अध्ययन आरंभ होता है वहाँ बच्चे आसानी से हिन्दी सीख लेते हैं। पर जहाँ हिन्दी का अध्ययन उच्च कक्षाओं में

इस अंक में

आरंभ होता है वहाँ बच्चे हिन्दी सीखने में कठिनाई अनुभव करते हैं। ऐसे बच्चे मेट्रिक उत्तीर्ण करने पर भी हिन्दी में साधारण वार्तालाप करने में भी असमर्थ निकलते हैं।

यदि हम हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा, संपर्क भाषा और राजभाषा स्वीकार करते हैं तो समस्त भारत के स्कूली बालकों में हिन्दी में वार्तालाप करने की क्षमता उत्पन्न करना हमारा दायित्व हो जाता है। इस दायित्व से मुँह मोडना देश के हिन्दीतर प्रान्तों के बालकों के प्रति घोर अन्याय होगा।

केरल के नये शिक्षा मंत्री श्री. के. चन्द्रशेखरन ने उक्त धारणा के आधार पर ही 17 मई 1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में आयोजित पुरस्कार वितरण समारोह में यह घोषणा की कि केरल की सरकार हिन्दी के अध्ययन को अधिक प्रमुखता देना चाहती है। उन्होंने कहा कि तीसरी कक्षा में ही हिन्दी का अध्ययन आरंभ होना चाहिए। केरल की जनता ने इस घोषणा का सर्वत्र स्वागत किया है और समाचार पत्रों में इसके अनुकूल चर्चा चल रही है।

आशा है केरल इस दिशा में शीघ्र ही पहल करेगा और इतर हिन्दीतर प्रान्तों केलिए आदर्श प्रस्तुत करेगा।

हिन्दी प्रचारकों का सम्मान हो

राष्ट्रपति ज्ञानी ज़ैल सिंह

महामहिम राष्ट्रपति ज्ञानी ज़ैलसिंह द्वारा लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, मसूरी हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं के प्रोफेसर डॉ० कैलास चन्द्र भाटिया की भाषायी सेवाओं के उपलक्ष्य में सम्मानार्थ 'संपर्क भाषा हिन्दी तथा भारतीय भाषाएँ' ग्रंथ (प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-6) भेंट किया गया। ग्रंथ का संपादन दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डॉ० भोलानाथ तिवारी तथा डॉ कमल सिंह ने किया। कार्यक्रम का संयोजन किया सुप्रसिद्ध साहित्यकार सांसद श्री० नरेशचन्द्र चतुर्वेदी ने।

इस अवसर पर राष्ट्रपति ने कहा कि राष्ट्रीय एकता केलिए भी हिन्दी का विकास ज़रूरी है। उन्होंने कहा कि "राष्ट्रीय एकता और हिन्दी की उन्नति एक दूसरे से जुडे हैं। एकता हिन्दी के बिना नहीं रह सकती और हिन्दी एकता के बिना नहीं रह सकती।" दोनों केलिए काम करना ज़रूरी है। इस केलिए उन्होंने एकता केलिए काम करने वाले और हिन्दी के प्रचार तथा विकास में योगदान देने वाले विद्वानों का सम्मान करने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया।

केरल सरकार हिन्दी
अध्ययन को
प्रोत्साहित करेगी

श्री. के. चन्द्रशेखरन
शिक्षा मंत्री, केरल

[17-5-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में आयोजित पुरस्कार वितरण समारोह में दिया गया उद्घाटन भाषण]

मुझे लगता है कि केरल की हिन्दी प्रचार संस्थाओं में सर्वाधिक सार्वजनिक कार्यक्रमों के आयोजन के द्वारा, जनता से हिन्दी को जोडनेवाली संस्था केरल हिन्दी प्रचार सभा है। वर्षों से इस सभा में होनेवाले सभी कार्यक्रमों का सूचना श्री. वेलायुधन नायर मुझे देते रहे हैं। इस में कोई संदेह नहीं कि हिन्दी भाषा के अध्ययन में यह संस्था जनता को प्रेरित करती रही है। केरल भर में इस सभा का कार्य व्याप्त हो गया है।

स्वतंत्रता संग्राम के समय गांधी जी ने ब्रिटीशों का विरोध करने के लिए जो जो कार्यक्रम हमें दिये उन में बहुत प्रमुख था हिन्दी प्रचार। हिन्दी का अध्ययन और प्रचार स्वतंत्रता संग्राम का एक अंग था। हिन्दी प्रचारक केवल हिन्दी प्रचारक नहीं था, स्वतंत्रता संग्राम का एक सेनानी भी था। बिविध भाषा भाषी भारत को एकीकृत कर के ब्रिटीश शासन का विरोध करने के लिए एक आम भाषा आवश्यक थी। अंग्रेजों ने अंग्रेज़ी को भारत की भाषा बनाना चाहा तो उन का उद्देश्य उस भाषा के सहारे भारत का शासन करना ही था। शासन करने के लिए जितनी संख्या में कर्मचारी आवश्यक थे उतने लोगों को उन्होंने अंग्रेज़ी सिखायी। उन दिनों भारत की दो प्रतिशत जनता को ही अंग्रेज़ी का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त था। अंग्रेज समझ सके कि एक शताब्दी से अधिक समय तक अंग्रेज़ी का प्रचार करने पर भी उस भाषा का प्रचार कितना मार्जिनल

हमें अपना यह दोष देख लेना है ताकि हम अपने को सुधार सकें।

था और देश की प्रगति अंग्रेज़ी के द्वारा सम्भव नहीं। उन्होंने यह भी समझ लिया यदि देश भर की जनता में यह बोध उत्पन्न कर सकें कि हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है तो उससे स्वतंत्रता संग्राम को बढावा मिलेगा। पर यह दृष्टिकोण स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हम वांछित मात्रा में नहीं बनाये रख सके। हमें अपना यह दोष देख लेना है ताकि हम अपने को सुधार सकें।

स्वतंत्रता लब्धि के बाद हम ने हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकार किया। और भी कई भाषाओं का संविधान में स्थान दिया गया। इन सब के सामंजस्य के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जब हमारी शिक्षा नीति की घोषणा संसद में प्रधान मंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने की तब त्रिभाषा सूत्र भी जोडा गया यद्यपि इस के लिए कोई नियम नहीं बनाया गया। यह सच है कि इस त्रिभाषा सूत्र का कार्यान्वयन भारत में पर्याप्त रूप में नही हुआ है। इस दिशा में जिन्हें अग्रणी रहना था वे ही सब से पीछे रहे। यदि हिन्दी को राष्ट्रभाषा और राजभाषा के रूप में स्वीकृत किया गया, अंग्रेज़ी को तात्कालिक जोड भाषा के रूप में और इतर भषाओं को राज्य भाषाओं के रूप में जारी रहने दिया गया तो सबसे अधिक संतोष किन्हें होगा? मेरी समझ में पाँचों हिन्दी भाषी प्रान्तों की जनता को ही होगा। इन पाँचों प्रांतों में त्रिभाषा सूत्र का कार्यान्वयन करने के बदले उसे पूर्णतः ठुकरा दिया और केवल हिन्दी सिखाने का एक-भाषा सूत्र अपनाया। त्रिभाषा सूत्र की घोषणा करते समय प्रधान

इस दिशा में जिन्हें अग्रणी रहना था वे ही सब से पीछे रहे।

मंत्री ने इस बात पर विशेष बल दिया था कि हिन्दी भाषी प्रान्तों में हिन्दी व अंग्रेजी सिखायें और तीसरी भाषा के रूप में उडिया, मराठी, असामिया जैसी हिन्दी से समानता रखनेवाली कोई उत्तर भारतीय भाषा न सिखाकर कोई दक्षिण भारतीय भाषा ही सिखायें। पर वे न कोई हिन्दीतर उत्तर भारतीय भाषा सीखेंगे, न दक्षिण की कोई भाषा सीखेंगे और न अंग्रेजी सीखेंगे। इसीलिए मैं ने एक भाषा सूत्र का नाम दिया। वहाँ तो मेडिकल कालेज, इंजिनीयरिंग

कॉलेज जैसी संस्थाओं को छोड़कर इतर संस्थाओं में हिन्दी माध्यम में ही सब कुछ सिखाया जाता है। वहाँ के बी. ए., एम. ए. पास युवक भी अंग्रेजी नहीं समझ पाते। वे केवल हिन्दी समझते हैं।

हमारी नयी शिक्षा नीति में इस बात का कोई जिक्र नहीं कि हिन्दी भाषी प्रान्तों में त्रिभाषा सूत्र का विधिवत कार्यान्वयन होगा। यह

हिन्दी भाषी प्रान्तों में हिन्दी व अंग्रेजी सिखाये और तीसरी भाषा के रूप में उडिया, मराठी, असामिया जैसी हिन्दी से समानता रखनेवाली कोई उत्तर-भारतीय भाषा न सिखाकर कोई दक्षिण भारतीय भाषा ही सिखायें।

ठीक नहीं लगता। ऐसा जिक्र उसमें होना चाहिए था। शायद छूट गया हो। मेरा विश्वास है कि योंही अधिकारियों का ध्यान आकृष्ट करें तो इसमें परिवर्तन किया जा सकेगा।

जैसे श्री. वेलायुधन नायर ने बताया, केरल में त्रिभाषा सूत्र का कार्यान्वयन हुआ है। आन्ध्र मे हुआ। कर्नाटक

हमारी नयी शिक्षा नीति इस बात का कोई जिक्र नहीं हिन्दी भाषी प्रान्तों में त्रिभा सूत्र का विधिवत कार्यान्वय होगा।

में हुआ है। कुछ विशेष परिस्थिति में तमिलनाड में नहीं हो सक पर केरल जैसे राज्यों में हिन्दी सर्वथा स्वागत है। एक बार मैं पटना गया तो वहाँ के मुख्य सचि एक मलयाली थे। उन्होंने बता कि उन के सचिवालय के पाँच प्रति शत कर्मचारी मलयाली हैं।

वहाँ सचिवालय का सारा का हिन्दी में चलता है। हिन्दी भा कर्मचारी जिस ढंग से हिन्दी प्रयोग फाइलों में करते हैं उस अच्छे ढंग से वे मलयाली कर्मचा हिन्दी का प्रयोग करते हैं। मु सचिव ने मुझे मलयालियों द्वा शुद्ध हिन्दी में लिखा गया टिप्प दिखा दिया था। केरल कभी कि भाषा के विरुद्ध नहीं रहा।

यह मानना भी ठीक नहीं है भाषा का अध्ययन कठिन है बचपन में जितनी भाषायें चाहे सि सकते हैं। बचपन में सीखी

हिन्दी भाषी कर्मचारी जिस ढंग से हिन्दी का प्रयोग फाइलों में करते हैं उससे अच्छे ढंग से वे मलयाली कर्मचारी हिन्दी का प्रयोग करते हैं।

भाषायें आगे भी स्मरण में रखी जा सकती हैं। केरल के कुछ विद्यालय ऐसे भी हैं जहाँ यद्यपि पाठ्यक्रम में तीन भाषायें दी हैं तो भी चार भाषायें सीखनी पडती हैं।

उदाहरण केलिए केन्द्रीय विद्यालयों को लें जिनमें नवोदय विद्यालयों को भी शामिल कर सकते हैं। उन सब में शिक्षा का माध्यम अधिकाँश विषयों में अंग्रेज़ी है। बहुत कम विषय हिन्दी माध्यम में सिखाये जाते हैं। दूसरी भाषा हिन्दी है। सोश्यल स्टडीस का प्रश्नोत्तर देवनागरी लिपि में हिन्दी में देना होता है। करीब पन्द्रह वर्ष पहले जब यह रीति आरंभ हुई तब यहाँ उसका बडा विरोध हुआ। मैं ने उसका विरोध नहीं किया। आज प्रमाणित हो चुका है कि मैं ने ठीक ही किया। आज उसका कहीं कोई विरोध नहीं होता। इन केन्द्रीय विद्यालयों में अंग्रेजी, हिन्दी और तीसरी भाषा के रूप में संस्कृत, जर्मन, फ्रंच या और कोई भाषा सीखनी है। इन में मातृभाषा शामिल नहीं। जहाँ केन्द्रीय विद्यालय स्थित है उस राज्य की भाषा शामिल नहीं। केन्द्रीय विद्यालय की एक कमी शायद यही है। केरल के जो विद्यार्थी केन्द्रीय विद्यालयों में पढते हैं उन्हें घर में मलयालम सिखायी जाती है। इसमें कोई कठिनाई नहीं दिखाई देती। मेरे घर के दो बच्चे स्कूल में पढ़ते हैं। उनमें एक बच्चा केन्द्रीय विद्यालय में पढता है। उसे घर में मलयालम सिखायी जाती है। वह अच्छी तरह मलयालम का वाचन करता है। हिन्दी और अंग्रेजी का खूब प्रयोग करता है। तीसरी भाषा भी खूब लिखना पढना जानता है। तो हमारे राज्य के बच्चों को चार भाषायें सीखने में कोई कठिनाई नहीं।

इसलिए बाल्यकाल में राष्ट्रभाषा सिखाना और राष्ट्रभाषा के प्रति रागात्मक संबन्ध स्थापित करना बहुत अच्छी बात है। मैं ने केन्द्रीय

केरल के कुछ विद्यालय ऐसे भी हैं जहाँ यद्यपि पाठ्यक्रम में तीन भाषायें ही हैं तो भी चार भाषायें सीखनी पडती हैं।

विद्यालय के कई बच्चों से वार्तालाप किया है। उनसे यदि पूछें– प्रसिडेन्ट कौन हैं ? तो वे बतायेंगे—फ्रैंस में प्रसिडेन्ट हैं। युनाइटेड स्टेट्स में प्रसिडेन्ट हैं। "तो क्या इन्डिया में प्रसिडेन्ट नहीं ?" "इन्डिया के राष्ट्रपति हैं।" वे बच्चे भारत के प्रसिडेन्ट को प्रसिडेन्ट के नाम से नहीं जानते। राष्ट्रपति के नाम से जानते हैं। उनसे पूछें—"प्राइम मिनिस्टर कौन हैं ?" कहाँ के ? इंग्लैंड में प्राइम मिनिस्टर हैं। और भी कई राष्ट्रों में प्राइम मिनिस्टर हैं। "तो क्या हमारे देश में प्राइममिनिस्टर नहीं ?" हमारे देश में प्राइम मिनिस्टर हैं, यहाँ तो प्रधान मंत्री हैं।" तो वे बच्चे भारत के प्राइम मिनिस्टर को प्रधान मंत्री के नाम से ही पहचानते हैं।

यदि हमारे बच्चों में ऐसा राष्ट्रीयता बोध उत्पन्न करना हो तो भाषाध्ययन के द्वारा विशाल दृष्टिकोण विकसित करना होगा। ऐसा दृष्टिकोण केरल में विकसित हो चुका है। इसे आवश्यक प्रोत्साहन देने के लिए केन्द्र सरकार से आर्थिक सहायता नहीं मिलती। यही समस्या है।

हमारे राज्य के बच्चों को चार भाषायें सीखने में कोई कठिनाई नहीं।

यदि हमारे बच्चों में ऐसा राष्ट्रीयताबोध उत्पन्न करना हो तो भाषाध्ययन के द्वारा ऐसा विशाल दृष्टिकोण विकसित करना होगा।

क्या यहाँ (केरल में) पहले तीसरी और चौथी कक्षा से हिन्दी अध्ययन आरंभ नहीं होता था ? क्या अब कुछ वर्षों से हिन्दी अध्ययन का आरंभ पाँचवीं कक्षा से ही होता है न ? मैं परिवर्तन के पक्ष में नहीं हूँ। मेरी राय इस के विपक्ष में थी। मैं ने अपनी यह राय उस समय विधान सभा में प्रकट की थी। इस परिवर्तन का एक कारण आर्थिक कठिनाई था। हिन्दी के कालांश क्यों कम हो गये ? श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने यहाँ ठीक ही कहा कि हिन्दी के कालांश बढाने चाहिए। कालांश कम करने का भी एक कारण आर्थिक कठिनाई है।

केरल के हिन्दी अध्ययन के प्रति केन्द्र सरकार का दृष्टिकोण ठीक नहीं है। इस में कोई संदेह नहीं कि हिन्दी के कालांश बढाने हैं और हिन्दी अध्ययन निचले स्तर से एक वर्ष पहले आरंभ होना है। इस के

मैं हमेशा हिन्दी को हर स्तर पर प्रोत्साहित करने का प्रयत्न करता रहूँगा ।

लिए आवश्यक योजनायें यह सरकार अवश्य बनायेगी । यह सरकार राष्ट्रीयता बोध को सामने रखकर कार्य करनेवाली सरकार है । देश की एकता चाहनेवाली सरकार है ।

मैं हमेशा हिन्दी को हर स्तर पर प्रोत्साहित करने का प्रयत्न करता रहूँगा । श्री. वेलायुधन नायर ने यहाँ जो सुझाव रखे उन सब पर विचार किया जायेगा और इस दिशा में हर संभव कदम उठाया जायेगा । इन शब्दों के साथ मैं इस समारोह का उद्‌घाटन करता हूँ ।
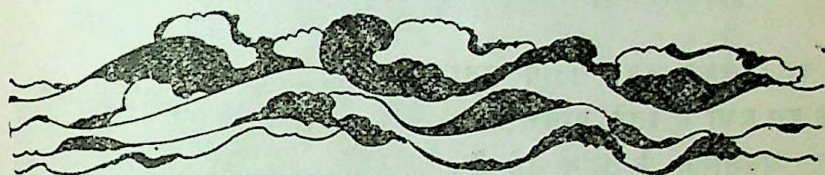
विदेशी शासन के अनेक दोषों में देश के नौजवानों पर डाला गया विदेशी भाषा के माध्यम का घातक बोझ इतिहास में एक सबसे बडा दोष माना जाएगा, इस माध्यम ने राष्ट्र की शक्ति हर ली है, विद्यार्थियों की आयु घटा दी है, उन्हें आम जनता से दूर कर दिया है और शिक्षण को बिना कारण खर्चीला बना दिया है ।

—महात्मा गांधी

भारत में अंग्रेजी एक मिथ्या है ।

देशिकोत्तम डा० जी. रामचन्द्रन
साहित्य कलानिधि

[17-5-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में आयोजित पुरस्कार वितरण समारोह में दिये गये अध्यक्षीय भाषण का सारांश]

यह देखकर बडा संतोष हुआ कि इस सभा में इतने अधिक श्रोता बडे अनुशासन के साथ बैठे हैं। यह सब यहाँ के एक जादूगर की करामात है। उन का नाम है एम. के वेलायुधन नायर । उठते बैठते, सोते जागते, वे यही सोचते हैं कि हिन्दी प्रचार को कैसे आगे बढायें ।

इस संस्था के संस्थापक स्व० के. वासुदेवन पिल्लै हैं। साठ साल पहले उन से मेरा परिचय हो गया था। एक छोटी संस्था के रूप में इसका आरंभ हुआ । आज यह एक बडे वटवृक्ष के समान केरल भर में व्याप्त है। इसके दो कारण हैं । हिन्दी सीखने का ऐतिहासिक
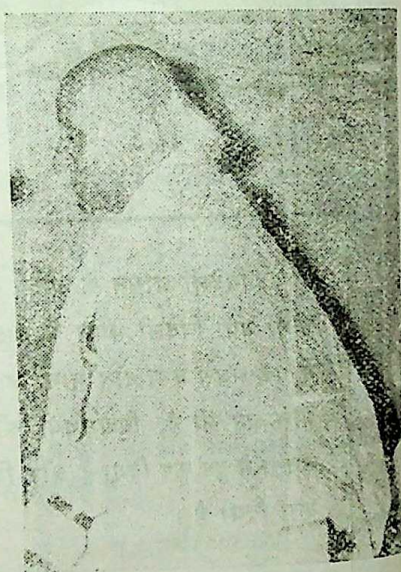
डा० जी. रामचन्द्रन

याथार्थ्य हमारे सामने था। जब कोई बात ऐतिहासिक याथार्थ्य बन कर हमारे सामने आती है तब
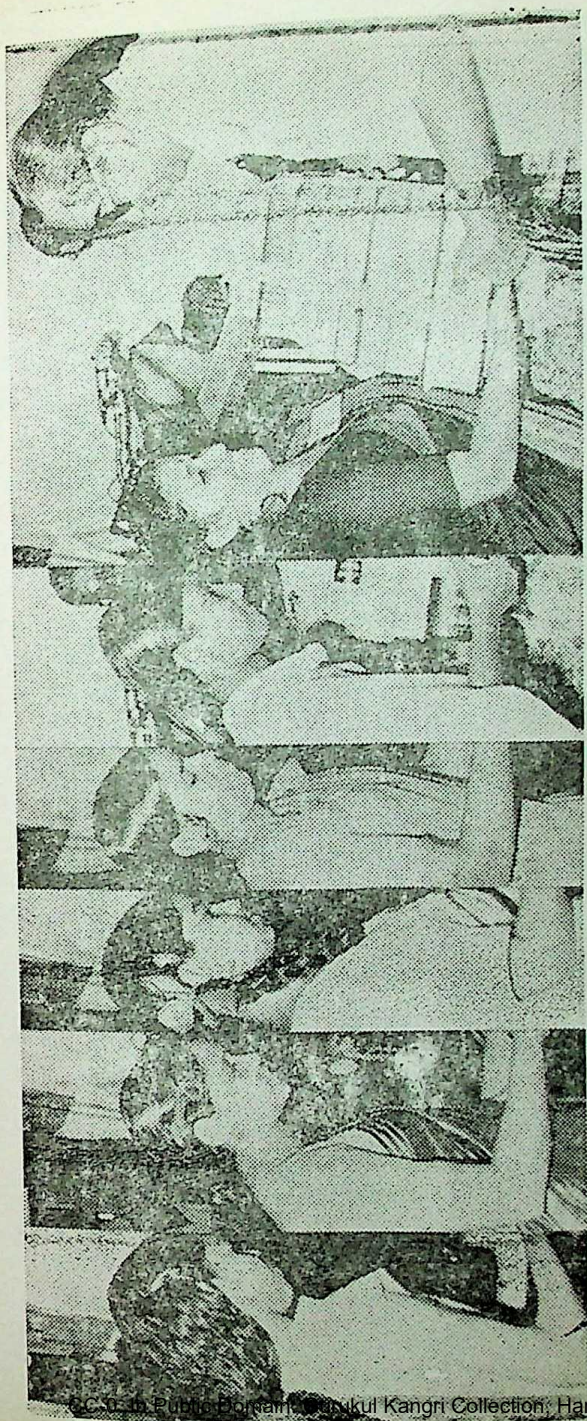
सभा की 'हिन्दी प्रथम' से 'साहित्याचार्य' तक की परीक्षाओं में राज्य स्तर पर प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान प्राप्त छात्राओं को केरल के शिक्षा मंत्री श्री. के. चन्द्रशेखरन पुरस्कार दे रहे हैं।
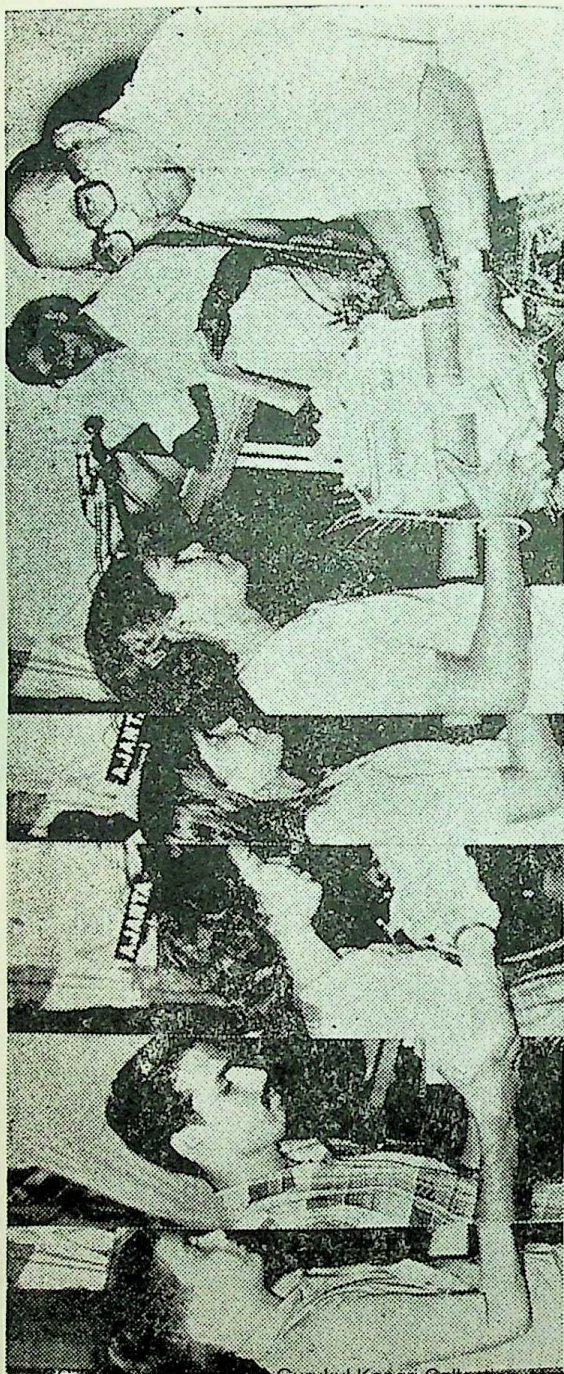
चित्र में शिक्षा मंत्री से पुरस्कार स्वीकार करते हुए छात्र-छात्राएँ दिखाई दे रहे हैं।
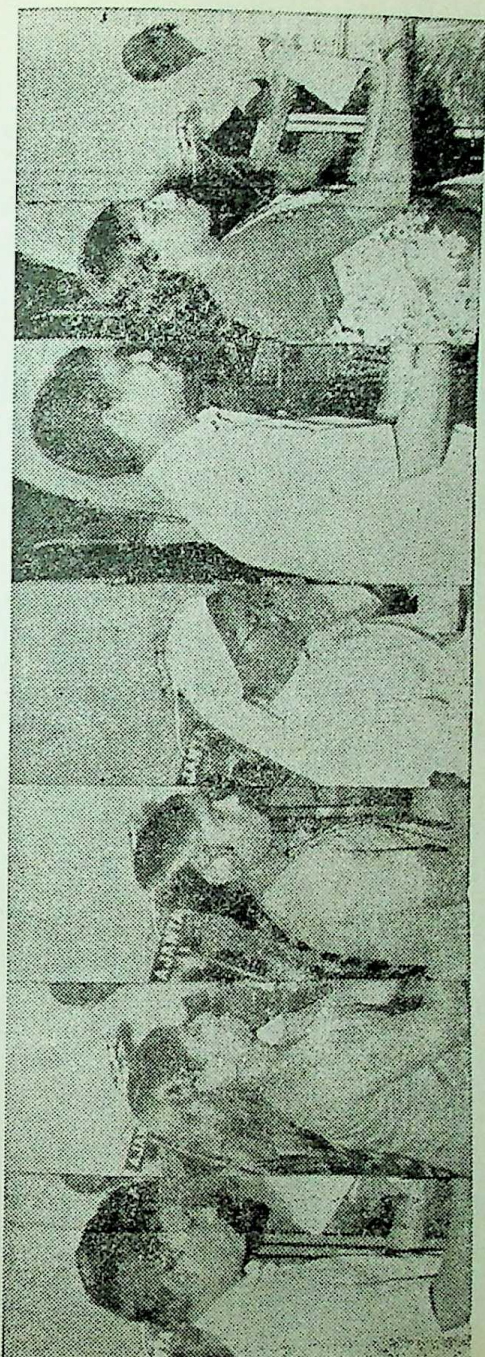
छात्र-छात्राओं को शिक्षा मंत्री पुरस्कार दे रहे हैं।
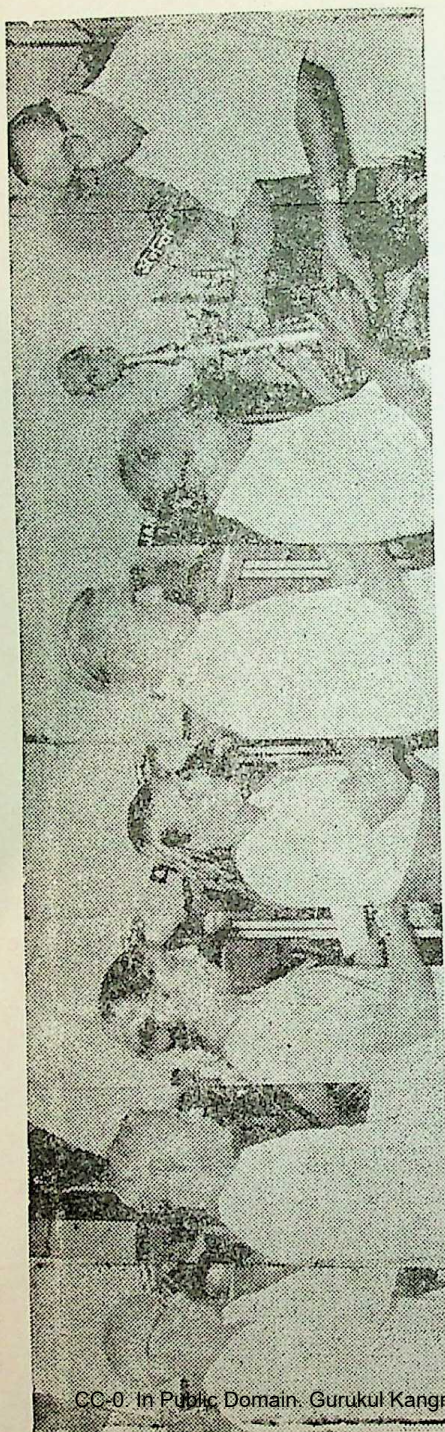
सभा की विभिन्न परीक्षाओं में सर्वाधिक परीक्षार्थियों को प्रस्तुत करने के उपलक्ष्य में प्रथम स्थान प्राप्त श्री. एन. एन. दामोदरन (एम. डी. कॉलेज, मूवाट्टुपुषा), द्वितीय स्थान प्राप्त श्री. के. कृष्णन कुट्टी नायर (बापुजी स्मारक हिन्दी विद्यालय, आर्टिंगल), तृतीय स्थान प्राप्त श्रीमती सी. शान्तम्मा (जय भारत हिन्दी कॉलेज, पेरूरकटा), प्रोत्साहक पुरस्कार प्राप्त श्रीमती वी. कृष्णकुमारी (बापुजी हिन्दी विद्यालय, मुतुकुलम), श्री. के. एस. कुमार (आज़ाद हिन्दी कॉलेज, नेमम) एवं श्री. के. पी. के. पिपारटी (नवभारत हिन्दी कॉलेज, वेल्लयंपलम) केरल के शिक्षा मंत्री से पुरस्कार स्वीकार कर रहे हैं।

ए. चन्द्रहासन, देवदूत विद्यार्थी, के. वासुदेवन पिल्लै आदि को कौन भुला सकते हैं ?

स्व० के. वासुदेवन पिल्लै

उसकी उपेक्षा कोई नहीं कर सकता। हिन्दी सीखने की आवश्यकता ने जब ऐतिहासिक याथार्थ्य बन कर हमें ललकारा तब हमारे सामने हिन्दी सीखने के सिवाय और कोई मार्ग नहीं रहा। दूसरा कारण यह है कि इस अभियान में अनेक महान व्यक्ति लगे हुए थे। ए. चन्द्रहासन, देवदूत विद्यार्थी, के. वासुदेवन पिल्लै आदि को कौन भुला सकते हैं ? एक ओर इतिहास ने हमें आगे धकेल दिया। दूसरी ओर कार्यकर्ताओं ने हमें प्रेरित किया। इसलिये सीढी दर सीढी चढने को हम विवश हो गये।

हिन्दी भाषा को अब कोई भी रोक नहीं सकेगा। क्यों? क्योंकि हिन्दी इतिहास की ललकार है। अंग्रेजी को हम पाँच, दस या पन्द्रह साल तक लाड प्यार से रख सकेंगे। फिर उसे बहिष्कृत करना होगा। और कोई चारा नहीं। क्या भारत की साधारण जनता को अंग्रेज़ी आती है? करीब चार पाँच प्रतिशत लोग ही बटलर इंग्लीश बोल पाते हैं। संख्या एक अनिवार्य शक्ति है। उसे कोई रोक नहीं सकता। जनता की लहर को भगवान भी रोक नहीं पायेगा। हिन्दी का शीघ्रातिशीघ्र भारत भर में राष्ट्रभाषा के रूप में प्रचार होना अत्यन्त आवश्यक है। नहीं तो हम आगे नहीं बढ सकेंगे। साधारण जनता को साथ लेकर नहीं बढ सकेंगे। इसलिए इस बात में किसी संदेह की गुंजाइश नहीं।

मंत्री आयेंगे। मंत्री जायेंगे। पर इतिहास की गति पलभर केलिए भी रुक नहीं सकती। यदि इतिहास का अर्थ समझ कर मंत्री कार्य कर सकें तो उन का और हमारा भाग्य।

स्व० प्रो० ए. चन्द्रहासन

तमिलनाडु में बडी कुश्ती लडी जा रही है । वहाँ का शासक दल हिन्दी नहीं चाहता । 'हिन्दी' शब्द देखते ही उन्हें कोप होता है । हिन्दी में कोई बोर्ड लिखा मिले तो वे उस पर टार पोतेंगे । यह खेल बहुत दिनों तक नहीं चल सकता । द्राविड मुन्नेट्र कषगम और अन्ना मुन्नेट्र कषगम जैसे दल इतिहास के प्रवाह में बह जायेंगे । हम क्षमापूर्वक अपना कर्तव्य करते जायें ।

मुझे अंग्रेज़ी बहुत पसंद है । पर अंग्रेज़ी आज भारत में एक मिथ्या है । साम्राज्यवादी शक्तियाँ अपने कार्यनिर्वहण केलिए यहाँ अंग्रेज़ी लाये । हमें स्वीकार करना है कि उस से हमें कुछ लाभ हुए हैं । अंग्रेजी ने दुनियाँ को देखने की एक खिडक खोल दी । उस खिडकी से हम बहुत कुछ देख चुके । अब तो दरवाजा ही खुल गया है । हमें दुनियाँ की कोई भी भाषा सीखने का अधिकार है । केवल अंग्रेजी का अध्ययन पर्याप्त नहीं । फ्रेंच पढें । जर्मन पढें । रूसी पढें । हम अपने से पूछें कि क्या हम ये सब भाषायें पढ सकेंगे । इस मिथ्या धारणा का कि अंग्रेजी में कुछ विशेषता है हम अपने मन से उन्मूलन करें । अंग्रेजी बहुत अच्छी भाषा है । मैं उसे बहुत पसंद करता हूँ । पर इतिहास की बाढ में अंग्रेजी टिक नहीं सकेगी ।

जैसे श्री. एम के. वेलायुधन नायर ने यहाँ बताया, हिन्दी प्रचार एक अगाध शिक्षा योजना भी है । यह एक ऐसा शिक्षा क्रम है जो हिन्दी प्रचारकों को उत्तम नागरिक बनाता है । इसलिए यह केवल एक भाषा संबन्धी बात नहीं है । इस अभियान में हमारे जीवन के सभी लक्ष्य समाहित हैं । इसकी विजय हो ।
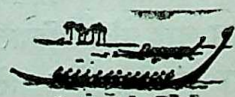
मैं ने स्वयं मलयालम सीखी

श्रीमती सुधा पिल्लै
जिलाधीश, तिरुवनन्तपुरम

[17-5-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में दिया गया भाषण] ।

श्रीमती सुधा पिल्लै

हिन्दी मेरी मातृभाषा नहीं। मेरी मातृभाषा पंजाबी है। स्कूल में मेरी प्राथमिक भाषा हिन्दी रही। चंडीगढ़ में यद्यपि घरों में प्राय: पंजाबी बोली जाती है तो भी वहाँ के स्कूलों में प्राथमिक भाषा हिन्दी है। हिन्दी और अंग्रेजी का अध्यापन प्राथमिक कक्षा से ही आरंभ होता है। तीसरी कक्षा से पंजाबी या और कोई भाषा आरंभ होती है।

केरल आते समय मैं मलयालम बिलकुल नहीं जानती थी। घर का नौकर मैट्रिक तक पढा हुआ था। वह हिन्दी भी जानता था। उससे मैं ने रसोई-मलयालम सीखी। फिर अपने पेटीशनर्स के मुख से जो

हिन्दी और अंग्रेजी का अध्यापन प्राथमिक कक्षा से ही आरंभ होता है। तीसरी कक्षा से पंजाबी या और कोई भाषा आरंभ होती है।

मलयालम सुनने को मिलती थी उसे ध्यान से सुनती थी। घर जाकर संदेहों का निवारण करती थी। हर दिन दो नये शब्द सीखती रही।

जब मैं सात वर्ष की थी तब मेरी माताजी हिन्दी एम. ए. की तैयारी कर रही थी। तभी मैं ने हिन्दी एम. ए. की सारी पुस्तकें पढ डालीं। हिन्दी के प्रति मेरे मन में तभी से आदर का भाव रहा है। आज जिन विद्यार्थियों ने पुरस्कार पाये हैं उनका मैं हार्दिक अभिनन्दन करती हूँ। ❀

केरल के गाँव गाँव में हिन्दी ग्रंथालय खुलें

श्री. पी. टी. भास्कर पणिक्कर

[17-5-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में दिया गया भाषण।]

आज जिन विद्यार्थियों और प्रचारकों ने पुरस्कार स्वरूप भारी किताबें पायी हैं वे अपने अपने गांव में छोटे छोटे हिन्दी ग्रंथालय खोलें तो अच्छा होगा। इससे जिज्ञासु व्यक्ति हिन्दी के माध्यम से बहुत कुछ सीख सकेंगे।

शिक्षा मंत्री से मेरा अनुरोध है कि स्कूलों और कॉलेजों का हिन्दी अध्यापन अधिक प्रभावी बनायें। हिन्दी शिक्षण के नवीनतम सिद्धान्तों से हिन्दी अध्यापकों को अवगत कराने के लिए नवीकरण पाठ्यक्रमों का आयोजन करें। इस केलिए सरकारी संस्थाओं का ही नहीं बल्कि केरल हिन्दी प्रचार सभा जैसी गैर सरकारी संस्थाओं का भी उपयोग किया जा सकता है। ऐसा करने से सेवा निवृत्त एवं अनुभव संपन्न
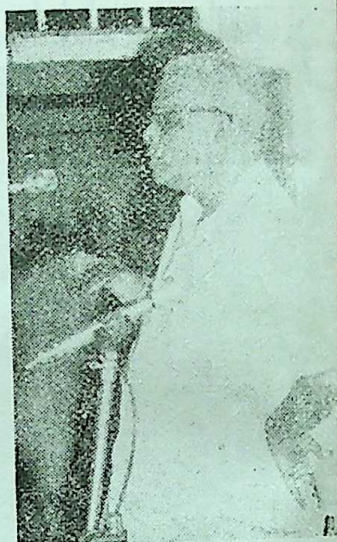
श्री. पी. टी. भास्कर पणिक्कर

विशेषज्ञों की सेवा का भी ल[ाभ] सकेंगे। अध्यापन के लिए [नि]... कालांशों की संख्या से भी अ[धिक] प्रमुख है अध्यापन की गुणव[त्ता]... हमारा प्रमुख प्रयत्न गुणवत्ता सु[धार] की दिशा में हो।

पुरस्कृत विद्यार्थियों और प्रचा[रकों] का मैं हार्दिक अभिनन्दन करता...

क्या भारतीय भाषायें सक्षम हैं

श्री. एम. एम. जेकब
संसदीय कार्य राज्य मंत्री, भारत सरकार

[वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा 16-2-1987 को तिरुवनन्तपुरम में आयोजित संगोष्ठी में दिये गये उद्घाटन भाषण का सारांश]

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, भारत सरकार के तत्वावधान में तिरुवनन्तपुरम में आयोजित 'भारतीय भाषाएँ—विश्वविद्यालय स्तर पर अध्ययन माध्यम' विचार-गोष्ठी का उद्घाटन करते हुए केन्द्र संसदीय कार्य राज्य मंत्री श्री. एम. एम. जेकब बोल रहे हैं ।

बैठे हैं—(दायें से) श्री. आत्मजित सिंह, प्रभारी, पाठ्य पुस्तक निर्माण कार्यक्रम, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ, श्री. लियाकत अलीखान, अध्यक्ष एवं प्रबन्ध निदेशक, पाठ्यपुस्तक परिषद्, तमिलनाड सरकार, डा० एम. मलिक मुहम्मद, श्री पी. टी. भास्कर पणिक्कर आदि ।

हमारे देश में भाषाओं की कमी नहीं है। पर हमने अपनी भाषाओं का उतना विकास नहीं किया जितना करना चाहिए था। साधारणतया करनसी नोटों पर केवल एक भाषा मुद्रित रहती है। पर हमारे देश की करन्सी नोटों पर 15 भाषायें मिलती हैं। यह 1662 भाषाओं और बोलियों का देश है। ऐसे देश में हमें भाषाओं का विकास करते हुए देश की एकता को सुदृढ बनाये रखने के उपाय सोच निकालने हैं।

हमारी लोकसभा में किसी भी प्रान्तीय भाषा में बोल सकते हैं। उसका तुरन्त अनुवाद करने की व्यवस्था है। इस तरह हम बिना किसी द्वेष भाव के, मिल के रहने का सबक सीखते हैं।

मैं नेथरलैंड के एक विश्वविद्यालय में गया। वहां के अध्यापकों और विद्यार्थियों से मैं ने बात की। इन में अधिकांश ऐसे थे जो अंग्रेज़ी में, मातृभाषा डच में, जर्मन भाषा में और फ्रेंच भाषा में धाराप्रवाह बोल सकते थे। उन का कहना था— हमारा देश बहुत छोटा है। हम केवल डच के द्वारा जीवन निर्वाह नहीं कर सकते। हमें अपनी सेवाओं और उपजों का विक्रय समीपस्थ देशों में करना

इन में अधिकांश ऐसे थे जो अंग्रेजी में, मातृभाषा डच में, जर्मन भाषा में और फ्रेंच भाषा में धाराप्रवाह बोल सकते थे।

है। हमारे पडोस में है जर्मनी, फ्रांस और इंग्लैंड। इसलिये हम स्कूल और कॉलेज की शिक्षा पद्धति में भाषाओं पर अधिक ज़ोर देते हैं और केवल एक विषय पर ध्यान केन्द्रित करते हैं।

केरल की बात लें। यहाँ की भाषा में मलयालम है। मैं ने हाई स्कूल तक की शिक्षा मलयालम माध्यम में पायी। कॉलेज में मैं ने अंग्रेज़ी पर भी अधिकार पाया। विदेशों में आयोजित कई संगोष्ठियों में भाग लेते समय मैं ने देखा कि अंग्रेज़ी पर प्राप्त अधिकार के फलस्वरूप भारतीय प्रतिनिधि अपने भाव प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त कर पाते हैं। सौभाग्य से दुनियाँ में ऐसे कई देश हैं जो कभी ब्रिटीश शासन के अधीन ही थे और अंग्रेजी को अपनी भाषा के रूप में स्वीकारा है। हमारी समस्या यह है कि कैसे विश्वविद्यालय पर शिक्षा के माध्यम के रूप में भारतीय भाषाओं को अपना सकेंगे। क्या हमारी

भाषायें और शब्दावलियाँ तैयार हैं ? माध्यम परिवर्तन के पहले हमें यह सुनिश्चित करना है कि हमारी भाषायें इस के लिए सक्षम हैं। इस में हमारे देश की जनता को सन्देह है कि हमारी भाषायें अभी इस के लिए सक्षम हैं कि नहीं। यदि नहीं, तो क्यों न हम अपनी भाषाओं के विकास पर

स्कूल और कॉलेज की शिक्षा पद्धति में भाषाओं पर अधिक ज़ोर देते हैं और केवल एक विषय पर ध्यान केन्द्रित करते हैं।

अधिक ज़ोर दें। विकास के बाद या दौरान ही यह परिवर्तन आसानी से कर पायेंगे। अन्यथा हमारी भाषायें अंग्रेज़ी मिश्रित मणिप्रवालम होंगी। शायद यही कारण होगा कि भारत सरकार इस दिशा में हर एक कदम बडी सावधानी से बढ़ाती है।

शिक्षा मातृभाषा के माध्यम से ही देना उत्तम है। बालक के व्यक्तित्व के विकास के लिए यही अच्छा है। पर इससे इस देश के एक राज्य का विद्यार्थी पडोसी राज्य में शिक्षा पाने के अवसर से वंचित न हो जाये। हर राज्य में दूसरे राज्यों से आनेवाले शिक्षार्थियों को किसी विषय के अध्ययन के पहले वहाँ की भाषा छः महीने या एक वर्ष पढने की सुविधा प्रदान करनी होगी। पश्चिम के कुछ देशों में ऐसा प्रबन्ध है।

जो भी हो, भाषा बडी मार्मिक समस्या है। देश की एकता में यह कभी बाधक न होने पाये। इसलिए भारतीय भाषाओं के विकास में जितना धन चाहें लगायें ताकि वे विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा का माध्यम बन सकें।

इन शब्दों के साथ मैं इस संगोष्ठी का उद्घाटन करता हूँ।

❀

भारतीय भाषायें सक्षम हैं

डा० एम. मलिक मुहम्मद

[वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा 16-2-1987 को तिरुवनन्तपुरम में आयोजित संगोष्ठी में दिये गये भाषण का सारांश]
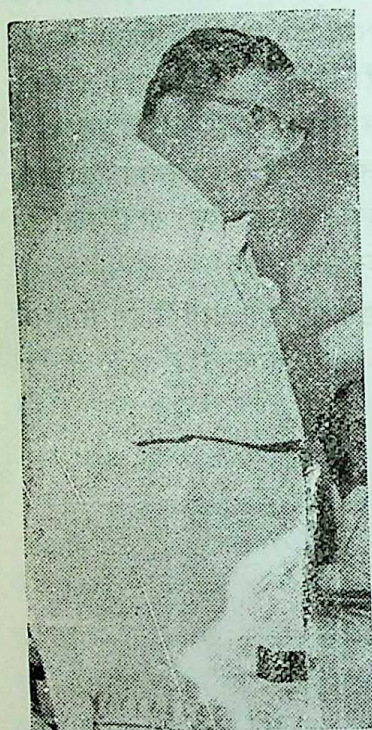
डा० एम. मलिक मुहम्मद

भाषा हमेशा ज्ञान की वाहिका रही है। भाषा और ज्ञान का घनिष्ठ संबंध है। वैज्ञानिक और तकनीकी क्षेत्र में हो रही प्रगति के इस युग में देश की प्रगति में शिक्षा के माध्यम का बडा स्थान है। भाषा के माध्यम से ही विज्ञान की बातें एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक संप्रेषित हो सकती हैं। शिक्षा का, विशेषकर प्राइमरी से अण्डर ग्रेडुवेट स्तर तक, तथा श्रमिकों की शिक्षा केलिए सहज और प्रभावी माध्यम मातृभाषा ही है।

वैज्ञानिक और तकनीकी क्षेत्रों में अपना मौलिक योगदान देने केलिए हमें मातृभाषा को उच्च-स्तरीय शिक्षा का माध्यम बनाना होगा।

हमारे शिक्षा आयोग के भूतपूर्व अध्यक्ष डा० डी. एस. कोठारी ने ठीक ही कहा है कि विज्ञान शब्द का अर्थ निश्चित करता है और भाषा शब्द प्रदान करती है।

भाषा का विकास बहुत कुछ समाज के विकास पर आश्रित रहता है। वैज्ञानिक और तकनीकी क्षेत्रों में

अंग्रेजी माध्यम में कोई विषय जब दुर्ग्रह लगता है तो उसे रट कर कंठस्थ कर लेता है।

अपना मौलिक योगदान देने केलिए हमें मातृभाषा को उच्चस्तरीय शिक्षा का माध्यम बनाना होगा।

हमारे देश के विद्यार्थी बचपन में मातृभाषा सीखते हैं और अंग्रेजी का परिचय बाद को प्राप्त करते हैं। अंग्रेजी माध्यम में कोई विषय सीखने केलिए उन्हें पहले अंग्रेजी सीखनी पडती है। यदि अंग्रेजी ही कठिन लगे तो उसके माध्यम से विषय का ग्रहण और अभिव्यक्ति पूर्ण रूप से कैसे संभव है? मातृभाषा द्वारा विषय ग्रहण करना और अभिव्यक्त करना आसान है।

अंग्रेजी माध्यम में कोई विषय जब दुर्ग्रह लगता है तो उसे रट कर कंठस्थ कर लेता है। इससे बच्चे के मस्तिष्क पर अधिक बोझ पडता है। नेशनल इंटग्रेशन कौंसिल ने जून 1962 की अपनी बैठक में अनुभव किया कि देश में वैज्ञानिक ज्ञान को विकसित करने की प्रक्रिया तब तक पिछडी रह जायेगी जब तक विश्वविद्यालय स्तरीय शिक्षा का माध्यम मातृभाषा न हो। कौंसिल का विचार था कि मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाना सांस्कृतिक या राजनीतिक कारणों से जितना आवश्यक है उससे भी अधिक शैक्षिक कारणों से आवश्यक है। साधारण जनता और विश्वविद्यालय के विद्वानों में पारस्परिक भाव संप्रेषण न हो तो भारतीय विद्वान ज्ञान के विकास में विशेष कर वैज्ञानिक एवं तकनीकी क्षेत्रों में अपना अधिकतम योगदान नहीं दे पायेंगे।

रूस, जापान, चीन जैसे विदेशों ने विज्ञान के शिक्षण के लिए अपनी

जापान में मेडिकल कॉलेजों में भी शिक्षा का माध्यम जापानी भाषा है।

अपनी भाषाओं को माध्यम के रूप में स्वीकार किया है। रूस ने अपनी देशीय भाषाओं को वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली से संपुष्ट किया है। वहाँ तो एक दर्जन से अधिक पूर्ण विकसित भाषायें हैं और उससे भी अधिक बोलियाँ हैं।

जापानी भाषा ने भी वैज्ञानिक संप्रेषण के उत्तम माध्यम का पद प्राप्त कर लिया है। जापान में मेडिकल कॉलेजों में भी शिक्षा का माध्यम जापानी भाषा है।

हमारी भाषायें काफी विकसित हो चुकी हैं। भाषायें वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावलियों तथा ग्रंथों से संपुष्ट की गयी है। इस बात पर एक निर्णय लेना होगा।

अंग्रेज़ी के प्रति हमारी जो अंध भक्ति है उस से हमारे मन में यह विश्वास रूढमूल हो गया है कि विज्ञान-शिक्षण का एकमात्र प्रभावी माध्यम अंग्रेज़ी है। हमारी भाषायें काफी विकसित हो चुकी हैं। भाषायें वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावलियों तथा ग्रन्थों से संपुष्ट की गयी हैं। इस बात पर एक निर्णय लेना होगा कि अंग्रेज़ी कब तक हमारी संस्थाओं में शिक्षा का माध्यम बनी रहेगी।

भारतीय भाषाओं के ज़रिये विज्ञान को जनता तक भी पहुँचाना है। यह हमारे जनतंत्र का सुपरिणाम होगा। प्रान्तीय भाषाओं के माध्यम से साधारण जनता में विज्ञान शिक्षण का प्रचार होता है।

हर राज्य में प्रान्तीय भाषा में विश्वविद्यालय स्तरीय ग्रन्थ निर्माण हेतु राज्य भाषा संस्थान स्थापित किये गये हैं। केन्द्र में वैज्ञानिक एवं तकनोकी शब्दावली आयोग है। आयोग ने शब्दावली तैयार की है। और हर विषय के लिए पेन-इन्डियन-टैर्मिनोलजी तैयार की है जो हर भारतीय भाषा में समान रूप में प्रयुक्त हो सकती है। यह हमारे देश की भावात्मक एकता को सुदृढ करने में अत्यंत सहायक होगी। आयोग ने हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं में विविध विषयक मौलिक तथा अनूदित ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं।

जनता में यह विश्वास उत्पन्न करना है कि हमारी भाषायें सक्षम हैं।

राज्य भाषा संस्थानों एवं ग्रन्थ अकादमियों का दिशा दर्शन भी आयोग द्वारा हो रहा है। अंग्रेज़ी के स्थान पर भारतीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाने के लिए अध्यापकों को नवीकरण पाठ्यक्रमों द्वारा प्रशिक्षित किया जा रहा है।

भारत की नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने उच्च स्तरीय शिक्षा के माध्यम के रूप में भारतीय भाषाओं को स्वीकार करने की बात पर अधिक जोर दिया है। शिक्षानीति को राज्य सरकारों से आग्रह किया गया है कि वे इस दिशा में आवश्यक कदम उठायें।

हमारे माननीय मंत्री ने यह संदेह उठाया है कि क्या हमारी भारतीय भाषायें इस के लिए सक्षम हैं। मेरा पूर्ण विश्वास है कि संप्रति हमारी भाषायें इस के लिए पूर्ण रूप से सक्षम हैं। हमें इन भाषाओं का उपयोग शिक्षा के माध्यम के रूप में करना है। तैरना सीखना हो तो पानी में उतरना ही होगा। जनता में यह विश्वास उत्पन्न करना है कि हमारी भाषायें सक्षम हैं। ★

निहित स्वार्थों को समझें

श्री. पी. टी. भास्कर पणिक्कर

[16-2-1987 को केन्द्र वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा तिरुवनन्तपुरम में आयोजित संगोष्ठी में दिये गये भाषण का सारांश]

माननीय केन्द्र मंत्री श्री. एम. एम जेकब ने यद्यपि यह बात मान ली कि शिक्षा का सर्वोत्तम माध्यम मातृभाषा है तो भी इस बात

श्री. पी. टी. भास्कर पणिक्कर

की ओर भी इशारा किया कि 'एक्सलेन्स' को ध्यान में रखकर कुछ तब्दीलियाँ करनी होंगी। ऐसा सोचना ठीक नहीं होगा कि इस देश के मछुओं, हरिजनों और गिरिजनों को अंग्रेजी के माध्यम से या मातृभाषा के अलावा और किसी भाषा के माध्यम से एक दम शिक्षित कर एक्सलेन्स की ओर ले जा सकेंगे।
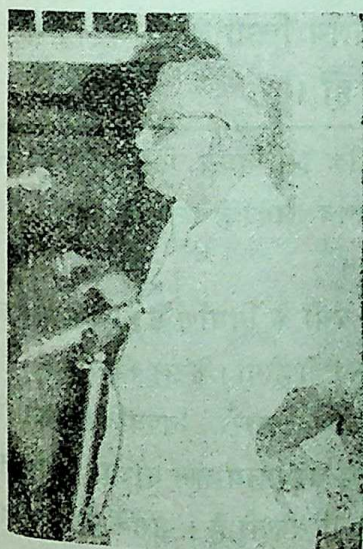
स्वतंत्रता संग्राम के दिनों से ही हमारे देश में भाषा के संबन्ध में कुछ सुस्पष्ट धारणायें बन चुकी हैं जिन्हें बदलना ठीक नहीं होगा। भारत की सभी भाषायें समान हैं। कोठारी कमीशन की रिपोर्ट के बाद हमने त्रिभाषा सूत्र को एक प्रकार से स्वीकार किया। हमने माना कि

केरल के भाषा संस्थान ने एक हज़ार ग्रंथ निकाले हैं।

भारत जैसे एक देश में त्रिभाषा सूत्र ही सर्वोत्तम है। पर कहाँ गया वह त्रिभाषा सूत्र ? यह संदेहास्पद है कि केरल को छोड कर और किसी राज्य में यह सूत्र है कि नहीं। और किसी राज्य में वांछित ढंग से इस सूत्र का कार्यान्वयन नहीं होता।

नयी शिक्षा नीति में मातृभाषा संबंधी बातें उतनी स्पष्टता से नहीं बतायी गयी हैं जितनी स्पष्टता से कोठारी आयोग में बतायी गयी थीं। आयोग ने बताया था कि विज्ञान सहित सभी विषयों की शिक्षा उच्चतम स्तर तक मातृभाषा द्वारा ही दी जायें।

उद्घाटक महोदय ने यह संदेह उठाया कि हमारी भाषायें सक्षम बन गयी हैं कि नहीं। गत बीस वर्षों के प्रयत्न से भाषा संस्थानों ने विविध विषयों पर शत शत पुस्तकें निकाली हैं। यहाँ बताया गया कि हिन्दी में पाँच लाख और मलयालम में दो लाख वैज्ञानिक तकनीकी शब्द बने हैं। केरल के भाषा संस्थान ने एक हज़ार ग्रंथ निकाले हैं।

यदि हम गलत मार्ग पर चलें तो भारत में भाषा समस्या सबसे गंभीर समस्या बनेगी। गोवा में मराठी और कोंकणी का विवाद चलता है। ऐसे विवाद कई जगहों में हैं। इसलिए भारत की एकता को बनाये रखने के लिए एक सुस्पष्ट भाषा नीति आवश्यक है। इसके अभाव में भाषा के नाम पर आपसी फूट पैदा हो सकती है। इसलिए एक नागरिक के नाते अधिकारियों से मेरा निवेदन

इस विषय में हमने पहले जो निर्णय लिया है उससे विचलित न हों।

है कि इस विषय में हमने पहले जो निर्णय लिया है उससे विचलित न हों।

ग्रंथों के निर्माण से ही समस्या का हल नहीं होगा। केरल की बात ही लें। केरल के चारों विश्वविद्यालयों में चाहें तो मलयालम माध्यम में शिक्षा दी जा सकती है। उसके लिए आवश्यक सुविधायें उपलब्ध हैं। पर

विश्वविद्यालयों के उच्च अधिकारी परिवर्तन के लिए तैयार नहीं हैं। प्रारंभ के दस वर्षों में कुछ प्रगति हुई। पिछले दस इस वर्षों में दिशा में कोई प्रगति नहीं हुई। कुलपति से

इन सब बातों के पीछे जो निहित स्वार्थ काम कर रहे हैं उनको समझना होगा।

पूछें तो वे कहेंगे कि मैं अकेले इस विषय में कुछ नहीं कर पाऊँगा। सेनेटों और सिंडिकेटों के सदस्य इस परिवर्तन के लिए तैयार नहीं। उनके मन में भाषा संबंधी जो संदेह है उसे दूर करना होगा। केरल में इस बात का प्रयत्न यदि आरंभ करें कि जहाँ तक हो सके मलयालम को शिक्षा का माध्यम बनाया जाये तो अन्य राज्यों के समक्ष एक दृष्टांत प्रस्तुत कर सकेंगे। इन सब बातों के पीछे जो निहित स्वार्थ काम कर रहे हैं उनको समझना होगा। इस दिशा में मोनिटरिंग की बड़ी आवश्यकता है। कठिनाइयों को समझकर उनका निवारण करना है। स्वीकृत पथ पर ही हम अग्रसर होते जायें। उससे ज़रा भी विचलित न हों।

❀

चाहे कुछ भी हो, एक दिन हिन्दी देश की राजभाषा बन कर ही रहेगी। जो हिन्दी अपनाएगा वही आगे चल कर अखिल भारतीय सेवा में जा सकेगा और देश का नेतृत्व भी वही कर सकेगा जो हिन्दी जानता होगा।

— श्री. नीलम संजीव रेड्डी

साधारणजनता और बुद्धिजीवियों को निकट लायें

श्री. लियाकत अली खान
अध्यक्ष एवं प्रबन्ध निदेशक, पाठ्यपुस्तक परिषद, तमिलनाट सरकार

[16-2-1987 को केन्द्र वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग के द्वारा तिरुवनन्तपुरम में आयोजित संगोष्ठी में दिये गये भाषण का सारांश]

श्री. लियाकत अली खान

समाज की प्रगति की आधार शिला शिक्षा है जिस के द्वारा मनोभावों, मूल्यों और क्षमताओं का विकास किया जाता है, ज्ञान और कौशल का विकास किया जाता है। परिवर्तनशील परिस्थिति का सामना करने की शक्ति शिक्षा ही व्यक्ति को प्रदान करती है।

सामाजिक विकास में आर्थिक विकास और राजनीतिक विकास भी सम्मिलित है। सामाजिक विकास के लिए यह आवश्यक है कि ज्ञान का द्वार उन सब केलिए खुला रखें जिन्हें ज्ञान की आवश्यकता है।

उच्च शिक्षा केलिए आवश्यक पुस्तकें हमारे देश की भाषाओं में तैयार की जायें। साधारण जनता और बुद्धिजीवियों के बीच जो खाई है उसे पाटना है। यह तभी संभव होगा जब प्रान्तीय भाषायें विश्वविद्यालय तक की शिक्षा का माध्यम बनें। मातृभाषा द्वारा शिक्षा प्राप्त करने पर ही विद्यार्थी किसी वैज्ञानिक विषय का गहरा ज्ञान पा सकेंगे और अनुसंधान द्वारा उसका

विकास कर पायेंगे। जापान, चीन, रूस जैसे देशों ने अपनी अपनी भाषा के सहारे गणनीय वैज्ञानिक प्रगति पायी है। प्रारंभिक दशा में अंग्रेज़ी सहायक हो सकती है। प्रान्तीय भाषाओं में जब पुस्तकें पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो जायेंगी और प्रान्तीय भाषायें शिक्षा का माध्यम बनेंगी तब अंग्रेज़ी की आवश्यकता नहीं रहेगी।

हमारे इस विशाल देश में, जहाँ हम विविधता में एकता बनाये रखना चाहते हैं, हर प्रान्तीय भाषा को उचित प्रधानता देनी होगी।

हमारे इस विशाल देश में, जहाँ हम विविधता में एकता बनाये रखना चाहते हैं, हर प्रान्तीय भाषा को उचित प्रधानता देनी होगी। हर वैज्ञानिक विषय में छात्रोपयोगी पुस्तकें अधिकाधिक मात्रा में तैयार करनी होगी। यदि प्रान्तीय भाषायें विश्वविद्यालय स्तर पर शिक्षा का माध्यम नहीं बनायी जायेंगी तो देश की प्रगति अवरुद्ध हो जायेगी।

माध्यम परिवर्तन इस ढंग से किया जाये कि इस से शिक्षा की गुणवत्ता में अवनति न होने पाये। प्रान्तीय भाषाओं के ग्रंथकारों और अनुवादकों को उचित पारिश्रमिक दिया जाये। भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक शब्दों का विविध-भाषा कोश यथाशीघ्र निकाला जाये।

हिन्दी प्रेम और सौहार्द की भाषा है। आजादी के लिए लडाई के समय हिन्दी देश की एकता और राष्ट्रीयता की भाषा रही है। ऐसी भाषा कभी भी विघटन की भाषा नहीं हो सकती।

— महीयसी महादेवी वर्मा

भारतीय भाषा विकास की गति धीमी रही है

डा० ए. एन. पी. उम्मरकुट्टी

यद्यपि शिक्षा के माध्यम के रूप में अंग्रेज़ी के स्थान पर भारतीय भाषाओं को स्वीकारने के कदम उठाये गये हैं तो भी इस दिशा में जो प्रगति हुई वह बहुत धीमी रही है। विविध प्रान्तीय भाषा अकादमियों ने प्रान्तीय भाषाओं में अनेक शब्दावलियाँ बनायी हैं और विश्वविद्यालय स्तरीय पुस्तकें तैयार की हैं। अंग्रेज़ी के स्थान पर भारतीय भाषाओं को शिक्षा के माध्यम के रूप में स्वीकार करने की आवश्यकता पर और इस दिशा में जो कार्रवाइयाँ महसूस हो रही हैं उन में इस संगोष्ठी में उपस्थित प्रतिनिधि विचार करें। हमारे जनतंत्र की
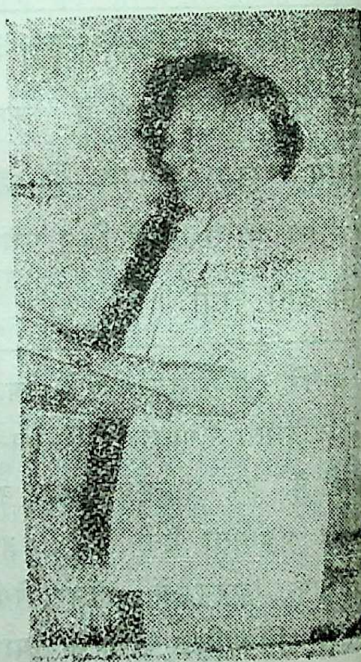
डा० ए. एन. पी. उम्मरकुट्टी

सफलता के लिए यह परिवर्तन अत्यंत आवश्यक है।
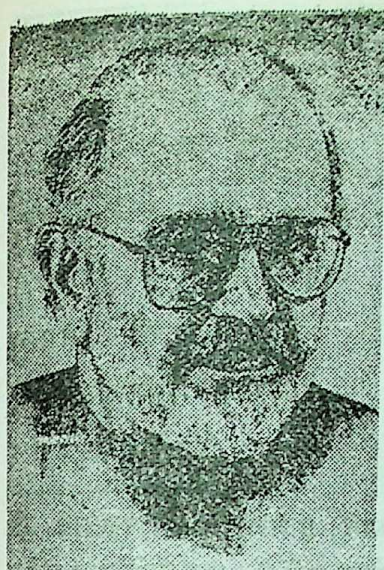
शोध लेख

कहानीकार अज्ञेय

श्री. एम. एस. विनयचन्द्रन

अज्ञेय आधुनिक हिन्दी साहित्य के सर्वाधिक समर्थ, संवेदनशील और जावन्त लेखक एवं कवि हैं। काव्य के क्षेत्र में नहीं अपितु कथा साहित्य में भी उन्होंने प्रयोग-वैविध्य से काम किया है।

"कहानी जीवन की प्रतिच्छाया है और जीवन स्वयं एक अधूरी कहानी है, एक शिक्षा है, जो उम्र भर मिलती रहती है और समाप्त नहीं होती।" ये पंक्तियाँ अज्ञेयजी की अपनी हैं। उन्होंने अपने नवीन प्रयोगों द्वारा हिन्दी कहानी को नयी दिशा दी।

1936-37 के आसपास हिन्दी की एक मान्य पत्रिका में यह आदेश दिया गया था कि "अज्ञेय की कहानी बिना देखे छापो, पर कविता अच्छी भी लगे तो नहीं। मगर अज्ञेय कवियों के कवि बन गये। कविता पर ज्ञानपीठ पुरस्कार भी प्राप्त किया। लेकिन कहानीकार अज्ञेयजी इतनी तेज़ी से कहानी के क्षेत्र में उभर कर आये और कुछ वर्षों से एकदम चुप हो गये। उन्होंने कहानी के क्षेत्र में संन्यास लेने की बात की है। अतः कहानी लिखना उन्होंने छोड दिया है या कहानी उनके हाथों से छूट गयी है।

कहानी के प्रति अपनी उदासीनता के कारण भी उन्होंने बताया है "मेरेलिए रचना-धर्म एक सार्थक-

खोज से संबन्धित है। इस खोज के परिणाम रूप मैंने कहानी लिखना छोड दिया। क्योंकि कहानी उसके लिए लायक माध्यम नहीं।''अज्ञेयजी की इस असाधारण चुप्पी के कई आंतरिक और बाह्य कारण हैं। आंतरिक कारणों में जहाँ वह इसे आत्मकथा मूलकता से मुक्ति— "भोक्तृत्य से उभर कर कर्तृत्व प्राप्त करना" कहते हैं। वहीं बाह्य कारणों में कहानीकारों और कहानी पत्रिकाओं की बहुतायत से पैदा हुई प्रतियोगिता आदि वातावरण भी हैं।

मूल्यवादी विचार धारा के दृष्टि-कोण से अज्ञेय को श्रेष्ठ कहानीकार कहा जा सकता है। वे विशुद्ध मनो-वैज्ञानिक प्रवृत्ति के कहानीकार हैं। उनकी कहानी कला का मूल धरातल व्यक्ति चरित्र है। उन्होंने अपनी कहानियों में सामाजिक, नैतिक, आर्थिक आदि समस्याओं को उठा-कर उनका अध्ययन व्यक्तिगत पहलुओं से किया है। उन्होंने व्यक्ति चरित्र की गूंफन, मूल्यों के आधार पर ही प्रस्तुत किया है। जैनेन्द्र के समान उन पर दर्शन का मिथ्या आवरण नहीं है, जोशी के समान केवल ह्रास्वोन्मुखी प्रवृत्ति को ही चित्रित नहीं करते और यशपाल के

जैनेन्द्र के समान उन पर दर्शन का मिथ्या आवरण नहीं है, जोशी के समान केवल ह्रास्वोन्मुखी प्रवृत्ति को ही चित्रित नहीं करते और यशपाल के समान द्वंद्वात्मक भौतिकवाद ही सर्वस्व नहीं है।

समान द्वंद्वात्मक भौतिकवाद ही सर्वस्व नहीं है। यह सभी कुछ अज्ञेय पर है। किंतु कवि की दृष्टिकोण से। अज्ञेयजी ने जिस जीवन दर्शन का निर्माण किया है वह तत्कालीन युग के अनुरूप यथार्थ भाव-भूमि पर ही निर्मित है। इसलिए आध्यात्मिक मूल्यों का उनकी कहानियों में अभाव है। वे तो ईश्वर के स्थान पर मानव की जिज्ञासा को महत्व देते हैं।

अज्ञेय मानव मन के आभ्यन्तर के कथा शिल्पी हैं। उनकी कहानियों की कथावस्तु घटनाओं के चारों ओर तक फेर न खाकर मानव के मन के चारों ओर चकराती हैं। अज्ञेय के प्रत्येक चरित्र व्यक्तिवादी है जिस में किसी न किसी रूप में विद्रोहात्मक प्रेरणा कार्य करती है एवं उन चरित्रों

का विकास उनके अहं रूप के माध्यम से किया गया है। मानसिक उथल-पुथल, संघर्ष, मनोवेग और द्वन्द्वात्मक परिस्थितियाँ ही उनकी कहानियों को प्रेरणा देती है।

"बाह्य उत्तेजक पदार्थ (Stimulus) और प्रतिक्रिया के मध्य की जो अवस्था होती है, उसकी अवधि को अपनी प्रतिभा के विपुलाकार शीशे (Magnifying lense) से विपुलाकार बना कर जो कथाकार जितना ही विस्तृत वर्णन में तल्लीन होगा, वह उतना ही मनोवैज्ञानिक कथाकार की प्रतिष्ठा का भागी होगा"—डॉ० देवराज उपाध्याय की यह राय कहानीकार अज्ञेय पर ठीक-ठीक दर्शित होती है। कहने की आवश्यकता नहीं कि अंग्रेज़ी प्रवृत्ति से "भूगोल" के खिलाडी नहीं हैं, "मनोगोल" के खिलाडो हैं। उन के एक पात्र के मन में एक बार या अनेक बार, एक वृत्ति के या अनेक

जहाँ आज का साहित्यकार राजनितिक जाल के फन्दे में फंसे बिना नहीं रहा है, वहाँ अज्ञेय उससे एक प्रकार से असंपृक्त से रहे हैं।

वृत्तियों के जो बवन्डर उठते हैं वे भूगोल के किसी तूफान से कम नहीं है। यदि भू कंप का कोई महत्व है तो "मन कंप" का भी महत्व कम नहीं है।

अज्ञेयजी की एक विशेषता यह है कि जहाँ आज का साहित्यकार राजनितिक जाल के फन्दे में फंसे बिना नहीं रहा है, वहाँ अज्ञेय उससे एक प्रकार से असंपृक्त से रहे हैं। इसका कारण यह है कि अज्ञेयजी समाज से अधिक महत्वपूर्ण व्यक्ति को और व्यक्ति से भी अधिक महत्वपूर्ण उसकी मनोवृत्तियों को मानते हैं। इसलिए उनकी साहित्यिक चेतना में मनोवेगों की लहरियों का आन्दोलन प्रायः दिखाई पडता है।

अज्ञेयजी की कहानियों को ले कर यह आरोप काफी रूढ़ सा हो चुका है कि वे घोर आत्मकेन्द्रित और अतिशय व्यक्तिवादी लेखक द्वारा लिखी गई कहानियाँ हैं। अज्ञेयजी ने ही कहा था—"मैं अपने प्रति उत्तरदायित्व को प्राथमिक मानता और समाज के प्रति दायित्व को उसी से उत्पन्न"। यह तो ठीक है कि उन्होंने व्यक्ति के अहं और उसके बौद्धिक रूप को अपनी कहानियों में चित्रित किया है। उनके पात्रों का अहं

मानव-मूल्यों में इसलिए परिवर्तित हो गया है कि वह बौद्धिक है। सामान्य अहंकार संकीर्ण होता है। यह बुर्जआ अहं है। ज्ञान के विस्तार से संकीर्ण अहमन्यता मिट जाती है। और वही संकीर्णता मानव-मूल्यों की विस्तीर्णता में परिवर्तित होती है। उन्होंने अपनी कहानियों में वैयक्तिक और समष्टिगत मूल्यों का समन्वय उपस्थित किया है।

अज्ञेयजी की कहानियों के संबन्ध में यह अवहेलना भी मिलती है "रेतिया सांप", रेत के भीतर ही भीतर जिस प्रकार एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँच जाता है उसी प्रकार अज्ञेय का कथानुबन्ध कहीं से कहीं आ निकला है। पाठक के लिए जब तक कि वह बहुत सधा हुआ न हो अथवा अज्ञेय की कथाओं का दो-चार बार बार पारायण न कर लिया हो तब तक आत्मसात करना कठिन हो जाता है। यह विचार एकदम निराधार तो नहीं।

अज्ञेय ने अपनी कहानियों की आत्ममूलकता पर विशेष बल दिया है। उनकी देश-विभाजन वाली कहानियों को छोडकर अब तक की कहानियों में यह तत्व किसी न किसी रूप में अवश्य रहा है। उनकी आरंभिक कहानियाँ क्रांति और जे[ल] जीवन के अनुभवों की कहानियाँ है[ं] उनके बाद के बहुत सी कहानियाँ [या] तो उनके घुमंतु जीवन की हैं या फि[र] वे उनके सैनिक जीवन के अनुभवों को आधार बना कर लिखी गई हैं।

आत्मकथा मूलक होते हुए [भी] अज्ञेयजी की कहानियाँ बनावटी और जीवन से दूर क्यों लगती है[ं?] उनकी कहानियाँ जीवन के प्रति ए[क] रुमानी और भावुक दृष्टिकोण [के]

> **उनकी आरंभिक कहानि[याँ] क्रांति और जेल जीवन [के] अनुभवों की कहानियाँ हैं।**

शिकार हैं। एक प्रखर और जीव[न] यथार्थ बोध के अभाव में ही अज्ञेयजी की क्रांति संबन्धी कहानियाँ आ[ज] सिर्फ म्यूजियम वैल्यु के तौर पर [ही] याद की जा सकती हैं। क्योंकि जीव[न] के मूल स्त्रोत से कट कर अव्याव[हारिक] हारिक आदर्शों के अमूर्तन [की] कहानियाँ रह गयी हैं।

अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ छोड[ा] हुआ रास्ता (1975) और लौटती पगडंडियाँ (1975) नामक दो संग्रहों में प्रकाशित हैं। अन्य प्रकाशित संग्रहों का नाम इस प्रकार हैं :—

1. विपथगा (1937), 2. परंपरा (1944), 3 कोठरी की बात (1945), 4. जयदोल (1951), 5. ये तेरे प्रतिरूप (1961), 6. अमर वल्लरियाँ और अन्य कहानियाँ (1954), 7. कड़ियाँ और अन्य कहानियाँ (1957), 8. अछूते फूल और अन्य कहानियाँ (1960)

"विपथगा" अज्ञेय का पहला कहानी संग्रह है। अधिकांश कहानियाँ जेल में लिखी गई थीं। इस संग्रह में लेखक की 12 कहानियाँ संकलित हैं। "विपथगा", "पेगोडा वृक्ष', "हारिति", "अकलंक", "मिलन, "एकाकी तारा" आदि कहानियाँ क्रांतिकारियों और विद्रोहियों के चरित्रों को लेकर लिखी गई हैं। "रोज़", "तितलियाँ", "दुःख", शीर्षक कहानियाँ वातावरण प्रधान हैं जब कि "हर सिंगार" और "शत्रु" शीर्षक कहानियाँ समाजिक कहानियाँ हैं।

"परंपरा" बाईस कहानियों का संग्रह है। अधिकांश कहानियाँ सामाजिक हैं जिन में समाज में व्याप्त विसंगतियों पर प्रकाश डाला गया है। शेष कहानियाँ चरित्र प्रधान हैं जिन में से "जिज्ञासा" को विचार-प्रधान कहानी कहा जा सकता है क्योंकि इसमें बौद्धिकता का अधिक पुट है। "कोठरी की बात" सात कहानियों का संग्रह है। लेखक के अनुसार इस संग्रह की पहली छः कहानियाँ जेल में लिखी गई थीं और अंतिम जेल से छूटने के तुरंत बाद।

"जयदोल" में ग्यारह कहानियाँ संकलित हैं। इन कहानियों का वर्ण्य-विषय मुख्यतः प्रेम और फौजी जीवन की अनुभूतियाँ हैं। "ये तेरे प्रतिरूप" इस संग्रह में चौदह कहानियाँ प्रकाशित हैं। "शरणदाता", "बदला" आदि चार कहानियाँ भारत-पाक विभाजन से संबन्धित हैं।

"अमर वल्लरियाँ और अन्य कहानियाँ"–इसमें आठ कहानियाँ हैं जिन में से सात को लेखक ने अपने "विपथगा" संकलन से और एक कहानी "कोठरी की बात" नामक संग्रह से लिया है।

कड़ियाँ और अन्य कहानियाँ–इस संकलन की भी नौ कहानियों में से केवल एक कहानी नयी है। जब कि शेष कहानियाँ पूर्ववर्ती संकलनों से ली गयी हैं।

अज्ञेयजी की कहानियों में अंकित प्रेम में व्यक्त से अधिक महत्व अव्यक्त की है जो मात्र अनुभव भर है और

जिसे सिर्फ महसूस किया जा सकता है। "सिगनेलर" कहानी विशेष रूप से उल्लेखीय है। बलराम संध्या से केवल एक बार मिलता है और अपने मन में प्रेम का अनुभव करके वह दूर से सैनिक ढंग से एक नियत समय पर सिगनल भेजता है कि मैं तुम से प्रेम करता हूँ। सिगनल भेजते-भेजते ही उनकी मृत्यु हो जाती है। उसे यह चिन्ता नहीं कि संध्या उस सिगनल को समझती है या नहीं।

अज्ञेय ने वैयक्तिक प्रेम की अनेक कहानियाँ लिखी हैं। उनकी उन कहानियों में वैचारिक इकाई मात्र प्रेम है।

अज्ञेय ने वैयक्तिक प्रेम की अनेक कहानियाँ लिखी हैं। उनकी उन कहानियों में वैचारिक इकाई मात्र प्रेम है। चाहे उसमें दुःख मिले अथवा सुख। यही प्रेम का वैचित्र्य है।

"नंबर दस" कहानी में चोरी को समाज मे व्याप्त बेकारी के दुष्परिणाम स्वरूप व्यक्ति द्वारा किया गया अनिवार्य और अंतिम कार्य (अपराध) कहा गया है। कहानी का प्रमुख पात्र "रतन" अपनी बहन की बीमारी के इलाज केलिए धन प्राप्त करने की पूरी कोशिश करता है जब उसे काम नहीं मिलता तो चोरी करता है जिसके कारण उसे जे[ल] जाना पडता है।

"शत्रु" नामक कहानी में समा[ज] का सबसे बडा "शत्रु" "भूख" [को] बताया गया है। "चिडिया-घर" शीर्षक कहानी आज के सभ्य समाज की देन है। जहाँ उन्मुक्त जीवों [को] अपने मनोरंजन के लिए बन्द करके "अहिंसा परमोधर्मः" का मं[त्र] निकाला जाता है।

अज्ञेय न वीर पूजा और क्रांति [को] समष्टिगत मूल्यों क रूपा मे प्रस्तु[त] किया है। "हारिति", "द्रोही" "पुलोस की सीटी" आदि कहानि[यों] क्रांति का समर्थन करता है। इन[में] राष्ट्रप्रेम, मानवता, क्रांति एवं वी[र] पूजा की अभिव्यक्ति हुई है।

आर्थिक संघर्ष को अज्ञेयजी [ने] अपनी कहानियों में चित्रित किया है यह संघर्ष साम्यवाद के आधार प[र] ही चित्रित है। यही कारण है कि उनकी कहानियों में भौतिक मूल्यों [का] विशेष महत्व है। लेकिन य भौतिक मूल्य मानवीय मूल्यों के विरोधी नहीं है। अपितु उन्हीं की स्थापना केलि[ए] आवश्यक साधन है। "गृहत्याग" 'शान्ति हँसी थी", "शत्रु" आदि

आर्थिक संघर्ष को अज्ञेयजी ने अपनी कहानियों में चित्रित किया है। यह संघर्ष साम्यवाद के आधार पर ही चित्रित है।

कहानियों में शोषित और सर्वहारा वर्ग के प्रति सहानुभूति की भावना है।

नैतिक मूल्यों के संदर्भ में आस्था, दया और त्याग को प्रतिष्ठित किया गया है। कर्तव्य ही चरम मूल्य है और उस पर सभी वैयक्तिक मूल्यों की तिलाञ्जली दी जा सकती है।

राष्ट्रीय संग्राम में कूदने वाले उनके अधिकांश पात्र वैयक्तिक मूल्य-प्रेम का बलिदान करते हैं।

अज्ञेय की कहानियाँ अनुभूति के स्तर से लिखी गई हैं। उनकी कहानियों में असाधारण रचना-कौशल एवं शिल्प-विधि का परिचय मिलता है। चरित्र विधान एवं शैली निर्माण की दृष्टि से भी अज्ञेय जी की मौलिकता दृष्टव्य है।

अज्ञेय ने कहानी निर्माण में अनेक शैलियों का प्रयोग किया है। आत्मकथात्मक, संवादात्मक, पत्रात्मक, प्रतीकात्मक आदि अनेक शैलियों का सहारा लेते थे। नवीन प्रयोगों के आग्रह से उनकी शिल्प विधि में विविधता के दर्शन होते हैं।

अज्ञेय की कथा भाषा की पहली पहचान काव्यमयता है। भाषा की दूसरी बडी शक्ति मौलिकता है। तीसरी भाषिक शक्ति निरंतर गत्यात्मक रूप में उनका भाषा अर्जन और सर्जन है। अज्ञेय की कथा-भाषा उनकी रचना प्रक्रिया और रचनात्मक मनोविज्ञान को खोलती चलती है। यहाँ उनका अभिजात-भाषा संस्कार परिलक्षित होता है। अज्ञेयजी ने पूरे कथा साहित्य में कहीं भी "सामान्य भाषा' का प्रयोग नहीं किया है। सामान्य भाषा साहित्य की भाषा नहीं होती। अज्ञेयजी की कथा भाषा उनकी संवेदना से एकतान है। वह उनकी संवेदना के तनाव का वहन और सहन दोनों ही करती है। अतः उन की कथा भाषा में अत्यंत ऊँची कोटि की सर्जनात्मकता है।

शब्दों के प्रयोग में अज्ञेयजी संस्कारी हैं। एक शब्द की सटीक आवृत्ति से साधारण भाषा को भी सर्जनात्मकता दे देते हैं— "जयदोल" कहानी की ये पंक्तियाँ "जो प्यार करता है, जो प्यार पाता है, वह क्या कुछ सोचता है, सोच सब बाद में

होता है जब सोचने को कुछ नहीं होता।" इसका प्रमाण है। अज्ञेय जी की भाषा में शब्द प्रयोग की बडी सावधानता है।

इसमें सन्देह नहीं कि साहित्य और सोच की महानदी में अज्ञेयजी की कहानियाँ एक बडे द्वीप की तरह मज़बूत और उभरी हुई रहेंगी।

स्मृति शेष अज्ञेयजी की उस भव्य स्मृति को शत-शत प्रणाम।

(केरल हिन्दी साहित्य परिषद के तत्त्वावधान में 30 अप्रैल 1987 को तिरुवनन्तपुरम में आयोजित सम्मेलन में प्रस्तुत निबन्ध)

सहयक ग्रंथ :

1. आज के लोकप्रिय हिन्दी कवि—'अज्ञेय'
   संपादक : विद्यानिवास मिश्र
2. "अज्ञेय"—डॉ० विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, मधुरेश
3. अज्ञेय की औपन्यासिक संचेतना—डॉ० नन्दकुमार राय
4. आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान—
   डॉ० देवराज उपाध्याय
5. अज्ञेय की संपूर्ण कहानियाँ—भाग 1, 2-भूमिका।
6. आजकल पत्रिका, जून 1979
7. हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य—
   डॉ० रमेश चन्द्र लवानिया
8. अज्ञेय साहित्य—प्रयोग और मूल्यांकन—
   डॉ० केदार शर्मा

शोध छात्र
यूनिवेर्सिटी लाईब्रेरी
तिरुवनन्तपुरम-34

बारहवाँ अध्याय (शेषांश)

सुभद्रा की अम्मा जब सत्रह वर्ष की थी, तब उसके समान सुन्दरी और कोई नहीं थी। उसके योग्य वर को ढूंढ रहा था कुटमण पिल्लै, तब पता चला कि अपनी एक भानजी का जन्म हो चुका है। उसी दम तिरुवनन्तपुरम में स्थित बहन के घर में पहुँचे और नंगी तलवार तानकर उसे मार डालने को उद्यत हुए। तब समीपस्थ क.षक्कूट्टत्तु पिल्लै ने कुटमण पिल्लै से कुछ कहा तो वे शान्त हो गये। कुटमण पिल्लै तभी अपने घर की तरफ गये। अपनी पुत्री का मुख ठीक ठीक देख सन्तुष्ट हो न पायी थी कि कुटमण पिल्लै की बहन चल बसी। मातृप्रेम से वंचित होकर सुभद्रा पली। अपनी दाइयों से भी सुभद्रा पता लगा न सकी कि अपने पिता कौन हैं। सुभद्रा को कुछ लोगों ने सूचना दी थी कि क.षक्कूट्टत्तु पिल्लै (स्वर्गवासी हुए) रामनामठम पिल्लै और चेंपकशेरी के वरिष्ठ पिल्लै को और कुटमण पिल्लै के कुछ भृत्यों को सत्य स्थिति मालूम है। कुटमण पिल्लै ने रामनामठम को मना किया था कि इस बारे में किसी को भी कुछ न बता दें। इसलिए सुभद्रा ने उस ओर भी कुछ खोज न जारी की। कथा की आगे की गति में बातें व्यक्त हो जायेंगी इसलिए यहाँ उन बातों के बारे में अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है।

सुभद्रा बाल्यसहज विषमताओं से बचकर पली और सबकी आँखों क तारा बनी। जब वह जवान बनी तब कुछ तंपियों में से कुछ युवक, युवक चंप.षन्ती पिल्लै और रामनामठम पिल्लै जैसे, कुछ बुजुर्ग विट उसके पास पहुँचे। किसी से विशेष रुचि दिखाये बिना ही सुभद्रा ने सब लोग को अपना लिया और सबको समान भाव से सन्तुष्ट किया कुटमण पिल्लै को पता चला कि अपनी भानजी ऐसे कुछ नागरिक कार्य कर रही है जो उसके हित के नहीं हैं। अपने रिस्ते के एक गृहस्थ के भानजे के साथ सुभद्रा का विवाह कराया। छः महीने तक दम्पति परस्पर प्रेम से भर्तृ गृह में रहे। तब पति देव को कुछ शंकाएँ होने लगीं। विरोध के बढते बढते कभी कभी वह अपनी पत्नी को मारता-पीटता भी था। पति को लगा कि इससे भी अपनी पत्नी में किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं है। अनुराग का नाम तक नहीं रहा। सुभद्रा सत्रह वर्ष की बनी। तब एक दिन पति अदृश्य हुए। कुटमण पिल्लै आदि ने तिरुवितांकूर, देशिगनाट आदि राज्यों में गुप्तचरों को भेजकर खोज करायी तो भी कुछ पता न लगा। सुभद्रा पति के घर से तिरुवनन्तपुरम आकर रहने लगी। पुराने बन्धुजन पुनः अपने परिचर जारी करने लगे। संतृप्त हो जाने होगा, कुछ लोगों ने उपेक्षा भा दिखाया। बूढे रामनामठम अप श्रद्धा में कोई परिवर्तन न कर सेव निरत रहे। पति से बिछुडकर आ साल गुज़र गये। तब तक लोगों के बीच उसको कुलटा संज्ञा प्राप्त हो चुकी थी। शंकु आशान, कात्यायनी अम्मा आदि के अभिमतों से पाठकों को इसका पता लग गया ही होगा। उस समय तिरुवनन्तपुरम और इर्द गिर्द के प्रदेशों में सुभद्रा या चंपकम् शब्द 'स्वतंत्र नारी' के पर्याय बन ग थे। खुले आम सुभद्रा से पुरुष या नारी बातचीत भी नहीं करते थे। फि भी ऐसा स्थान नहीं था जहाँ सुभद्रा पहुँचती थी। निर्धन नर नारी सुभद्रा के प्रति श्रद्धाभाव रखते थे। माय से प्राप्त असीम धन संपत्ति को सुभद्रा अपनी सुख सुविधाओं केलि बिना लोभ के व्यय करती थी। सा साथ अपने परिचित व्यक्तियों की कठिनाइयों के निवारण केलि सहायता के रूप में दे देती थी जि लोग फिजूल खर्च कहते थे। इस यहीं समाप्त करेंगे। इस अध्याय को समाप्त करने के पहले उसी रात को हुई एक घटना के बारे में कहना आवश्यक है।

कुटमण पिल्ल के घर से निकले सुन्दरय्यन अकेले चलकर जब राजपथ पहुँचा तो आधोरात हो चुकी थी। पूर्व निशा की बारिश थम गयी तो आकाश में तारे टिमटिमाने लगे। उत्तर पश्चिम से शीत हवा तेज़ चल रही है। हवा का सीत्कार, आरन्तूर नामक खेत से निकलनेवाली मण्डूक गीत, उत्तर पश्चिम के चेंतिट्टा की झाडियों और दक्षिण-पूर्व के नेट्टुंकाट नामक प्रदेश से आ रही गीदडों की आवाज़, झींगुरों की रटन इनके अलावा दूसरा कोई शब्द सुनाया नहीं पडता है। लोगों का आवागमन बिलकुल बन्द हो चुका। सुन्दरय्यन की धीरता धीरे धीरे उससे अलग होती जा रही थी। दूसरे लोगों में भीति उत्पन्न करनेवाले कुछ कार्य सुन्दरय्यन को डराने योग्य नहीं थे। तो भी हिन्दू धर्मावलंबी लोगों के अंधविश्वासों के संबंध में सुन्दरय्यन साधारण नीति का अपवाद नहीं था। आजकल अंधविश्वास बहुत कम रह गये हैं। फिर भी इस कथा के संदर्भ में दक्षिण भारत में, विशेषकर कन्याकुमारी के आसपास के कुछ प्रदेशों में अन्धविश्वासों पर अधिष्ठित आचारों का बोलबाला था। दक्षिणी भागों में आज भी प्रचलित बलि अर्पण, गीतार्चन प्रतिरूप समर्पण, माई की दावत, जन्तु बलि, मृतकों के लिए दावत आदि जुगुप्सापूर्ण दुर्देवताओं की आराधना विधियाँ विशिष्ट आचार हैं। जनता के मन में दुर्देवताओं के प्रति जो श्रद्धाभाव था वह इससे व्यक्त हो जाता है। जनता का विश्वास था कि ऐसे कुछ देव हैं जो विद्वज्जनों के लिए अदृश्य और अज्ञानी जनों के लिए दृश्य हैं और वे देव मानव रूप धारण कर साधारण मनुष्यों पर आक्रमण करते हैं। सुन्दरय्यन का भी यही विश्वास था। यह उनकी भीरुता से नहीं था। इस प्रकार के अनाचारों की आपत्ति के बारे में विस्तृत वर्णन करना आवश्यक नहीं है। लेकिन पाठकों को इसको याद रखना चाहिए कि जनता के दृढ विश्वास के अनुसार अपमृत्यु के शिकार बननेवाले मृत्यु के पश्चात् प्रेत या पिशाच का रूप धारण कर लेते थे।

अष्टगृहाधीशों की मंत्रणाएँ अपने मालिक के अनुकूल परिणत हो गयी थीं; इसलिए सुन्दरय्यन अत्यधिक सन्तुष्ट होकर तंपी के निवास की ओर चला था। लेकिन जब उसको लगा कि राजपथ में अकेला चल रहा है तो उसकी मानसिक शक्ति कम

हौने लगी। जब विशाल खेतों के बीच पहुँचा तब चारों ओर आँखें फेरने लगा, कान लगाने लगा। बडे परिश्रम में देखने का यत्न किया कि अपना रास्ता रोकने केलिए भू-स्वग-पाताल तक विशालकाय कोई स्वरूप अपने सामने प्रत्यक्ष हो रहा है कि नहीं। यह पूर्ण रूप से निश्चय कर कि कोई नहीं है, वह आगे बढ गया, पीछे की ओर मुडा तक नहीं। वर्ज्य होने पर भी पूर्व दिशा में भी देखता रहा। कालानुसृत इस संक्रामक रोग की दवा भी सुन्दरय्यन के पास था। अर्जुन नामदशक को अनुनासिक स्वर में जपने लगा। "अजुनह फलगुनह" से प्रारभ होकर "कृष्णह वैकुण्ठह विष्परश्रवह लक्ष्मणह प्राणदातारह (यहाँ हकार विसर्ग का अशुद्ध उच्चारण है) धीया यो न प्रशोधनात् (धीयो यो न प्रचोदयात्-वाले गायत्री मंत्र का विकल उच्चारण) आदि जपता रहा। इसके पश्चात् भय उत्पन्न करने वाली चिन्ताओं को दूर करने के उद्देश्य से "कलाभ्याम्" वाला (शिवानन्द लहरी का) श्लोक जापने लगा। लेकिन पूर्ण रूपसे कंठस्थ न होने के कारण "कलाभ्याम्" शब्द को पकडकर राग-विस्तार करने रहा। किल्लो नदी तक पहुँचते पहुँचते सुन्दरय्यन का संगीत ज़ोर पकड गया; सर और हाथों से आकाश प आक्रमण करने लगा। इन भा प्रकटनों से सन्तुष्ट होकर या संगी में लीन होकर या शंकराचार्य की रचना को विकृत करने के का रूढकर किसी ने पीछे से आक सुन्दरय्यन को पकड लिया अथवा उसका आलिंगन किया। सुन्दरय्यन के अन्दर एक बिजली कौंधी। उद गह्वर की गहराई से "कौन...?" प्रश्न निकल आया। उस प्रश्न के उत्तर के स्वरूप सुन्दरय्यन को भूमि से उठाकर ज़मीन पर लिटा दिया गया। तब सुन्दरय्यन को आदमी का स्वरूप दिखायी दिया। उसे मालूम हुआ कि वह कोई अमानुष मूर्ति नहीं एक साधारण भिक्षुक है। यह समझ कर कि भिक्षुक धन की आशा आक्रमण कर रहा है, सुन्दरय्यन कहने लगा कि अपने पास मूल्यवान कोई वस्तु नहीं है। यह सुनकर भी सुन्दरय्यन को ज़ोर से ज़मीन पर दबाते हुए उसने एक हाथ से कपडे के बीच छान बीन करने लगा तो सुन्दरय्यन एकदम आक्रमणकारी को एक ओर ठकेलते हुए पश्चिम की ओर भाग गया। भिखारी को पता नहीं था कि सुन्दरय्यन इतना शक्ति शाली है। सुन्दरय्यन के पीछे वह भी

दौडा। किसी नदी पर बने पत्थर के पुलपर पहुँचते पहुँचते ब्राह्मण की चोटी हाथ में आ गयी, लेकिन वह आगे की ओर आकर बबर शेर के समान भिड गया। भिखारी भी तैयार होकर खडा रहा। एक ही नजर में उसको लगा कि ब्राह्मण मुष्टि युद्ध केलिए तैयार खडा है। धोती को कमर में ज़ोर से बाँधकर और जनेऊ को कपडों के नीचे दबाते हुए मुट्ठी जबरदस्त कर भिखारी की नाक पर ज़ोर से प्रहार किया। भिखारी एक ओर हट गया। सुन्दरय्यन को लगा कि भिखारी कोई साधारण व्यक्ति नहीं है। अपने प्रतियोगी के बारे में भिखारी को भी पता लग गया था। आगे की ओर बढाये दाएँ पाद के घुटने पर दाएँ हाथों को रखकर दोनों आपस में आँखें लडा रहे थे मानो आपस में भिडे दो मुर्गे ताक लगा रहे हों। सुन्दरय्यन आगे बढता तो भिक्षुक उसको पीछे की ओर धकेल देता। भिक्षुक जब सुन्दरय्यन की नाभि को लक्ष्य कर बढता तो वह भिक्षुक की कमर पकडने का यत्न करता। कुछ ही देर में दोनों आपस में उलझ गये और अपने अपने पैरों को ज़मीन से ऊपर उठाने के यत्न में लग गये। पत्थर के बने पुल को हिलाते हुए ज़ोर पकडकर, नागों के समान आपस में बद्ध होकर, कंधे से कंधा लगाते धक्का देकर, सर पर सर लगाकर, बीच बीच में पैरों पर मार कर, हाथों को छीन लेकर दोनों लडते लडते रहने के बीच सुन्दरय्यन को भिखारी ने अपने कंधे पर उठा लिया। सुन्दरय्यन भिक्षुक के सर को अपने कांध के बीच में फ़ँसा कर दबाने लगा। तब तक सुन्दरय्यन को पुल के पत्थर की रुचि चखनी पडी। तब भी सुन्दरय्यन अपना बंधन ढीला नहीं करता। जब भिखारी के दम घुटने लगे तब वह अपनी कमर से कटार निकालकर वार करने लगा। लेकिन वार न कर कटार को ज़मीन पर डाल दिया, फ़िर उसके बंधन से मुक्त होने का यत्न करने लगा। इस बीच सुन्दरय्यन ने अपने कपडों के बीच छिपाये बैठक संबन्धी परचे को निकालकर नदी में फेंक दिया। दोनों अपने अपने प्राणों की रक्षा केलिए दयारहित होकर अपने अपने प्रति-योगी को धरासायी करने का यत्न करते रहे। पुल के दोनों किनारे सुरक्षित नहीं थे। इसलिए अन्तिम यत्न स्वरूप जब भिक्षुक ने सुन्दरय्यन

को उठाकर जमीन पर पटकना चाहा, जैसे रावण ने कैलास को उठा लिया है, तब सुन्दरय्यन ने बचाव के लिए हाथ पैर हिलाया तो दोनों एक साथ नदी में गिर पड़े। दोनों बिछुड गये और नदी में डूब गये। कुछ देर बाद पुल की दक्षिणी दिशा में दोनों उठ आये। भिक्षुक किनारे की ओर तैरने लगा तो सुन्दरय्यन दुबारा पानी में डूब गया।

भिक्षुक को लगा कि सुन्दरय्यन तैरना नहीं जानते। तब अपनी शत्रुता को भूल वह उस ओर तैरकर गया जहाँ सुन्दरय्यन डूबा था। सुन्दरय्यन दुबारा ऊपर निकल आया "मालिक" पुकारते हुए हाथ मारने लगा तो तीसरी बार डूब गया। पछताते हुए भिक्षुक शीघ्र गति से तैरकर उसी स्थान पर पहुँचे जहाँ "ब्र" कहते हुए सुन्दरय्यन उठ आया था और उसने उसको पकड लिया।

दो तीन घंटों में सुन्दरय्यन की बेहोशी ठीक हुई। आँखें खोलकर देखा तो वज्रों के समान आकाश में नक्षत्र टिमटिमा रहे थे। दोनों किनारों को स्पर्श कर और झाडियों को स्पर्श कर नदी के बहने का शब्द भी सुनाई पडा। पास ही एक तेजस्वी युवक खडा है। जिस सुन्दरय्यन ने भिक्षुक से लडते समय असाधार[illegible] धीरता दिखायी थी, उस युवक [illegible] देखकर डर से काँपने लगा [illegible] गुलाम ने कुछ अपराध न कि[illegible] कह झट से उसने अपनी आँखें [illegible] कर दीं।

फिर जब आँखें खुलीं तो यु[illegible] वहाँ नहीं था। तारे भी प्रभात [illegible] प्रकाश में [illegible] के पड गये हैं। [illegible] कारण [illegible] धूसर हुई चन्द्रकला पूर्व दिशा में दिखायी पड रही है।

(बारहवाँ अध्याय समाप्त)

(क्रमश[illegible])

पाठकों के पत्र

'केरल ज्योति' का अंक मिला। डा० एन. चन्द्रशेखरन नायर के अभिनन्दन के समाचार से प्रसन्नता हुई।

डा० नायर की 'देवयानी' रचना पर कभी मैं ने भी एक लेख लिखा था।

आप अपनी 'प्रचार-सभा' के कार्यक्रमों से सूचित करते रहें।

डा० विष्णुदत्त राकेश
प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, हिन्दी विभा[illegible]
गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्याल[illegible]
हरिद्वा[illegible]

दूरभाष : 61378

तार । "जय हिन्द"

केरलज्योति

पुष्प 22
दल 4
एक प्रति—1 रु०
वार्षिक—10 रु०

सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका

जुलाई 1987

संपादकीय

हिन्दीतर भाषा भाषी हिन्दी लेखकों का सम्मान

यह बडे संतोष की बात है कि केन्द्र सरकार प्रतिवर्ष प्रकाशित हिन्दी ग्रन्थों में ऐसे श्रेष्ठ ग्रन्थों को भी पुरस्कृत करती है जो प्रत्येक हिन्दीतर भाषा के हिन्दी लेखकों द्वारा रचित या अनूदित हों। केरल के जो लेखक पुरस्कृत हो चुके हैं। वे हैं—डॉ० वी. गोविन्द शेणाय, डॉ० ए. रामचन्द्र देव, प्रो० पी. लक्ष्मीकुट्टी अम्मा, श्रीमती पत्मिनी मेनोन, पंडित नारायण देव, डॉ० एन. चन्द्रशेखरन नायर, डॉ० सिस्टर क्लमेन्ट मेरी, श्री० पी. जी. कामत, डॉ० टी. के. सरला देवी, डॉ० पी. वी. विजयन, डॉ० एन. रामन नायर, श्री० के. नारायण, डॉ० एच. परमेश्वरन, श्री. एस. सदाशिवन नायर, डॉ वी. एन. फिलिप, प्रो० वी. ए. केशवन नंपूतिरी, डॉ० एन. पी. कुट्टन पिल्लै, डॉ० के. एस. मणि, श्री. मंङ्ङूर सुकुमारन, डॉ० सी. पी. राजगोपालन नायर, प्रो० के. एस. सोमनाथन नायर, डॉ० एन. ई. विश्वनाथ अय्यर एवं डा० जी. गोपीनाथन ।

1986-87 के पुरस्कृत साहित्यकारों में केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा के रीडर डॉ० टी. के. नारायण पिल्लै भी हैं जो केरल के प्रमुख हिन्दी लेखकों में से हैं। इतर हिन्दीतर राज्यों के भी ऐसे अनेकों हिन्दी लेखक हैं जो ऐसे पुरस्कार के योग्य निकले हैं। ये सब बधाई के पात्र हैं।

इस अंक में

पुरस्कार योजना का उद्देश्य हिन्दी-तर भाषा भाषी हिन्दी लेखकों को उत्तम हिन्दी साहित्य सृजन करने के लिए प्रोत्साहित और प्रेरित करना होता है । इस योजना का महत्व इस दृष्टि से अधिक है कि भारत की सामासिक संस्कृति की अभिव्यक्ति जिस मात्रा में हिन्दीतर भाषा भाषी लेखक हिन्दी में कर पाते हैं उस मात्रा में हिन्दी भाषी लेखक नहीं कर पाते। ऐसी आशा भी नहीं कर सकते कि निकट भविष्य में हिन्दी भाषी लेखक इस दायित्व को निभाने केलिए तत्पर या सक्षम हो सकेंगे क्यों कि इस केलिए हिन्दीतर भारतीय भाषाओं का गहरा ध्यान और आर्यावर्तेतर संस्कृतियों का निकट परिचय अत्यंत आवश्यक है जिसे प्राप्त करने में हिन्दी भाषी लेखकों को अधिक समय लगेगा।

ऐसी स्थिति में हिन्दीतर भाषा भाषी हिन्दी लेखकों को अधिकाधिक प्रोत्साहन देते रहना है ताकि वे अधिक मनोयोग के साथ हिन्दी साहित्य सृजन में लग जायें ।

इस बात का महत्व समझ कर भारत सरकार ने उक्त पुरस्कार की संख्या ढाई हजार रुपये से बढाकर पाँच हजार रुपये करने का निर्णय लिया है। निश्चय ही यह वृ[illegible]

(शेष पृष्ठ 39 पर)

भारत की गरिमा

ल : श्री. पी. वी. नरसिंह राव
मानव संसाधन एवं विकास मंत्री
भारत सरकार

नु: डॉ० माधवराव रेगुलपाटी
रीडर, कला एवं विज्ञान विद्यालय
काकतीय विश्वविद्यालय
वरंगल (आ० प्र०)
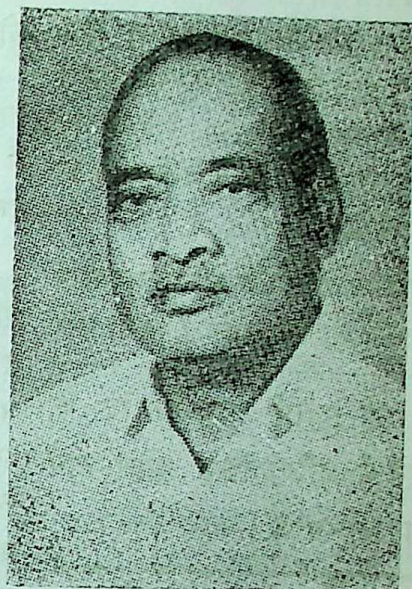
श्री. पी. वी नरसिंह राव

इस निबन्ध में प्राचीन भारतीय संस्कृति के कुछ प्रधान अंशों का विवरण प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है । हिमालय एवं मेरु पर्वत, गंगा, यमुना और सिंधु नदियाँ हिन्दू देवी देवताओं से सम्बन्धित अनेक केन्द्र, अनेक ऋषियों के आश्रम, हिमालय के आस पास के कई पवित्र-स्थान उल्लेख किये गये हैं। हमारे पंडितों ने उद्घोषित किया कि भारतीय देवी-देवता उत्तर प्रदेश के और भारतीय आचार्य दक्षिण सीमा के हैं।

हमारे पंडितों ने उद्घोषित किया कि भारतीय देवी-देवता उत्तर प्रदेश के और भारतीय आचार्य दक्षिण सीमा के हैं।

वैदिक संस्कृति, जैन बौद्ध संस्कृति और पौराणिक संस्कृति जैसी तीन शाखाएँ भारत देश की हैं। इन तीन शाखाओं ने विश्व-भर में अपना प्र...व डाला। नागरिकता की व्याप्ति में असाधारण योग दान दिया। कुछ इतिहासकार सोचते हैं कि आर्य

मध्य-आसिया से भारत-देश आये और उन्होंने भारतीय आदिवासी द्राविडों पर अपना अधिकार जमाया। अलावा, कुछ लोग सोचते हैं कि आर्य वैदिक संस्कृति प्राचीन काल से भारत देश की है। इस सुदीर्घ वाद-विवाद के बारे में अधिकाधिक शोध-कार्य की ज़रूरत है।

विगत दो शताब्दियों में पाश्चात्य विद्वानों का प्रभाव हमारे विद्या और

इस सुदीर्घ वाद-विवाद के बारे में अधिकाधिक शोध-कार्य की ज़रूरत है।

विज्ञान के क्षेत्रों पर अधिकाधिक रहा। वह प्रभाव आज भी ज़ारी है। विदेशियों के पालन में संस्कृति एवं विज्ञान के क्षेत्रों में कुछ नियंत्रित्व के नियम अमल में लाये गये। दिव्य-ज्ञान समाज के मेडाम् ब्लावेटस्को, आनीबिसंट, मिस्टर जड्ण जैसे लोगों ने बताया कि हमें विश्व के अंतराल से कुतुथि मोर्या (बुद्ध) जैसे दिव्यात्माओं के द्वारा दिव्य संदेश आते रहते हैं। इस कथन को सही समझ कर उस पर विश्वास करने वाले अनेक हैं। सारे लोग जानते हैं कि स्वर्गीय जिड्डुकृष्णमूर्ति ने इसे झूठा

सिंधु तराई के हरप्पा और मोहंजदारो की संस्कृति द्राविडों की है या आर्यों की ?

कहकर खंडन किया। ब्रिटिश वालों के ज़माने में इस प्रकार के अनेक कृत्य देखने में आये।

सिंधु तराई के हरप्पा और मोहंजदारो की संस्कृति द्राविडों की है या आर्यों की ? यह वाद-विवाद आज भी है। हमारे वेद बताते हैं कि इक्ष्वाकु महाराजा ने सरस्वती नदी के किनारे एक महायज्ञ किया था, वहाँ से अग्नि लेकर अयोध्या चले गये तथा गंगा और सरयू नदियों के मध्य भाग में स्थित जंगल को जलाकर वहाँ के स्थिर निवासी हो गये। उसी प्रकार ऋग्वेद में दाशराज के युद्ध का वर्णन है। कुछ पुरातत्त्वज्ञ सोचते हैं कि इन सबके बारे में शोध-कार्य की आवश्यकता है। भूगर्भगत अनेक रहस्यों की जानकारी के प्रयत्न के लिए अधिक खुदाई का कार्य करना चाहिए। उसी समय समृद्ध हिंदू संस्कृति का विवरण प्रस्तुत कर सकते हैं।

उसी प्रकार बौद्ध-धर्म के अवलोकन की आवश्यकता भी है। हिन्दू धर्म

वेदांत के अवलोकन में बौद्ध-धर्म ने अपना कार्य किया ।

संप्रदाय, आचार-विचार और विकास-क्रम में बौद्ध धर्म की प्रधानता अधिक है । बुद्ध के बाद बौद्ध-धर्म में अनेक परिवर्तन, परिवर्द्धन और संस्करण पाये जाते हैं । महायान संप्रदाय में मूर्तिपूजा, अवतार वाद, पुनर्जन्मवाद जैसे हिन्दू-धर्म के वादों ने स्थान बना लिया । मंत्रयान, वज्रयान, सहजयान(जैन)जैसे ध्यान-मार्ग का संप्रदाय अमल में आया। ये सारे धर्म आसिया के संपूर्ण क्षेत्र में व्याप्त होकर आज भी अमल में हैं । इसके बारे में विश्व-विद्यालय के स्तर पर शोध कार्य करने की ज़रूरत है । लोक विदित है कि आदि शंकराचार्य जी के गुरुगौडपादाचार्य बौद्ध संप्रदाय से प्रभावित हुए हैं । हैंदवावतार के रूप में उसने बुद्ध की स्तुति की । उसने अपनी कारिकाओं में प्रच्छन्न रूप से नागार्जुन के माध्यमिक वाद का अनुमोदन किया । इस प्रकार वेदांत के अवलोकन में बौद्ध-धर्म ने अपना कार्य किया। किसी हाल बौद्ध, जैन और हिन्दू संस्कृति, संप्रदाय, आचार-विचार चिरकाल सहजीवन बिताकर अनेक आदान प्रदान के मार्ग बन चुके हैं । इसके बारे में वैज्ञानिक शोध-कार्य आसक्ति जनक होने में संदेह नहीं है ।

हमारे इतिहास में बहुत से ऐसे लोग मिल जाते हैं जिन्होंने बौद्ध-धर्म की व्याप्ति के लिए अनवरत प्रयत्न किया उनमें नागार्जुन, वसुबंधु, अश्वघोष, दीपंधर, पाहियान, युवानत्सांग, इन्सिग आदि हैं। नलंदा, विक्रमशिला, वल्लभि आदि विश्व-विद्यालय,राजगृह,वैशाली,पाटलीपुत्र जालांधर, अनुराधपुर आदि नगर इतिहास प्रसिद्ध हैं । सारनाथ, अजंता, वल्लभि, सांचि, गया, अमरावती आदि बौद्ध-पीठों का वैज्ञानिक प्रभाव विश्व-व्याप्त है । इन केन्द्रों से भारत देश ने शान्ति, अभ्युदय और स्वातंत्र्य का संदेश सारे देशों के लिए अनुगृहीत किया । इस प्रकार देश और देशांतरों में सुख, शांति और समृद्धि बाँट दिये गये । आदि शंकराचार्य के अनंतर बौद्ध और जैन-धर्म का रक्त-पात रहित हिन्दु धर्म और संप्रदाय में समरस हो जाना भी अद्भुत अनुभव है । इस प्रकार का समुज्ज्वल और साँस्कृतिक इतिहास हमारे भारत देश के लिए रह जाना गर्व का विषय है । इतना ही नहीं स्वातंत्र्य के बाद
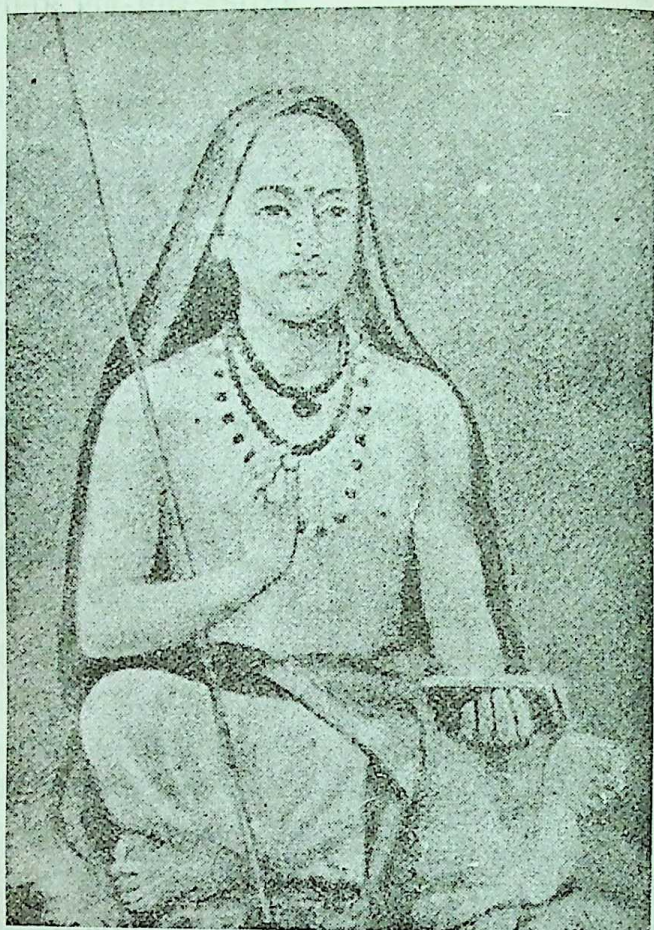
जगद्गुरु शंकराचार्य

के हमारे अनुभव यही साबित करते हैं कि भारत देश शान्ति और अभ्युदय को पंथा में प्रयाण कर रहा है। उसी बित्ती पर हम पंचशील, वसुधैक भावना आदि सिद्धांतों का उद्घोषण कर रहे हैं।

अलग अलग क्षेत्रों के जैसे धर्म और आध्यात्मिक क्षेत्रों में भी भली बुरी दो प्रवृत्तियाँ सामने आती हैं। अतीत शक्तियों और महिमाओं के बारे में दंत-कथाएँ प्रचार और प्रसार पाती हैं। वे विश्रृंखल भावों में

कल्पनाओं में और स्वप्नों में परिणत होती हैं। कुछ क्षुद्र प्रवृत्तियों को छोडकर हमारे प्राचीन ग्रंथों में धार्मिक, नैतिक और न्याय का विशिष्ट विलोकन प्रतिबिम्बित होता है। इनके साथ साहित्य और कला क्षेत्रों में अमूल्य उत्तेजना भरी सृजनात्मकता प्रमुख स्थान बना लेती है। हमारी चित्रकला, मूर्तिकला, वास्तुकला और आराम विहार के निर्माण की कला आदि कलाएँ अद्भुत मूल्यों से अनुप्राणित होकर सांस्कृतिक-दृष्टि से जगद्विख्यात हो गई हैं। बौद्ध-धर्म के संदेश के द्वारा उन कलाओं ने बर्मा, सिलोन, टिबेट, चीन, जपान, नेपाल, कोरिया, मलया, सयां, इंडोनेषिया, जावा आदि प्रदेशों में अपूर्व सामाजिक समुन्नति का निर्माण किया। अनेक भाषा एवं संस्कृतियों के लिए उत्तेजक होकर शांतिमय सहजीवन और सांस्कृतिक आदान प्रदान के लिए कारण बन गई हैं। उन उदात्त ऐतिहासिक अंशों का अध्ययन आज के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

बौद्ध-धर्म के संदेश के द्वारा उन कलाओं ने बर्मा, सिलोन, टिबेट, चीन, जपान, नेपाल, कोरिया मलया, सयां, इंडोनेषिया, जावा आदि प्रदेशों में अपूर्व सामाजिक समुन्नति का निर्माण किया।

जातीय पुनरुज्जीवन को सक्रिय शक्ति में परिणत करके ही हम आधुनिक विज्ञान-शास्त्र के विकास तथा प्रगति का प्राचीन संस्कृति से समन्वय करते हुए आगे बढ सकते हैं।

हमारे दीर्घकालिक विकास क्रम में विभिन्न संप्रदायों से संबन्धित अनेक रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं। श्रुति-स्मृति, व्याकरण, तर्क, विज्ञान, शास्त्र, इतिहास, गाथाएँ, साहित्य, कलाएँ, शिल्प, धर्म, संप्रदाय, आचार-विचार आदि सबने बहुमुख स्वभाव स्वरूपों में जीवन की प्रगति के लिए रास्ते खोल दिये। आज का युव-मेधावी वर्ग को चाहिए कि उनकी निर्माणशीलता, समैक्यशीलता और सहकारशीलता को समझे। उसी प्रकार इस्लाम, ईसा और पारसी धर्म भारतीयता से अभिभूत हुए। भाषा, प्रांत और धर्म से संबन्धित भाव-वैविध्य का समन्वय कर जातीयता की एकता में उपयुक्त

हमें एक दूसरे के निकट आना है

डा० महेश चन्द्र गुप्त
निदेशक (अनुसंधान), राजभाषा विभाग
गृह मंत्रालय, भारत सरकार

[18-6-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में दिये गये भाषण का सारांश]

स्वागत भाषण में प्रो० सुकुमारन नायर साहब ने कहा है कि हिन्दी सीखने पर नौकरी नहीं मिलती। कठिनाइयाँ हैं। यह बात सत्य है। हिन्दी सीखने पर भी वही कठिनाइयाँ हैं जो अन्य भाषायें सीखने पर हैं। देश में अंग्रेज़ी भाषा का वर्चस्व बना हुआ है। इसी कारण से भारतीय भाषायें दबी हुई हैं। गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग यह यत्न कर रहा है कि हिन्दी और अन्य भारतीय भाषायें आगे बढें, उन्नति करें। जिस प्रकार हिन्दी केन्द्र सरकार में राजभाषा बनी है उसी प्रकार हिन्दीतर प्रदेशों में हिन्दीतर भारतीय भाषायें राजभाषायें बनें।

भारतीय भाषायें राजभाषायें बनी हैं इसी कारण से भारतीय भाषाओं का महत्व बढा। इसी कारण भारतीय भाषाओं के छात्र-छात्राओं की मांग

होने की रीति में उन्हें काम में लाने की क्षमता अनादि से आज तक भारत देश में विद्यमान है। इतना कहना पडेगा कि इसमें कुछ नया नहीं है। इस प्रकार जातीय पुनरुज्जीवन को सक्रिय शक्ति में परिणत करके ही हम आधुनिक विज्ञान-शास्त्र के विकास तथा प्रगति का प्राचीन संस्कृति से समन्वय करते हुए आगे बढ सकते हैं। तभी स्वतंत्रता, स्वावलंबन, शान्ति और सहकारिता को हम सबल बना सकते हैं।

18-6-1987 को सभा भवन में आयोजित राजभाषा सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए श्री. महेश चन्द्र गुप्त (निदेशक [अनुसंधान], राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार) बोल रहे हैं। प्रो० एम. के. सुकुमारन नायर (स्नातकोत्तर अध्ययन केन्द्र) और श्री. वी. के सुब्रह्मण्यन नंपूतिरी (प्राचार्य, साहित्याचार्य महाविद्यालय) पास बैठे हैं।

जिस प्रकार हिन्दी केन्द्र सरकार में राजभाषा बनी है उसी प्रकार हिन्दीतर प्रदेशों में हिन्दीतर भारतीय भाषायें राजभाषायें बनें।

भी बढी है। आज से लगभग बीस वर्ष पूर्व भारतीय भाषाओं का कोई महत्व नहीं था।

कुछ समय पहले हम लोग यह नहीं समझते थे कि भारतीय भाषायें एक दूसरे के निकट हैं। किन्तु आज हम यह अनुभव कर रहे हैं कि भारतीय भाषायें एक दूसरे के निकट हैं। सभी भारतीय भाषाओं के भीतर का जो तत्व है वह एक ही है।

उत्तर भारत में भी अन्य भारतीय भाषायें सीखने की प्रवृत्ति पैदा होने और बढने लगी हैं। मैं ने स्वयं लगभग बोस वर्ष पूर्व तमिल भाषा सीखी थी। उस समय श्रीमती इन्दिरा गांधीजी प्रधान मंत्री थीं।

श्री. कामराज जी कांग्रेस के अध्यक्ष थे। मैं तमिल कक्षाओं में जाया करता था। तमिल पढने के पश्चात् एक प्रमाण पत्र मुझे मिला। उस पर श्रीमती इन्दिरा गांधीजी और श्री. कामराजजी के हस्ताक्षर हैं। यह प्रवृत्ति जो कुछ समय पूर्व प्रारंभ हुई थी, धीरे धीरे अब बढने लगी है। जिज्ञासा बढने लगी है। हम लोग

आज हम यह अनुभव कर रहे हैं कि भारतीय भाषायें एक दूसरे के निकट हैं।

इधर आते समय गाडी में मलयालम पढ रहे थे और तमिल पढ रहे थे।

हम यह अनुभव कर रहे हैं कि यदि हमें एक राष्ट्र के रूप में रहना है तो हमें एक दूसरे के निकट आना होगा, एक दूसरे की बातें समझनी होंगी, एक दूसरे के खान पान में सहयोग देना होगा।

जहाँ तक नौकरी का प्रश्न है, हम भाषा सीखते हैं, या कोई भी ज्ञान अर्जित करते हैं तो नौकरी करना उसका एक भाग है। किन्तु नौकरी करना ही सर्वांग नहीं हैं, संपूर्ण नहीं

हम लोग इधर आते समय गाडी में मलयालम पढ रहे थे और तमिल पढ रहे थे।

है। हम लोग हिन्दी यहाँ सीख रहे हैं, संभवतः कुछ प्रेम के कारण, कुछ अनुराग के कारण, और कुछ आप जैसे हिन्दी प्रेमी महानुभावों के प्रचारों के कारण अधिक और नौकरी के कारण कम। नौकरी मिलेगी। भारत सरकार का राजभाषा विभाग जहाँ से मैं आया हूँ, इस बात का प्रयत्न करता है कि भारत सरकार के सभी कार्यालयों में हिन्दी अनुवादक, हिन्दी अधिकारी, सहायक निदेशक व उपनिदेशक के पद बनते जायें। प्रयत्नों का परिणाम भी निकल रहा है। आप जानते हैं सरकारी नौकरियों पर रोक लगी हुई है। किन्तु कुछ प्रयत्नों के फलस्वरूप हिन्दी संबंधी पदों की संख्या बढ रही है। यह प्रक्रिया निरंतर चल रही है।

इतना तो अवश्य है कि समय के अनुसार जैसे जैसे शिक्षा बढ रही है देश में, उसके अनुपात में नौकरियाँ नहीं बढ़ रही हैं। हिन्दी भाषा जिस

अनुराग से हम पढते हैं उसी अनुराग से पढ़ते चलें। समय अनुकूल है।

हिन्दी और मलयालम में एकरूपता है और यही एकरूपता हमारी धरोहर है, हमारी शक्ति है।

आप जब हिन्दी पढेंगे तो आप यह अनुभव करेंगे कि हिन्दी और मलयालम में एकरूपता है और यही एकरूपता हमारी धरोहर है, हमारी शक्ति है।

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा ने मद्रास में और हैदराबाद में कंप्यूटर विज्ञान का पाठ्यक्रम हिन्दी माध्यम से प्रारंभ किया है और भारत सरकार ने उन्हें पर्याप्त अनुदान भी दिया है।

श्री वेलायुधन नायर साहब से निवेदन करूँगा कि इसी प्रकार का पाठ्यक्रम यहाँ भी आरंभ करें। क्यों कि हिन्दी माध्यम में कंप्यूटर विज्ञान की मांग बढ रही है। कंप्यूटर जानने वाले प्रचारकों की आवश्यकता बढ रही है।

आप सभी हिन्दी मुझसे अधिक जानते हैं। मेरा उत्साह इतनी बडी संख्या में आप को देखकर अधिक बढ़ गया है।

दो आँखें हजार नजारे

यह एक आलीशान छः मंजिला मकान है। इसकी चौथी मंजिल के कमरे में कुछ दिन रहने का भाग्य(?) मुझे प्राप्त हुआ है। इस भाग्य को कोसता हूँ क्योंकि मुझे इस भवन से बाहर जाने की अनुमति नहीं है। चलने फिरने की ताकत रखते हुए भी अपंग सा हूँ। विकलांगता या बुढापा के कारण घर के बरामदे तक ही बढने की शारीरिक क्षमता रखनेवालों की मानसिक कुंठा का अनुमान यहाँ रहते हुए कुछ कुछ कर सकता हूँ। मेरी कुंठाओं को दूर करनेवाली एक सहेली यह खिडकी है जो सडक की तरफ खुलती है। वह मेरी पीठ पर हवा का हाथ फेरती हुई कहा करती है "क्यों भैया? इतना उदास होने को क्या धरा है। मेरी सहायता लो। इस खिडकी से बाहर की तरफ सबेरे से शाम तक देखते रहो। आँखें दो ही हों, पर नज़ारे हज़ार मिलेंगे।" खिडकी की सांत्वना से मेरा जी कुछ हलका हो रहा है।

डा० एन ई विश्वनाथ अय्यर

शहर के कुछ ऊँचे मुहल्ले में बसे हुए इस ऊँचे भवन की खिडकी पर खडा हूँ तो यहाँ से मैं सामने मीलों तक का प्राकृतिक दृश्य देख सकता हूँ। बिना विमान का टिकट लिये विमानयात्रा के दौरान लहलहाती प्रकृति के दर्शन पाने का सा आनन्द

डॉ० एन. ई. विश्वनाथ अय्यर

प्राप्त हो रहा है। मानव के दंभ और धनलोभ के प्रतीक नगर के सतमंजिले भवनों की झांकी के बाद हरी हरी प्रकृति का विराट वितान देखने पर दिल ठंढा होता है। पर साथ ही आह भी उठती है कि यह हरा वितान कितने दिनों तक टिक पाएगा।

बडे बडे नगर में साहब-साहिबा लोग आधी रात तक टी. वी/विडियो

दूसरे पक्षियों को आवाज़ें इन काकों के कर्कश स्वर में डूब जाती हैं। प्रजातंत्रवादी मंचों पर भी तो यही होता है।

से गरम चित्र देखकर या पार्टी में खोकर सो जाते हैं तो उन्हें दूधवाले की घंटी का ही प्रभाती सुनने को मिलता है। मध्यम श्रेणी के गृहस्थ रेडियो पर बिसमिल्ला खाँ की शहनाई या राजरत्तिनम के नादस्वरम का रिकार्ड सुनकर जगते हैं। कवियों ने तो पंछियों के प्रभाती-गायन का वर्णन किया है। इन पक्षियों को किसने समय की पाबन्दी सिखाई है? वे सब के सब चार साढे चार बजे प्रातः काल ही रियाज़ करने लगते हैं। किसी की मीठी आवाज़! किसी का तार स्वर। एक अनजान ताल व लय। मानों प्रकृति महारानी के जगने के पहले ये वैतालिक जागरण गीत गाते हों! यह कल्पना नये समाजवाद के युग में कुछ भोंडी लग सकती है। मगर प्रकृति के अनंत वैभव की छटा उसे एक रानी के रूप में कल्पित करना उचित ही बताती है।

संसार में गुणी लोग अपने गुणों का ढिढोरा नहीं पीटते। वे अपने गुणों को प्रकट तक होने देना नहीं चाहते। मगर ओछे व छोटे लोग बन ठनकर अपनी शेखी बधारते रहते हैं। अधजल गगरी छलकत जात। इस गायक पक्षीसमाज में सब से प्रखर काकसमूह है जो अपनी कठोर वाणी को परम मधुर मानकर गमक प्रधान स्वर-प्रस्तार करता रहता है। दूसरे पक्षियों की आवाज़ें इन काकों के कर्कश स्वर में डूब जाती हैं। प्रजातंत्रवादी मंचों पर भी तो यही होता है।

मेरी यह खिडकी कितनी अच्छी साथिन है! अगर यह साथ न देती तो मैं इतना विशाल दृश्य कैसे देखता? पर यह क्या, सामने प्रकृति ने एक विशाल काली मखमली चादर बिछा दी है। उसने अपने बच्चों को चादर से ओढ दिया है। उसे पेड पौधों की भी चिंता है कि इनकी नींद में खलल न पडे। दूर दूर दीखने वाली नियाण की बत्तियाँ देख़ लगता है कि किसी कश्मीरी कोमल बदन की नाजुक उँगलियों ने इस चादर में चाँदी के बेलबूटे बना लिये हैं।

पछियों का कोरस और [illegible] आवाज़ में सुनाई दे रहा है। उसकी मोहिनी से मुग्ध मुझे देख शुक्रतारा हँस पडा। इस शुक्रतारा का वर्णन करनेवाले सुमित्रानंदन पंत जैसे कवियों का स्मरण हो आया। मेरी आँखें थोडी देर तक बंद रहीं। फिर से खुलीं तो प्रकृति का पट परिवर्तन होने लगा। पूर्वी दिशा में काली छाया की जगह कुछ कुछ उजला रंग झाँकने लगा। गाढे काले बादलों की जगह पर हलके सफेद रंग के बादल दीखने लगे। दूर मुझे मसजिद की अजाँ की पुकार सुनाई देने लगी —"अल्लाह ओ अकबर! ला इलाह इल्लिल्लाह!" आदि।

अब काली चादर से ढकी धरती के विस्तार की जगह मेरे नयनों को महोत्सव देनेवाली घनी वृक्षावली दिखाई दे रही है। इनकी संख्या कैसे गिनूं? सैकडों हैं। नारियल का कुंज कहिए। केरल के ये कल्प-वृक्ष मधुर जल और मीठी गरी से लोगों की प्यास व भूख मिटाते हैं। किसी भी शुभ पर्व पर नारियल अनिवार्य है। यही अकेला पेड है जिसका अंग अंग लोगों को काम देता है। मीठी गरी को भीषण [illegible] गर्मी में सुखाइए, कोल्हू में पेरिए। इस हिंसा के उत्तर में वह सुगंधी तेल देता है। स्वच्छ नारियल तेल को चालाक व्यापारी सीधे व खुशबू मिलाकर विभिन्न लेबल चिपकाये विज्ञापनों के ज़रिए खूब बेच लेते हैं। नारियल के पेडों के बगल में आम, कटहल, सुपाड़ी आदि कितने ही प्रकार के पेडों की कतारें! नगर के रेगिस्तान के बीच में यह नखलिस्तान सा लगता है। गनीमत है कि ट्रिवेंद्रम अब भी प्रकृति की घोर उपेक्षा नहीं कर चुका।

इतने नारियल के वृक्षों के होते हुए भी केरल में नारियल की महँगाई देख ताज्जुब होता है। मगर उसका जवाब भी दूसरे क्षण में मिलता है। लोग इन पेडों को खाद पानी बहुत कम देते हैं। प्रेमचंद की कहानी 'बडे घर की बेटी' के ससुरालवालों की तरह मालिक लोग हर पैंतालीसवें दिन इन पेडों के फल तुडवाने पहुँचते हैं। कुछ समय तक फल कम मिलने पर मालिक अपना बगीचा थोडा थोडा करके बेचते हैं। यहाँ ज़मीन बहुत महँगी होती है। इसलिए मालिक को एकसाथ काफी रकम मिलती है। नगर के इस प्रमुख अस्पताल का विकास होता

जा रहा है, रोगियों की संख्या बढती जाती है, रोगों की संख्या भी बढती जाती है। ऐसी प्रवृत्ति के कारण नारियल के बगीचों की जगह, खेतों की जगह नई नई बस्तियों का उदय वर्तमान युग की प्रवृत्ति हो गई है।

ज्यों ज्यों उदयाचल का रवि ऊपर की ओर बढता है त्यों त्यों इन हरे हरे वृक्षों के बीच से कई मानव-निर्मित भवन नज़र आते हैं। पुराना सरलता-प्रिय जीवन अब नहीं रहा। स्थापत्यकला के विकास के साथ साथ ऊँची अट्टालिकाएँ –कंक्रीट के विशालकाय भवन उठ रहे हैं। अमरीका के दानवाकार भवनों तक बढने की मनोकामना भारतीयों को ग्रस रही है। एक तरफ़ वैद्युतिभवन की छवि है, जहाँ केरल के बिजली विभाग का केंद्रीय प्रशासन चलता है। दूसरी तरफ़ और ऊँचाई की तरफ़ बढा भवन शायद नया नया केंद्रीय सहकारिता-बैंक भवन है। बैंकों के बीच में आजकल गगनचुंबी भवन निर्माण करने की होड लगी है। मलयालम को कहावत है जंगल की लकडी मंदिर का हाथी—जितना उठवा सको--उठवाओ। उठवानेवाले का कोई नुकसान नहीं होता। जनता

> जंगल की लकडी-मंदिर का हाथी—जितना उठवा सको उठवाओ।'

की संपत्ति बैंकों में जमा होती है। उसका कम से कम व्यय और अधिकाधिक उपयोग ही आदर्श लक्ष्य होना चाहिए। मगर शान-शौकत बढाने में धन का इतना अपव्यय देख कर सचमुच चिंता होती है कि कहीं इनकी नींव खिसती नहीं जा रही है।

आँखें और आगे बढती हैं तो पूरे नगर को वर्षों से आशीर्वाद देते प्रभु से प्रार्थना करते खडे योशु मसीहा की मूर्ति और लाल रंग का कैथलिक गिरजाघर दीख रहा है। त्रिवेंद्रम नगर के निवासी कैथलिक लोगों का आध्यात्मिक चिंतन और विवाह जैसे सामाजिक मंगल-कर्म का यह केंद्र है। उसके नज़दीक दो मशालधारी खिलाडियों की मूर्तियाँ हैं। ये गिरजाघर के सामने के चन्द्रशेखरन नायर स्टेडियम से संबन्धित हैं। पहले प्राकृतिक ज़मीन को नष्ट कर के नगर बनाना और बाद में नगर में दौडने कूदने स्टेडियम का निर्माण करना। यों कुएँ तालाब सब मिट्टी से पाट देना और नगरों में बाद में
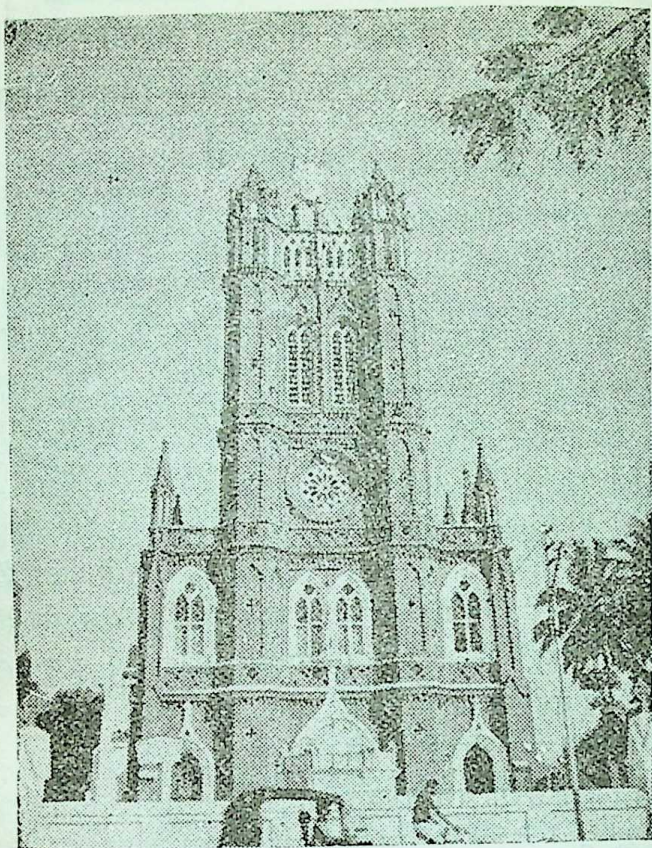
कैथलिक गिरजाघर, तिरुवनन्तपुरम

स्विमिंग पूल तथा नलकूप खोदना कैसी विडंबना है !

जब मैं बाईं तरफ़ देखता हूँ तब सफेद रंग के और कुछ भव्य गिरजे भी दीखते हैं। हिन्दु धर्म में तो गणेश, शिव, देवी आदि भिन्न भिन्न देवताओं के मंदिरों की संकल्पना है। ईसाई धर्म में प्रायः ईसा मसीह और कन्या मरियम की मूर्ति होती है। कुछ ईसाई संतों की मूर्तियाँ भी रखते

किंतु मुख्य अंतर तो ईसाई संप्रदा का होता है—कैथलिक, जेकब मारथोमा, चर्च आफ़ इंगलैंड आदि गिरजों की शिल्पविधि और व्यावहारिक धार्मिक बातों में ही अंतर प्रकट होता है। मगर संस के किसी किसी देश में ईसाई धर्म इसलाम धर्म के विभिन्न संप्रदायों
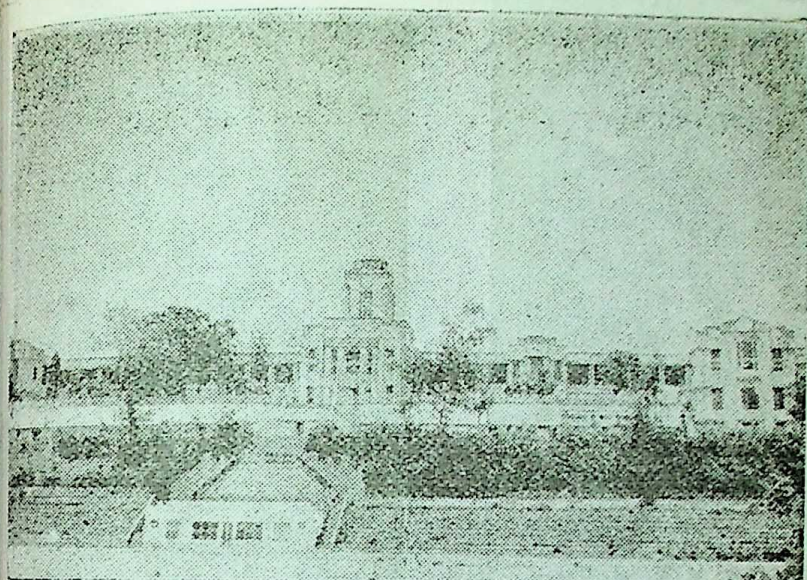
महात्मा गांधी कॉलेज, तिरुवनन्तपुरम

ोग उस सांप्रदायिक अंतर के नाम
र वर्षों से एक दूसरे को नष्ट करने
र तुले हैं—इरान व इराक के
ग्राम के पीछे यही बात है— इंगलैंड
एक खंड में भी यह संघर्ष चल
रहा है। ईसा मसीह और हजरत
मुहम्मद ने संपूर्ण मानवराशि को
अपना भाई मानने का महान संदेश
दिया था। उसी के लिए उन्होंने
अपना जीवन कुर्बान किया। मगर
उन्हीं के शिष्यों का यह परस्पर
द्वेष !

मेरी आँखों को दूर से ही मोहित
करनेवाले और एक विशालकाय श्वेत
भवन दीख रहा है। लोग मुझे
बतलाते हैं कि यही तिरुवनन्तपुरम
का विख्यात महात्मा गांधी कॉलेज
है। मैं ने पहले नज़दीक से वह कॉलेज
देखा है और वहां गया भी हूँ। किंतु
दूर से इतनी भव्य छवि का अनुभव
पहली बार कर रहा हूँ। इसके
निर्माण की साहसिक कहानी इस
भवन की गरिमा बढाती है।
एन. एस. एस. (नायर सर्वीस सोसाइटी)
के संस्थापक नेता स्व० मन्नत्तु
पद्मनाभ पिल्लाई की सूझ से इसका
निर्माण संभव हुआ था। हर नायर
गृहस्थ के यहाँ प्रति नारियल के पेड
से एक नारियल के हिसाब से नारियल
इकट्ठा करना—उन्हें बेचकर पैसे
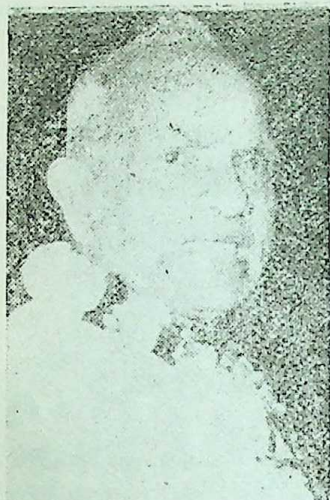
मन्नत्तु पद्मनाभ पिल्लाई

पं० मदनमोहन मालवीय

जमा करना और उसी पैसे से कॉलेज का भवन बनाना—इसी सिद्धांत के बल पर उस महान नेता ने यह आलीशान भवन बनवाया। यही नहीं, केरल के अन्य नगरों में भी एन. एस. एस. कॉलेज बनवाये। वे महामना मदन मोहन मालवीयजी का स्मरण दिलाते हैं।

केरल के राजनीतिक इतिहास में दीवानी शासनकाल में एक अंतराल युग ऐसा रहा जब कि निजी क्षेत्र में उच्च शिक्षा का एकाधिकार ईसाई समाज के हाथ में था। दीवान साहब ने इसे तोडने तैयार हिन्दु संगठनों को परोक्ष रूप से काफ़ी प्रोत्साहन दिया। इसी के फलस्वरूप मन्नम के नेतृत्व में एन. एस. एस. कॉलेजों की स्थापना और आर. शंकर के नेतृत्व में श्रीनारायण कॉलेजों की स्थापना हुई। केरलीय ग्रामों के भी निवासी इस नये आंदोलन से उच्च शिक्षा में आगे बढ सके। खेद के साथ जोड़ना पडता है कि सांप्रदायिकता की दूषित प्रवृत्ति के बढने में भी यह विकास परोक्ष व प्रत्यक्ष रूप से सहायक निकला है।
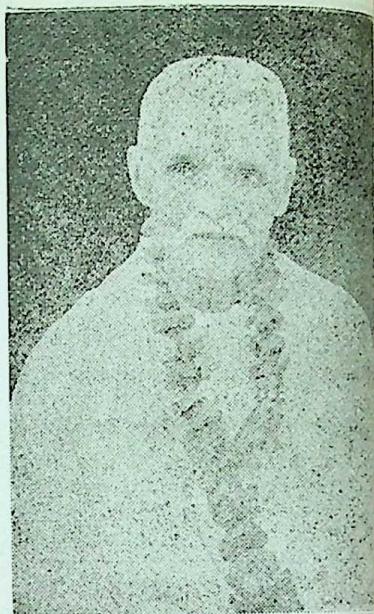
बाईं ओर बढती मेरी आँखों को और भी कई भवन व गिरजे नज़र आ रहे हैं। फिर भी महात्मा गांधी कॉलेज से होड लगाता दूसरा
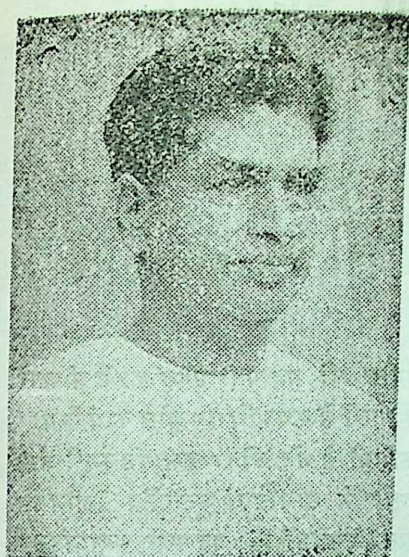
आर. शंकर

विशालकाय महाविद्यालय इठात आकृष्ट कर रहा है। यह नगर के शिक्षाक्रम में अपना कीर्तिस्तंभ बना चुका है। मार इवानियोस कॉलेज आजकल पढाई, खेल-कूद,

केरलीय ग्रामों के भी निवासी इस नये आंदोलन से उच्च शिक्षा में आगे बढ सके।

अनुशासन हर क्षेत्र में आगे बढा हुआ है जिसे स्वतंत्रताप्रेमी छात्र दासता की शिक्षा तक मान सकते हैं। इस कॉलेज की कल्पना एवं निर्माण मार इवानियोस नामक एक सामान्य स्तर के ईसाई वैदिक की प्रतिभा से हुआ था। इनमें असुलभ प्रतिभा और संगठन-क्षमता थी। उन्होंने अपने व्यक्तिगत प्रभाव से अपना एक छोटा उपसंप्रदाय तक चलाया। देश विदेश से धन इकट्ठा करके बहुत बडा महाविद्यालय स्थापित किया। ऊँचे टीले पर बना यह विशालकाय विद्यालय अपनी गरिमा पर गर्व करता है। जब और बाईं ओर आँखें ले चलता हूँ तब दूर दूर पहाडी टीले और हरियाली नज़र आती है। प्रकृतिमाता अब भी शीतल छाया देने लालायित है।

[क्रमशः]

कथकलि के आचार्य पद्मश्री कलामण्डलम कृष्णन नायर से वार्तालाप

प्रो० एम. के. सुकुमारन नायर

[विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की सहायता प्राप्त करके प्रोफसर एम. के. सुकुमारन नायर ने गत तीन सालों से कथकलि पर शोध कार्य किया। इसके सिलसिले में लेखक ने कई रंगकर्मियों से भेंट की। "कलामंडलम" जैसी संस्थाओं का सन्दर्शन करके ग्रन्थ निर्माण में सामग्रियाँ जुटायीं। आजकल कथकलि के प्रभविष्णुओं के अवतंसित रंगकर्मी हैं, पद्मश्री कलामंडलम कृष्णन नायर। उनसे लेखक ने कथकलि पर एकाध बार उपयोगी चर्चायें कीं। पद्मश्री कलामंडलम कृष्णन नायर जी के साथ कथकलि पर जो वार्तालाप हुए उनका प्रयोज्य अंश यहाँ दिया जाता है।]

कथकलि के आचार्य श्री० कलामण्डलम कृष्णन नायर से वार्तालाप कर रहे हैं प्रो० एम. के. सुकुमारन नायर।

प्रश्न :—आपके अभिमत में कथकलि में, खासकर इस नृत्य कला के आहार्याभिनय में, क्या सुधार कार्य संभव है ?

उत्तर :— मेरे अभिमत में कथकलि नृत्यकला को ज्यों का त्यों बनाये रखना है। चाहे आहार्याभिनय में हो, या पदार्थाभिनय अथवा आंगिकाभिनय में हो इनमें किसी में भी जरा सा परिवर्तन कथकलि के अस्तित्व व व्यक्तित्व में बडा हानिकारक सिद्ध होगा। कथकलि का शास्त्रीय नृत्य पौराणिक कथावलंबी है, अधिकांश पौराणिक पात्र देव, असुर, राक्षस, महर्षि, किरात और नल तथा पाँडव, जैसे अतिमानव भी हैं। अतः इन पात्रों के नृत्याविष्करण में मानवीय रूप के बजाय आज कथकलि में प्रदर्शित अमानवीय आहार्याभिनय ही अत्यधिक समीचीन है। अस्सी साल का रंगकर्मी भी कथकलि की वेष-भूषा में संदर्भानुसार सोलह साल का या पच्चीस या पचास साल का बिलकुल अनुयोज्य-सा

कथकलि का एक दृश्य

अस्सी साल का रंगकर्मी भी कथकलि की वेष-भूषा में संदर्भानुसार सोलह साल का या पच्चीस या पचास साल का बिलकुल अनुयोज्य-सा प्रतीत होगा जो वस्ततु: लाजवाब ही है ।

प्रतोत होगा जो वस्तुत: लाजवाब ही है। इस आश्चर्यभूत स्थिति का पूरा श्रेय आहार्याभिनय को है। मैं क्या, सब के सब कला मर्मज्ञ इस बात पर सहमत होंगे कि रसाभिनय या रसाविष्करण में कथकलि का यह पुश्तैनी वेष ही अधिकाधिक प्रयोजनवान है। साधारण वेष-भूषा में कथकलि की मौलिकता जाती रहेगी और कथकलि का ऐसा नाट्य प्रदर्शन पौराणिक संस्कृत नाटक का विकृत रूप ही होगा।

प्रश्न:—कथकलि की हस्तमुद्राएँ "हस्तलक्षण दीपिका" के अनुमार प्रमाणित हैं जो केवल चौबीस हैं। क्या इतनी कम मुद्राओं के बल पर कथकलि नृत्य की बृहत या महत्व-पूर्ण भावाभिव्यक्ति संभव है ?

उत्तर:—आप अंग्रेज़ी के अच्छे ज्ञाता है, अत: ज्ञापनीय कार्य यह है कि अंग्रेज़ी भाषा के छब्बीस अक्षरों ने विश्व साहित्य भंडार रच डाला है। वस्तुत: अक्षरों के छोटे कलेवर पर बृहत साहित्य का निर्माण किया जा चुका है, ज़रूर यह प्रक्रिया युग युगान्तर तक बढती रहेगी। अत: चतुर्विंशति मुद्राओं की तुलना अंग्रेज़ी की अक्षर-माला से की जा सकती है। इन चतुर्विंशति मुद्राओं ने अभिनय कला को क्या से क्या बनाया है! अंक की दाहिनी और शून्य देकर उसे दस गुना बढाया जा सकता है, ठीक ऐसी स्थिति कथकलि हस्त-मुद्राओं के लिए भी लागू है। वस्तुत: चतुर्विंशति मुद्राएँ कथकलि नृत्याभिनय की नींव मात्र है। इनके अंगोपांगों से नृत्याभिनय का भव्य भवन गठित है, जो मुद्राभिनय की दृष्टि से अभीप्सित भी है। और भी एक बात बताऊँगा। यह सर्व विदित बात है कि सगीत सप्त स्वर लिये हुए है। इनके परस्पर मेल जोल में कितने कितने राग और कितने कितने "मेल कर्त्ता" होते हैं। जैसे संगीत के क्षेत्र में सप्त स्वरों ने जादुई प्रभाव डाला है वैसे ही कथकलि के नाट्य-नृत्याभिनय के कार्य में हस्त मुद्राओं ने किया है।

प्रश्न :— हस्त मुद्राओं की विशिष्ट सेवाओं के प्रति आपने खूब कहा, इस परिप्रेक्ष्य में एक प्रश्न करूँ ? आपने कथकलि नृत्याविष्करण के संदर्भ में अनेक बार विदेशों में पर्यटन किया है। कहते हैं, विदेशी खासकर, पश्चिमी देशवाले भारतीय शास्त्रीय नृत्यों में कथकलि को ज्यादा पसन्द करते हैं। विदेशियों के लिए बिलकुल अपरिचित भाषा में (मलयालम में) ग्रथित कथकलि नृत्याभिनय में वाचिकाभिनय की भूमिका गवैये निभाते हैं, ऐसी दशा में वे (विदेशी) कथकलि का पूर्णतः आस्वादन करते हैं? या इस विशिष्ट कला के आहार्याभिनय आदि कार्यों पर ही आसक्त होते हैं ?

जैसे संगीत के क्षेत्र में सप्त स्वरों ने जादुई प्रभाव डाला है वैसे ही कथकलि के नाट्य-नृत्याभिनय के कार्य में हस्त मुद्राओं ने किया है।

उत्तर :— यह सही है कि कथकलि का वाचिकाभिनय विदेशी समझ न पाते, पर आंगिक व सात्विकाभिनय की तुलना में कथकलि का वाचिकाभिनय प्रधान भूमिका नहीं निभाता, जब इसके नृत्याविष्करण एवं रसाविष्करण में आंगिक व सात्विकाभिनय ही मुख्य भूमिका निभाते हैं। वस्तुतः आंगिक व सात्विकाभिनय सर्वांग सुन्दर है जो विश्व भर के कला-मर्मज्ञों की समझ में आते हैं। विदेशी लोग कथकलि के आहार्याभिनय पर ही मुग्ध होते हैं, यह सरासर भ्रांत धारणा है। आंगिक व सात्विकाभिनय में विश्व की भाषा का पुट मिलता है। विश्व भर सैकडों क्या हज़ारों भाषाएँ हैं, किंतु सब की तह में या कहिए सबके स्रोत में यह आंगिक भाषा है। ऐसी भाषा या ऐसा भाव, सौन्दर्योपासक या कलोपासक क्यों नहीं समझ सकते ? यह लिपिहीन भाषा कोई सीमा नहीं जानता। कथकलि का नृत्याविष्करण किसी न किसी ठोस कथा पर आधारित है। जब विदेशी कथा से अवगत होते हैं तब उनकी आस्वादन क्षमता सौगुनी बढ़ जाती है, कदाचित इसके कारण उन्हें सोने में सुगन्ध का अनुभव होता है। हाँ, इस बात का इनकार भी किया नहीं जा सकता कि विदेशी लोग कथकलि के अति मानवीय आहार्या-

यह लिपिहीन भाषा कोई सीमा नहीं जानती।

भिनय के बड प्रशंसक है। चाहे जो हो, विदेशों में, खासकर पश्चिमी देशों में कथकलि की ओर अभिरुचि उत्तरोत्तर बढ़ रही है, फलस्वरूप हर साल कितने ही कलान्वेषी शिक्षार्थी कथकलि सीखने आया करते हैं।

प्रश्न :- खैर, आपके शिक्षणकाल में जिन गुरुओं ने आप पर बडा प्रभाव डाला, उस पर एक प्रश्न करना चाहता हूँ। आपके शिक्षक रहे गुरु चंतु पणिक्कर, गुरु कुंजुकुरुप, पट्टिकांतोडि रामुन्नी मेनन और कवलप्पारा नारायणन नायर। इनमें गुरु कुंजुकुरुप और पट्टिकांतोडि रामुन्नी मेनन क्रमशः दक्षिणी व उत्तरी शैली के अद्वितीय रंगकर्मी थे, प्रश्न यह है कि इन दोनों में आप किससे बहुत प्रभावित हुए ?

उत्तर— कथकलि नृत्यकला के अधिकांश समीक्षक वस्तुतः अनभिज्ञ हैं। बहुधा इन तथाकथित समीक्षकों का अभिमत भ्रामक एवं पक्षपातपूर्ण है। ये समीक्षक संतुलित मत क्या

वस्तुतः कथकलि में नाटच, नृत्त व नृत्य का संगम मिलता है। सुविधा के लिए आप इसे त्रिवेणी संगम कह सकते हैं।

चीज है, बिलकुल नहीं जानते। समीक्षकों की निजी अभिव्यक्ति के अनुसार मैं ने मुखाभिनय गुरु कुंजुकुरुप से ग्रहण किया और कथकलि का नृत्तांश रामुन्नी मेनन से सीख लिया। वस्तुतः कथकलि में नाटच-नृत्त व नृत्य का संगम मिलता है। सुविधा के लिए आप इसे त्रिवेणी संगम कह सकते हैं। मेरा अभिप्राय यह है, मैंने सभी गुरुओं से कथकलि के नृत्य, नृत्त व नाटच सीख लिये, कदाचित इस प्रपंच से बहुत कुछ प्राप्त किये। प्रपंच या प्रकृति से बहुत कुछ सीख लिये इसका अभिप्राय यह है कि कथकलि के रंगकर्मी को रंगवेदी में खडे हुए नृत्याविष्करण करते समय एक प्रकार का वेष संक्रमण करना पडता है। वेष संक्रमण का मतलब वेष परिवर्तन से नहीं, बल्कि संदर्भानुसार विभिन्न जन्तुओं के स्वभावाविष्करण से है, यथा कल्याण सौगंधिक कथा के भीमसेन को पर्वत, वन, हाथी, सिंह, अजगर आदि का स्वांग भरना पडता है। पदार्थाभिनय के विदग्ध रंगकर्मी को प्रेक्षकों के मनोरंजनार्थ और कथापात्र के चरित्र विकासार्थ पौराणिक कथा प्रसंग का विस्तार-पूर्वक नृत्त-नृत्याविष्करण करना है। अतः मैं ने संभवतः अनेक जीव

अत: मैं ने संभवत: अनेक जीव जन्तुओं का सूक्ष्म निरीक्षण किया है, वनस्पतियों के भी स्थायी भाव हैं, उसे भी ग्रहण करने की मैं ने भरसक कोशिश की है।

जन्तुओं का सूक्ष्म निरीक्षण किया है, वनस्पतियों के भी स्थायी भाव हैं, उसे भी ग्रहण करने की मैंने भरसक कोशिश की है। मेरा विनम्र विचार यह है कि गुरुमुख से शिक्षा ग्रहण करने मात्र से कोई पूर्णत: रंगकर्मी या कलाकार न बन सकेगा। इस संदर्भ में संस्कृत का यह श्लोक श्रद्धेय है, यथा :

"आचार्यात् पादमादत्ते
पादं सद्ब्रह्मचारिभ्य:
पादं शिष्य स्वमेधया
पादं कालक्रमेण च

प्रश्न :— आपको रंगकर्मी की भूमिका निभाये लगभग पचास साल बीत चुके। इस लंबी अवधि में भारत के साथ केरल में कितने कितने सामाजिक व राजनैतिक परिवर्तन हुए। इन परिवर्तनों की नींव जनतंत्रवाद है और सभी क्षेत्रों में जनतंत्रीकरण हो रहा है, ऐसी दशा में कथकलि के क्षेत्र में यह जनतंत्रीकरण हो सकता है?

उत्तर—जनतंत्रीकरण का मतलब सुधार कार्य से है? है न? पहले ही इस ओर मैं ने संकेत किया है कि कथकलि के किसी भी मौलिक रूप या पहलू पर सुधार कार्य असंभव है। किंतु जनतंत्र का विशाल अर्थ जो है इससे मैं सहमत होता हूँ। कथकलि के जनतंत्रीकरण से मेरा अभिप्राय इस नृत्य कला का कम से कम केरल की पाठशालाओं में उचित स्थान

आज पाठशालाओं में सुन्दर कला या सुकुमार कला भी सिखायी जा रही है, इसके पाठ्यक्रम में कथकलि को भी शामिल करना चाहिए।

देना है। आज पाठशालाओं में सुन्दर कला या सुकुमार कला भी सिखायी जा रही है, इसके पाठ्यक्रम में कथकलि को भी शामिल करना चाहिए। मैं ज़ोर देकर कहता हूँ, अनिवार्य रूप से शामिल करना चाहिए। केरल में एक या दो पाठशाला में कथकलि का शिक्षण दिलाया जा रहा है। यह शिक्षण अधिक से अधिक पाठशालाओं में दिया जाना चाहिए। इस परिप्रेक्ष्य में कथकलि का जनतंत्रीकरण हो सकता है। इसे छोड अन्य प्रकार का कथकलि के क्षेत्र में जनतंत्रीकरण बिलकुल असंभव है। ★

हमदर्दी

श्रीमती जे. सुगन्ध वल्ली

मुझे दोपहर की विश्राम वेला में 'कानवन्ट' तक जाना पडा। इसलिए कि मेरे बच्चे को उस बारी की दवा देनी थी। हाँ, वह बीमार था। खाँसी व सर्दी से पीडित था। मैंने उसे शिशु-विशेषज्ञ को दिखाया था। उनसे मिलते वक्त मैंने विशेष रूप से यह भी पूछा था—"डाक्टर! बच्चे को इस वक्त स्कूल भेज सकती हूँ क्या?" एक दिन की अनुपस्थिति भी उसे पाठ्य-क्रम के साथ-साथ चलने के लिए कठिनाई पहुँचायेगी। यह तो मैं भली-भाँति जानती थी। डाक्टर भी भाग्यवश केरलीय थे। यहाँ की शिक्षा-पद्धति से वे अवश्य परिचित थे। इसलिए मेरे प्रश्न के अनुकूल उत्तर देने में वे न हिचकते थे। उन्होंने कहा—"हाँ, बच्चे को बेशक स्कूल भेज सकती हो; पर दवा जो दी है सो सही समय पर देना अनिवार्य है। यों मैं दवा देने केलिए ही 'काँनवन्ट' गयी थी।

'कानवन्ट' में इस वक्त बच्चे विश्राम समय का फायदा उठा रहे थे। चारों ओर होहल्ला ही होहल्ला मच रहा था। क्लास में अध्यापिका भी नहीं थी। मैं तो अपने मुन्ने को ढूँढ रही थी कि इस बीच कोई अन्य छोकरा वहीं खडा रो रहा था। रोते बालक को योंही छोडकर जाने की क्षमता मुझमें नहीं थी। अत: मुझ में जो मानवोचित हमदर्दी सोयी पडी थी सो जाग पडी। इसलिए उसे अनदेखा या अनसुना करके जाने के बगैर मैंने सीधे जाकर उससे पूछा - "अरे मुन्ने! तू क्यों रोता है? तुम्हारा नाम क्या है?" बच्चे ने बिलख बिलखकर बताया—"मेरे चप्पल खो गये। मम्मी मुझे पीटेंगी। मैं 'मॉरल' क्लास में गया था। वहीं खो गया सा लगता है।" मैंने उसके सिर पर हाथ फेरते हुए, उसके

एक दिन की अनुपस्थिति भी उसे पाठ्य-क्रम के साथ-साथ चलने के लिए कठिनाई पहुँचायेगी।

आँसू पोंछते हुए कहा—"बेटा ! मत रोओ। अभी मैं तुम्हारे चप्पल ढूँढ लाऊँगी।" उसे भी साथ लेकर 'मारल' क्लास तक पहुँची। भाग्यवश वहाँ उस वक्त अध्यापिकाजी भी उपस्थित थीं। मैं ने सीधे उनसे मिलकर बच्चे की रामकहानी सुनायी। अध्यापिकाजी भी ममतामयी औरत अवश्य थी। उन्होंने यही ढाढस दिलाया—"नेलसन ! रोना मत। मैं भी ढूँढूँ। तुम्हारा चप्पल।" उन्होंने क्लास भर छानबीन करके देखा तो तुरन्त ही चप्पल हाथ आये। उसे देखते ही लडके ने रोना बन्द कर दिया। अपनी विशाल एवं निष्कलंक आँखें फैलाकर ओठों में मुस्कान भर दी। थोडी देर की खोज, चप्पल की खोज, उस बच्चे के ढाढस केलिए जो खोज हम ने की सो तो सफल ही निकली।

हाँ, इस बीच मैं तो अपने मुन्ने की बात भूल गयी थी। फौरन उसकी याद मुझे सताने लगी। शीघ्र ही मैं उसे ढूँढ लेने में तल्लीन हुई। ईश्वर की कृपा से वह भी तुरन्त नज़र आया। दवा निर्दिष्ट समय पर अवश्य दे सकी। उसके गेहुए रंग के गालों पर नरम चुंबन देकर मैंने 'टाटा' कर दिया तो वह अनमना ही मुस्कुराया था। मेरा मन भी जाने-अनजाने कराहने लगा। फिर भी अपने मन को काबू में रखकर मैंने सही समय पर 'आफीस' केलिए दौड लगायी। हाँ, अफीस में 'मूवमेन्ट रजिस्टर' रखा गया है तो समय की पाबंदी बिलकुल अनिवार्य है। मैं जानती थी वहाँ हमदर्दी से काम न चलेगा।

दौडते वक्त मुझे उस घटना की भी याद आयी जबकि मैं एक बार 'वेनाड' में तिरुवनन्तपुरम जा रही थी। हाँ. मेरे मुन्ने व सहेलियों के साथ मैं रेलगाडी में घुमने ही वाली थी कि मेरे चप्पलों में से एक तो पैर से फिसलकर रेल पर गिर पडा। अनजाने ही मेरे मुँह से निकल पडा—'मेरा चप्पल! मेरा चप्पल!!" सहेलियों ने परिस्थिति को भलीभाँति समझकर यही उत्तर दिया—अरे! अभी अभी गाडी निकलेगी, जो खोया सो खोया; एक चप्पल के पीछे समय खोने और अपने प्राण को हथेली पर रखने केलिए कौन तैयार होगा? तिरुवनन्तपुरम उतरते ही वहाँ की दूकान से नये चप्पल खरीद सकती हो।" मैंने भी उनका कथन ठीक ही माना, फिर भी मन-ही-मन दुःख महसूस

जोडीविहीन वस्तुओं की दयनीयता के बारे में मैं मन-ही-मन सोचती रही।

होने लगा कि मैं बिना चप्पल के रेल के पोशाबरवाने कैसे जाऊँ? और तो और, जो एक चप्पल अब है सो तो कैसे अपने पास रखूं? जानबूझकर उसे आखिर कैसे दूर फेंक सकूं? जोडीविहीन वस्तुओं की दयनीयता के बारे में मैं मन-ही-मन सोचती रही। सच कहें तो मेरे पास बैठे एक सज्जन ने मेरी ऐसी व्यथा से परिचित होकर यही उपदेश दिया—"बहिन! चाहिए तो तुम्हारे चप्पल शायद अभी मिलेंगे। ज़रा उस पोर्टर को बुलाकर उसे ढूँढने को कहिए। पाँच रुपये भी उसे दीजिए।" मुझे भी वह आशय अच्छा लगा। मैंने खिडकी से झांककर पोर्टर' को ढूँढा। अगले ही क्षण वह नज़र आया। तुरन्त ही मैंने उसे ताली दे कर बुलाया। मेरे निकट वह दौडा आया। इतने में मैंने उसे अपनी रामकहानी सुनायी। एक हलकी सी हँसी के साथ उसने कहा—"बहिन! कोशिश तो करूँ। गाडी निकलने केलिए पाँच मिनिट और भी है।" यों कहते हुए उसने निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचकर लकडी के सहारे उस चप्पल को उठाया। फौरन दौडते हुए हलकी सी हँसी के साथ मेरे पास आकर उसने वह चप्पल मुझे दिया। सचमुच मैं फूली न सम और सधन्यवाद मैंने उसे पाँच देनेका प्रयास किया। पर कहा—"नहीं! नहीं! बहिनजी मुझे कुछ भी नहीं चाहिए!" यों हुए आगे बढा। इसी बीच गाडी हिलने लगी। मैंने भी तरह-तर विचारों से उसका अनुसरण कि पास बैठे महाशय ने मुझे पुनः याद दिलायी—"जिन खोजा, पाया, गहरे पानी पैठ" वाला असल में नित्य जीवन में इसी प्र हिल मिल गया है कि हमें किसी वस्तु की अवहेलना नहीं क चाहिए। पर चाहिए हम स हमदर्दी।

हमें किसी भी वस्तु की अवहेल नहीं करनी चाहिए। चाहिए हम सब में हमदर्दी।

हिन्दी: स्थिति समीक्षा और चुनौतियाँ—लोकार्पण एवं चर्चा प्रसंग

प्रस्तुति— अमित कानूनगो

पिछले दिनों 'कथा-मंच' इन्दौर की पहली पुस्तकाकार प्रस्तुति 'हिन्दी: स्थिति-समीक्षा और चुनौतियाँ' (संपादक — चरणसिंह अमी) का लोकार्पण एवं चर्चा—प्रसंग स्थानीय जाल संगोष्ठी कक्ष में हुआ। मुख्य अतिथि पत्रकार श्री. राहुल बारपुते (संपादक नई दुनिया, इन्दौर) ने पुस्तक का लोकार्पण किया। आरंभ में सर्वश्री सूर्यकांत नागर, विलास गुप्ते व अमित कानूनगो ने अतिथियों का स्वागत किया। संपादक चरणसिंह अमी ने अपने वक्तव्य में पुस्तक प्रकाशन के सन्दर्भों व कठिनाइयों के साथ उद्देश्य को रेखांकित किया।

चर्चा-प्रसंग का आरंभ कवि श्री. रामविलास पूर्णा ने अपने समीक्षा पर्चे से किया। उन्होंने अपने परचे में 'कथा-मंच' व संपादक की लीक से हटकर किये कार्य के लिए सराहना की। अपने पर्चे में श्री. शर्मा ने पुस्तक में संकलित प्राय:प्रत्येक लेख से चुनिंदा अंशों को प्रस्तुत कर हिन्दी की समस्याओं को सामने रखकर अपने विचार प्रकट किये।

डॉ० श्यामसुन्दर व्यास ने चर्चा को आगे बढाते हुए कहा—'हिन्दी के लिए वह सौभाग्य या दुर्भाग्य का दिन था जिस दिन उसे संविधान द्वारा राष्ट्र-भाषा की मान्यता दी गयी। सौभाग्य का दिन इसलिए कि कम से कम हमारे जो चिंतक थे, नेता थे, उन्होंने उसका दाय उसे प्रदान किया। दुर्भाग्य इसलिए कि यह जो कुछ भी प्राप्त हुआ उसके प्रति एक षड्यंत्र की भूमिका भी तभी बनी। आप ने इसी बिन्दु को आधार बनाते हुए हिन्दी की विभिन्न समस्याओं को राष्ट्रीय धारा व जनमानस के परिप्रेक्ष्य में विवेचित किया। आपने संकलन के महत्व को प्रतिपादित करते हुए

आदमी भाषा नहीं बनाता, वरन् भाषा आदमी बनाती है।

कहा—'इस पुस्तक में विभिन्न लेखकों ने जिन बातों को प्रतिष्ठापित करने का प्रयास किया है, वे आप के और हमारे मन में कहीं न कहीं घूमा करते हैं। वस्तुत: हमारी इन भावनाओं को, आशंकाओं को हमारी इन स्थितियों को, चुनौतियों को इसमें एकत्रित किया गया है तो हम जो अपने आपको हिन्दी के समर्थक कहते हैं—हमको इन चुनौतियों—स्थितियों पर विचार करना है।

मुख्य अतिथि पत्रकार श्री. राहुल बारपुते ने अपने वक्तव्य में भाषा और मानव के रिश्ते के अंतसंबंध को रेखांकित करते हुए कहा कि आदमी भाषा नहीं बनाता वरन् भाषा आदमी बनाती है। आपने दूरदराज के आदिवासी व ग्रामीण अंचलों की भाषा की अपनी महत्ता को स्वीकार किया। उन्होंने ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न माध्यमों, कानून, विज्ञान, वाणिज्य आदि की पृथक्-पृथक् भाषा रखे जाने का प्रस्ताव भी

विज्ञान की भाषा से कानून नहीं चलाया जा सकता या कानून की भाषा से व्यापार नहीं किया जा सकता

रखा—उनके मतानुसार—'विज्ञान की भाषा से कानून नहीं चलाया जा सकता या कानून की भाषा से व्यापार नहीं किया जा सकता। इनकी भाषाएँ पृथक्-पृथक् रखनी ही होगी।' आपने भाषा के क्षेत्र में सबसे पहले दक्षिण भारतीयों की भाषागत कठिनाई समझने की आवश्यकता पर जोर दिया।

अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में प्रो० गणेशदत्त त्रिपाठी ने बात को और आगे बढाते हुए इस बात पर जोर दिया कि—'साहित्य, कला, विज्ञान, कानून, वाणिज्य आदि की एक ही भाषा हो सकती है, किन्तु हिन्दी को पहले आप प्रयोग में तो लाइये।' आपने भाषा की प्रकृति को स्पष्ट करते हुए कहा—'जब तक हम हिन्दी को प्रयोग में लाने की पहल नहीं करेंगे, तब तक व्यवहारकुशल नहीं होंगे और तकनोकी आदि विषयों के लिए हमें कठिनता महसूस होती रहेगी।' प्रो० त्रिपाठी ने अपने लम्बे उद्‌बोधन में प्राचीनकाल से राष्ट्रीयता के क्षेत्र में हिन्दी की महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित किया।

कार्यक्रम का संचालन कथाकार श्री. सूर्यकांत नागर ने किया। अंत में आभार माना डॉ० विलास गुप्त ने।★

ए–31, एच. आय. जी. कॉलोनी
इन्दौर-452004 (म. प्र.)

दो कवितायें

मूल : श्री. तिरुमला चन्द्रन

अनु : श्री. के. जी. बालकृष्ण पिल्लै

1. युद्ध

युद्ध !
भीकर, नग्न संहार तांडव !
जीवराशि का प्रचण्ड खाण्डव !
युद्ध !
बुद्धि विभ्रम का दुष्परिणाम !
रक्तदाहियों का निष्ठुर शक्ति प्रदर्शन !
गतकाल के इतिहास के पृष्ठों पर
कितने कितने युद्ध !
अगर एक और युद्ध हो जाये
तो
इतिहास ही नहीं रहेगा।
इसलिए
हम
आज विश्वशान्ति के श्वेत कबूतर बन कर
अंतरिक्ष में उडते जायें
अंधकार को
पंख फट फटा कर
दूर करें।

2. गोर्की-प्रेमचन्द

अक्षरों में
आप ने
नक्षत्र वीर्य भर दिया ।
अक्षरों में
आप ने
अर्थ-चारुता भर दी ।
अक्षरों में
आप ने
श्रम के महत्व का
मुग्ध सौन्दर्य-दीप जलाया ।
अक्षरों में
आप ने
युद्ध स्वतंत्रता के रक्त पुष्प विकसित किये ।
अक्षरों में
आप ने
शिल्प लावण्य की स्वर्ग मोनारों का निर्माण किया ।
अक्षरों में
आप ने
मर्त्य जीवन की सुन्दर मूर्तियों का निर्माण किया ।
आप क्रान्त दर्शियों ने
अक्षरों के हथौडों से
दुष्ट शक्तियों के मस्तकों पर
ज़ोर से पीटा ।

❀

तेरहवाँ अध्याय

महाराजा रामवर्मा का अस्वास्थ्य इस स्थिति पर पहुँच गया है कि वैदों की कुशलता के बावजूद दिन प्रतिदिन बढते बढते किसी भी दिन इहलोक वास की समाप्ति हो सकती थी। युवराजा अपने मातुल की रोग शान्ति केलिए देवालयों में भोग चढाते और दान होम आदि करते रहे। इस प्रकार को क्रियाओं और स्वास्थ्य के बीच कार्यकारण संवन्ध जोडने में क्रियाकर्ता अशक्य हो जाने से या आयु एवं आरोग्य की नियामक शक्ति को इस प्रकार के कर्मों से काबू में लाना असाध्य हो जाने से तांत्रिक, मांत्रिक एवं वैदिकों द्वारा महाराजा की आयु वृद्धि के लिए किये जाने-वाले साहस कार्य केवल राजभण्डार की धनराशि में कमी उत्पन्न करने के अतिरिक्त और किसी कार्य के लिए उपयोगी न होते थे। महाराजा के शासन काल में किये गये कार्यों का गुणदोष निरूपण खुले आम करने का साहस प्रजा को प्राप्त हो चुका था। महाराजा के निजी सेवक भी इस कार्य में सत्यवादी बन चुके थे। यह सोचकर कि युवराजा का शासन काल शीघ्र शुरू होने वाला है, महल के सर्वाधिकार्यकर्ता आदि शासनाधिकारी अपने अपने विभाग संवन्धी रेखाएँ ठीक करने में व्यस्त हैं। महाराजा के निजी सेवकों के मुख फीके पडने लगे और युवराजा के शिष्यगण मन ही मन सन्तुष्ट होने लगे।

श्री पद्मनाभन तंपी राजस प्रौढि के साथ राजधानी में बसने लग गये थे। अष्ट गृहाधीश राजधानी में सपरिवार पहुँच गये और राज-कुटुम्ब को नष्ट करने के उद्देश्य से आवश्यक कार्य करने लगे। कठिन कलहों के होने की शंका से पुरवासी अपनी संपदा की सुरक्षा सोचकर उन्हें निगूढ स्थानों में छिपा रहे हैं। सबको यह विश्वास था कि राज्या-वकाश क्रम में कुछ परिवर्तन होने वाला है। इस कारण से शासक को माननेवाले जन में अनेक राजभोग देने से इनकार कर विरोध भाव से विद्रोह केलिए उद्यत हो गये हैं। राज भंडार में धन की कमी पडने से होनेवाली कठिनाइयों के निवारण केलिए प्रजा के बीच के धनी लोगों से मंत्रिगण आर्थिक सहायता की मांग करने लगे। विरोधी पक्ष से डरकर कोई भी सहायता देने के लिए तैयार नहीं होते हैं। दक्षिण के नांचिनाट में रहनेवाले, स्थानीय चेर कोनार, मैलावणर, वणिक रामन आदि उपाधिधारी प्रमुखों की प्रेरणा से तंपियों के अधीन बन गये हैं। चिरयिनकीष, तिरुवनन्तपुरम, नेय्याट्टिनकरा आदि प्रदेशों के लोग अष्टगृहाधीशों की अधिकार सीमा के अन्तर्गत होने से उन्हीं की तर दारी करने लगे हैं। तिरुवितांको पद्मनाभपुरम जैसे पूर्वराजधानी आसपास के कलकुलम, विलवनको जैसे प्रदेशों के लोग राजधानी तिरुवनन्तपुरम में ले जाने की कु लेकर और अष्ट गृहाधीशों से वि मोल लेने से डरकर राजकुटुंब सहायता करना नहीं चाहते युवराजा और मंत्रियों को यह व्य हो गया था कि राजा के पक्षवा की संख्या अपेक्षाकृत कम है इसलिए उन्होंने राजमहल सुरक्षा के प्रबंध किये थे। राजधा के राजभट भी अविश्वसनीय में कभी कभी राजाज्ञाओं उल्लंघन करने लगे हैं। अष्टगृ धीशों के चाकर लोग आयुध धा कर गर्व से राजपथ से चलने हैं और राजमहल के प्रवेशद्वार इकट्ठे होकर होहल्ला मचाने लगे इन परिस्थितियों को देख कर आनेवाली विपदाओं से बचने मार्ग न देखकर युवराजा मंत्रिगण असमंजस में पड गये। महल के अन्दर दो दिन बिताने मानो प्राणों की रक्षा केलि छिपकर रह रहे हैं।

युवराजा को पूरा विश्वास था कि मांकोयिक्कल कुरुप ने जो वचन दिया था उसका अवश्य पालन किया जाएगा। लंबे अर्से तक अपने मातुल की सेवा में रहकर अनेक विपदाओं से अपनी रक्षा करनेवाले तिरुमुखत्तु पिल्लै नामक गृहस्थ से द्रव्य एवं दल-बल की सहायता पहुँचाने की मांग की थी। इसी प्रकार का और एक पत्र किलिमानूर महल को भी भेजा गया था। युवराजा को यही आश्वास था कि इन तीनों केन्द्रों से बिना विलंब आवश्यक सहायता प्राप्त हो जाएगी। मांकोयिक्कल कुरुप के सैनिकों की कुशलता से युवराजा परिचित थे ही और इसलिए वे सोच रहे थे कि उन की सहायता से अष्ट गृहाधीशों के गर्व को दबाया जा सकता है। मधुरा की सेना को भी वश में कर लिया जाए तो शत्रुओं का उन्मूलन निष्प्रयास किया जा सकता है। इसलिए युवराजा मुख्यतया मांकोयिक्कल कुरुप की राह देखते रहते थे।

पूर्व काल में राजकुटुंब की शासन कार्यों में सहायता करते करते धीरे धीरे अष्टगृहाधीश शक्तिशाली बने और राजकुटुंब के वे शत्रु बन गये। मूढ एवं दंभी तंपी तो षड्यंत्र रचा रहे थे। युवराजा को पता लग गया था कि जनता अष्टगृहाधीशों एवं तंपी के प्रति अनुकूल भाव रखती है। उन लोगों को पहले से ही इसकी शंका थी कि महाराजा ने परदेश से सेना बुलायी तो वह जनता की स्वतंत्रता के विरोध में था। युवराजा को ये सारी बातें सही मालूम होने लगीं थीं। प्रजावत्सल युवराजा तो कभी लडाई चाहते न थे। इसलिए अपने अतिकुशल आश्रित रामय्यन नामक ब्राह्मण को तंपी के पास सुलह करने भेजा। चूँकि सुन्दरय्यन नामक राहू से तंपी ग्रस्त होने के कारण रामय्यन के सभी तंत्र-मंत्र फल रहित रह गये। युवराजा ने तंपी को एक बार यह समझाने का यत्न किया था कि अनावश्यक फूट डाले बिना अपने पद केलिए योग्य मान और अधिकार लेकर शान्त रहना अपनेलिए, राज्य के लिए और पिता एवं कुटुम्ब केलिए हितकर रहेगा, अन्यथा लालच में पड आचारों के उल्लंघन की कोशिश की जाए तो अनर्थ होगा ही। एक दिन युवराजा महाराजा के शयनागार की ओर जा रहे थे। सुवण चित्रकारी से अलंकृत एक पालकी के चारों ओर पठान शैली की वेश भूषाओं से सजे सेवक एवं देशी वेश के कर्मचारियों

को महल के द्वार में उन्होंने देखा। यह सोचकर कि ये सब तंपी के सेवक हैं और उद्दिष्ट कार्य सिद्धि का यह अच्छा अवसर है, युवराजा महाराजा के शयनागार में प्रविष्ट होने को उद्यत हुए। युवराजा के आगमन की पूर्व सूचना पाकर सुन्दरय्यन शयनागार से बाहर निकले। युवराजा की वन्दना कर पालकी के निकट चले गये। "तंपी, आपसे कुछ बातें कहना चाहता हूँ।"—युवराजा ने प्रार्थना की। उस प्रार्थना की अनसुनी करते हुए और अपने पिता की वन्दना करना तक भूलकर सुन्दरय्यन के पीछे पीछे मदमत्त महिष के समान तंपी भी चले गये मानो दोनों को किसी अदृश्य डोरी से बाँध दिया हो। मुस्कुराते हुए निकट आनेवाले युवराजा की उपस्थिति तक उनके लिए अज्ञात सा रहा। शान्ति स्थापित करने के लक्ष्य से किये गये प्रयत्न के उत्तर में यों निन्दापूर्ण कार्य किये जाने पर युवराजा को बडा दुख हुआ। दुख तो कायरता के कारण नहीं था। अपने मातुल की दयनीय दशा। उनसे सहवास करने का काल समाप्त होता जा रहा है। इसी दशा में उन्हीं के पुत्र से लडने का मौका भी आ गया है। सभी प्रकार से दबाव पड रहा है। इन कारणों से उस महापुरुष के म[illegible] में बडा दुख भर आया।

युवराजा का निजी सेव[illegible] परमेश्वरन पिल्लै अपने घर वार [illegible] भी भूलकर पागल कुत्ते के सम[illegible] महल में घूमता फिरता रहता था[illegible] उसका यही विश्वास था [illegible] ईश्वर ने ही आकर मांकोयिक्क[illegible] कुरुप के भवन से जान बचायी थी[illegible] अन्तिम अवतार धारण करने के [illegible] पागल चान्नान का रूप धारण कर[illegible] वाले भगवान विष्णु ही थे—य[illegible] परमेश्वरन पिल्लै का मत था। [illegible] बात को समझे बिना पुराणकारों [illegible] अज्ञता बश ही विष्णु के [illegible] अवतारों को विभाजित किया था[illegible] बेचारा राजसेवक मांकोयिक्कल कु[illegible] और सैनिकों की वापसी चाह[illegible] था और उसके लिए सदा प्रार्थ[illegible] करता था। ऊँगलियों द्वारा [illegible] अन्य प्रकार से प्रश्न परीक्षाएँ कर[illegible] था। वह चाहता था कि कम से क[illegible] पागल चान्नान आ जाए और [illegible] आशा की पूर्ति केलिए वह [illegible] जपादि मार्गों को सोचने लगा है।

अष्टगृहाधीशों की मंत्रणा स[illegible] का अगला दिवस परमेश्वरन पिल्[illegible] के लिए मंगलमय रहा। सुबह सुब[illegible] ही में उसके हाथों में ऐसी एक व[illegible]

आ गयी जो उसने कभी न देखी थी। आश्चर्य से उसको उलट पलटकर देख लिया और दोनों उँगलियों से संभालते हुए युवराजा को दिखाने ले गया मानो किसी प्राणि का निर्जीव शरीर हो। अशुद्ध वस्तु की उपस्थिति से महल में शुद्धि करना पडेगा— इस प्रकार सोचकर अपनी इच्छा के अनुसार कुछ प्रतिविधियाँ करने के उपरान्त वह युवराजा के सामने पहुंचा। रामय्यन नामक ब्राह्मण भी युवराजा के पास उपस्थित था। रामय्यन तिरुवितांकूर ही में जन्म लेकर राजवंश की सेवा में लगा हुआ था। महाराजा ने समझ लिया था कि इस ब्राह्मण में कोई असाधारण कुशलता है और इसलिए उन्होंने उसे महल का लिपिक नियुक्त किया था। ब्राह्मण अपना कार्यभार फुर्ती से करता रहा। उसके अतिरिक्त राज्यशासन संबन्धी कार्यों, जनता के विभिन्न वर्गों के हालचालों तथा राजकोश संबन्धो लेखा कार्यों पर भी ध्यान देता रहता था; साथ साथ अस्त्र-शस्त्रों का भी अभ्यास किया था।

परमेश्वर को आते देख युवराजा ने पूछा—"क्या है परमेश्वर? कोई विशेष कार्य?"

"जी हुजूर" कहते हुए परमेश्वर ने हाथ में थामी चीज़ को युवराजा के सामने डाल दिया।

युवराजा : यह तो कागज़ का पर्चा है। तुमने उसे भिगोया?

परमेश्वर : हुज़ूर! म्लेच्छों का छुआ है। चान्नान को छूत होने पर क्या क्या मंत्र तंत्र किया गया! गूदड, भेड-बकरियों की वसा आदि से बनी इस चीज़ को छूकर......

युवराजा : इसपर पानी डालना नहीं चाहिए।......अच्छा, किसने इसे तेरे हाथ में दिया था?

परमेश्वर : मेरा वडा पुत्तर। छिप छिपकर आया और देकर भाग निकला। वह छोकरा फुर्तीला है!

युवराजा : उसको भला हो!...... रामय्यन, शुद्ध हो न? लेकर पढो। आज्ञा पाकर रामय्यन ने पत्र खोलकर यों पढा :

"माननीय महामहिम युवराजा साहब के सम्मुख आपके चरणदास आज़िम उद्दौला खाँ द्वारा पेश किया जा रहा है......"

युवराजा : मुझे लगा कि उसी का होगा!...क्या लिखा है, पढो।

"......इलाही की रहम से खुश है!"

परमेश्वर : आज के सब कार्य चौपट हो गये !...क्या, वह श्री पद्मनाभ की कृपा से...लिख न सकता था ?......

युवराजा : चुप रह !

परमेश्वरन पिल्लै का मुख सूख गया।

"हुजूर को परवर दिगार लंबी उम्र और चैन बख्शे !"

युवराजा : उनके द्विभाषी को मलयालम आती होगी। हम भी इस प्रकार कभी न लिखते थे।

रामय्यन : मालिक, अच्छी तरह लिखा है। मर्यादा पूर्ण और उचित वाक्यों में...आश्चर्य होता है।

परमेश्वर : (स्वयं कुछ कहते हुए) मैंने रोक दिया तो बडा दोष हुआ ! मर्यादा से लिखा है !... यों ही लिख दिया...कुछ लग जाए...तब सीखेंगे !...

परमेश्वरन पिल्लै अपने आप कह रहा था तो भी युवराजा और रामय्यन को सुनाई पडता था। परमेश्वरन पिल्लै सीधा सादा, राज भक्त, ईमानदार आदि था; इसलिए युवराजा के सम्मुख उसको विशेष स्वतंत्रता प्राप्त थी। वह युवराजा का सन्तत परिचारक था जो तनिक से सन्तुष्ट, कुपित और व्यथित होता था। उसकी बातें सुन युवराजा हँस पडे तो उसका मुखडा खिल उठा।

"...दंगेबाज शैतान कल रात को कुटमण पिल्लै के मकान में शामिल हुए थे।..."

परमेश्वर : शामिल हुए !...

"......यह जानना मुश्किल था कि क्या क्या बातें हुईं ......।"

परमेश्वर : ठीक है! काल आया है। कुशल व्यक्ति दुर से ही बातें समझ लेते हैं। यहाँ...सर...धड से अलग होनेवाला है...... चले जाए......

युवराजा : चुप रह परमेश्वर ! पहले मेरा सर कट जाएगा...... तभी तेरा जाएगा...डरना मत।

परमेश्वर : सर तो कटेगा...पहले मेरा ..

युवराजा : अच्छा, उसकी चर्चा बाद को करेंगे।... रामय्यन, पत्र पढ सुनाओ......

"...जान देने वाले की फरमाइश के वगैर आदमी की ख्वाहिश के मुताविक कुछ नहीं चलता। खाते पीते और सोते जागते चौकन्ना रहे। साहब मांकोयिक्कल कुरुप कल रात यहाँ पधारे हैं।"

परमेश्वर : (खुश होकर उछलता है) हाय बृहस्पति ग्यारह में !...

हाय !...ग्यारह में कूद पडा... वह चाम्रान भी आ गया तो कितना अच्छा होता ...... (रामय्यन से) कुरुप जी को देखा तो नहीं ... वे आकर आपके ऊपर गिर पडे तो... आप चकनाचर...अभी...अभी आएँगे; तब देखेंगे !

युवराजा : श्री पद्मनाभ की कृपा !

परमेश्वर : आप तो कलंक रहित हैं ...तो श्री पद्मनाभ आपको दुख देंगे...क्या ?

परमेश्वरन पिल्लै के पूर्वात्तर मतों की भिन्नता देखकर रामय्यन मुस्कुराने लगे। तब राजा ने कहा—"पढो रामय्यन।"

"हुजूर के हम गुलाम आपकी फरमान के इन्तज़ार में हैं। महाराजा को तन्दुरुस्त करने और हुजूर शाह ज़ादे को दुआएँ बख्शने में परवरदिगार रहम करे। महाराजा के बेटे रायसाहब पद्मनाभन तंपी का गुलाम सुन्दरय्यन नामक एक आदमी है। उस पर पैनी नज़र रख दें हुज़ूर। उसकी जान बाम्मन की नहीं। इलाही रहम करें।"

(क्रमशः)

(पृष्ठ 2 से आगे)

लेखकों का उत्साह बढाने में सहायक सिद्ध होगी।

वर्तमान योजना के अनुसार प्रति वर्ष प्रकाशित प्रत्येक हिन्दीतर भाषा के लेखक को समान रकम के पुरस्कार दिये जाते हैं। हमारा सुझाव है कि इन पुरस्कृत लेखकों में सर्वश्रेष्ठ लेखक को एक विशेष पुरस्कार जिसकी संख्या दस हज़ार रुपये से कम न हो भी दिया जाये और ये सब पुरस्कार राष्ट्रस्तर पर आयोजित एक विशेष समारोह में किसी मूर्धन्य नेता या अन्य महापुरुष द्वारा दिये जाये ताकि पुरस्कृत लेखक अपने को राष्ट्र द्वारा सम्मानित अनुभव कर सकें और बदले में श्रेष्ठतर कृतियों से हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने में प्रतिबद्ध हो जायें।

वार्षिक चन्दा

कागज व छपाई की महंगाई के कारण केरल ज्योति के वार्षिक चन्दे में किंचित वृद्धि करनी पड रही है। अगस्त 1987 से वार्षिक चन्दा 15 रुपये होगा। आशा है, पाठक बन्धु हमारी कठिनाई समझ कर पूरा सहयोग देंगे।

अगस्त 1987 से एक प्रति का मूल्य डेढ़ रुपया होगा।

कृपया अपना वार्षिक चन्दा शीघ्र भेज दें।

मंत्री,

केरल हिन्दी प्रचार सभा

तिरुवनन्तपुरम-695 014

दूरभाष : 61378 तार : "जय हिन्दी"

केरल ज्योति

पुष्प 22
दल 5
एक प्रति--1 रु० 50 पं०
सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका वार्षिक—15 रु०
अगस्त 1987

चिता भस्म के आँसू

महात्मा गांधी जैसे हमारे पूर्वजों ने तरह तरह के सुन्दर स्वप्नों से प्रेरित होकर स्वतंत्रता के संग्राम में आत्मबलि दी थी । उनका स्वप्न था कि भारत जब स्वतंत्र होगा तब यहाँ की जनता अज्ञान और दरिद्रता से मुक्ति पा सकेगी । उन का स्वप्न था कि स्वतंत्र होने पर भारत की जनता जाति, धर्म, प्रान्त, भाषा आदि का भेद भाव भूल कर एकहृदय हो जायेगी । उनका स्वप्न था कि स्वतंत्र होने पर भारत की जनता अपने गौरवपूर्ण आदर्शों को पुनःप्रतिष्ठित कर पायेगी ।

पर जैसे मलयालम के एक कवि ने अनुभव किया, उन का चिताभस्म भारत की वर्तमान पीढी की स्थिति देख कर आंसू बहाता होगा । उन के सुन्दर स्वप्न कहाँ निरक्षरता और दरिद्रता के गर्त में पडी हुई भारत की अधिकांश जनता कहाँ विघटनवाद. स्वार्थलोभ और धर्मान्धता के जो नारे बुलन्द हो रहे हैं वे उन की आत्मा को निश्चय ही त्रस्त करते होंगे ।

चालीस वर्ष के कठोर परिश्रम के बावजूद भारत गणतंत्र अपने लक्ष्य से इतनी दूर क्यों है ? क्यों यहाँ निरक्षरता और दरिद्रता अपना अड्डा जमाये हुए है ?

इस अंक में

जनतन्त्रात्मक शासन प्रणाली क्यों यहाँ वांछित फल प्रदान नहीं कर पाती ?

जनतंत्र तभी पल्लवित पुष्पित हो सकता है जब शासन जनता के द्वारा हो । यह तभी संभव है जब शासन जनता के द्वारा हो। यह तभी संभव है जब शासन जनता की भाषा में हो। हमारा यह दुर्भाग्य है कि हमारी मानसिक दासता शासकीय प्रयोजनों केलिए अंग्रेजी के स्थान पर भारतीय भाषाओं का उपयोग करने का स्वप्न यथार्थ होने नहीं देती । स्वभाषा को शासन की बनाने का जो काम इंग्लैंड और तुर्की ने किया, जापान और इन्डोनेशिया ने किया, चीन और रूस ने किया, उससे हम घबराते हैं। उन देशों के विकास के इतिहास का सबक हमें यही सिखाता है कि जितनी जल्दी विदेशी भाषा की जगह देशी भाषाओं को शासन का माध्यम बनायें, शासन में जनता का भागभागित्व उतनी जल्दी प्राप्त होगा और विकास की गति में शीघ्रता आने लगेगी।

क्या इस वर्ष जब कि हम स्वतंत्रता का चालीसवाँ वर्ष मना रहे हैं, देशी भाषाओं को शासन का माध्यम बनाने की दिशा में कुछ ठोस कदम उठा पायेंगे और उस के लिए कुछ समयबंधित कार्यक्रम बना पायेंगे जिससे इक्कीसवीं सदी के आरंभ तक हमारा शासन अंग्रेजी की चगुल से पूर्णतः मुक्त हो सके ?

★

हिन्दी प्रान्तों में हिन्दीतर भाषा भी सिखायें

न्यायमूर्ति श्री. जी. बालगंगाधरन नायर

[नवभारत हिन्दी कॉलेज, तिरुवनन्तपुरम के रजतजयन्ती समारोह में दिये गये उद्घाटन भाषण का सारांश]

मुझे इस बात का गौरव अनुभव हो रहा है कि श्री. के. पी. के. पिषारटी

न्यायमूर्ति श्री. जी. बालगगाधरन नायर

द्वारा संस्थापित नवभारत हिन्दी कॉलेज के रजत जयन्ती समारोह का उद्घाटन करने का सुअवसर मुझे प्राप्त हुआ है। कल उन का षष्टिपूर्ति का दिन था। उन का अभिनन्दन करना भी मैं अपना कर्तव्य मानता हूँ। वे और उन की संस्था परस्पर पूरक है। उन की और उनकी संस्था की शुभकामना करता हूँ।

श्री. पिषारटी अपनी संस्था का संचालन स्तुत्यर्ह ढंग से करते आ रहे हैं। उन का जीवन ही समाज केलिए अर्पित है। सहकारिता आन्दोलन, हिन्दी प्रचार, ग्रंथालय अभियान, कर्मचारी संघ, खादी प्रचार, मद्य निषेध, निरक्षरता निर्मार्जन आदि अनेक क्षेत्रों में दीर्घकालीन अनुभव प्राप्त करके ही उन्होंने यह संस्था स्थापित की है। ये क्षेत्र ऐसे हैं जिन में अधिक लोग कार्य नहीं कर पाते। श्री. पिषारटी ने इन क्षेत्रों में की गयी सेवा के कारण सब के स्नेह और आदर के पात्र बन चुके हैं।

इस बात का मुझे बडा दु:ख है कि मैं हिन्दी नहीं जानता ।

इस बात का मुझे बडा दु:ख है कि मैं हिन्दी नहीं जानता । मैं जब स्कूल में पढता था तब स्कूली पाठ्य-क्रमों में हिन्दी नहीं थी । स्कूल के बाहर भी हिन्दी सीखने की कोई सुविधा उन दिनों नहीं थी । इसलिए दूरदर्शन के 'बुनियाद' जैसे अच्छे धारावाही कार्यक्रम भी मैं समझ नहीं पाता । जब मेरे घरवाले इन सब कार्यक्रमों का मजा लूटते हैं तब मुझे देखते ही रहना पडता है ।

आज के विद्यार्थियों को गाँवों में और शहरों में स्कूल में और बाहर हिन्दी सीखने को सुविधायें उपलब्ध हैं । श्री. पिषारटी के कालेज में ही हर बार करीब चार सौ विद्यार्थी हिन्दी सीखते हैं । गत पच्चीस वर्षों में उन्होंने हज़ारों विद्यार्थियों को हिन्दी सिखायी है । उन में कई हिन्दी के पंडित बने हैं । कई केरल के बाहर गये हैं ।

हिन्दी को हमारे संविधान में राष्ट्र भाषा के रूप में स्वीकार किया गया है । यह संविधान द्वारा स्वीकृत नहीं भी होता तो भी हिन्दी ही हमारी राष्ट्र भाषा के योग्य है । हमारे अध्यक्षजी, जो बडे भाषापंडित हैं । शायद कहें कि कई अन्य भाषायें हिन्दी से अधिक परिमार्जित हैं, साहित्यिक दृष्टि से समृद्ध हैं और पुरानी हैं । पर इतने अधिक लोगों द्वारा बोली जानेवाली और कोई भाषा भारत में नहीं है ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व हिन्दी का अनौपचारिक ढंग से एक विशेष स्थान प्राप्त था । संविधान ने केवल इस स्थान को प्रशासनिक मान्यता दी । दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना करीब 60 वर्ष पूर्व हुई थी । उसका कार्य मलबार, कोच्चिन और तिरुवितांकूर में व्याप्त रहा ।

कुछ लोगों का कहना है कि अंग्रेज़ी को राष्ट्रभाषा बनायें । मैं भी एक अंग्रेज़ी प्रेमी हूँ । पर मेरे विचार में हमारी राष्ट्र भाषा बनने की क्षमता, समर्थता या स्वीकार्यता अंग्रेज़ी में नहीं है ।

हिन्दी हमारी राजभाषा स्वीकृत हुई । केरल में हिन्दी को निर्विरोध रूप से स्वीकार किया गया । अनेकों विद्यार्थी और प्रौढ यहाँ हिन्दी सीख रहे हैं । तमिलनाड जैसे स्थानों में प्रशासनिक स्तर पर ही विरोध हैं । पर वहाँ भी दक्षिण भारत हिन्दी

लोक सभा में अंग्रेजी जानने वाले कुछ मंत्री भी अंग्रेज़ी में पूछ जाने वाले प्रश्नों का उत्तर हिन्दी में ही देते हैं।

प्रचार सभा जैसी संस्थाओं को परीक्षाओं केलिए अनेकों विद्यार्थी पढते हैं और हिन्दी की परीक्षायें उत्तीर्ण करके देश के विभिन्न भागों में काम करते हैं। लगता है कि वहाँ भी साधारण जनता हिन्दी का विरोध नहीं करती। नहीं तो वहाँ के विद्यार्थी हिन्दी सीखने नहीं आतीं।

कभी कभी लगता है कि उत्तर भारतवाले हिन्दी लादने पर तुले हुए

लगता है कि वहाँ भी साधारण जनता हिन्दी का विरोध नहीं करती।

हैं। लोक सभा में अंग्रेज़ी जानने वाले कुछ मंत्री भी अंग्रेजी में पूछे जानेवाले प्रश्नों का उत्तर हिन्दी में ही देते हैं। टेलिफोन ऑपरेटर से अंग्रेजी में बात करने पर जवाब हिन्दी में ही मिलता है। यह सब अनावश्यक आवेश या मत्सर बुद्धि है। लगता है कि ऐसी मनोवृत्ति शायद केरल जैसे प्रान्तों में भी हिन्दी का विरोध उत्पन्न करेगी।

हिन्दी भाषियों में हिन्दी प्रचार केलिए अनुकूल मनोवृत्ति उत्पन्न होनी चाहिए।

हिन्दी भाषियों में हिन्दी प्रचार के लिए अनुकूल मनोवृत्ति उत्पन्न होनी चाहिए।

त्रिभाषा सूत्र के अनुसार केरल में तीन भाषायें सिखायी जाती हैं। पर इस बात में सन्देह है कि हिन्दी भाषी क्षेत्रों में कहीं भी हिन्दीतर भारतीय भाषा सिखायी जाती हो। यद्यपि हिन्दी प्रान्तों में हिन्दीतर भारतीय भाषा सीखने का कोई व्यावहारिक प्रयोजन नहीं तो भी ऐसा कदम हिन्दीतर प्रान्तों में भावात्मक या मनोवैज्ञानिक प्रभाव उत्पन्न करेगा। इस बात का मुझे कभी कभी दुःख होता है कि वे इस दिशा में कोई कदम नहीं उठाते।

नवभारत हिन्दी कॉलेज को, उसके संस्थापक अध्यक्ष श्री. पिषारटी की ओर उसके छात्रों की मंगल कामना करते हुए मैं इस समारोह का उद्घाटन करता हूँ। ❀

ऐसा कदम हिन्दीतर प्रान्तों में भावात्मक या मनोवैज्ञानिक प्रभाव उत्पन्न करेगा।

हिन्दी का विकास और प्रचार संस्कृत के सहारे हो

डा० पी. के. नारायण पिल्ले

[13-6-1987 को नवभारत हिन्दी कॉलेज, तिरुवनन्तपुरम के रजतजयन्ती समारोह में दिये गये भाषण का सारांश]

एक संस्था बना कर पच्चीस साल तक लोकक्षेमकारी ढंग से उसे चलाना कितना ही दुसाध्य कार्य है ! कितना ही श्लाघ्य कार्य हैं ! एक संस्था बनाने की प्रक्रिया का अर्थ और गौरव भुक्त भोगी ही समझ सकता हैं। यह अत्यंत क्लेशकर है। आर्थिक क्लेश, जनता की प्रतिकूल आलोचना, आवश्यकता पडने पर निजी जनों का वांछित सहयोग न मिलना, और दूसरों की डाट डपट! श्री. पिषारटी गत पच्चीस सालों से अपनी संस्था नवभारत हिन्दी कॉलेज चलाते आ रहे हैं जिस में हजारों विद्यार्थी हिन्दी सीख सके। यह अत्यंत श्लाघ्य है।

हिन्दी का राष्ट्रीय प्राधान्य हम कभी भुला नहीं सकते। राष्ट्र की प्रगति केलिए हिन्दी का प्रचार अत्यंतापेक्षित है।

श्री. पिषारटी का हिन्दी कॉलेज केरल हिन्दी प्रचार सभा से संबद्ध है जिसकी स्थापना मेरे ज्येष्ठ तुल्य श्री. के. वासुदेवन पिल्लै नेकी। केरल हिन्दी प्रचार सभा एक साधारण हिन्दी प्रचार सभा नहीं। वासुदेवन पिल्लैजी ने एक विशेष लक्ष्य को लेकर उसकी स्थापना की। दक्षिण
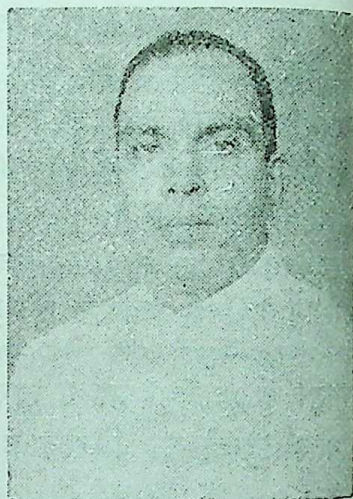
डा० पी. के. नारायण पिल्ले

भारत हिन्दी प्रचार सभा से अलग होकर एक नयी संस्था उन्होंने क्यों स्थापित की? उसका व्यावर्तक धर्म क्या है ? दोनों का लक्ष्य हिन्दी प्रचार ही तो है न? यह सन्देह स्वाभाविक है। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा हिन्दी के विकास केलिए उर्दु का सहारा लेने के पक्ष में थी। इस देश की आन्तरिक सत्ता ठीक ठीक समझनेवाले वासुदेवन पिल्लैजी का विचार था कि हिन्दी का विकास और प्रचार संस्कृत के सहारे हो। उनका यह

> **आज भी भारत का ऐक्य बनाये रखनेवाले घटकों में सब से प्रधान है संस्कृत ।**

मत कितना ही सुचिन्तित था । संस्कृत समस्त देश द्वारा स्वीकृत भाषा है । हमारी संस्कृति और विज्ञान का स्रोत है । यही नवीन भारतीय भाषाओं को पुष्ट करती है । उक्त लक्ष्य की पूर्ति के लिए ही उन्होंने केरल हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना की । उनकी दूर दर्शिता कितनी प्रशंसनीय है !

मेरा विश्वास है कि आज भी भारत का ऐक्य बनाये रखनेवाले घटकों में सब से प्रधान है संस्कृत । संस्कृत की पदावली ही नयी भारतीय भाषाओं में प्रस्तुत होकर भारतीय नागरिकों को एक दूसरे के निकट लाती है । उत्तर भारत से आने वाले कुछ विद्वान यहाँ के मलयालम के भाषण सुन कर कहते हैं कि ये भाषण

> **अल्प प्रयत्न का अनल्प प्रतिफल पाना ही आज का जगत चाहता है ।**

इनके लिए सुग्रह है । कारण यह है कि मलयालम अनेक संस्कृत शब्द प्रयुक्त होते हैं जो वे आसानी से समझ लेते हैं । अन्यान्य भारतीय भाषायें बोलनेवालों की भी यही बात है । वे भी प्रौढ मलयालम भाषण थोडा बहुत समझ लेते हैं । कर्नाटक, तेलुगु जैसी भाषाओं की भी यही बात है । आधुनिक भारतीय भाषाओं का संस्कृत अंश जोड लीजिये । उसका एक कोश बनाइये । यदि आधुनिक भारतीयभाषाओं का जी. सी. एम. या लघु तम साधारण घटक होगा जिसे हर भाषा-भाषी भारतीय स्वीकार करता है । संस्कृत-शब्दों के अतिप्रसर से भारतीयों में एक विशेष प्रकार की एकता उत्पन्न होती है । इसकी प्रधानता समझकर ही के. वासुदेवन पिल्लैजी ने अपनी केरल हिन्दी प्रचार सभा में संस्कृत को प्रामुख्य दिया । इसी कारण मैं केरल हिन्दी प्रचार सभा की ओर आकृष्ट हुआ और कुछ समय तक उसका अध्यक्ष रहा ।

श्री. के. पी. के. पिषारटी का परिचय मुझे केरल हिन्दी प्रचार सभा के द्वारा ही

> **एक दृष्टि यह है कि समाज से हम क्या हटप सकते हैं । उसका शोषण कैसे कर सकते हैं । दूसरी दृष्टि यह है कि हम समाज के लिए क्या कर सकते हैं ।**

हुआ । इतने सौम्य, शान्त, सज्जन हमारे जगत में अतीव दुर्लभ हैं । अल्प प्रयत्न का अनल्प प्रतिफल पाना ही आज का जगत चाहता है । श्री. पिषारटी ऐसे नहीं हैं । वे समाज की सेवा अर्पण-बोध के साथ कर रहे हैं ।

हम समाज के प्रति दो प्रकार की दृष्टि रख सकते हैं । एक दृष्टि यह है कि समाज से हम क्या हटप सकते हैं । उसका शोषण कैसे कर सकते हैं । दूसरी दृष्टि यह है कि हम समाज के लिए क्या कर सकते हैं । श्री. पिषारटी दूसरे प्रकार की दृष्टि रखते हैं । उनके प्रति मेरे मन में बडा आदर और स्नेह हैं ।

उनकी षष्टिपूर्ति के इस अवसर पर स्नेहादरपूर्वक अपनी आदरांजलि अर्पित करता हूँ । उन्हें, उनके परिवार के सदस्यों और उनके नवभारत हिन्दी कॉलेज को मंगल कामनायें ।

❀

हिन्दी को जीवन का भाग बनायें

डा० वी. के. सुकुमारन नायर
भूतपूर्व कुलपति, केरल विश्वविद्यालय

डा० वी. कै. सुकुमारन नायर

[13-6-1987 को नवभारत हिन्दी कालेज, तिरुवनन्तपुरम के रजतजयन्ती समारोह में दिये गये भाषण का सारांश]

श्री. के. पी. पिषारटी का परिचय मुझे केरल हिन्दी प्रचार सभा में हुआ।

गांधीजी ने हिन्दी प्रचार को राष्ट्र-सेवा के रूप में देखा था। स्वतंत्रता संग्राम के साथ उन्होंने हिन्दी प्रचार को जोडा था। उनका आग्रह था कि हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा हो और भारत एक राष्ट्र के रूप में आगे बढे। उनकी दृष्टि में हिन्दी प्रचार का स्थान सत्याग्रह और जेलवास से भी उन्नत था। ऐसे हिन्दी प्रचार में वर्षों से श्री. पिषारटी लगे हुए हैं।

भारत की आधुनिक राजनीतिक व्यवस्थिति में हिन्दी का स्थान महत्वपूर्ण है। अनेक राष्ट्रों में भाषा की समस्या ही प्रमुख समस्या है। देशीयता का प्रश्न भाषा का प्रश्न भी है। इसीलिए गांधीजी ने हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा बनाने के और हिन्दी पढने के लिए जनता प्रेरित किया। वे जानते थे बिना एक आम भाषा के कोई आगे नहीं बढ सकता। अंग्रेजी कि एक विदेशी भाषा है, हिन्दी स्थान कभी नहीं पा सकती।

स्वतंत्र भारत में हिन्दी का प्राधान्य है उसे हम शायद भाँति नहीं समझते। केवल सरकारी आदेश निकलने से हिन्दी का प्र नहीं हो सकता। जनता को हि सीखनी चाहिए। हिन्दी पुस्तकें प चाहिए। हिन्दी पत्रिकायें प चाहिए। केरल जैसे राज्यों में हि लोग हिन्दी की पत्रिकायें व पु

केरल हिन्दी प्रचार सभा की ओर से पाटंबर पहनाते हुए नवभारत हिन्दी कॉलेज के संस्थापक श्री. के. पी. के. पिषारटी का अभिनन्दन कर रहे हैं केरल विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति डा० वी के सुकुमारन नायर। बैठे हैं न्यायमूर्ति श्री. जो. बालगंगाधरन नायर।

ढते हैं? कितने लोग हिन्दी को पने जीवन का भाग बना लेते हैं? सा होने पर ही हिन्दीतर राज्यों में न्दी को उचित स्थान मिलेगा।

इसलिए हिन्दी प्रचारकों को एक हत्वपूर्ण दायित्व निभाना है। न्दी पढाना ही नहीं, हिन्दी के बन्ध में लोगों को प्रबुद्ध करना भी उनका दायित्व है। श्री. पिषारटी यह दायित्व बडे स्तुत्यर्ह रूप में निभाते आये हैं। खादी प्रचार, सहकारिता,निरक्षरतानिर्मार्जन जैसे कई क्षेत्रों में आप सेवा करते आ रहे हैं।

न्दी पढ़ाना ही नहीं हिन्दी के बन्ध में लोगों को प्रबुद्ध करना उन का दायित्व है।

षष्टिपूर्ति के अवसर पर मैं उनका हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ। सब प्रकार की मंगल कामनायें करते हुए, मैं केरल हिन्दी प्रचार सभा के नव भारत हिन्दी कॉलेज रजतजयंती समारोह समिति के यह उपहार उन्हें भेंट करता हूं। ❀

स्वभाषा से ही प्रगति संभव होगी

श्री. वी. ए. कोहली

[29-6-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में दिये गये भाषण का सारांश]

29-6-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में आयोजित राजभाषा सम्मेलन में उद्घाटन भाषण दे रहे हैं श्री वी. ए. कोहली (उपसचिव, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार) बैठे हैं (बायें से) श्री. एम. के. वेलायुधन नायर एवं डा० जोस आस्टिन, सहायक निदेशक हिन्दी शिक्षण योजना, गृह मंत्रालय, भारत सरकार ।

आप की तरह मैं भी अहिन्दी भाषी क्षेत्र से हूँ। मैं पंजाबी हूँ।

आप में हिन्दी भाषा के प्रति प्रेम है। इसी कारण आप ने हिन्दी भाषा को यहाँ सम्मान दिया। मेरा यह अनुभव है कि जितना प्रेम और लगाव हिन्दी भाषा केलिए इस प्रांत में है, शायद दूसरे हिन्दीतर प्रांतों में नहीं। आप का यह प्रेम और परिश्रम ज़रूर फल लायेगा। जिस प्रेम और लगन से केरल हिन्दी प्रचार सभा के मंत्री श्री. एम. के. वेलायुधन

रूस, जर्मनी और जापान ने अंग्रेज़ी के ज़रिये नहीं, अपनी भाषा के ज़रिये उन्नति की है।

नायर जो काम कर रहे हैं उसकी मैं सराहना करता हूँ। ऐसे कुछ व्यक्ति अगर हो जायें तो हमारे देश में एक भाषा—जो कि देश की भाषा हो—लाने में कठिनाई नहीं होगी।

अगर देश में एक भाषा को अपनाना हैं तो हिन्दी को ही अपना सकेंगे। इस समय भी देश के लगभग सभी भागों में हिन्दी से काम चल सकता है। जितना काम हम भारत वर्ष में हिन्दी से चला सकते हैं उतना काम अभी भी अंग्रेज़ी से नहीं चला सकने। पर अंग्रेज़ी के संबन्ध में ऐसी धारणा है कि यह एक बहुत महान भाषा है और सारे विश्व में यह भाषा प्रचलित है और इसे पढना हमारे लिए गौरवदायक होगा। यह धारणा ठीक नहीं है।

अमेरिका और रूस विश्व के दो बड़े देश हैं। अमेरिका में अंग्रेज़ी ही है, पर एक भिन्न प्रकार की। लेकिन रूस में अंग्रेज़ी नहीं है। रूस, जर्मनी और जापान ने अंग्रेज़ी के ज़रिये नहीं, अपनी भाषा के ज़रिये उन्नति की है। रूस में कम से कम पन्द्रह भाषायें हैं जो प्रान्तों में बोली जाती हैं। लेकिन रूसी भाषा रूस के सभी लोग जानते हैं। वहाँ देश के प्रति ऐसी त्याग पूर्ण भावना है कि रूसी को प्रत्येक रूसी नागरिक अपनी मातृभाषा मानता है।

ऐसी भावना हम अपने देश में उत्पन्न करना चाहते हैं जिस में केरल हिन्दी प्रचार सभा बहुत बडी सेवा कर रही है। इस सभा के मंत्री राज भाषा विभाग को, भारत सरकार को, हिन्दी के प्रचार प्रसार केलिए जो सहयोग दे रहे हैं, वास्तव में सराहनीय है। कितना समय ये इसकेलिए लगाते हैं? इन में इस केलिए कितनी लगन है! उनको और उनके साथियों को मैं तहे दिल से बधाई देता हूँ।

केरल हिन्दी प्रचार सभा के मंत्री ने कहा कि यहाँ के अनेक हिन्दी उपाधिकारी हैं जिन्हें नौकरी नहीं

दो सूक्ष्मिकायें

श्री. मिश्रीलाल जायसवाल

(1) मन्त्रोच्चार

शानदार यज्ञ में
स्वामी जी
जोर जोर से
मन्त्र उच्चार
रहे थे
चेले का परलोक
अपना इहलोक
सुधार रहे थे।

(2) महाराणा प्रताप

महाराणा प्रताप के
आदर्श की
भावना में
हम बहे हैं
उन्होंने
जंगल में दिन काटे
हम जंगल काट रहे हैं

सुभाष चौक, कटती, म.

मिल रही है। हाल ही में हमें बताया गया कि हिन्दी के अनेक पद देश के विभिन्न भागों में इसलिए खाली पडे हैं कि नियुक्ति के लिए योग्य व्यक्ति नहीं मिल रहे हैं। हम इस बात की कोशिश करेंगे कि इन पदों के विज्ञापन दक्षिण भारत के समाचार पत्रों में भी दिये जायें और केरल हिंदी प्रचार सभा को भी भेजे जायें ताकि आप लोग भी उन पदों पर नियुक्ति केलिए आवेदन भेज सकें।

'संग्रथन' का विमोचन

हिन्दी विद्यापीठ (केरल) की ुख-पत्रिका 'संग्रथन' का विमोचन 1-7-1987 को 'हिन्दी मीडियम विमन्स कॉलेज हॉल' में केरल प्रांत के खेल व ुवा कार्य मंत्री श्री. ए. नीललोहित ासन नाटार के कर-कमलों से संपन्न आ। श्री पी. जी. वासुदेव म्मेलन के सभापति रहे। पत्रिका ी एक प्रति केरल हिन्दी प्रचार भा, त्रिवेंद्रम के मंत्री ी. एम. के. वेलायुधन नायर को पते हुए श्री. नाटार ने कहा कि रत की अखंडता और भावात्मक कता की परिरक्षा केलिए देश में ऐसे काशनों की सख्त जरूरत है। ग्रथन' जैसी पत्रिकाओं के प्रकाशन रोडा अटकानेवाली बातों का लेख करते हुए उन्होंने यह आग्रह प्रकट किया कि भविष्य में सग्रथन रूप-रंग ज्यादा आकर्षक बनें। दी की प्रसिद्ध पत्रिकाओं से होड ाने की शक्ति उसे मिले।

'संग्रथन' की प्रति मंत्री महोदय से स्वीकार करते हुए श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने कहा कि हिन्दी प्रदेशों से निकलने वाली प्रतिष्ठित पत्रिकाओं से अहिन्दी प्रदेश की छोटी पत्रिकाओं की तुलना करना असमीचीन है। अहिन्दी प्रदेश केरल से ऐसी एक पत्रिका के प्रकाशन में श्री. नायर ने संतोष प्रकट किया और कहा कि प्रस्तुत मासिक पत्रिका उत्तरोत्तर प्रगति की ओर अग्रसर होती रहेगी।

'संग्रथन' को शुभकामनाएँ अदा करते हुए राज्य के जनसंपर्क विभाग के अपर निदेशक प्रो० जी. एन. पकिक्कर ने बताया कि मलयालम साहित्य की विविध विधाओं को केरल के बाहर पहुँचाने में 'संग्रथन' जैसे प्रकाशन उपयोगी सिद्ध हों और ऐसे प्रयत्न से भावात्मक समाकलन का कार्य अत्यधिक सुगम हो जायगा।

सी.वी. रामनपिल्लै का
ऐतिहासिक उपन्यास

मार्ताण्डवर्मा

अनुवाद : किशन

तेरहवाँ अध्याय (शेषांश)

युवराजा : कुरुप तो उचित समय पर कार्य करनेवाला है। जैसे कहा था, वैसे ही आ पहुँचा है। अब जान लेना है कि अष्टगृहाधीशों की करामातें क्या क्या हैं। क्या किया जाए रामय्यन ?

रामय्यन : रास्ता ढूँढने की आवश्यकता नहीं है हुजूर। कुरुप जी जब पहुँच जाएँगे तब हमारे और उनके लोगों को एक साथ कर अष्ट गृहाधीशों को काबू में लाना चाहिए।

परमेश्वर : वही......अकल का कार्य है...

युवराजा : उनसे लडने केलिए अ[...] श्यक लोग तो हमारे पक्ष में [...] रहेंगे तो......

रामय्यन : आमने सामने की [...] नहीं है। कुटमण, क.षक्क[...] रामनामठम......इन तीनों [...] ......यदि आज्ञा हो तो मैं [...] दूँगा। उन्हें दबाने से सारा [...] समाप्त होगा।

युवराजा : रामय्यन का मन तो [...] है। तंत्र से उनको दबा सक[...] मैंने भी इस ओर थोडा [...] लिया था। लेकिन मैं चाह[...] कि जहाँ तक हो सके मारक[...] बिना ही उन्हें वश में कर [...] कार्य संभालूँ......

रामय्यन : स्वामी......

युवराजा : तुम्हारा मतलब मैं समझ सका। मुझे और मेरे पूर्विकों को उन्होंने बहुत तंग किया है। फिर भी, यह न भूलना चाहिए वे हमारी प्रजा में प्रमुख हैं। इतना ही नहीं, यदि हम उनका सर्वनाश कर डाले तो भविष्य में आनेवाली सन्तान जब प्रबल बन जाए तब हमारे प्रति उनके मन में स्नेह और श्रद्धा के बदले शंका और भीरुता ही रह जाएगी।

रामय्यन : दया से कुछ नहीं चलेगा। विशेषकर, जब राजाज्ञा के बदले और एक आज्ञा राज्य में प्रचलित है तब न्यायपूर्ण शासन करना, कर वसूली करना आदि असाध्य हो जाएगा।

युवराजा : एक शासन को बनाये रखने का यत्न हम कर रहे हैं। राज्य और जनता से संबन्धित कार्यों में झट से कोई निर्णय लेना उचित नहीं होगा। इतना ही नहीं, हमारे पैरों को स्थिर करने के बाद ही शत्रु संहार की सोचना चाहिए।

परमेश्वर : बैठने के बाद पैर पसारे......

युवराजा : परमेश्वर को अकल आने लगी......

रामय्यन : आप बहुत लंबा-चौड़ा सोच रहे हैं। शत्रु पक्ष के लोग झट पट काम कर रहे हैं। धोखा देही में वे पीछे नहीं रहेंगे। उस पर चर्चा भी चली है। इस परिस्थिति में उनमें से कुछ एक को ज़रा हाथा पायी कर न देंगे तो हम अनजाने में जाल में फँस जाएँगे।

परमेश्वर : सो तो ठीक! तंपी लोग भी साथ दे रहे हैं। सभी साधन जुटा रहे हैं। पहले की तरह छिपे छिपे, जंगल-पहाडों में या नालों में नहीं, आमने सामने का मुकाबला होगा।

युवराजा : हम इसलिए शान्त रह रहे हैं कि जैसे वे करते हैं वैसे हमें करना नहीं चाहिए। सुनो रामय्यन राजाओं के लिए साम, दान, भेद, दण्ड आदि उपायों का विधान है। छल कपट इनमें सम्मिलित नहीं है। वे अन्धाधुन्ध कार्य कर रहे हैं तो भी हमें क्षत्रिय धर्म का उल्लंघन करना नहीं चाहिए। दुर्जनों की राह पर हम भी चलने लगे तो दोनों में फरक ही क्या होगा।

रामय्यन : उनके किये अन्यायों की सोचने पर लगता है कि हमारे

लिए छल कपट भी स्वीकार्य है ।

युवराजा: वे लोग जो अपमान बटोरते हैं वह क्षणकाल में नष्ट हो जाएगा। लेकिन हमारे नाम पर जो कलंक लग जाए वह तब तक वैसा तैसा रहेगा जब तक यह राज्य कायम रहता है। एक एक दीपक पर कलक लगा जाए तो उसका पता मात्र उस घरवालों को लग जाता है। लेकिन चन्द्रमा के कलंक का क्या हो जाता है?

रामय्यन: जो भी हो, बडी विपदा होनेवाली है। इस अवसर पर नीति धर्म के बारे में सोच विचार करना आवश्यक है क्या? एक दो व्यक्तियों को नीति के अनुसार दंड दिये जाएँ तो सारी जनता आज्ञा का पालन करेगी।

युवराजा: यह भी कैसा मत है? अष्टगृहाधीशों में कुछ लोग दंड के योग्य हैं ही। इसमें सन्देह नहीं। लेकिन किसको दंड दिया जाए, इस पर हम निर्णय नहीं कर सकते। इस परिस्थिति में उनमें से कुछ लोगों को या सब लोगों को दंड देना धर्म नीति के विरुद्ध होगा। हम उसकी आज्ञा नहीं देंगे। उचित रीति में राजनीति चलाने का समय आ ही जाएगा। तब तक शान्त रहना पडेगा।

परमेश्वर: तो संन्यास क्यों नहीं करते?

युवराजा: प्रश्न तो सही है। संन्यास की बात चली तो एक बात याद आती है। पांडव-कौरवों के बीच फूट पडने पर पांडव एक लंबे काल तक सब सहते रहे। उसी प्रकार हम भी रहेंगे। तुम कहोगे कि सर की ख्याल रखना चाहिए। यदि ताकत न रही तो सर चला जाए। उसके रहने से क्या फायदा? कुरुप को आने दो, तब इन पर विचार करेंगे। वह तो अच्छे-बुरे को समझ कर सलाह दे सकता है। अब हमें जानना चाहिए कि कल किन किन बातों पर चर्चा हुई थी। कैसे हो सकता है?

परमेश्वर: शेर के मुँह में सर डालेगा कौन?

रामय्यन: आज्ञा हो... तो यत्न करूँगा।

युवराजा: तुम्हें विपदा होगी तो... नहीं चाहिए।

रामय्यन: विपदा कुछ नहीं होगी। कालक्कुट्टि नामक राज सेवक की भानजी से सुन्दरम का नाता है।

यह सुनते ही युवराजा सन्न रह गये। रामय्यन से जो सूचना मिली थी, उसने उनके मन को एक शंका को दृढ कर दिया। इसलिए वे कुछ देर चिंतित रहे। परमेश्वरन पिल्लै तो असीम आनन्द से रामय्यन के पीठ पर ताल बजाने लगा और युवराजा की ओर आँखें करते हुए भौंहों को नचाने लगा।

युवराज : परमेश्वर ! तुम्हारा कहना ठीक हो सकता है कालक्कुट्टी नें धोखा दिया होगा। अन्यथा अब तक तिरुमुखत्तु पिल्लै का पत्रोत्तर मिल गया होता।

परमेश्वर: बडों के वचन और आमला फल एक समान होते हैं : पहले खट्टा रहेगा फिर मीठा। मैं पहले से ही जानता था। कितनी बार मैंने कहा था कि धोखा देगा ...... धोखा देगा। मालिक को तब ऐसा लगा कि मैं ईर्ष्या से कुछ बक रहा था। आप जब पूर्व की ओर पधारे थे, उसी दिन वह भी चला था आपका लक्ष्य तो मथुरा काशी का तीर्थाटन नहीं था !

रामय्यन : यह जो कहता है, ठीक है। सुन्दरम का वह रिश्ता आपको बताया नहीं गया तो उसमें कोई रहस्य अवश्य है। अप्रत्याशित रूप में मुझे पता मिला था। तो हम पता लगाएँगे कि इस ओर अष्ट गृहाधीशों ने क्या क्या निश्चय कर लिया है।

युवराजा : पता लगाओ। तिरुमुखत्तु पिल्लै को बुला भेजो। अब देरी करना नहीं चाहिए। कालक्कुट्टि ने धोखा दिया होगा।

युवराजा की आँखें जपा कुसुम के समान लाल लाल हो गयीं। वे दान्त पीस रहे थे जिसकी आवाज़ ठीक सुनायी पडती थी। गुस्से में चूर होने के कारण उनकी ओठें फडक रही थीं। रामय्यन ने जान बूझकर युवराजा के क्रोध को जगा दिया था। रामय्यन ने मन ही मन निश्चय किया— "अब सब ठीक हो जाएगा।" परमेश्वरन पिल्लै सोचने लगा कि नृसिंह मूर्ति के समान रक्तारुण आँखवाले अपने मालिक के क्रोध को किस प्रकार ठंडा किया जाए।

युवराजा : असावधानी दोषकारी है। रामय्यन, देख लो कि अष्टगृहाधीशों की बडाई उतरनेवाली है। परमेश्वर जाकर निमिष के अन्दर कुरुप को ले आओ। बताया होगा कि कहाँ रहता है।

झट से परमेश्वरन पिल्लै युवराजा के सामने से अदृश्य हो गया। उसी प्रकार झट से उनके सम्मुख प्रत्यक्ष भी हुआ। कहा कि कुरुप आया नहीं और पठानों को गलती हुई है। युवराजा के मन में एक शंका जग आयी। "अष्ट गृहाधीशों ने कुरुप की हत्या की होगी।" युवराजा ने इन शब्दों को स्वगत रूप में बताया ही था कि "नारायण...नारायण... पद्मनाभ" जपते हुए और दोनों हाथों को सर पर रखते हुए परमेश्वरन पिल्लै पठानों के शिविर की ओर चला गया।

(अध्याय समाप्त)

(क्रमश:)
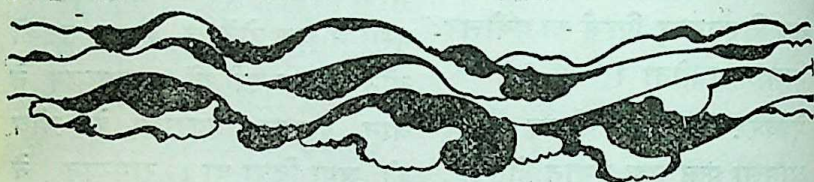
आजकल भारत में जो अलगाव की प्रवृत्ति दिखाई पडती है वह भाषा के ही कारण है। यदि संपूर्ण क्षेत्र में एक भाषा का व्यवहार होने लगे तो हम सारे देशवासी एक हो जाएँगे और फिर हमारी भावात्मक एकता को तोडनेवाला कोई भी तत्व सिर नहीं उठा सकेगा।

—काका साहब गाडगिल

भारतीय नव जागरण और स्वामी श्रद्धानन्द

श्री. विष्णु प्रभाकर

[श्रद्धानन्द राष्ट्रीय प्रचार व्याख्यान माला के सिलसिले में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार में दिया गया व्याख्यान]

स्वामी श्रद्धानन्द

अत्यन्त व्यस्तता के बीच मैंने यह षण लिखा। लिख चुका तो जैसे क्त की साँस ली। लेकिन साँस है मुक्ति कैसी। साँस तो निरन्तरता प्रतीक है। जोवन की अर्थात् ल की निरन्तरता की प्रतीक कल, ज और फिर कल, जीवन, मृत्यु और र जीवन, यही तो निरन्तरता है। यही स्मृति है। स्मृति हमें तरल ती है। हमारी सम्वेदना को ाती है। हमें पवित्र करती है कन हमारे चिन्तन को भी धार है। चिन्तन के अभाव में स्मृति 'आरती उतारना' है। मन का तो चिन्तन से ही उतरता है।

श्री. विष्णु प्रभाकर

राष्ट्रकवि की 'भारत भारती' का आधार यही चिन्तन है।

हम कौन थे क्या हो गये हैं, और
क्या होंगे अभी,
आओ विचारें आज मिल कर ये
समस्यायें सभी ॥

इतिहास हम क्यों पढ़ते हैं ? क्यों कि वह हमें कल और आज के सही सन्दर्भ बताता है। हमें वह दृष्टि देता है, जिससे हममें कल की गयी गलतियों को पहचाननें की समझ पैदा होती है। वही समझ आत्ममंथन की प्रेरणा बनती है। जो जाति आत्ममन्थन नहीं करती उसे जिन्दा रहने का कोई अधिकार नहीं है।

इतिहास का एक और नाम है स्मृति। आज के अन्धकार में स्मृति का प्रकाश तभी हमारा पथ आलोकित कर सकता है जब हम आत्ममन्थन करें। जैसा हमनें देखा है कि स्वामी श्रद्धानन्द जी की महानता का आधार सफलता नहीं रही है, जिसनें उन्हें अन्धकार से आच्छादित संसार में प्रकाश का पथ निर्माण करने की शक्ति दी थी।

निरन्तरता, स्मृति, इतिहास- इनमें एक और शब्द जोड़ दें गति। कोष में इन सब शब्दों के अलग अलग अर्थ हो सकते हैं पर जीवन की पाठशाला में जिस कोष का उपयोग होता है उसमें इन सब शब्दों का एक ही अर्थ है। और यह अर्थ सम्पूर्ण मानवीय अनुभव और संघर्ष से उपजता है।

अभी गति की बात कही है और जहाँ गति है वहाँ परि नियम है। इसलिये हमारा नि है कि स्वामी श्रद्धानन्द जी स्मृति हमारा पथ तभी आलो कर सकेगी जब हम अपने यह जायजा लेने की मानसि पैदा कर लेंगे कि आज निरन्तर परिवर्तित होते युग मूल्य, जिनके लिये वे जिये औ आज कितने सार्थक हैं। नहीं क्यों नहीं हैं ? हो सकते हैं तो हो सकते हैं ?

आइये, हम इन प्रश्नों से प्रश्न है तो तलाश है। ऋषियों ने जिस 'नेति' 'नेति' उद्घोष किया था वह यही है। आज के वैज्ञानिक युग में की तलाश, सत्य की मंजिल से महत्वपूर्ण है।

इसी तलाश की प्रेरणा नवजागरण के प्रतीक श्रद्धानन्द जी के प्रति हमारी श्रद्धा का ज्ञापन होगी:-

तलाशो तलब में वह लज्जत
दुआ कर रहा हूँ कि मंजिल

सम्मान्य कुलपति महोदय, प्राध्यापकवृन्द तथा अन्य साहित्य-प्रेमी स्नेही जनो,

सबसे पहले मैं विश्वविद्यालय के कुलपति सम्मान्य श्रीरामचन्द्र शर्मा तथा 'श्रद्धानन्द राष्ट्रीय प्रसार व्याख्यान माला' के संयोजक मित्रवर डाक्टर विष्णुदत्त 'राकेश' का हार्दिक आभारी हूँ जिन्होंने मुझे एक ऐसे राष्ट्रीय शिक्षण संस्थान में भाषण देने के लिए आमंत्रित किया जिसकी स्थापना स्वयं उस व्यक्ति ने की थी जो आज मेरे व्याख्यान का विषय है।

मैं आज क्या हूँ, मैं स्वयं नहीं जानता। जानने की विशेष चिन्ता भी नहीं है। जो हूँ, सो हूँ पर जो हूँ उसके निर्माण में किस-किस का योगदान रहा है इसका लेखा जोखा लेता हूँ तो सबसे पहले और सबसे ऊपर 'आर्य समाज' का नाम दृष्टि-पथ में आता है। मैं आज आर्यसमाज में 'नहीं हूँ पर आर्य समाज तो मेरे रक्त मांस में इस तरह रच-बस गया है कि मुक्ति पाना चाहूँ तो भी न पा सकूँ।

मुझमें आज जो कुछ भी, जितना कुछ भी शुभ और सुन्दर है वह मेरी अपनी कमाई नहीं है। वह तो मुझे आधुनिक भारत के दो युग, निर्माताओं की कृपा से सहज ही प्राप्त हो गया है। वे युग पुरुष हैं स्वामी दयानन्द और महात्मा गांधी। उन दोनों की पावन छाया मेरी सदा रक्षा करती रही है और करती भी रहेगी।

स्वामी दयानन्द के बाद आर्य-समाज के जिस दूसरे व्यक्ति ने मुझे सबसे अधिक प्रभावित किया वह स्वामी श्रद्धानन्द ही आज मेरे व्याख्यान का विषय है। जिन व्यक्तियों ने अनायास ही मुझे उनकी चरित्र रूपी गंगा में डुबकिया लगाने का अवसर प्रदान किया उनके प्रति आभार प्रकट करना मात्र शिष्टाचार होगा। मन की भावना को प्रकट करने वाली भाषा का तो अभी आविष्कार ही नहीं हुआ है।

इस भाषण में जो विचार प्रकट हुए हैं वे नितान्त मेरे हैं। प्रार्थना है कि उनके पीछे कोई गूढार्थ खोजने की चेष्टा आप न करें। हर व्यक्ति को देखने का एक ही कोण नहीं होता। अनेक होते हैं। उन अनेकों में मेरा भी 'एक' है, न इससे अधिक, न इससे कम।

तो इस क्षमा याचना के साथ अनुमति चाहता हूँ अपना भाषण शुरू करने की—

"विशाल शरीर में विशाल आत्मा" स्वामी श्रद्धानन्द इस सत्य के मूर्तिमान स्वरूप थे। महात्मा गांधी के शब्दों में, "वे अपने विश्वास का पालन करते थे। उन विश्वासों के लिये उन्हें कष्ट झेलने पड़े। भय के सामने उन्होंने कभी सिर नहीं झुकाया। उनसे बढ़कर बहादुर

अछूतों केलिए जितना उन्होंने किया उससे अधिक हिन्दुस्तान में किसी दूसरे व्यक्ति ने नहीं किया......"

आदमी मैं ने संसार में दूसरा नहीं देखा। मरने का उन्हें डर नहीं था क्योंकि वे सच्चे आस्तिक और ईश्वर भक्त थे। मैं साक्षी हूँ कि देश केलिये अपना शरीर भेंट कर देने की उन्होंने प्रतिज्ञा की थी। वे अनाथ बन्धु थे। अछूतों के लिए जितना उन्होंने किया उससे अधिक हिन्दुस्तान में किसी दूसरे व्यक्ति ने नहीं किया......"

उनके मृत्यु का वरण कर लेने के बाद गांधी जी ने लिखा था, "मृत्यु किसी समय भी सुखदायक होती है। उस वीर केलिये दुगुनी सुखदायक होती है जो अपने ध्येय और सत्य के लिये प्राणों का विसर्जन करता है। इसलिये मैं उनकी मृत्यु पर शोक मना सकता। उनसे और अनुयायियों से मुझे एक प्रकार ईर्ष्या होती है क्योंकि यद्यपि श्रद्धा जी मर गये हैं तथापि वे जीवित वे उससे भी अधिक सच्चे अर्थ जीवित हैं जब वे अपनी विशाल के साथ हमारे बीच में विचरण थे। जिस कुल में उनका जन्म और जिस देश के साथ उनका था वे उनकी इस प्रकार की शान मृत्यु पर बधाई के पात्र हैं। वे के समान जिये और वीर के स मरे.."

गांधीजी में मनुष्य को पहचा की अद्भुत क्षमता थी। अनेक मत के बावजूद उनका यह मूल्यांकन दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उ स्वामीजी को मात्र साहसी और पुरुष ही नहीं कहा है बल्कि भ जीतने वाला कहा है और जो को जीत लेता है वह घृणा को भी लेता है। वह सचमुच पुरुषों में और नरों में नर होता है अर्थात नारायण का सखा नर होता है

भारत के प्रथम प्रधान जवाहरलाल नेहरू अनेक नेता कटु आलोचक रहे हैं। वे अ भावनाओं को छिपाना नहीं ज

वृद्धावस्था में भी उनकी उन्नत सीधी आकृति, संन्यासी के वेश में भव्य मूर्ति, दीर्घकाया, शाहाना सूरत, अन्तर्भेदी दीप्त नयन और कभी-कभी दूसरों की कमज़ोरियों पर चेहरे पर उभर आनेवाली झुंझलाहट या गुस्से की छाया का गुज़रना—मैं इन जीवन्त मूर्ति को कैसे भूल सकता हूँ।

थे। अपनी आत्मकथा 'मेरी कहानी' में स्वामी श्रद्धानन्द का मूल्यांकन करते हुए उन्होंने उनका जो शब्द-चित्र प्रस्तुत किया है वह किसी भी शब्द शिल्पी केलिए ईर्ष्या का विषय हो सकता है। वह लिखते हैं—"विशुद्ध शारीरिक साहस का अथवा किसी भी शुभकार्य केलिये शारीरिक कष्ट सहन करने एवं उस कार्य केलिये मृत्यु तक की परवाह न करने वाले गुणों का मैं सदा प्रशंसक रहा हूँ। मैं समझता हूँ कि हम सभी व्यक्ति ऐसे अद्‌भुत साहस करते ही हैं। स्वामी श्रद्धानन्द में इस प्रकार का निर्भीकतापूर्ण साहस आश्चर्यजनक मात्रा में विद्यमान था। वृद्धावस्था में भी उनकी उन्नत सीधी आकृति, संन्यासी के वेश में भव्य मूर्ति, दीर्घकाया, शाहाना सूरत, अन्तर्भेदी दीप्त नयन और कभी-कभी दूसरों की कमजोरियों पर चेहरे पर उभर आनेवाली झुंझलाहट या गुस्से की छाया का गुजरना—मैं इस जीवन्त मूर्ति को कैसे भूल सकता हूँ। प्रायः यह तस्वीर मेरी आंखों के सामने आ खड़ी होती है।"

(क्रमशः)

जैसे अंग्रेज अपनी मदरी जवान अंग्रेज़ी में बोलते और सर्वथा उसे ही व्यवहार में लाते हैं वैसे ही मैं आप से प्रार्थना करता हूँ कि आप हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा बनने का गौरव प्रदान करें।

महात्मा गांधी

अति सर्वत्र वर्जयेत्

डॉ० वी. गोविन्द शेनाय

गिरि रावु सरकार के अकाल विभाग के डायरेक्टर हैं । लाख कोशिश करने पर भी वे दफ्तर में वक्त पर पहुँच नहीं पाते जिसका उन्हें सचमुच ही बडा दुःख है । हाँ, दफ्तर से घर लौटने में वे देर कदापि

लाख कोशिश करने पर भी वे दफ्तर में वक्त पर पहुँच नहीं पाते जिस का उन्हें सचमुच ही बडा दुःख है । हाँ, दफ्तर से घर लोटने में वे देर कदापि नहीं करते ।

नहीं करते । घर में पत्नी के काम-काज में हाथ बंटाने में उन्हें विशेष आनंद मिलता है । खान पान और सजधज में वे बहुत ही सजग हैं यद्यपि अकसर इसे दोष ही कहते हैं । पूजा पाठ और संध्या वंदन वे नियमित रूप से करते हैं और विशेष अवसरों में मंदिर में जा भक्ति का फूल चढाते हैं और उपस्थित भक्तों को दान दक्षिण का महत्व समझाते हैं । धन को हाथ का मैल कहते हैं, परन्तु उसे धो, पोंछ डालने की कल्पना मात्र से अधीर हो उठते हैं। राजनीतिक विचारधाराओं में सोशलिसम उन्हें विशेष प्रिय है और इस का विशेष अवसरों में गुणगान किया करते हैं दफ्तर में मिलनेवालों से वे काम की बात अवश्य करते हैं; साथ ही धर्म और सोशलिसम की भी। घर पर उन से प्रायः वे ही लोग मिलते हैं जो असल में उन की पत्नी से मिलना चाहते हैं। इच्छा न होने पर भी इन से भी वे धर्म और सोशलिसम की बातें करते हैं। दफ्तर में ऊपरी आय की व्यवस्था इतनी शांत, स्निग्ध और निश्चल है कि किसी को इस का आभास तक नहीं

दफ्तर में ऊपरी आय की व्यवस्था इतनी शांत, स्निग्ध और निश्चल है कि किसी को इस का आभास तक नहीं होता; शिकायत की बात तो बहुत दूर की है।

होता; शिकायत की बात तो बहुत दूर की है। परन्तु एक दिन अचानक अपराह्न में एक मरियल सी औरत अपनी वसी ही बच्ची के साथ दफ्तर के द्वार पर आ धम्म से बैठ जाती है। अवकाश प्राप्त चपरासी की औरत है। मामला पेंशन का है। पर्चे फाइलों में अटके हुए हैं, टस से मस नहीं होते। डायरेक्टर साहब की समझ में बात आती है। दफ्दर की व्यवस्था बेचारी नहीं जानती, जानती होती तो भी बात उसके वश की नहीं है। डायरेक्टर साहब एकदम गुस्से में समग्र दफ्तर को शुद्ध अंग्रेज़ी में गालियाँ देते हैं। कहते हैं—वह व्यवस्था ही किस काम की जिस में इनसानियत ही न हो! पर्चे अनायास उभर आते हैं और मामले का निपटारा होता है। सब की जान में जान आती है। इतने में फोन में समाचार मिलता है कि उन के मित्र पशुकल्याण विभाग के डायरेक्टर शंकरशर्मा ने इस्तीफा दिया है और वैरागी हो गये हैं। उन का अतिशय सत्यवाद ही कारण है। सरकार और सहयोगी ही नहीं, इष्टमित्र सगे संबंधी सभी, उन के अपने घरवाले भी। अति से अवनति

उन पर रिश्वत न लेने का गुप्त अभियोग है।

ही होती है। उन पर रिश्वत न लेने का गुप्त अभियोग है। गिरि राव के मुंह से निकल पडता है—'अति सर्वत्र वर्जयेत।' ★

V/13-A
ओल्लूरकरा, त्रिचूर, केरल

दो आँखें हजार नजारे

डा० एन. ई. विश्वनाथ अय्यर

(गतांक से आगे)

दिन के खुलने की पूरी तैयारी हो चुकी है। पर नियान-बत्ती की रोशनी से अब भी प्रकाश बिखेरती एक देशी रेस्टारंट से "वेंकटेश सुप्रभातम" का "उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द" सुनाई देने लगा है। पथ के सूनेपन को समाप्त करते हुए इक्के दुक्के लोग सडक से चलते रेस्टारंट में घुसते हैं। संभवत: रात भर अस्पताल के कमरे में दर्द से कराहते मित्र या बंधु के पास रात जागते जागते बिताकर कुछ ताज़ा होने केलिए ये आये हों।

अस्पताल की खाटों पर दर्द का आलम बिखरा पडा है। बाहर अच्छी सेहत की हालत में डींग हाँकता, एक दूसरे की टाँग खींचता, अपने को अनंग या रतिरानी

अपनी अपंगता में बच्चों की तरह दूसरों की ही मदद से दैनिक क्रियाकलाप कर पाता है, तब उसका सारा "अहम" दूर हो जाता है। उसकी असली दीन मूर्ति खुलती है।

समझता व्यक्ति जब अस्पताल की खटिया पर दर्द के मारे पडा पडा कराहता है, अपनी अपंगता में बच्चों की तरह दूसरों की ही मदद से दैनिक क्रियाकलाप कर पाता है, तब उसका सारा "अहम" दूर हो जाता है। उसकी असली दीन मूर्ति खुलती है।

देखते देखते दिन निकल आ चुका। लोगों को लेकर सरकारी लोक-

इनके सेवाभाव के सामने नतमस्तक हूँ । मगर जब अनुभवी मित्रों से सुनता हूँ कि इन व्यापारियों के हथकंडे कितने भीषण हैं तब रोंगटे खडे हो जाते हैं ।

ग्विट्न आने लगे हैं । रात की ड्यूटी खतम कर घर जानेवाले कम-आनेवाले अधिक । निजी गाडियाँ छोटी संख्या में ही सही अपनी बुर्जुआ शान दिखाती आ रही हैं । मेरे दरवाज़े पर अखबारवाला दस्तक दे रहा है । इस भवन में रहते हुए मुझे संसार का सुख दुख मनानेवाला यह संजय मेरा परम हितैषी है । इसलिए उसकी बातें सुनूँ !... ..

घंटे डेढ घंटे के अंतराल के बाद मैं फिर से सामने का नजारा देखने में व्यस्त हूँ । सडक पर स्थित सारे लॉज, होटल एवं दूकानें सजग हो चुकी हैं । यह अस्पताल क्या शुरू हुआ इसके रोगियों की सेवा केलिए आये लोगों को शरण देनेवाले बीसों लॉज बने हैं ! लॉजों के साथ होटल भी ! ऊँचे स्तर के शाकाहारी मांसाहारी होटलों से लेकर ढाबा टाइप तक के भोजनालय ! कितनी सुंदर उक्ति है— 'आवश्यकता आविष्कार की जननी है'' । दूध चूल्हे पर गरम कर देनेवाले, केरलीय सस्ता नाश्ता देनेवाले, वातानुकूलित कक्ष में जेबानुकूल नाश्ता देनेवाले होटल तक हैं । यहाँ दूकानों पर छोटे मोटे बरतन-करछुल-चटाई-तकिया-हर चीज़ देनेवाले लोकसेवक व्यापारी बठे हैं । दवाई की दूकानों की तो कतारें हैं । इनके सेवाभाव के सामने नतमस्तक हूँ । मगर जब अनुभवी मित्रों से सुनता हूँ कि इन व्यापारियों के हथकंडे कितने भीषण हैं तब रोंगटे खडे हो जाते हैं । पैसे का लोभ हर जगह आदमी को शैतान बना देता है । जब हम सुनते हैं कि काशी के मणिकर्णिकाघाट पर अध-जली लाश को गंगा में फेंककर बाकी लकडी बचानेवाले महान पुरुष हैं तब इस लोभी प्रवृत्ति की व्यापकता और खुल जाती है ।

मेरी खिडकी के सीधे सामने फलवालों की दूकानें हैं । रंगीन आम, अंगूर (हरे और बैंगनी रंग के) संतरे, अमरूद—वगैरह, सजा रखे हैं । रोज़ नये नये टोकरों में फल लाये जाते हैं । मैं साहित्यकार कल्पना के बल से उन फलों का नैवेद्य अपने उदर देवता को चढाता हूँ । मगर

बेचारे फलवाले यह मर्म नहीं पहचानते! स्कूल जाते बालगोपाल और वर्दीधारी किशोरियाँ भारी बस्ता और उससे भी बडी उमंग लिये चहकते हुए चल रहे हैं! अस्पताल के छोटे डाक्टर—डाक्टर छात्र-डाक्टरनी छात्राएँ श्वेतवस्त्राच्छादित वेष में परस्पर मधुर आलाप करते वातानुकूलित शाकाहारी होटल की तरफ जा रहे हैं। वहाँ मीठे नमकीन के साथ जवानी का मुसकारन-शरारती सात्विक एवं आंगिक अनुभाव–आदि का मज़ा मुफ़त में लूटने का मौका उन्हें नई स्फूर्ति देता है। उन में भी व्यक्तिगत ईर्ष्या-द्वेष फिलमी स्टाइल में प्रकट होते होंगे। इन में से कई लोगों के मुहब्बत के मर्ज़ की दवा शिक्षाक्रम पूरा करने के पहले ही हो जाती है। कभी रूमालों में ही बात खतम होती है। कभी तो जाति-धर्म के संकुचित दायरे तोड ये जोडी बनकर अपने अभिभावकों को नमस्कार करने पहुँच जाते हैं। अभिभावक भी मर्म पहचानते हैं।

> दुबाईवाले केरल के आम लोगों के लिए वी. ऐ. पी. हो गये हैं।

भीड-भम्मड, भोंपाहारन का यह दौरा चलता रहता है। बीच में कोई मोटर-गाडी ऊपर डिकी में भारी भारी विदेशी पेटि लिये चलती है तो मेरे मित्र उठते हैं—कोई दुबाईवाला जा है। नगर के हवाई अड्डे से भीतरी गाँवों को जाने की आम यहीं से जाती है। दुबाईवाले के के आम लोगों के लिए वी. ऐ. हो गये हैं।

दोपहर के अनिवार्य और नि विश्राम की घडियाँ खटिया बीतती हैं। कुछ अपने दुःख-दर्द स्मरण और आलापन बारंबार क दूसरों से हमदर्दी पाना या आदमी को बडा प्रिय लगता दूसरे लोग अधिकतर औपचारि के नाते या शिष्टतावश ह दुःख-दर्द सुनते या सुनने का अ करते हैं। यह बहुत कम ही पह जाता है। शायद पहचानते हुए

> शायद पहचानते हुए हम इस नाटक में अपनी अप भूमिका अदा करते हैं।

तरुणियाँ व अधेड स्त्रियाँ रोगी की ओर जितना ध्यान देती हैं उससे कहीं अधिक ध्यान वार्ड के महिला-समाज और पुरुष-दल को प्रभावित करने पर देती हैं।

भी इस नाटक में अपनी अपनी भूमिका अदा करते हैं।

हमदर्दी का पूरा दृश्य शामको चार बजते बजते शुरू होता है। आँखों को सेंकने का—अपने दुःख-दर्द को भुलाने का अच्छा मौका उसी समय मिलता है। मामूली लोग सार्वजनिक परिवहन से या पैदल ही आ जाते हैं। धनी नागरिक परिवार अपनी या किराये की मोटार गाडी में फाटक के भीतर पधारते हैं। लगता है कि बाराती हैं—एक से एक बढकर बन ठनकर सज धजकर आते हैं। संदेह होता है, ये अपने दोस्तों, रिश्तेदारों के दर्द-दुःख से दुःखी हो उन्हें सांत्वना के शब्द सुनाने आते हैं या व्यंग्य करने कि देखो, हम लोग कितने स्वस्थ एवं सजे धजे है। इन में से कुछ जवानी के शृंगार के साथ कलाई पर सावरेन की बीसों चूडियाँ, गले पर सौटंच का लंबा व भारी हार, बदन पर विदेशी रेशमी साडी—जिसपर सुगंधी स्प्रे भी—धारण करके आती तरुणियाँ व अधेड स्त्रियाँ रोगी की ओर जितना ध्यान देती हैं उससे कहीं अधिक ध्यान वार्ड के महिला-समाज और पुरुष-दल को प्रभावित करने पर देती हैं। बीमार को शायद इस बात का कुछ कुछ आत्मदोष होगा है कि मेरे बंधुजन भी फोरेन में हैं। इन सहानुभूतिवालों के आगमन से पूरे अस्पताल में दो ढाई घंटों तक शोर-शराबा भर जाता है। दर्द की दुनिया में भी बच्चों की किलकारियाँ कुछ खुशी लाती हैं, कोई मित्र या बंधु आप से भी मिलने आये तो आप भी दुःख-दर्द की अपनी परिस्थिति भूल जाते हैं। डॉक्टरों-नर्सों की डाँट का भी डर नहीं रहता।

x x x

जल्दी ही सूर्यास्त हो जाता है। सडकों के दीपस्तंभ फिर से नियाण व साधारण बत्तियों से जगमगाने लगते हैं। सडक पर फिर से आने जानेवालों की भीड लगी है। निजी और सार्वजनिक परिवहन परस्पर होड लगाकर एक दूसरी दिशा में भाग रहे हैं। सबसे अधिक संख्या में आटोरिक्षा व स्कूटर भाग रहे हैं। आटोरिक्षा तो पैदल यात्रियों को

बेकार क्षुद्र प्राणी मानकर और बडे बडे परिवहनों के बीच में से निकलते —ट्राफिक-सिपाही को भी चकमा देते तेज़ी से बढ़ते हैं। हमारे नगरों के मध्य वर्ग के ये परिवहन जितने वरदान हैं उतने ही अभिशाप भी। लोगों की भीड का एक रोचक दृश्य हर तीसरे या पाँचवें मिनिट में नज़र आता है। हर तीसरे या पाँचवें मिनिट पर दो दो कभी तीन सार्व–जनिक परिवहन स्टैंड पर रुक आ जाते हैं। स्त्री-पुरुष धक्कामुक्की करके इस दानव के मुंह में प्रवेश करते हैं। चंद ही क्षणों में उसकी भूख शांत हो जाती है और वह घरधराता आगे बढ जाता है।

x x x

ये आँखें मानव जीवन की इस अनंत यात्रा से बहुत कुछ सीखती हैं। रंगबिरंगे दृश्य देखते देखते अपना दर्द भी भुलाता जाता हूँ। सूर्यास्त के बाद सडकों और दूकानों की बत्तियाँ फ़िर से जगमगाती हैं। लोगों की चहलपहल बढी है। रेडियो से समाचार सुनाई दे रहे हैं। भारत ने जाफनावासी पीडित तमिल भाषी भारतीयों को राहत पहुँचाने के लिए अपने हवाई जहाज़ों और सैनिक वायुयानों का सहारा लिया है। इस व्यवहार पर तमिल नाडु के निवासी केंद्र सरकार का अभि[...] कर रहे हैं। रेडियो पर [...] मनोरंजक रूपक भी सुनाई [...] इस में सुखी पडोसी नवविवा[...] पति पत्नी के बीच में फूट [...] करानेवाले परोपकारी पति[...] की कथा थी। अंत में कलई [...] पर परस्पर क्षमायाचना के [...] सबकुछ 'शुभं" हो गया। का[...] रेडियो सुनते हुए भी आँखें [...] की तरफ़ देख रही हैं।

हज़ार नज़ारे आँखों के [...] से गुज़र चुके हैं। रात के तीन [...] घंटे बीते हैं। प्रकृति फिर से [...] काली रेशमी चादर से सारी [...] राजि को प्यार से ओढती जा[...] है। जहाँ तहाँ किसी किसी [...] की बत्तियाँ अंधेरे में जुगनू [...] लगती हैं। इसका अपवाद [...] दीखता एक ऊँचा लाल [...] है जो जगमग करता है। सुना [...] कि वह ट्रिवेंड्रम के दूरदर्श[न] स्तंभ है जहाँ से सांझ से [...] आधी रात तक प्रत्यक्ष रंगीन [...] और ध्वनि का संप्रेषण हो[...] इसी से विज्ञान के इस वरदा[न] देखने का सौभाग्य भी [...] आँखों को सुलभ हो गया है।

[समाप्त]

पत्रिका परिचय

संग्रथन

केरल से एक नयी हिन्दी मासिक पत्रिका का भी प्रकाशन आरंभ हुआ है 'संग्रथन' नाम से । इसके प्रथम अंक (जुलाई 1987 अंक) का लोकार्पण 31-7-'87 को तिरुवनन्तपुरम में आयोजित एक सार्वजनिक सम्मेलन में केरल के खेल व युवाकार्य मंत्री श्री. ए. नीललोहितदासन नाटार ने केरल हिन्दी प्रचार सभा के मंत्री श्री. एम. के. वेलायुधन नायर को एक प्रति प्रदान करते हुए किया। (सम्मेलन का विवरण इसी अंक में अन्यत्र पढें)।

संग्रथन हिन्दी विद्यापीठ, केरल की मुखपत्रिका है। केरल के निष्ठावान हिन्दी कार्यकर्ता, श्री. पी. जी. वासुदेव जी द्वारा संस्थापित यह संस्था कई वर्षों से तिरुवनन्तपुरम में एक हिन्दी माध्यम महिला उपाधि महाविद्यालय भी चलाती आ रही है जो महिलाग्राम विद्यापीठ, प्रयाग से संबद्ध है।

संग्रथन मासिक पत्र के संस्थापक संपाद भी श्री. पी. जी. वासुदेवजी हैं। वे केरल के विख्यात हिन्दी अध्यापक, लेखक, अनुवादक और पत्रकार भी हैं।

पत्रिका के संपादक डा० विश्वम श्री. पी. जी. वासुदेवजी के सुपुत्र हैं और तिरुवनन्तपुरम के सरकारी विमेन्स कालेज में प्राध्यापक हैं। संपादक मंडल में डा० के. सुकुमारन, प्रो० मात्यु मावेली, प्रो० टी. के. भास्कर वर्मा, प्रो० तिरुमला चन्द्रन, श्री. एस. सुकुमारन नायर, डा० एस. तंकमणी अम्मा और प्रो० एस. पद्मकुमारी है जिन में अधिकांश केरल ज्योति के पाठकों केलिए सुपरिचित हैं। सह संपादक हैं श्री. जी. विष्णुगुप्तन और श्रीमती टी. रत्नकुमारी अम्मा।

संग्रथन की दृष्टि और लक्ष्य प्रथम अंक के संपादकीय में यों स्पष्ट किया गया है।

"और आज? तो हम बीसवीं इक्कीसवीं के संक्रांतिकाल में बीसवीं के अंतिम चरण में हुए निराशा जनक आघात के बोझ से लदे झुके दिल को थामे इक्कीसवीं के स्वप्निल मणि-कांचन गोपुर द्वार की ओर उन्मुख, लेकिन उस से परे कल्पित आशा

और प्रतीक्षा, उत्साह और उल्लास के साथ तथाकथित-कंप्यूटर के स्वर्ग-राज्य में प्रवेश करने केलिए उतावले हो रहे हैं। इस उथल-पुथल में हम संग्रथन व समाकलन को भूल बैठे। इसी वजह से आये-दिन देश में विघटनवाद और धर्ममूल उग्रवाद ज़ोर पकड रहे हैं। उसी वजह से जातीयता व सांप्रदायिकता के विष-वृक्ष पनप उठे हैं। इसी वजह से समाज में दुराचार और भ्रष्टाचार का बोबाला हो रहा है। उपरोक्त प्राण-घाती दूषणों को उखाड दूर फेंकने का एकमात्र उपाय संग्रथन द्वारा देश में भावात्मक समाकलन लाना है। यही "संग्रथन" की दृष्टि है।

'संग्रथन' इस भावात्मक समा-कलन को साध्य और चिरस्थाई बनाना चाहता है, देश की विभिन्न भाषाओं का और उन भाषाओं के साहित्यों का संग्रथन करके। उस भावात्मक समाकलन का माध्यम होगा भारत के बहुजन की भाषा हिन्दी।

"संग्रथन" के कष्टसाध्य प्रयास को, पाठकों से प्रार्थना है, अपने सहयोग एवं सहायता से सहज-सरल बनायें। और विभिन्न भारतीय भाषाओं में प्रकाशित ऐसी रचनाओं को, जो भावात्मक समाकलन में सहायक हों, संग्रथित कर और जन-वाणी हिन्दी में रूपांतरित करा कर प्रकाशित करना 'संग्रथन' का मुख्य लक्ष्य है। इस प्रयास में भी विज्ञ पाठकों का हृदय से सहयोग अपेक्षित है।"

संग्रथन की दृष्टि और लक्ष्य निश्चय ही श्रेष्ठ हैं और राष्ट्र-हितकारी हैं।

संग्रथन का प्रथम अंक विविध प्रकार की सुपाठ्य सामग्रियों से सुसज्जित है यथा -- स्मृतिशेष अज्ञेय जी के अनोखे व्यक्तित्व और अनूठे कृतित्व पर प्रकाश डालनेवाले दो लेख (एक डॉ० तंकमणि अम्मा का और दूसरा श्री० जी. कमलाधरन का) तीन कवितायें (डॉ० एन. चन्द्रशेखरन नायर, डॉ० रामचन्द्रन नायर और प्रो०टी.के. भास्कर वर्मा की) एक कहानी (प्रो० एस. पद्मकुमारी की) एक लघु कथा (श्री. के. वामदेवन की)। इन के अलावा तीन स्थायी स्तंभ भी हैं-- (1) विज्ञान जगत, (2) आज के बच्चे, और (3) सिनेमा।

हम संग्रथन का हार्दिक स्वागत करते हैं और कामना करते हैं कि संग्रथन अपने लक्ष्य पर कदम कदम बढाता जाये। ❀

राजभाषा हिन्दी: केरल में कहाँ तक?

बैंकों की नगर राजभाषा
कार्यान्वयन समिति, तिरुवनन्तपुरम

तिरुवनन्तपुरम बैंकों की नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की पाँचवीं बैठक दिनांक 29-4-1987 को केनरा बैंक अंचल कार्यालय, तिरुवनन्तपुरम में संपन्न हुई। केनरा बैंक के उप महाप्रबंधक एवं समिति के अध्यक्ष श्री. बी. ए. प्रभु ने बैठक की अध्यक्षता की। भारत सरकार के गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग के उपसचिव श्री. वी. ए. कोहली इस अवसर पर मुख्य अतिथि थे। उपस्थित विशिष्ट व्यक्तियों में कई बैंकों के कार्यपालक अधिकारियों के अलावा श्री. रामचन्द्र मिश्र, उपनिदेशक (*कार्यान्वयन*). राजभाषा विभाग, दक्षिणी क्षेत्र, बेंगलूर, डॉ० जोस ओस्टिन, सहायक निदेशक, हिन्दी शिक्षण योजना, तिरुवनंतपुरम, श्री.के.वी.रामचन्द्रन, उप मुख्य अधिकारी, भारतीय रिज़र्व बैंक, तिरुवनन्तपुरम, श्री. एम. के. वेलायुधन नायर, सचिव, केरल हिन्दी प्रचार सभा, तिरुवनन्तपुरम आदि थे। बैठक के सहभागियों की सूची परिशिष्ट में दी गयी है।

केनरा बैंक के सहायक महाप्रबंधक श्री. एस. एस. भण्डारकर ने सभा का स्वागत किया। केनरा बैंक के राजभाषा अधिकारी एवं समिति के सचिव श्री. एम. पी. गोपालकृष्णन ने समिति के क्रियाकलापों एवं उप-समिति की सिफारिशों के बारे में रिपोर्ट प्रस्तुत की।

अपने प्रारंभिक वक्तव्य में उप-सचिव ने, हिन्दी के कार्यान्वयन के क्षेत्र में और भी संगठित प्रयास करने के लिए सदस्य बैंकों से आह्वान किया। उन्होंने हिन्दी को बढ़ावा देने के लिए सरकार द्वारा शुरू किये गये विभिन्न कार्यक्रमों पर प्रकाश डाला

श्री. वी. ए. कोहली
उप सचिव, राजभाषा विभाग
गृहमंत्रालय, भारत सरकार

चर्चाओं की शुरूआत करते हुए श्री. रामचन्द्र मिश्र ने बताया कि यह समिति दक्षिण भारत में कार्यरत 20 न. रा. भा. का समितियों में से एक अग्रणी स्थान रखती है। उन्होंने आग्रह किया कि ज्यादातर कार्यशालायें चलायी जायें और सहभागियों से फीड-बैंक प्राप्त किया जाय।

समिति ने पाया कि हिन्दी में पत्राचार को बढाने की जरूरत और अवसर है। श्री. एम. के. वेलायुधन

हिन्दी में पत्राचार को बढाने की जरूरत और अवसर है।

नायर ने बताया कि कई सदस्य बैंकों ने हिन्दी टाइपराइटर नहीं खरीदे हैं। उन्होंने हिन्दी टंकण में टैपिस्टों को प्रशिक्षित करने की ज़रूरत पर प्रकाश डाला।

इसकी ओर संकेत किया गया कि उपनिदेशक, राजभाषा विभाग, बम्बई के अनुदेश पर वर्ष 1985 के न. रा. भा. का समिति के पुरस्कारों के लिए वर्ष 1986 में इस समिति ने बैंकों के नाम की सिफारिश की। श्री. कोहली ने स्पष्ट किया कि ये पुरस्कार क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन के अवसर पर दिये जाते हैं।

यह बात समिति के समक्ष लाई गई कि नगर में स्थित सदस्य बैंकों के अधिकांश कर्मचारियों को हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान है, ऐसा समझा जाता है। इस राज्य में पाठ्यचर्चा में हिन्दी एक अनिवार्य विषय है, जिसके फलस्वरूप हिन्दी का प्रयोग करने में उन्हें किसी प्रकार का प्रोत्साहन नहीं मिलता। डॉ॰ जोस ओस्टिन ने बताया कि देश के इस भाग में स्कूलों कॉलेजों में सिखाई जानेवाली हिन्दी का स्तर, उत्तर भारत की तुलना में बहुत कम है। इसके अलावा कोई हिन्दी परीक्षा पास करने पर बैंक के कर्मचारियों को एकमुश्त नकद

नवभारत हिन्दी कॉलेज, तिरुवनन्तपुरम के संस्थापक एवं केरल हिन्दी प्रचार सभा की निर्वाहक समिति के सदस्य श्री. के. पी. के. पिषारटी, जिन का अभिनन्दन नवभारत हिन्दी कॉलेज की रजत जयन्ती के अवसर पर 13-6-1987 को वी. जे. टी. हॉल, तिरुवनन्तपुरम में आयोजित समारोह में किया गया। समारोह में दिये गये मुख्य भाषणों का सारांश इस अंक में दिया गया है।
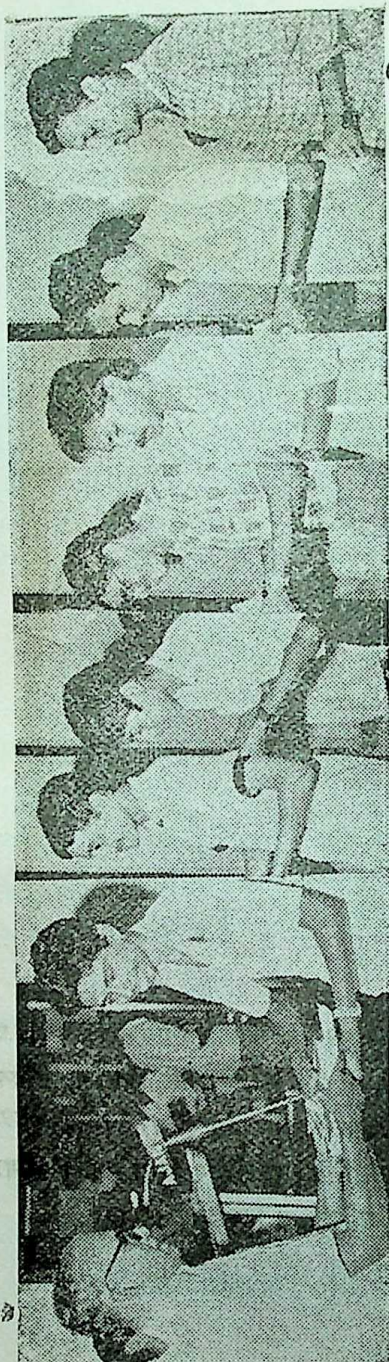
स्व० के. वासुदेवन पिल्लै के 25 वें स्मृतिदिवस के अवसर पर केरल हिन्दी प्रचार सभा द्वारा राज्यस्तर पर आयोजित हिन्दी साहित्यिक प्रतियोगिताओं के पुरस्कार वितरण कर रहे हैं केरल विधान सभा के अध्यक्ष श्री. वर्कला राधाकृष्णन ।

अपने दैनंदिन कार्य में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने केलिए, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के उन कर्मचारियों को कोई प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए, जिन्हें हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान है।

पुरस्कार मिलते हैं, जब कि केन्द्र सरकार के कर्मचारियों को वेतन-वृद्धि दी जाती है। समिति ने महसूस किया कि अपने दैनंदिन कार्य में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने केलिए, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के उन कर्मचारियों को कोई प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए, जिन्हें हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान है। यह निश्चय किया गया कि उचित स्तर पर निर्णय लेने के लिए इस मामले को भारत सरकार को सूचित किया जाय।

चर्चाओं का समापन करते हुए डॉ० जोस ओस्टिन ने हिन्दी पाठ्यक्रमों और हिन्दी टंकण एवं आशुलिपि में प्रशिक्षण के लिए तिरुवनन्तपुरम में उपलब्ध विभिन्न सुविधाओं का वर्णन किया। उन्होंने सदस्य बैंकों से प्रशिक्षण सुविधाओं का लाभ उठाने और ज्यादा से ज्यादा कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने का आह्वान किया।

नाबार्ड के सहायक विकास अधिकारी (राजभाषा) श्री. राजेन्द्र सिंह नेगी ने अध्यक्ष, मुख्य अतिथि और अन्य मौजूद व्यक्तियों के प्रति आभार व्यक्त किया।

प्रस्तुति : श्री. एम. पी. गोपालकृष्णन

तिरुवनन्तपुरम नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति

तिरुवनंतपुरम नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की दसवीं बैठक तारीख 29-6-1987 को समिति के अध्यक्ष और महा डाकपाल श्री० सी. जे. मात्यु की अध्यक्षता में संपन्न हुई। समिति के सदस्य-सचिव, श्री. डी. कृष्ण पणिक्कर ने निष्पादन रिपोर्ट पेश करते हुए सदस्यों को इस बात पर बधाई दी कि 1986-87 के वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्य यथासंभव प्राप्त कर लिया गया है। साथ ही, कार्यालयाध्यक्षों से उन्होंने यह अनुरोध किया कि वर्ष 1987-88 के कार्यक्रम को भी पूरा-पूरा अमल करने केलिए आवश्यक अग्रिम कार्यवाई अभी से शुरू करें। इस बीच, उन्होंने इस बात पर खेद व्यक्त किया कि चंद सदस्य कार्यालय इस कार्यक्रम से अछूत रह गये हैं। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि सरकारी नीति

को ईमानदारी से अमल करने में पसन्द-नापसन्द का सवाल ही नहीं। सरकार की भाषा नीति को सुचारू रूप से अमल करना, हर सरकारी अधिकारी और कर्मचारी का कर्तव्य है। इससे बढकर यह राष्ट्र हित में है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि इस संबन्ध में सदस्य कार्यालयों में कोई भूल चूक न होगी। उन्होंने चाहा कि हिन्दी में मूल पत्र-व्यवहार का
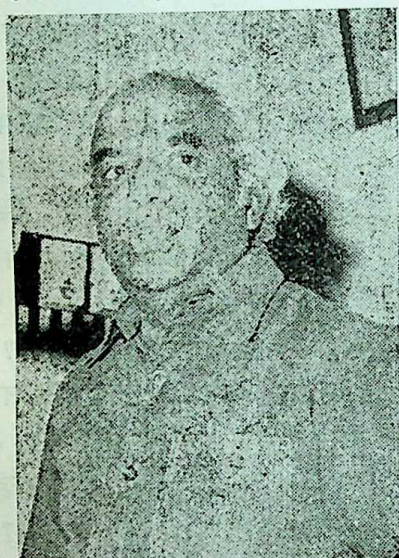
श्री. सी. जे मात्यु

प्रतिशत दिन व दिन, हर दफ्तर में बढता जाए ताकि इस समिति को प्राप्त गौरवपूर्ण स्थान बने रहें।

अध्यक्षीय भाषण में श्री. सी. जे. मात्यु ने, हिन्दी पढने और हिन्दी में काम करने दिये जा रहे

हिन्दी में मूल पत्र-व्यव[...] का प्रतिशत दिन व [...] हर दफ्तर में बढता जा[...]

वित्तीय प्रोत्साहनों की राशि ब[...] और शर्तों को ढीला करके [...] अधिक बनाये जाने, तथा केर[...] मेट्रिक परीक्षा और हिन्दी [...] योजना की परीक्षाओं की [...] करके, उनकी बराबरी नि[...] किये जाने की आवश्यकता पर [...] प्रकाश डाला।

इसके अलावा, निकट नि[...] के अभाव में, कार्यान्वयन के अ[...] और आधे-अधूरे हो जाने की [...] वना से बच जाने केलिए, राज[...] कार्यान्वयन स्कंध के अधिक का[...] खोले जाने की आवश्यकता [...] अध्यक्ष महोदय ने राजभाषा [...] का ध्यान दिलाया।

हर एक राजपत्रित एक[...] एक-एक हिन्दी टाइपराइटर [...] करा देने और वहाँ हिन्दी के [...] देखने केलिए एक-एक कर्मचा[...] विशेष वेतन मंजूर करने की, [...] तार विभाग की नीति का उ[...] देते हुए अध्यक्ष ने सुझाव दि[...] दूसरे विभाग भी ऐसा करके, [...] के प्रगामी प्रयोग को आगे ले [...]

केरल की मेट्रिक परीक्षा और हिन्दी शिक्षा योजना की परीक्षाओं की तुलना करके, उनकी बराबरी निर्धारित किये जाने की आवश्यकता पर पर्याप्त प्रकाश डाला ।

सदस्यों ने उपर्युक्त बातों से सहमति प्रकट करते हुए यह ठान ली कि व्याकरण की अशुद्धियों की ज़्यादा परवाह किये बिना सबको हिन्दी में टिप्पण और आलेखन का काम करना चाहिए। यह आम राय थी कि लक्ष्य-प्राप्ति को सुनिश्चत करने, अधिकारियों और कर्मचारियों को असरदार पुनश्चर्या पाठ्यक्रम में कार्यशाला टाइप किंतु उच्च स्तर का व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जाना है ।

सदस्यों ने एकमत से यह मांग की कि "ग" क्षेत्र के कार्यालयों में भी दूसरे क्षेत्रों के बराबर हिन्दी पदों का सृजन किया जाए, क्योंकि अनुवाद आदि की आवश्यकता "ग" क्षेत्र में, "क" और 'ख' क्षेत्रों की अपेक्षा कई गुना ज्यादा है।

फ़िलहाल पत्रादि पहले अंग्रेजी प्रस्तुति : में ज़ारी करके लिखा जाता है और हिन्दी पाठ बाद में जारी किया जाएगा। समिति की तरफ से सदस्य—सचिव श्री. पणिक्कर नें सुझाव दिया कि सभी संबंधितों को आदेश दिया जाए कि पत्रादि पहले हिन्दी में जारी किया जाए और बाद में अंग्रेज़ी पाठ ज़ारी किया जाए क्योंकि हिन्दी ही राजभाषा है, उसे ही प्राथमिकता दी जानी है। भारत सरकार के उपसचिव

श्री. बी. ए. कोहली
उप सचिव, राजभाषा विभाग
गृहमंत्रालय, भारत सरकार

श्री वीर अभिमन्यु कोहली ने समिति के क्रियाकलापों पर संतोष प्रकट करते हुए बताया कि सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग का

'ग' क्षेत्र के कार्यालयों में भी दूसरे क्षेत्रों के बराबर हिन्दी पदों का सृजन किया जाए।

कार्यक्षेत्र और बढाया जाए। लक्ष्य प्राप्ति में पीछे रह गये दफ्तरों को सघन प्रयास करके आगे खडे दफ्तरों के बराबर आने की जरूरत पर उन्होंने ज़ोर दिया। हिन्दी को अमल करने के वास्ते, प्रोत्साहन योजनाओं के असरदार कार्यान्वयन का आह्वान करते हुए उन्होंने सबका उत्साह बढाया।

प्रस्तुति : डॉ. कृष्ण पणिक्कर
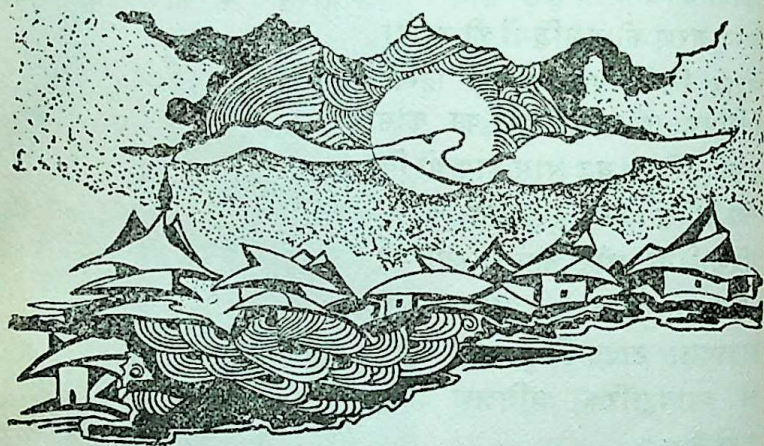
किसी भी भाषा को किसी विशिष्ट धर्म, संप्रदाय या जाति के साथ जोडने में बहुत बडा धोखा है। न उर्दू मुसलमानों की है, न पंजाबी सिक्खों की है; और न संस्कृत हिन्दुओं की है।

—दादा धर्माधिकारी

कविता

चीत्कार

श्री. जगदीश हरिजन

वर्षों से देखता आ रहा हूँ
छत से लटककर
तुम्हें नाचते हुए,
अपनी फैली भुजाओं से
तीनों लोक चारों दिशाओं को
आँकते हुए।
बहुत कोशिश रहती है तुम्हारी
कि आदमी का दिमाग ठंडा रहे
किसी तरह की गर्मी में
बौखला कर सनके नहीं,
धर्म-भाषा-क्षेत्रवाद का भाव
उसके मन में पनपे नहीं,
देश की एकता-समृद्धि-विकास में
विवेकशील नागरिक बन सहभागी बने।
फिर भी कभी क्षुद्र स्वार्थ की तपन से,
कभी अफ़वाहों की गर्माहट से,
आदमी अक्सर सनक जाता है,
हिंसा, आतंक, उपद्रव का भाव
उसके मन में पनप जाता है।
फिर वह कर जाता है मनमानी,
रात के अंधेरे में, दिन के उजाले में,

सुनसान में, भीड में
सब के सामने, अकेले में।
अमानवीय हरकतों से
हिला देता है मनुष्यता की जडें,
ताज़ा अखबार के सुर्ख पन्नों को
कर देता है ताज़े खून से लथपथ।
कानून व्यवस्था की मुस्तैदी पर
लगा देता है एक प्रश्न चिन्ह।
बेबस लोगों की तरह,
तुम भी खामोशी से
चुपचाप तब देखते-सुनते रह जाते हो।
कितनी कमज़ोर साबित होती है
तुम्हारी बाहें-तुम्हारी भुजाएँ।
तुम वज्र बनकर क्यों
गिर नहीं पडते उन पर?
क्यों नहीं काट डालते
उनके कातिल हाथों को
अपने पंखों की तलवारों से?
क्यों नहीं चूर-चूर कर देते
उनके नापाक इरादों को
अपनी चक्रदार तेज चालों से?
क्यों फिर भी सुखाते हो
खून से सने उसके दागदार
जिस्म पर उगे पसीने को?
क्यों बढाते हो मनोबल उसका
अपने सांए में ठिकाना देकर?

❀

एस. 290, स्कूल ब्लाक
राकेश नगर, दिल्ली-92

दूरभाष : 61378

तार । "जय हिन्दी"

केरल ज्योति

पुष्प 22
दल 6
एक प्रति—1 रु० 50 पं०
वार्षिक—15 रु०

सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका
सितंबर 1987

शिक्षानीति में भाषा का स्थान

25-7-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा के संस्थापक एवं प्रथम मंत्री स्व० के. वासुदेवन पिल्लैंजी के 25 वें पुण्यदिवस पर सभा भवन में 'नयी शिक्षानीति में भारतीय भाषाओं का स्थान' पर आयोजित संगोष्ठी में और तदुपरान्त संपन्न अनुस्मरण सम्मेलन में केरल के कुछ प्रमुख शिक्षाविदों, साहित्यकारों एवं नेताओं द्वारा अभिव्यक्त विचार इस अंक में अन्यत्र दिये गये हैं।

चर्चा में इस बात पर जोर दिया गया कि किसी भी देश की शिक्षानीति में अध्याप्य भाषाओं के स्वरूप का निर्धारण स्पष्ट रूप से किया जाना आवश्यक है। भारत की नयी शिक्षानीति की विवेचना करते हुए बताया गया कि इस में भाषा का स्वरूप निर्धारण स्पष्ट रूप से नहीं किया गया है।

स्व० के. वासुदेवन पिल्लै जी स्मृति दिवस

केरल हिन्दी प्रचार सभा के संस्थापक एवं प्रथम मंत्री स्व० के. वासुदेवन पिल्लैजी का पच्चीसवाँ स्मृति दिवस 25-7-1987 को राज्य स्तर पर मनाया गया।

उस दिन पूर्वाह्न में केरल हिन्दी प्रचार सभा भवन में हाई स्कूल विद्यार्थियों के लिए मलयालम में और कालेज के विद्यार्थियों के लिए हिन्दी में भाषण प्रतियोगितायें चलीं। अपराह्न तीन बजे से पाँच बजे तक "नयी शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं का स्थान" विषय पर एक परिचर्चा आयोजित हुई जिस का उद्घाटन मलयालम के विख्यात लेखक एवं कालिकट विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति डॉ० सुकुमार अषिकोट् ने किया। श्री. पी. टी. भास्कर पणिकर परिचर्चा के अध्यक्ष रहे। सूचना और प्रसारण मंत्रालय के तिरुवनन्तपुरम केन्द्र के उपमुख्य सूचना अधिकारी श्री. एन. केशवन नायर ने भाषण दिया।

शाम को छ: बजे जो सार्वजनिक सम्मेलन आयोजित हुआ उसका उद्घाटन केरल विधान सभा के अध्यक्ष श्री. वर्कला राधाकृष्णन ने किया। केरल विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ० ए. सुकुमारन नायर अध्यक्ष रहे। मलयालम शब्दकोश के संपादक डॉ० बी. सी. बालकृष्णन, केरल सरकार के जनसंपर्क विभाग के अपर निदेशक प्रो० जी. एन. पणिक्कर तथा केरल हिन्दी प्रचार सभा के उपाध्यक्ष श्री. के. पी. अलिकुञ्ञु ने भाषण दिये। प्रतियोगिताओं के विजेताओं को श्री. वर्कला राधाकृष्णन ने पुरस्कार वितरित किये। सभा की निर्वाहक समिति के सदस्य एवं केरल सरकार के जनसंपर्क विभाग के उपनिदेशक श्री. के. वी. कृष्णन कुट्टी ने कृतज्ञता प्रकट की।

सम्मेलन के पहले श्रीमती जी. एस. जयलक्ष्मी ने हिन्दी भजन प्रस्तुत किये। ❀

[संगोष्ठी और सम्मेलन में प्रस्तुत विचारों के सारांश इस अंक में अन्यत्र पढ़ें।]

स्वतंत्रता संग्राम के मूल्यों को पुनः प्रतिष्ठित करें

श्री. वर्कला राधाकृष्णन
अध्यक्ष, केरल विधानसभा

[24-7-1987 को स्व० के. वासुदेवन पिल्लै की 25 वीं पुण्यतिथि के अवसर पर केरल हिन्दी प्रचार सभा में आयोजित सार्वजनिक सम्मेलन में दिये गये उद्घाटन भाषण का सारांश]

श्री. वर्कला राधाकृष्णन

मेरी वकालत के दिनों में ही मैं श्री. के. वासुदेवन पिल्लै से परिचित हो सका और उन के हिन्दी प्रचार के कार्यों को समझने का अवसर मुझे मिला।

हमारी राष्ट्रीय स्वतंत्रता के तीन आधारभूत नारों में एक हिन्दी प्रचार। महात्मा गांधी नेतृत्व में लडे गये स्वतंत्रता संग्राम में हिन्दी प्रचार को देश की एकता के लिए आवश्यक नारे के रूप स्वीकार किया गया था।

विविध धर्मावलंबियों के इस देश धर्मनिरपेक्षता की नीति अपनायी।

धर्म और भाषा के विषय एकता लाने का हमारा स्वप्न आज किस स्थिति में है? ज़रा सोचें राष्ट्रपतिपद ग्रहण करते समय महा महिम श्री. वेंकटरामन ने आज इन दोनों विषयों का जिक्र किया। भाषा और धर्म के हमारे नारों की वर्तमान दुस्थिति का आज उन्होंने स्मरण किया।

महात्मा गांधी ने इस उद्देश्य हिन्दी प्रचार आरंभ किया था वह हमारी राष्ट्रभाषा बने और उस के सहारे हमारे देश की एकता

देश की एकता को छिन्नभिन्न करने का षडयंत्र रचनेवाली विघटन-शक्तियों ने भाषायी पागलपन को ही एक मुख्य हथियार बना लिया है।

सुदृढ हो सके। यह हमारे स्वतंत्रता संग्राम का एक प्रमुख मूल्य था। उस मूल्य की वर्तमान स्थिति हम में अधिकांश को चौंका देती है। देश की एकता को छिन्नभिन्न करने का षडयंत्र रचनेवाली विघटन-शक्तियों ने भाषायी पागलपन को ही एक मुख्य हथियार बना लिया है। जनता को उभाडने में भाषा से लाभ उठा रहे हैं। 'हिन्दी लादी नहीं जाये' वाला नारा लगाते हुए प्रान्तीय भाषाओं को श्रेष्ठता का गानालाप करते हुए यहाँ क्या क्या नहीं हुआ ? विधान सभाओं के समक्ष हमारा संविधान जला डालने तक का निर्णय लिया गया ! आज भी भाषा के नाम पर जनता में फूट डालने के लिए विघटनवादियों द्वारा किया जा रहा संगठित श्रम हमारेलिए एक बहुत बडी ललकार है।

हमारे संविधान की आधारशिला ही धर्मनिरपेक्षता है। धर्मनिरपेक्षता पर अधिष्ठित सोवरिन रिपब्लिक है भारत। भारत में सब से बडी केश्वेलटी भी सेकुलरिज़म को हुई है। धर्म के नाम पर दिन व दिन कितने निरपराधी मारे जा रहे हैं ? हर दिन के अखबार पढने पर पता चलता है इस महान देश में कितनी हृदय भेदक घटनायें हो रही हैं। इन सब का कोई न्यायीकरण नहीं है। स्त्रियों, बच्चों और बस में यात्रा करनेवालों की दारुण हत्या धर्म और भाषा के पागलपन के कारण ऐसे लोग कर रहे हैं जिन्होंने उन्हें जीवन में पहले कभी देखा भी नहीं है। चालीस साल की यात्रा के बाद हम कहाँ से कहाँ आ पहुँचे हैं ?

धर्म के नाम पर दिन व दिन कितने निरपराधी मारे जा रहे हैं।

❀

> देश-सेवा करने के लिए उत्सुक सब हैं परन्तु राष्ट्रसेवा तब तक संभव नहीं, जब तक कोई राष्ट्रभाषा न हो।
>
> —महात्मा गांधी

केरल

हिन्दी माध्यम से भा
कोई विषय सिखा

डा० ए. सुकुमारन ना
उ कुलपति, केरल विश्वविद्या

[25-7-1987 को स्व० के. वासुदे
पिल्लै स्मृति दिवस के अवसर
केरल हिन्दी प्रचार सभा में आयोजि
सार्वजनिक सम्मेलन में दिये गये अध्य
भाषण का अंश]

स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व करते समय गांधीजी तथा अन्य नेताओं के मन में स्वतंत्र भारत की शिक्षा नीति के संबंध में और राष्ट्र भाषा के संबंध में स्पष्ट संकल्प थे। पर स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हम ने उन संकल्पों के कलेवर को ही अपनाया, आत्मा को भुला दिया। फलस्वरूप आज भारत एक समस्या राष्ट्र बना हुआ है।

कुछ ऐसी आधारभूत बातें हैं जिन में किसी तरह का समझौता संभव नहीं। विशाल देश की एकता के लिए एक आम भाषा का होना ऐसी एक बात है। यही कार है स्व० के. वासुदेवन पिल्लै जै कार्यकर्ताओं ने दक्षिण में हिन्द प्रचार अभियान का नेतृत्व किया केरल के हिन्दी कार्यकर्ताओं ने रा भाषा का महत्व जनता को समझा में सफलता पायी है। इसलिए तमिल नाड का हिन्दी विरोध केरल में नहीं होता। 1948 से केरल में हिन्द अनिवार्य विषय के रूप में सिखा जाती है। हिन्दी प्रचार के क्षेत्र केरल अन्य हिन्दीतर प्रान्तों आगे है।

उत्तर भारतीयों का हिन्दी प्रेम हिन्दी का अहित न करें

प्रो० जी. एन. पणिक्कर
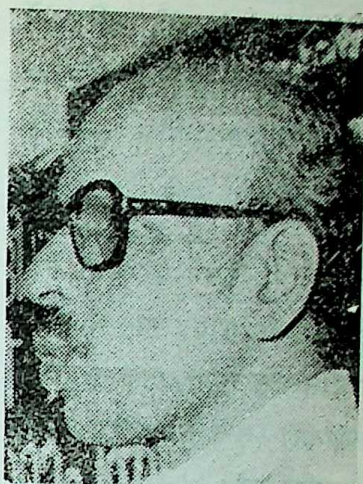
[स्व० के. वासुदेवन पिल्लैजी के 25 वें स्मृति दिवस पर 25-7-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में दिये गये भाषण का सारांश]

श्री. वासुदेवन पिल्लैजी से मैं एक या दो बार मिला था। 1950 और 1960 के बीच। श्री. एस. रामय्यर 'साईराम' और श्री. के. वी. कृष्णन कुट्टी मुझे उनके पास ले चले थे।

पिल्लैजी एक आदर्श अध्यापक थे। उन्हें अर्थ या यश का मोह नहीं था। अत्यंत सरल जीवन बिताते हुए स्वेच्छा से चुना हुआ अपना जीवन व्रत पूरा किया। उनका जीवन आदर्शनिष्ठ था और संशुद्ध था। मैं ने सुना था कि वे भारत भर में प्रसिद्ध हैं और गांधीजी के निकटवर्ती

राष्ट्र स्तर पर हिन्दी संबंधी नीति में हम ने कई गलतियाँ की हैं। भारत की अभी कोई सही शिक्षानीति नहीं बन पायी है। शिक्षानीति में भाषा का बडा महत्व है। इस बात की स्पष्ट धारणा होनी चाहिए कि किन किन भाषाओं को पाठ्यक्रम में किस किस रूप में अपनाना है। पर भाषा संबंधी कोई स्पष्ट नीति हम अब तक अपना नहीं सके हैं।

केरल जैसे राज्यों में जहाँ वर्षों से हिन्दी का अध्यापन अनिवार्य रूप में होता आ रहा है, हिन्दी माध्यम से इतिहास जैसा कोई विषय भी स्कूली स्तर पर पढाया जा सकता है। ●

"कुछ लोगों की दृष्टि में हिन्दी भारत से बडो है। पर मेरी दृष्टि में हिन्दी से बडा है भारत।"

हैं। पर उन्हें देखने पर ऐसा नहीं लगा। वे अत्यंत मृदु स्वर में मुझसे ऐसे बोले जैसे किसी अनुज से बोलते हों। उनकी स्मृति हमें आदर्श के पथ पर अग्रसर करे।

हिन्दी का सबसे बडा अहित उत्तर भारतीयों ने किया है। पहले स्वतन्त्रता संग्राम के सिलसिले में यहाँ हिन्दो अध्ययन आरंभ हुआ। वासुदेवन पिल्लैजी जैसे अनेक निष्ठावान कार्य-कर्ता हिन्दी के क्षेत्र में आये। फिर हिन्दी फिल्मों और गीतों का प्रभाव लोगों पर पडा। लोग हिन्दी पढते गये और उसका आस्वादन करते गये। तभी उत्तर भारतीयों ने जल्दबाजी आरंभ की। सचमुच उन्होंने इस भाषा का सर्वाधिक अहित किया। उनकी इच्छा थी कि हिन्दी को अतिशीघ्र व्यापक बनायें। पर जवाहरलाल नेहरु, इन्दिरा गान्धी जैसे नेताओं ने ऐसा होने नहीं दिया।

मद्रास में जब हिन्दी विरोधी आन्दो-लन चल रहा था, रेल को आग लगायी जा रही थी और लोगों की हत्या की जा रही थी तब इन्दिरा गान्धी जो उस समय शास्त्री मंत्रि-मंडल की सूचना मंत्री थीं, मद्रास पधारी। उन्होंने धीरतापूर्वक कहा- "कुछ लोगों की दृष्टि में हिन्दी भारत से बडो है। पर मेरी दृष्टि में हिन्दी से बडा है भारत।" ऐसे राजनीतिज्ञ नेता जब तक यहाँ होंगे तब तक उक्त प्रकार की जल्दबाजो नहीं होगी।

एक और कथा सुनाऊँ। पता नहीं यह वास्तविक घटना है या नहीं। विनोबाजी जब भूदान यज्ञ के सिल-सिले में आये तो केरल के तत्कालीन मुख्य मंत्री श्री. ई.एम.एस. नंपूतिरि-पाड ने पारशाला जाकर उनका स्वागत किया। वे अंग्रेजी में बोले। विनोबाजी यद्यपि अंग्रेजी खूब बोल सकते थे तो भी हिन्दी में बोले। तब ई. एम. एस. मलयालम में बोले। यदि यह कहानी सच्ची है तो श्री. ई. एम. एस. ने उचित ही किया।

यदि उत्तर भारत वाले हिन्दी से प्रेम करना और हिन्दी प्रचार करना छोड देंगे तो हिन्दी स्वयं विकसित होगी, स्वयं उसका प्रचार होगा। इस प्रवृत्ति की प्रतिक्रिया के रूप में ही मद्रास में हिन्दी विरोध हुआ। वहाँ की सारी जनता हिन्दी के विरुद्ध नहीं है।

हर राष्ट्रभाषा को समान दृष्टि से देखने और हर राष्ट्रभाषा को प्रोत्साहित करने की उदारता हम सब में होनी चाहिए। यह दबाव से नहीं होगी।

इस प्रवृत्ति की प्रतिक्रिया के रूप में ही मद्रास में हिन्दी विरोध हुआ।

त्रिभाषा सूत्र अपनाया गया। उसके अनुसार केरल में मलयालम, हिन्दी और अंग्रेजी सीखना है। उत्तर भारत वालों को हिन्दी, अंग्रेजी और एक दक्षिण भारतीय भाषा सीखनी है। पर उन्होंने अंग्रेजी छोड दी और दक्षिण भारतीय भाषा के बदले संस्कृत अपनायी। एम. सी. छागला ने इसका विरोध किया। उन्होंने उत्तर वालों से कहा कि त्रिभाषा सूत्र हर राज्य में सही ढंग से कार्यान्वित होना चाहिए। दक्षिण पर हिन्दी लादना और स्वयं दक्षिण की कोई भाषा सीखने से इनकार करना ठीक नहीं है।

दक्षिण पर हिन्दी लादना और स्वयं दक्षिण की कोई भाषा सीखने से इनकार करना ठीक नहीं है।

यहाँ के हिन्दी प्रचारकों से मेरा निवेदन है कि उत्तर के बुद्धिजीवियों से मिलने पर उनसे यों अनुरोध करें—आप कृपया हिन्दी का अहित न करें। हम हिन्दी पढायेंगे, हिन्दी का प्रचार करेंगे। हिन्दी हमारी भी भाषा है। हम सब के लिए आवश्यक है।

❀

हिन्दी को भारतीय संस्कृति का माध्यम बनायें

डॉ० बी. सी. बालकृष्णन
संपादक, मलयालम शब्दकोश

[25-7-1987 को स्व० के. वासुदेवन पिल्लजी के स्मृति दिवस के अवसर पर केरल हिन्दी प्रचार सभा में आयोजित सम्मेलन में दिये गये भाषण का सारांश]

अश्चर्य चूडामणि नामक विख्यात संस्कृत नाटक के रचयिता शक्तिभद्र दक्षिण भारतीय थे। उसी नाटक में सूत्रधार इस बात पर आश्चर्य प्रकट करते हैं कि एक दक्षिण भारतीय ने संस्कृत का उत्कृष्ट नाटक लिखा है। यह उसी प्रकार असंभव बताया गया है जैसे आकाश में कुसुम को उत्पत्ति और सिकता को निचोड कर तेल निकालना असंभव है। इसी प्रकार की मनोवृत्ति दक्षिण भारत के हिन्दी लेखकों की रचनाओं के संबन्ध में बनी हुई है। दाक्षिणात्य विद्वानों की उत्कृष्ट हिन्दी रचनाओं को भी दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के पाठ्य क्रम में स्थान नहीं दिया जाता था। इस मनोवृत्ति के विरुद्ध

डा० बी. सी. बालकृष्णन

श्री. वासुदेवन पिल्लजी के मन में प्रबल विरोध उत्पन्न हुआ था। केरल हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना में यह विरोध भी शायद प्रेरक रहा।

राजगोपालाचारी ने यद्यपि दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना में बहुमूल्य योगदान दिया था तो भी बाद को उन्होंने हिन्दी का विरोध भी किया। इस का भी कारण हिन्दीवालों की ऐसी मनोवृत्ति का विरोध था। उत्तरवालों का यह दृष्टिकोण कि हिन्दी के प्रचार मे उनका आर्थिक लाभ हो, हिन्दी का विरोध उत्पन्न करता है।

हिन्दी अभी भारत की संपर्क भाषा होने की क्षमता अर्जित नहीं कर पायी है। मलयालम शब्दकोश के निर्माण केलिए सहायता पहुँचानेवाला एक भी उपादान ग्रन्थ हिन्दी में उपलब्ध नहीं है जब कि अंग्रेजो में ऐसे डेढ सौ से अधिक ग्रन्थ हैं। कथकलि पर कोई आधिकारिक ग्रन्थ हिन्दी में नहीं है। मणिपूरी नृत्य पर कोई अच्छी पुस्तक हिन्दी में नहीं है। कोई ऐसी पुस्तक भी हिन्दी में नहीं है जो केरल के किसी भाग में स्थित मंदिरों का ऐतिहासिक विवरण प्रस्तुत करती हो। जब ऐसे उपयोगी साहित्य से हिन्दी सपुष्ट होगी तभी हिन्दी भारत की संपर्क भाषा बनाने में सक्षम बनेगी। जब मलयालम शब्दकोश निर्माण के लिए हिन्दी का कोई ग्रन्थ पढना अनिवार्य हो जायेगा तब हिन्दी विरोध अपने आप हट जायेगा। तिरुवल्लुवर के संबंध में जानने के लिए तमिलनाट की नयी पीढी के उपयोगार्थ अंग्रेजी में किताबें उपलब्ध हैं जब कि हिन्दी में नहीं हैं। इस कमी को दूर करने के लिए मेरा सुझाव है कि युवा लेखकों को आर्थिक सहायता लेकर देश के विविध भागों में भेजा जाय ताकि वे उन स्थानों के संबंध में हिन्दी में ग्रंथ रच सकें। उसी प्रकार प्रतिवर्ष भारतीय भाषाओं में निकलनेवाली उत्तम रचनाओं का अनुवाद हिन्दी में बिना विलंब प्रकाशित करने का प्रबंध किया जाये।

हिन्दी को हम एक साधारण भाषा नहीं मानते। हिन्दी के जरिये मलयाली को असम के संबंध में और असमवाले को केरल के संबन्ध में पर्याप्त जानकारी उपलब्ध हो सके। हिन्दी भारतीय संस्कृति की अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में विकसित की जाय। नहीं तो हिन्दी विरोध बना रहेगा। ❀

हम हिन्दी प्रेमी बनें, हिन्दी के दास नहीं ।

प्रो० सुकुमार अ.िषकोट

[25 - 7 - 1987 को स्व० के. वासुदेवन पिल्लै जी की 25वीं पुण्यतिथि के अवसर पर केरल हिन्दी प्रचार सभा में आयोजित 'भारत की नयी शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं का स्थान' संगोष्ठी में दिये गये भाषण का सारांश]

दुनियाँ में दो प्रकार के व्यक्ति पाये जाते हैं। समस्या उत्पन्न करने वाले और समस्या सुलझानेवाले। आज हम ऐसे एक महापुरुष का अनुस्मरण कर रहे हैं जो समस्या सुलझानेवालों में थे। यही उन के जीवन का महत्व है। आज हम समस्याओं की संख्या बढा रहे हैं। हिन्दी सीखनेवालों का राष्ट्र स्तर पर यह कर्तव्य है कि एक क्षेत्र में ही सही, समस्या को सुलझाने का प्रयत्न करें।

गांधीजी ने हिन्दी प्रेम की बात कही। 'हिन्दी प्रेमी' कितना मनोहर शब्द है! मनोभाव की मुद्रा है [illegible] प्रेम। पर राजभाषा [illegible] जब हिन्दी आती है तब हिन्दी [illegible] नहीं, हिन्दी दास्य उत्पन्न होता [illegible] इसीलिए हिन्दी सीखने केलिए [illegible] तैयार नहीं होते। हिन्दी प्रचा[illegible] का कर्तव्य है कि हिन्दी को सो[illegible] का सोपानमात्र न मान कर [illegible] को प्रेमपात्र मानें।

बीसवीं सदी के भारतीय [illegible] वैज्ञानिकों में अग्रणी थे सुनीतिकु[illegible] चाटर्जी। गांधीजी के ज़माने में [illegible] हिन्दी प्रेमी थे। उन्होंने उस समय [illegible] बात का समर्थन किया था कि हि[illegible] भारत की राष्ट्रभाषा हो। युने[illegible]

के पेरिस सम्मेलन में भी उन्होंने इस बात की पुष्टि की थी। पर स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद वे हिन्दी के शत्रु बन गये।

राजगोपालाचारी की भी यही बात थी। वे दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार मंडल के अध्यक्ष थे। उसके प्राण थे बाद को वे हिन्दी के सबसे बडे शत्रु बन गये।

हिन्दी प्रचारकों का कर्तव्य है कि हिन्दी को सौभाग्य का सोपान मात्र न मानकर हिन्दी को प्रेमपात्र मानें।

उत्तर भारतवाले इस बात पर अशांत हो जाते हैं कि स्वतंत्रता प्राप्ति के चालीस वर्ष बाद भी हिन्दी भारत को राष्ट्रभाषा क्यों नहीं बन पाती। दक्षिण भारतीय यह सोचते हैं कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद केवल चालीस वर्ष ही हुए हैं, अब हिन्दी क्यों लादी जा रही है। इन दोनों समूहों के युद्ध का दयनीय अवशिष्ट है हिन्दी।

स्व० वासुदेवन पिल्लजी का अनुस्मरण करते समय बीते युग का भी अनुस्मरण करना है। वह हृदय का एक पुष्पहार था।

हमारा राष्ट्र एक बहुभाषी स्थिति में आ पहुँचा है। इंग्लैंड, फ्रेंस, जर्मनी जैसे तीन चार राष्ट्रों के सिवाय अन्य सभी राष्ट्रों के लिए अनेक भाषाओं का प्रयोग और अध्यापन आवश्यक हो गया है। विश्व की तीन हज़ार से अधिक भाषायें हैं। पर राष्ट्रों की संख्या केवल दो सौ से अधिक है। तो औसतन एक राष्ट्र के लिए अनेक भाषायें हुईं। भारत में भी ढाई-तीन-सौ भाषायें हैं। संविधान में चौदह भाषायें स्वीकृत हैं। इनके अलावा अंग्रेजी भी है।

इसीलिए हमें त्रिभाषा सूत्र को स्वीकार करना ही होगा। जितनी शीघ्रता से उसे अपनायें उतना अच्छा होगा। हमने इतने दिनों तक इसे टाल कर बडा बुरा किया।

❀

हमारी शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो, अंग्रेजी नहीं ।

श्री. पी. टी. भास्कर पणिक्कर

[25-7-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में 'भारत की नयी शिक्षा नीति में भारतीय भाषाओं का स्थान' पर आयोजित संगोष्ठी में दिये गये भाषण का सारांश]

शिक्षा नीति में शिक्षा का माध्यम बहुत प्रमुख है। क्यों कि भाषा के द्वारा ही भावों का संचार किया जाता है।
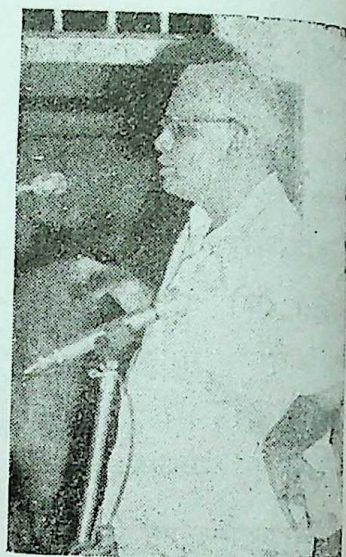
भारत में आज भी यह बताया जाता है कि अंग्रेजी के माध्यम से सिखाया जाना चाहिए। मैं अंग्रेजी के विरुद्ध नहीं हूँ। अंग्रेजी अच्छीतरह पढनी चाहिए, पढायी जानी चाहिए। पर शिक्षा का माध्यम मातृभाषा ही हो। इस दृष्टिकोण के क्षीण हो जाने के अनेक दुष्परिणाम निकले हैं। केरल में ही कितने ही अंग्रेजी माध्यम स्कूल है ! शहरों में शायद यह आवश्यक होगा। लेकिन गाँवों में इसकी क्या ज़रूरत ! वहाँ कुछ गरीब किसान, मज़दूर, मध्यवर्गीय

श्री. पी टी. भास्कर पणिक्कर

प्राइमरी स्कूल मास्टर, दूकानदार आदि हो हैं। वहाँ तो विश्व के सभी विषय विद्यार्थियों को सिखाते हैं। ज्ञान देकर उनके वीक्षण में परिवर्तन लाना है। उनके स्वभाव में परिवर्तन लाना है। उनकी सामाजिक धारणाओं में परिवर्तन लाना है। आज के बच्चे कल के नागरिक जब बनेंगे तब राष्ट्र की प्रगति में वे

ब्रिटीश शासन की पुरानी दासता का बोध हम आज के बच्चों में उत्पन्न करने का प्रयत्न करते हैं।

अपना योगदान दे सकें। यही संक्षेप में हमारा उद्देश्य है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाना है? इसके विरोध में यद्यपि कई अभियान हुए तो भी आज विश्वविद्यालय स्तर से प्रीप्राइमरी स्तर तक अंग्रेजी व्यापी हुई है। अंग्रेजी का आधिपत्य जमा हुआ है। ब्रिटीश शासन की पुरानी दासता का बोध हम आज के बच्चों में उत्पन्न करने का प्रयत्न करते हैं। इस पर उंगली उठाये बिना स्व० के. वासुदेवन पिल्लै का पुण्य दिवस मनाना निरर्थक होगा।

श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने अपने स्वागत भाषण में बताया कि नवोदय विद्यालयों में एक स्तर पर शिक्षा का माध्यम हिन्दी या अंग्रेजी होगी। केन्द्रीय विद्यालयों में सोशियल स्टडीस की शिक्षा हिन्दी माध्यम में और विज्ञान की शिक्षा अंग्रेजी माध्यम में दी जाती है। नवोदय विद्यालय में भी मातृभाषा को छोडकर और किसी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनायें तो शिक्षा में बाधा उपस्थित होगी।

भारत में ऐसी एक शिक्षा पद्धति आवश्यक है जो भारतीय दृष्टिकोण के अनुरूप बनायी गयी हो। जनता को अपना जीवन सुधारने के लिए आवश्यक ज्ञान यथाशीघ्र देना है। मातृभाषा ही संचार का उत्तम माध्यम है।

जनता को अपना जीवन सुधारने के लिए आवश्यक ज्ञान यथाशीघ्र देना है।

मातृभाषा के अलावा हमें एक आम भाषा की आवश्यकता है। स्वतंत्रता संग्राम के फलस्वरूप हमें हिन्दी मिली। गांधी जी के रंगप्रवेश के पहले कांग्रेस के सम्मेलनों में अंग्रेज़ी ही बोली जाती थी। उस समय के नेता पंजाब, बंगाल और महाराष्ट्र के थे। हिन्दी भाषी जनता तक तब राष्ट्रीय अभियान नहीं पहुँचा था। उसी समय गांधी जी ने, जो गुजराती भाषी थे, दक्षिण आफ्रिका में प्राप्त व्यावहारिक अनुभव के आधार पर, जनता को संगठित करने में यहाँ भी हिन्दी का प्रयोग किया और उस के द्वारा हिन्दी भाषी

और हिन्दीतर भाषा भाषी जनता में एकता बनाये रखने का प्रयत्न किया। इस प्रकार राष्ट्रीय अभियान के अंग के रूप में हिन्दी का विकास होता गया। आज के अधिकांश कार्य-कर्ता अंग्रेज़ी नहीं जानते। इसलिए बिना हिन्दी के उनका आपसी संपर्क ही राष्ट्र स्तर पर असाध्य हो जाता है। बिना हिन्दी के भारत की एकता कायम नहीं रख सकेंगे।

भाषा भावावेग की बात हो गयी है। हमें त्रिभाषा सूत्र अपनाना है। पहला स्थान मातृभाषा का हो। दूसरा स्थान राष्ट्रभाषा का हो। तीसरा स्थान ग्रंथालय भाषा के रूप में अंग्रेजी, संस्कृत या अन्य किसी भाषा का हो।

हमारी नयी शिक्षा नीति में भाषा के संबंध में केवल चार पंक्तियाँ हैं। बताया गया है कि कोठारी आयोग की बतायी बातों के अतिरिक्त कुछ बताना नहीं है। भाषा संबंधी यह ह्रस्व उल्लेख भारत जैसे बहुभाषी देश की शिक्षा नीति के लिए पर्याप्त नहीं माना जा सकता।

साहित्य का प्रदेश भाषा की भूमि जानने पर ही निश्चित हो सकता है। यदि हिन्दी भाषा की भूमि सिर्फ उत्तर प्रान्त की होगी, तो साहित्य का प्रदेश सकुचित रहेगा। यदि हिन्दी भाषा राष्ट्रीय भाषा होगी, तो साहित्य का विस्तार भी राष्ट्रीय होगा। जैसे भाषक वैसी भाषा।

—महात्मा गांधी

भारतीय नव जागरण
और
स्वामी श्रद्धानन्द

श्री. विष्णु प्रभाकर

(गतांग से आगे)

इस शब्द-चित्र में नेहरू जी ने भी जिस एक गुण को विशेष रूप से रेखांकित किया है वह निर्भीकता ही है। और कवि क्रान्तदृष्टा होता है। विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर स्वामीजी के अन्तर में झांकते हुए न केवल उनकी निर्भीकता को वरण करते हैं बल्कि सत्य के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा को भी पहचान लेते हैं। श्रद्धानन्द जी की भारत को देन उनकी सत्य में अगाध श्रद्धा है। "श्रद्धानन्द यह नाम ही उनकी उस भावना का परिचायक है। वे नित्य प्रति श्रद्धावान थे और उसी में आनन्द मनाते थे। उनके लिये सत्य और जीवन एक हो गये थे। सत्य ही जीवन था और जीवन ही सत्य था। उनकी मृत्यु उनके निर्भीक और अनथक प्रयत्नों के अमर चित्रों को आलोकित करती हुई एक प्रकाश किरण की तरह हमारे सामने आती है।"

विश्व-कवि की तरह ही भारत-कोकिला सरोजिनी नायडू अपनी अप्रतिम काव्यमयी भाषा में अपने 'अनुराग के इस आराध्य देवता' की मूर्ति का रेखांकन इस प्रकार करती हैं, "मैं सदैव अनुभव करती रही हूँ कि स्वामी श्रद्धानन्द भारत के वीर काल की एक दिव्य विभूति थे। अपने भव्य और उन्नत व्यक्तित्व के द्वारा वे अपने साथियों में देवता की तरह विचरण करते थे। वह एक बडे शिक्षा केन्द्र गुरुकुल कांगडी के संस्थापक)मुख्याधिष्ठ ता भी रहे। यद्यपि उन्होंने कभी किसी बड़े विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त नहीं की थी तो भी वे अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक जो शहादत से आलोकित हो उठा था, साहस और कर्मयोग की अनुपम मूर्ति रहे और भारतीय जीवन के धार्मिक तथा आध्यात्मिक क्षेत्र में और राष्ट्र सुधार के कार्यों में इन गुणों का सुन्दर और सटीक परिचय देते रहे। मानव

"वर्तमान काल का कोई कलाकार यदि ईसा की मूर्ति बनाने के लिए कोई जीवित माडल सामने रखना चाहे तो मैं इस भव्य मूर्ति की ओर संकेत करूँगा।"

समाज की सेवा के संबंध में उनके भावों का मैं बहुत आदर करती हूँ।"

देश में ही नहीं देश के बाहर भी 'कल्याण मार्ग के इस पथिक' की कर्तव्यनिष्ठा, मानव मात्र के प्रति प्रेम, सत्य के प्रति अगाध निष्ठा और आत्म त्याग और कष्ट सहन करने की अद्भुत क्षमता की तीव्र ज्योति जगमगा उठी थी। भारत भक्त प्रेम-मूर्ति सी. एफ. एंड्रयूज उनकी 'स्वच्छ और निर्मल मैत्री' पर सदा गर्व करते रहे। उनकी मृत्यु पर उन्होंने कहा था, "उनकी पुण्य-स्मृति का सम्मान करने का एकमात्र मार्ग यही है कि हम उन निर्धनों को जिन्हें वे अपने अन्तरतम से प्यार करते थे अपना प्रभु समझें।"

और ग्रेट ब्रिटेन के मजदूर दल के नेता तथा एक समय के प्रधान मंत्री रेम्जे मैकडानल्ड उनके रूप पर, जो अन्तर के आलोक से आलोकित था, मुग्ध होकर कह उठे थे—"वर्तमान काल का कोई कलाकार यदि ईसा की मूर्ति बनाने के लिए कोई जीवित माड़ल सामने रखना चाहे तो मैं इस भव्य मूर्ति की ओर संकेत करूँगा। यदि कोई मध्यकालीन चित्रकार सैंट पीटर के चित्र के लिये नमूना मांगेगा तो मैं उसे इस जीवित मूर्ति के दर्शन करने की प्रेरणा दूंगा।"

ऊपर हमने दो राष्ट्र पुरुषों, दो सर्जकों और दो भारत भक्त विदेशियों के द्वारा किया गया उनका बोलता मूल्यांकन प्रस्तुत किया है। इस मूल्यांकन में जिन शब्दों का प्रयोग हुआ है वे मात्र शब्द नहीं है बल्कि 'अर्थ' का समन्वित रूप है। अर्थ पहले होता है, शब्द मात्र उसे आकार देते हैं। इसी कारण सम्भवतः शब्द को ब्रह्म कहा गया है। ब्रह्म ही स्रष्टा है और शब्द भी स्रष्टा है। लेकिन शब्द किसी नयी वस्तु का स्रजन नहीं करता बल्कि जो अर्थ पहले से मौजूद है उसे ही रूपायित करता है। इसे यों कहना और भी सार्थक होगा कि स्वामी श्रद्धानन्द ने जो जीवन जिया था उसी को उपरोक्त महापुरुषों ने शब्दों में रूपायित किया है। अनादि-काल से कवि शब्दों के माध्यम से जीने की इसी कला को नाना रूपों में रेखांकित करता आया है या कहें पुनः सर्जित करता आया है।

(क्रमशः)

कथकलि का उद्भव और विकास

प्रो० एम. के. सुकुमारन नायर

अनक अंगों व उपांगों के सम्यक सम्मेलन पर पूर्ण व सुन्दर शरीर की बनावट संभव है। कथकलि की रूप संपत्ति व रूप सज्जा पर भी इस सामान्य तत्व ने अच्छा खासा प्रभाव डाला है। कथकलि के आधुनिक स्वरूप के आविर्भाव को हुए लगभग साढे तीन शताब्दियाँ ही हुई। किंतु शताब्दियों के पहले केरल के वायुमंडलम में विविध नाट्यों, नृत्त-नृत्यों की झंकृत ध्वनियाँ मुखरित होती थीं। इनमें कुछ द्रविड शैली के थे, जब अन्य आर्य शैली के भी थे। इनके दृश्यावतरण केरलीय जन मानस को आनन्द विभोर करने में सर्वथा समर्थ थे।

कथकलि में स्वीकृत नाटच, नृत्त, नृत्य आहार्याभिनय आदि एक दिन में या आकस्मिक प्रणाली से इसके नहीं बने हैं। केरल में सर्वत्र प्रचुर मात्रा में प्रचलित लोक नृत्यों के अधिकांश अंश अपेक्षाकृत नवीन दृश्य कला कथकलि में आ चुके हैं।

केरल में अधिकांश लोक नाटच व नृत्त भी अनुष्ठान संबन्धी हैं। काली को (भद्रकाली) प्रसन्न करने के उद्देश्य

कथकलि का एक वेश

से वीर-रौद्र बीभत्स रस भरे नृत्त-नृत्याविष्करण किये जाते थे, जो आज भी किये जा रहे हैं। काली सम्बन्धी लोकप्रिय उत्सव है "मुडियेट्टु"। मुडि माने किरीट, एट्टु-माने धारण मुडियेट्टु का भाव निकला देवी काली का किरीटधारणोत्सव। संभवत: नृत्त-नृत्य रूप में आविष्कृत नाटचरूप उसमें मिलता है। इसकी कथावस्तु दारिक वध है। दुष्टता पर शिष्टता की चिरस्थाई विजय ही इसमें दर्शित है। यह नाट्यावतरण काली मंदिर के सामने ही हुआ करता है। कथकलि की अनेक कथावस्तुएँ वध संबन्धी है, जैसे कि बा वध, रावण वध, बक व किर्मीर वध, कालकेय वध क वध, दुर्योधन वध इत्यादि दूसरी कथावस्तुएँ च अर्थात् जीवनी संबन्धी हैं ज नलचरित, अंबरीष च आदि। अन्य कुछ कथावस्तु स्वयंवर संबंधी हैं, जैसे सी स्वयंवर, पांचाली स्वयंव रुक्मणी स्वयंवर उत्त स्वयंवर आदि। चाहे च संबन्धी हो या स्वयंवर संबं कदाचित ही ऐसा कोई कथक

कथकलि की अनेक कथावस्तु वध संबन्धी हैं, जैसे कि बालि वध, रावण वध, बक व किर्मीर वध, कालकेय व कंस वध, दुर्योधन वध इत्यादि

नृत्य होगा जिसमें युद्ध न दर्शा जाता है। सारांश यह है कि संबन्धी नृत्ताविष्करण में "मुडियेट्टु ने कथकलि पर अमिट प्रभाव डा होगा। इसका समान धर्मी नाट विष्करण है "पटयणी" (पट+अ पट अर्थात् सैन्य; अणी अ विन्यास। अत: स्वयं सिद्ध है

पटयणी का मतलब सैन्य विन्यास से है। पटयणी (सैन्य विन्यास) भी अनुष्ठान दृश्य कला में शामिल है। यह नृत्त प्रधान दृश्य कला, काली मंदिर में लगातार चौबीस दिन तक दर्शायी जाती थी, आजकल भी कहीं कहीं दर्शायी जा रही है। काली मंदिर में प्रदर्शित यह नृत्ताविष्करण प्रमुखत: वीर-रौद्र प्रधान है और शत्रु को ललकारने के संदर्भ में इसने भी कथकलि पर प्रभाव डाला होगा; क्योंकि सैन्य विन्यास संबन्धी इस नाट्य नृत्य में सीमित अर्थ में ही सही, हस्तमुद्रावलंबित अभिनयांकुर मिलता है।

अनुष्ठान कलाओं में सबसे अधिक उल्लेखनीय है तैय्यम या तैय्याट्टम।

तैय्यम अथवा तैय्याट्टम

तैय्यम का अर्थ देव से है। "आट्टम" का अर्थ तो सुविदित है, नृत्त या नृत्य। अत: "तैय्याट्टम" का मतलब देव नृत्त से है। प्राचीन काल से उत्तर केरल में प्रचलित लोक नृत्त-नृत्य कलाओं में यह अत्यन्त महत्व-पूर्ण है। यद्यपि इसे नृत्त नृत्य की श्रेणी में रखा जा सकता है, तो भी

तेय्यम का एक दृश्य

इसका नाट्यांश ही सराहनीय होता है। अभिनेता के मस्तक या कंधे पर आराध्य देव अथवा देवी की प्रतिमा रखी जाती है, फिर उसी देव अथवा देवी के संकल्प वह नाट्याविष्करण करता है। चूंकि यह वाचिकाभिनय प्रधान है, अत: यह नाट्याविष्करण के अन्तर्गत गिना जाता है। खास देव-देवी का स्वांग रखनेवाला संवाद भी करता है, साथ ही नृत्त-नृत्यादि प्रदर्शन भ. करता है। तेय्यम की वेष-भूषा कथकलि के दाढी वेष से बहुत मिलता जुलता है।

एकाध संदर्भों में यह दिखाया जा चुका है कि कथकलि की दृश्य प्रदर्शनी में देवी एवं आसुरी शक्तियों का संघर्ष दर्शाया जाता है, जिसमें देवों की विजय और दानवों की हारों

पौराणिक केरल के प्रत्येक मुहल्ले में आयोधन का शिक्षण दिया जाता था।

का ही उल्लेख मिलता है। आंगिक व सात्विक अभिनय इस संघर्षमय वृत्तांत के नृत्त, नृत्य और नाट्यशैली में दर्शाये जाने के पीछे आयोधन कला का भी निरंतर अभ्यास छिपा पडा है। कहने का भाव बस, इतना है कि नृत्त, नृत्य-नाट्य, गीत, संगीत तथा वाद्य से मिश्रित इस अत्यन्त विशिष्ट कला में आयोधन कला का भी सम्यक मेल है। पौराणिक केरल के प्रत्येक मुहल्ले मैं आयोधन का शिक्षण दिया जाता था। आयोधन कलाभ्यासी को अपने शत्रु का अभ्याघात करना भी पडता था। यों तो प्राचीन भारत में अभ्यास कला की गिनती योग की चार कलाओं से होती थी जिस में आसन तथा प्राणायाम की एकता होती है, यह विधि साधन के संयोग से मिलती भी थी। किन्तु केरल मे[ं] अभ्यासकला आयोधन कला का[...] लेती थी, अतः आयोधनकला[...] प्रयोग व प्रयोजन आयोधनाभ्[यास] से संबन्धित थे।

प्रत्येक आचार्य के अधीन शि[...] ही अभ्यासी होते थे, केरल के प्र[...] मंदिरों के उत्सवों के सिलसि[ले] आयोधनाभ्यासी वीरों का कला[प्रद]र्शन भी होता था। ऐसी अभ्यास[...] को केरल की भाषा में "कलरिप्प[यट्टु]" कहते थे। कलरि का मतलब शिक्ष[ा]लय से तथा पयट्टु का मतलब प्रमु[ख] आयुधाभ्यास से भी हैं। इस आयो[धन] कला के विविध शैलीगत विभेद होते हैं, किन्तु इन सब की[...] सामान्यतः शारीरिक अभ्यास[...] निहित है। कथकलि नृत्य का सं[...]बन्ध इस आयोधन कला के शारीरि[क] अभ्यासवाले पहलु से होता[...] कथकलि अभ्यास की अवधि संभ[...] छः से दस साल तक है, कभी क[...] आठ साल तक निश्चित की जा[...] है। चाहे जो हो अभ्यासकाल[...] प्रथम सोपान है शारीरिक व्याया[म] कर-चरण तथा समूचे श[...] के अभ्यासाधीन होने के उपरा[न्त] कोई कथकलि शिक्षार्थी कथ[...]

केरल के प्रसिद्ध मंदिरों के उत्सवों के सिलसिले में आयोधनाभ्यासी वीरों का कला-प्रदर्शन भी होता था।

शिक्षण के दूसरे सोपानों पर आरोह करता जायगा।

"कालकेयवध" के अर्जुन को बाएँ हाथ से धनुष तथा दायें से शर पकडे एवं छाती उभारे बहुत देर तक वीररस भरी मुद्रा में बैठना पडता है। "कल्याणसौगंधिक" के हनुमान जी को एक चरण पर खडे होने की साधना करनी पडती है। इस कदर कथकलि वेषधारी हर संभवतः शारीरिक अभ्यास का वशवर्ती होता है, सभी पुरुष वेष-धारियों को संदर्भोचित शारीरिक अभ्यास प्रदर्शन भी कथापात्र की गरिमा के अनुसार करना पडता है।

केरल की परंपरागत कलाओं ने कथकलि के आविर्भाव में ठोस योग-दान दिया है। अन्यत्र हम बता चुके हैं इस विशिष्ट दृश्य कला का रूपान्तरण वस्तुतः विविध लोक नृत्यों, लोक गीतों तथा शास्त्रीय नृत्यनृत्तों के समन्वित रूप भावों से हुआ है। आज कथकलि में दर्शित आंगिक, सात्विक एवं आहार्याभिनय कई पूर्व नृत्त-नृत्यों का शताब्दियों का गुज़रा हुआ रूप मात्र है। भिन्न रुचिवाले आस्वादकगण इसके विभिन्न पहलुओं का आस्वादन करते आए हैं। कुछ लोग आंगिक अभिनय पर आनन्द लेते हैं, तो दूसरे कुछ लोग इसके नृत्त-नृत्य पहलुओं के प्रशंसक होते हैं, अधिकांश साधारण जन इसके आहार्याभिनय पर मुग्ध होते हैं। इन विविध लोक नृत्त-नृत्यों, लोक गीतों व शास्त्रीय नाट्य दृश्यकला रूपों ने कथकलि को कितना प्रभावित किया अथवा यह अमोघ दृश्य कला उनसे कैसे लाभान्वित हुई, ऐसी बातों पर दृष्टिपात करना निस्सन्देह मनोरंजक कार्य होगा। अति प्राचीन द्राविड कलाओं से भी कथकलि का नृत्तरूप और नृत्य रूप प्रभावित हुए हैं। इनके अतिरिक्त केरल भर में प्रचलित आयोधन कला में भी कथकलि पर अमिट छाप लगायी है।

कथकलि नृत्त-नृत्याभ्यसन में शारीरिक व्यायाम का बडा महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। वस्तुतः नृत्त और दैहिक व्यायाम इन दोनों का कथकलि में अभेद्य बन्ध है। कथकलि अभ्यास का प्रथम सोपान शारीरिक व्यायाम है। कथकलि दृश्य के

उपज्ञाताओं ने केरल की सर्वाधिक लोक प्रिय आयोधन कलाओं के विदग्धों को इस दृश्य कला के अभि-

रात के आठ या नौ बजे से सुबह छः बजे तक कथकलि नृत्त-नृत्य प्रदर्शन हुआ करता है।

नेताओं के रूप में चुन लिया था। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कथकलि के उपज्ञाताओं अथवा उन्नायकों ने शारीरिक व्यायाम को सर्वाधिक स्थान दिया था। इसका खास उद्देश्य अथवा खास लक्ष्य भी है। नृत्य वेदी में कथकलि के रंगकर्त्ता का अभिनय घंटों तक होता है। रात के आठ या नौ बजे से सुबह छः बजे तक कथकलि नृत्त-नृत्य प्रदर्शन हुआ करता है। किंतु आजकल तो ऐसा कथकलि प्रदर्शन मदिरों में ही होता है। अन्य सार्वजनिक स्थानों का कथकलि प्रदर्शन कम से कम समय पर पूरा किया जाता है। संपूर्ण कथा प्रदर्शन के बजाय, अधिकाधिक रसा-स्वाद्य दृश्यावतरण किये जाते हैं। कथकलि के अध्ययन अथवा मूल्यांकन के संदर्भ में हमारी विवक्षा संपूर्ण कथकलि से होती है।

कथकलि के पूर्व दृश्य रूपों उल्लेखनीय है शास्त्रकलि। इसक मतलब शास्त्रक्रीडा या दृश्य से है। अतः कथकलि का भी मतल यह होता है कि कथा का नृ नृत्याविष्करण या दृश्यावतरण आधुनिक काल के आविर्भाव सामाजिक जीवन बहुधा व्यवस्था पर आधारित था। ऐ वर्ण-व्यवस्था में नंपूतिरी (जो है) वर्ग का सर्वोन्नत स्थान था। नंपूतिरियों से ही इसका अभिन किया जाता था। पिछली शताब्द तक नंपूतिरी वर्णवाले वेद-शास्त्र पारंगत समझे जाते थे। अतः उन 'द्वारा अभिनीत रूपक का अभिधा शास्त्रकलि' (शास्त्र क्रीडा) दि जाना भी स्वाभाविक कार्य है पुरातनकाल में नंपूतिरियों के अठा प्रसिद्ध संघ थे। ये संघवाले नंपूति इस विनोद में भाग लेते थे। इ परिप्रेक्ष्य में शास्त्रकलि या शास्त्र क्रीडा का अभिधान "संघ कलि" संघ क्रीडा भी हो गया। चाहे हो, इस विनोद के आविर्भाव प एक किंवदन्ती है।

बौद्ध धर्म का ववंडर केरल में प्रबल हुआ। स्वाभाविकतः इसक संघर्ष ब्राह्मण धर्म से हुआ। केर

विजयी ब्राह्मणों ने वेदमंत्रों का रंगाविष्करण किया। यही आगे चलकर शास्त्र कलि अर्थात् वेद शास्त्र पर आधारित एक दृश्यकला बनी।

ब्राह्मण, नंपूतिरी ब्राह्मण धर्म के समर्थक तथा बौद्ध धर्म के निन्दक ही रहे। "पेरुमाल" प्राचीन केरल के शासक थे। बौद्ध धर्म प्रचरणार्थ कुछ बौद्ध भिक्षु केरल में आये, वे पेरुमाल से भी मिले। बौद्धधर्म के "सूक्तों" से पेरुमाल वस्तुतः प्रभावित हुए। स्वयं सिद्ध राजाधिकार का लाभ उठाकर पेरुमाल नें यह घोषणा की किया तो ब्राह्मणों को बौद्ध धर्मावलंबी होना है या ब्रह्मज्ञान संबन्धी सारार्थ पर वाद प्रतिवाद करके बौद्ध भिक्षुओं को पराजित करना है। केरल के ब्राह्मण किसी भी मूल्य पर बौद्ध धर्म के अनुयायी बनना न चाहते थे। ऐसी दशा में बौद्ध भिक्षुओं को पराजित करना अनिवार्य भी था। किंकर्तव्य विमूढ ब्राह्मणों को जंगम महर्षि ने एतदर्थ उपदेश दिया। इस महर्षि के उपदेशानुसार ब्राह्मण तृक्कारियूर मंदिर में भजन करनें लगे। जंगम महर्षि के उपदेशानुकृत मंत्र ही वे क्रमबद्धतापूर्वक जपते रहे। अनुष्ठान कर्मी ब्राह्मणों को जप में तल्लीन हुए उनचालीस दिवस बीत चुके। चालीसवें दिन में छह पंडित केरल में पहुंच गए। इन छह पंडितों ने सारार्थ तर्क विषय में बौद्ध पंडितों को पराजित किया। इस अपरिहरणीय परिस्थिति पर पेरुमाल बौद्धभिक्षुओं से विमुख हो गये। विजयी ब्राह्मणों ने वेदमंत्रों का रंगाविष्करण किया। यही आगे चलकर शास्त्र कलि अर्थात् वेद शास्त्र पर आधारित एक दृश्यकला बनी।

❀

(क्रमशः)

हमारा भारत विभिन्न राज्यों, विभिन्न धर्मों, विविन्न संस्कृतियों, विभिन्न भाषाओं और विभिन्न वेष-भूषाओं का संगम हैं। फिर भी अनेकता में एकता हमारे देश की बडी विशेषता है।

श्री. एन. टी. रामराव

त्रिभाषा योजना: अध्यापक आदान-प्रदान के माध्यम से

मूल : डॉ० ए. एन. पी. उम्मरकुट्टी
निदेशक, केरल भाषा संस्थान

अनुवाद : एस. विजयकुमार
केरल भाषा संस्थान

पाठक बन्धुओं को स्मरण होगा कि केरल ज्योति के मई 1987 में डा० एन. वी. कृष्ण वारियर का 'उत्तर भारत के स्कूलों में मलयालम शिक्षण' शीर्षक एक लेख आया था जिसमें उन्होंने यह सुझाव दिया था कि हिन्दी भाषी राज्यों में दाक्षिणात्य भाषायें प्रभावी ढंग से सिखाने के लिए दक्षिण भारत के अध्यापकों को ही नियुक्त करें। उस अंक का संपादकीय भी उसी पर था।

उसी सिलसिले में केरल भाषा संस्थान के निदेशक डा० ए. एन. पी. उम्मरकुट्टी का यह विचारोत्तेजक लेख यहाँ प्रकाशित है। विद्वान लेखक ने सुझाया है कि हिन्दी राज्यों में हिन्दीतर भाषायें सिखाने के लिए हिन्दीतर भाषा भाषी अध्यापकों को तथा हिन्दीतर भाषा भाषी राज्यों में हिन्दी सिखाने केलिए हिन्दी भाषी राज्यों के अध्यापक कुछ वर्षों के लिए नियुक्त किये जायें।

इस योजना के विशद अंशों पर भाषा शास्त्रियों एवं शिक्षा शास्त्रियों के विचारोत्तेजक लेखों का हम सहर्ष स्वागत करेंगे।

[संपादक, केरल ज्योति]

भारत की भाषा-समस्या के लिए त्रिभाषा योजना को स्वीकार किये अनेक वर्ष बीत चुके हैं। फिर भी पूर्ण रूप से यह अमल में नहीं आयी है। इस क्षेत्र में जो भी प्रगति हुई है, वह तो अहिन्दी प्रान्तों में हुई है— तमिलनाड के सिवा अन्य दक्षिणी प्रान्तों में तथा महाराष्ट्र पश्चिम बंगाल आदि प्रान्तों में। वस्तुतः हिन्दी प्रान्तों के कुछ स्कूलों में कुछ दक्षिणी भाषायें पढ़ाने का परिश्रम हुआ है; लेकिन खुले मन से त्रिभाषा-सूत्र को काम में लाने का श्रम हिन्दी भाषी प्रान्तों में नहीं हुआ है। त्रिभाषा योजना से सहमत होनेवाले राज्य भी पूर्ण रूप से इसे व्यवहार

खुले मन से त्रिभाषा-सूत्र को काम में लाने का श्रम हिन्दी भाषी प्रान्तों में नहीं हुआ है।

में लाने के लिए क्यों तैयार नहीं होते? कारण तो अनेक होंगे। उन सब की व्याख्या करना नहीं चाहता हूँ। सिर्फ एक प्रधान कारण पर चर्चा करें जो त्रिभाषा-योजना का आर्थिक पहलू है।

केरल विश्वविद्यालय के भाषा विज्ञान विभाग के भूतपूर्व प्रोफसर, तंजावूर तमिल विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति और द्राविड़ भाषा-असोसियेशन के अध्यक्ष डॉ० वी. ऐ. सुब्रह्मण्यम ने व्यक्त किया है कि हिन्दी के प्रचार का खर्च बहुत ज्यादा है। (डी. एल. ए. न्यूस 1984 अप्रैल)। वे कहते हैं कि हिन्दी के प्रचार के लिए हर साल केन्द्र सरकार सौ करोड रुपये और विविध राज्य-सरकारें साठ करोड रुपये खर्च करती हैं। इस रकम का अधिकांश भाग हिन्दी भाषियों के पास पहुँच जाता है। कंपनियों तथा अन्य संस्थाओं में हिन्दी अफसर, अनुवादक आदि पदों पर अकसर हिन्दी भाषी ही नियुक्त होते हैं। अतः अखिल भारतीय स्तर पर हिन्दी के
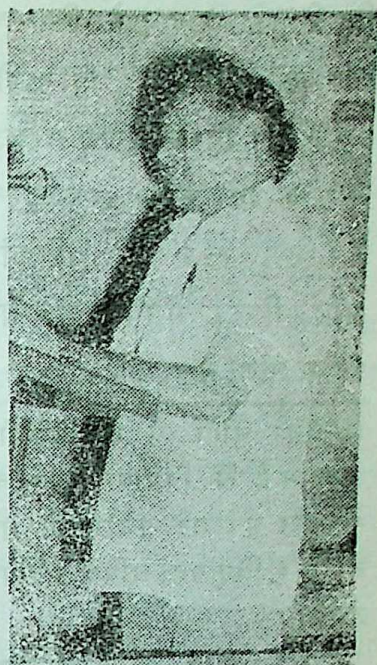
डॉ० ए एन. पी. उम्मरकुट्टी

प्रचार के लिए जिस राशि का खर्च किया जाता है, उसका अधिकांश प्रतिशत अन्त तक हिन्दी भाषियों के हाथों में ही पहुँच जाता है। ऐसी कोई विशेष आर्थिक सहायता उनको नहीं मिलती जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है। हिन्दी के प्रचार के लिए केन्द्र सरकार जितनी रकम का खर्च करती है उतनी रकम हिन्दी प्रदेशों में हिन्दीतर भाषाओं के प्रचार के लिए केन्द्र सरकार दे दे तो, भाषा के प्रचार के लिए कुछ आर्थिक सहायता

हिन्दी के प्रचार के लिए हर साल केन्द्र सरकार सौ करोड रुपये और विविध राज्य-सरकारें साठ करोड रुपये खर्च करती हैं। इस रकम का अधिकांश भाग हिन्दी भाषियों के पास पहुँच जाता है।

हिन्दीतर लोगों को भी मिलेगी। अनुमान है कि त्रिभाषा-योजना की स्वीकृति व उसके प्रचार को तेज़ बनाने के लिए यह अधिक सहायक होगा।

हिन्दी भाषी प्रान्त हिन्दीतर भाषाओं में एक को अपने छात्रों के लिए अवश्य रूप से पढाने को तैयार नहीं होते तो इसका प्रधान कारण यह है कि उसमें अधिक खर्च होगा। यदि एक हाईस्कूल में एक ही अध्यापक के हिसाब से नियुक्त करें तब भी हज़ारों हिन्दीतर-भाषी अध्यापकों को हिन्दी प्रान्तों में नियुक्त करना पडेगा। जब अपने प्रान्त में बेकारी तथा आर्थिक समस्या रहती है तब हिन्दी प्रान्त इतना आर्थिक बोझ लेने को तैयार नहीं होंगे। यही उत्तर भारत के प्रान्तों में त्रिभाषा योजना अमल में न आने का आर्थिक कारण [...] इसलिए प्रारंभ में बताया कि [...] प्रान्तों में अहिन्दी भाषाओं की [...] के लिए उतनी रकम केन्द्र-सर[कार] को खर्च करनी चाहिए [...] अहिन्दी प्रान्तों में हिन्दी के प्र[चार] के लिए खर्च करते हैं।

संविधान की अष्टम सूची [...] 351 वें अधिनियम में हिन्दी के [...] अन्य तेरह भारतीय भाषाओं [...] स्थान दिया गया है। यहाँ [...] देशी भाषाओं को समान स्थान [...] दिया गया है। यह भी बताया [...]

यदि एक हाई स्कूल में एक [...] अध्यापक के हिसाब से नि[युक्त] करें तब भी हज़ारों हिन्दीत[र] भाषी अध्यापकों को हि[न्दी] प्रान्तों में नियुक्त करना पडेगा।

है कि दूसरी आवश्यकता के [...] आज व्यवहार में रहनेवाली हि[...] का विकास होना चाहिए। [...] भाषा के रूप में हिन्दी का विक[ास] ऐसा होना चाहिए कि [...] सहजता नष्ट न हो। वह हिन्दुस्ता[नी] तथा अष्टम सूची में सूचित [...] भारतीय भाषाओं के रूप, शैली [...] अभिव्यक्ति की रीतियों की स्वीकृ[ति]

करे; आवश्यकता एवं ...

के अनुसार पहले संस्कृत और बाद में अन्य भाषाओं से शब्दों की स्वीकृति करे। आज की सीमित हिन्दी और विकसित होकर परिवर्तित होनेवाली व्यापक हिन्दी के बीच में जो भिन्नता है वह भी ध्यान देने योग्य है। उत्तर भारत में व्यवहार में रहनेवाली बोलचाल की भाषा है सीमित हिन्दी। व्यापक हिन्दी वह है जो सभी भारतीय भाषाओं से शब्द, शैली, बिंब आदि बडे पैमाने पर स्वीकार करे। उसे

हिन्दी प्रान्तों में अहिन्दी भाषाओं की पढ़ाई के लिए उतनी रकम केन्द्र-सरकार को खर्च करनी चाहिए जितनी अहिन्दी प्रान्तों में हिन्दी के प्रचार के लिए खर्च करते हैं।

भाव, संरचना और अभिव्यक्ति में महान विकास करके नया रूप धारण करना होगा। केवल नयी हिन्दी ही भारत के सांस्कृतिक समन्वय के सब अंगों की अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में निखर उठ सकती है। यह परिवर्तन एक दीर्घकालीन प्रक्रिया है।

व्यापक हिन्दी वह है जो सभी भारतीय भाषाओं से शब्द, शैली, बिंब आदि बडे पैमाने पर स्वीकार करे।

अर्थात् राष्ट्रीय स्तर पर राज-भाषा तथा संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी का विकास और त्रिभाषा योजना की विजय एक दूसरे के पूरक हैं। यदि त्रिभाषा योजना का व्यवहार संपूर्ण रूप से देश भर में न हो तो राष्ट्रीय संपर्क भाषा हिन्दी का विकास ही रुक जाय। इसीलिए बताते हैं कि त्रिभाषा सूत्र को काम में लाने के लिए केन्द्र सरकार को तैयार होना चाहिए और बडी मात्रा में आर्थिक सहायता भी देनी चाहिए।

हिन्दी भाषी प्रान्तों में हिन्दीतर भाषायें सिखाने को दस या पंद्रह वर्षों की अवधि के एक व्यापक अध्यापक आदान-प्रदान कार्यक्रम का आविष्कार कर सकते हैं। अहिन्दी प्रान्तों के हिन्दी अध्यापकों को डेपूटेशन की शर्त पर हिन्दी प्रान्तों के चुने हुए दस हजार हाई-स्कूलों में (एक स्कूल में एक की दर पर) एक वर्ष के लिए नियुक्त

अहिन्दी प्रान्तों के हिन्दी अध्यापकों को डेपूटेशन की शर्त पर हिन्दी प्रान्तों के चुने हुए दस हज़ार हाई-स्कूलों में (एक स्कूल में एक की दर पर) एक वर्ष के लिए नियुक्त करना चाहिए।

करना चाहिए। एक वर्ष के बाद पहले दल को वापस बुलायें और किसी एक नये दल के अध्यापकों को भेज दें। यदि यह प्रविधि दस वर्ष तक जारी रहे तो अहिन्दी प्रान्तों के एक लाख अध्यापक दस हज़ार हाई-स्कूलों में दस वर्ष हिन्दीतर भाषायें पढ़ा चुके होंगे। एक दशक के तीव्र यत्न से हिन्दी प्रांतों में हिन्दीतर भाषायें अच्छीतरह बोलनेवाले हज़ारों युवकों को तैयार कर सकेंगे। बाद में हिन्दी प्रान्तों का हिन्दीतर भाषाओं का अध्ययन—कार्य एक नया त्रिभाषा समूह स्वयं ले लेगा। अपने राज्य में ही इनको काम चुनने की कठिनाई न होगी। त्रिभाषा-योजना भारत को सांस्कृतिक जीवन की स्थायी रूपरेखा के रूप में निरन्तर ज़ारी रखनी पड़ती है; इसलिए इन युवकों को जिन्होंने हिन्दीतर भाषाओं में योग्यता पायी है हिन्दी प्रा[न्तों में] अध्यापक के रूप में नियुक्त क[रने में] वहाँ की सरकारों को कठिनाई [न] होगी; हिन्दीतर भाषा सिखाने [का] नया अध्यापन कार्य विदेशियों [को] नहीं, वरन्, देश के युवकों को [ही] देते हैं। यह भी ध्यान देना चा[हिए] कि यह नया द्विभाषा समूह हि[न्दी] प्रान्तों में हिन्दीतर भाषाओं [के] समर्थक वक्ता हो जायेंगे।

बात यह है कि हर वर्ष में [दस] हज़ार अध्यापकों के हिसाब से [दस] वर्ष में हिन्दी प्रान्तों में अहि[न्दी] प्रदेशों के एक लाख अध्यापकों [की] नियुक्ति करें। अध्यापकों के दल [को]

यह नया द्विभाषा समूह हि[न्दी] प्रान्तों में हिन्दीतर भाषाओं [के] समर्थक वक्ता हो जायेंगे।

हर साल बदलकर नियुक्त करने [के] अनेक फायदे हैं। कई अध्यापक [एक] साल से अधिक अपरिचित [दूर] स्थानों पर जाकर काम करने [को] तैयार नहीं होंगे। यदि सिर्फ [एक] साल (फलतः दस महीने) तक सीमि[त] कर दें तो अधिकांश युवा अध्याप[क] नया अनुभव पाने की इच्छा से तैया[र] होंगे। अपनी भाषा पढ़ाने के लि[ए]

उत्तर भारत में जानेवाले हिन्दीतर भाषी अध्यापक कभी हिन्दी के वक्ता या राजदूत बनकर लौटेंगे। लौटते समय उनकी हिन्दी वर्षों पहले स्कूल में पढ़ी हुई, केवल कठिनाई से बोली जानेवाली हिन्दी नहीं, बल्कि उत्तर भारत की सुन्दर हिन्दी होगी। चुने जानेवालों में कुछ अध्यापक सपरिवार जायेंगे। प्रत्यक्ष या परोक्ष

एक लाख अध्यापकों से भाषा का ही नहीं, देश के विविध भागों में उत्तर भारत के जीवन की रोचक सांस्कृतिक बातों का भी काफी प्रचार होगा।

रूप से परिवारवाले भी हिन्दी को अपनाते होंगे। ऐसे अध्यापक और परिवारवाले अहिन्दी प्रदेशों के हिन्दी प्रचार केलिए योगदान का प्रामाणित होंगे। एक लाख अध्यापकों से भाषा का ही नहीं, देश के विविध भागों में उत्तर भारत के जीवन की रोचक सांस्कृतिक बातों का भी काफ़ी प्रचार होगा।

अपनी भाषायें सिखाने केलिए हिन्दी प्रदेशों में आनेवाले अहिन्दी

भारत की संस्कृति के सभी अंशों के प्रकाशन के माध्यम के रूप में हिन्दी का विकास होगा।

प्रदेशों के अध्यापक और इन भाषाओं को अपनानेवाले हिन्दी प्रदेश के विद्यार्थी देश में राष्ट्रीय एकता और सांस्कृतिक एकता की नींव डालते हैं। इस जनसंपर्क कार्यक्रम से संख्या से सूचित प्रभाव से कहीं अधिक प्रभाव हमारी विविध भाषाओं और प्रान्तीय जीवन पर पड़ेगा। हजारों शब्दों, शैलियों और अभिव्यक्तियों का आपस में आदान-प्रदान तो होगा ही। संपर्क में आनेवाले अनेक हजारों में कुछ लोगों के साहित्यकार, संपादक या समाज सेवक बन जाने की संभावना होने से भारत की संस्कृति के सभी अंशों के प्रकाशन के माध्यम के रूप में हिन्दी का विकास होगा। जब अन्य भाषाओं से परिचित होते हैं तब जनता के बीच की भिन्नता भी कम हो जायेगी। हिन्दीतर भाषायें पढ़ानेवाले युवकों में उन भाषाओं के प्रति विशेष प्रेम पैदा होगा। इस प्रकार हिन्दीतर भाषायें पढ़ाने के

लिए आनेवाले अध्यापकों का हिन्दी प्रदेश के छात्रों का जो प्रभाव होगा, वह भी कम महत्व का न होगा ।

अध्यापक आदान प्रदान कार्यक्रम एकपक्षीय नहीं होना चाहिए। सीमिति रूप में ही नहीं, उत्तर भारत के हिन्दी अध्यापकों को एक साल की सेवा के लिए अहिन्दी प्रदेशों के प्रधान स्कूलों, कालेजों और विश्व-विद्यालयों के विभागों में नियुक्त करना उचित होगा। वास्तव में तभी

उत्तर भारत के हिन्दी अध्यापकों को एक साल की सेवा के लिए अहिन्दी प्रदेशों के प्रधान स्कूलों, कालेजों और विश्वविद्यालयों के विभागों में नियुक्त करना उचित होगा ।

अध्यापक—आदान प्रदान सार्थक हो जाएगा। अहिन्दी प्रान्तों की हिन्दी पढाई का स्तर सुधारने के लिए यह कार्यक्रम बहुत सहायक होगा। हम जानते हैं कि आज स्कूलों में जो हिन्दी पढायी जाती है, उस हिन्दी की क्षमता बहुत सीमित है। हिन्दी प्रान्तों से आनेवाले अध्यापकों की उपस्थिति हिन्दी का अध्यापन (पढाई) बहुत सजीव एवं सहज बनाने के लिए अधिक सहायक होगी। ऐसे

इस प्रकार का एक विकास हिन्दी को दिलाना ही संविधान के विधाताओं का लक्ष्य था।

अध्यापक जिन स्थानों में जाकर रहते हैं वहाँ रहते समय वहाँ की भाषा को अपनाने का निर्देश दें तो वह भी बडा लाभकारी होगा। हिन्दी भाषा और साहित्य के इन पंडितों को हिन्दीतर भाषा का परिचय एक नयी दुनिया खोल देगा। हम जानते हैं कि किप्लिङ और फोस्टर ने अनेक भारतीय शब्दों व शैलियों को अंग्रेजी में स्थाईरूप से प्रतिष्ठित कर दिया है। क्योंकि उनको भारत की सांस्कृतिक परिस्थिति में जीने का और यहाँ के आदमियों के जीवन से अनुभव पाने का अवसर मिला था। उसी प्रकार अगर हिन्दी भाषा और साहित्य में कुशलता प्राप्त विद्वान अहिन्दी क्षेत्रों म कुछ समय हा जियें और उन भाषा-संस्कृतियों का अंत: सत्व स्वीकार करें तो उन भाषाओं का प्रभाव हिन्दी में भी प्रकट होगा। इस प्रकार का एक विकास हिन्दी को दिलाना ही संविधान के विधाताओं का लक्ष्य था।

हर साल सौ या उससे अधिक हिन्दी अध्यापकों को विसिटिङ् अध्यापकों के रूप में अहिन्दी प्रान्तों

अतः हिन्दी के प्रचार केलिए अब हर साल जितनी राशि खर्च की जाती है, उतनी राशि से दस साल के अन्दर ही भारत भर में त्रिभाषा-योजना अच्छी तरह अमल में ला सकेंगे।

के चुने हुए केन्द्रों में नियुक्त कर सकते हैं। इन राज्यों में अब हिन्दी प्रचार के लिए जो कुछ व्यवस्था है उसको सबल कर दें तो विसिटिंङ् अध्यापकों की संख्या कम कर सके। यदि यह कार्यक्रम भी दस वर्ष के लिए जारी रखें तो अहिन्दी प्रान्तों का हिन्दी प्रचार कार्यक्रम सक्षम बना सकेंगे।

हम देख सकते हैं कि अध्यापक आदान-प्रदान कार्यक्रम का खर्च कितना होगा। वेतन, डेपूटेशन अलवनस्, रेल-सैर की छूट आदि मिलाकर प्रति अध्यापक करीब एक साल पन्द्रह हजार रुपये खर्च होगा। एक लाख अध्यापकों की सेवा का लाभ दस साल तक उठाने के लिए 150 करोड़ रुपये चाहिए। विसिटिंग अध्यापकों की सेवा और क्षेत्रों में दिलायें तो, अधिकतम और 10 करोड़ रुपये भी चाहिए। अतः हिन्दी के प्रचार के लिए अब हर साल जितनी राशि खर्च की जाती है, उतनी राशि से दस साल के अन्दर ही भारत भर में त्रिभाषा-योजना अच्छी तरह अमल में ला सकेंगे। पहले ही स्पष्ट किया गया है कि संपर्क भाषा का विकास और त्रिभाषा योजना दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। यह भी व्यक्त किया गया है कि यदि ऊपर बताई हुई अध्यापक आदान-

यदि केन्द्र सरकार ऐसी तर्कपूर्ण और कल्पनाशील प्रविधियाँ अमल में लाने को तैयार हो जाये तो इस देश की राष्ट्रीय एकता आगे कभी बहस का विषय ही नहीं रहेगी।

प्रदान प्रक्रिया सफलतापूर्वक अमल में लाई जाय तो एक पीढी की अवधि के दौरान प्रत्येक शिक्षित भारतीय निस्संदेह एक प्रमुख प्रांतीय भाषा, हिन्दी और अंग्रेजी का ज्ञान प्राप्त कर सकेगा। बड़े पैमाने पर अध्यापकों का आदान-प्रदान देश की राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक जीवन का एक बड़ा आयाम प्रमाणित होगा। यदि केन्द्र सरकार ऐसी तर्कपूर्ण और कल्पनाशील प्रविधियाँ अमल में लाने को तैयार हो जये तो इस देश की राष्ट्रीय एकता आगे कभी बहस का विषय ही नहीं रहेगी। हम इसका पक्का दावा कर सकते हैं।
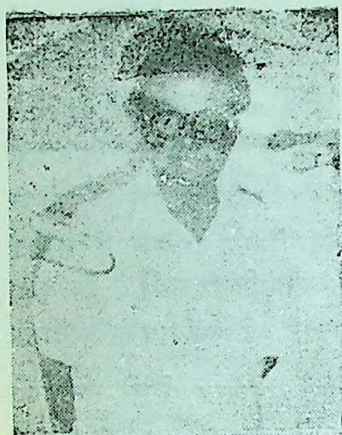
जी. शंकर कुरुप प्रकृति और पुरुष

डा० एन. चन्द्रशेखरन नायर

ज्ञानपीठ पुरस्कार से सर्वप्रथम सम्मानित मलयालम के कवि स्व० जी. शंकर कुरुप का भारतीय साहित्य में ही नहीं, विश्व साहित्य में भी अपना विशेष स्थान है। उनकी तुलना सुमित्रानन्दन पन्त और रवीन्द्रनाथ ठाकुर से की जाती है। इस विद्वत्तापूर्ण लेख में मलयालम और हिन्दी के विख्यात लेखक डा० एन. चन्द्रशेखरन नायर ने जी. शंकर कुरुप के प्रकृति प्रेम का गहराई से अध्ययन किया है। हिन्दी के पाठकों को ध्यान में रखकर उन्होंने जी. के अनेक काव्यांशों का हिन्दी अनुवाद भी यत्र तत्र दिया है। इस परंपरा में डा० नायर के और भी लेख केरल ज्योति में प्रकाशित करने का विचार है। आशा है हिन्दी के सुधी पाठक जी. शंकर कुरुप का तथा मलयालम काव्य साहित्य की प्रवृत्तियों का निकटतम परिचय इस परंपरा से प्राप्त कर सकेंगे।

विशेष स्मरणीय है कि डा० नायर ने जी. शंकर कुरुप और सुमित्रानन्दन पन्त का जो तुलनात्मक अध्ययन शोध प्रबंध के रूप में हिन्दी में प्रस्तुत किया है उसका साहित्य जगत में हार्दिक स्वागत हुआ है।

"किसी विपन्न परिवार में जन्म लेना भाग्य हीनता नहीं है। लेकिन, जहाँ आकाश की अनंत परिसीमा की ओर इशारा करते हुए रहनेवाले ऊँचे-ऊँचे पर्वत नहीं होते, जहाँ कहीं दूरस्थ अपारता की सदा चुनौती से आत्मनिर्भर होकर गानालाप करते हुए बहनेवाली नदियाँ नहीं होतीं, वहाँ जन्म लेना भाग्यहीन होने का लक्षण है। भारत की प्राचीन संस्कृति यही सूचित कर देती है कि मानव के हृदय की उत्तेजना केलिए और जगत के प्रति मानवीय भावना के रूपायित

जहाँ कहीं दूरस्थ अपारता को सदा चुनौती से आत्मनिर्भर होकर गानालाप करते हुए बहनेवाली नदियाँ नहीं होतीं, वहाँ जन्म लेना भाग्यहीन होने का लक्षण है।

होने के लिए पर्वतों एवं नदियों की अवस्थिति कम उपकारी नहीं रही है। हिमालय तथा गंगा के सामीप्य और संपर्क ने पुराने भारतीय चिन्तकों, कवियों और साधुओं के दिलों को किस हद तक उदार, स्पन्दित और पवित्र नहीं कर दिया है? आज हिमालय भारतीय कल्पना में देवतात्मा है और गंगा देवतात्मिका। प्रकृति जी. शंकर कुरुप के लिए आराधनीया माँ जैसी है। उन्हें बडा खेद है कि काका कलेलकर साहब की पुस्तक 'जीवन लीला' में केरल की नदियों का वर्णन क्यों नहीं किया गया है, जबकि लेखक ने भारत की नदियों का सुन्दर तथा भावमय वर्णन प्रकृति की आराधना और वेदोपनिषदों से प्रभावित होकर किया है। लेखक ने जीवनदात्री नदियों को माँ के रूप में चित्रित किया। कवि भी कहते हैं कि जिस चूर्णी नदी ने (पेरियार) उनके हृदय को पाला-पोसा और भावोत्तेजक बना दिया और लोक-कथाओं को सुनाकर उन्हें प्राचीन दृश्यों का दर्शन करा दिया इसे वे भी माँ के संबोधन से पुकारना चाहते हैं। बचपन से ही कुरुप को प्रकृति के प्रति असीम प्रेम था। उसके वर्णोज्वल रूप रंग और सुगन्ध से कवि मुग्ध था। बदलते हुए ऋतुओं के भाव-सौन्दर्य के साथ कवि भी भावनिष्ठ हो जाता था। प्रकृति के ऋतुरूपक में ग्रीष्म नायक है और और नायिका है वर्षा। शरत्, हेमंत और वसंत उनके परिवार के हैं।'

'प्रकृति के ऋतुरूपक में ग्रीष्म नायक है और नायिका है वर्षा। शरत्, हेमंत और वसंत उनके परिवार के हैं।'

कवि अपने बाल्य-काल में कब वर्षा से आकृष्ट हुआ है, उसका वह स्वयं वर्णन करता है। कुरुप अपने मामा के निर्देश से 'श्रीरामोदंतम्' काव्य को कण्ठस्थ करते हुए गांववाले एक मामूली घर के बरामदे में उदासीन बैठे थे। उस समय, इन्द्रधनुष के रेशम से बंधे रहने पर भी अपने

"मानव को मैं इस विराट प्रकृति के अंश के रूप में ही देख सकता हूँ। प्रकृति के ऊपर वह जो विजय प्राप्त करता है असल में वह प्रकृति की विजय है। उसका अन्तः करण प्रकृति की हो निर्मिति है।"

स्वतंत्र मेघ-वालों को समटने का यत्न करने वर्षा वहाँ उतर आयी और मृदुल एवं मधुर ममंर शब्दों से उनसे कहा "यह काव्य पुस्तक बंद कर रखो। मुझसे वार्तालाप करो। मेरी ओर देखो और मेरा गीत सुनो।" कवि आनंद पुलकित हो गया और उसी दिन से वह वर्षा को अतीव प्यार करता है। वह परिचय एवं प्रेम बढ़ता ही गया। आज भी वह श्यामल लावण्य उसे नवान और आकर्षक लगा है। माघ के निम्न लिखित पद्य का आशय विशद रूप से वर्षा ने उन्हें समझाया।

"क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति
तदेव रूपं रमणीयतायाः।"

ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित प्रौढ़ कवि से उनके प्रकृति-प्रेम के बारे में पूछने पर भी यह उत्तर मिला— 'मानव को मैं इस विराट प्रकृति के अंश के रूप में ही दे
सकता हूँ। प्रकृति के ऊपर वह
विजय प्राप्त करता है असल में
प्रकृति की विजय है। उस
अन्तःकरण प्रकृति की ही निर्मिति
अगर कोई 'क्रियेटिव पर्पस' हो
उसका भी फल है। यह सच है
मानव के प्रभाव के कारण प्रकृ
के इतर दृश्य उसके परिपार्श्व
रूप में परिणत हो जाते हैं। फि
भी मनुष्य की प्रकृति की वत्स
सन्तान के रूप में ही देखता हूँ, उस
साथ मत्सर-पूर्वक जूझनेवाले प्रति
द्वंद्वी के रूप में नहीं। माँ ने जि
सम्पदाओं को छिपा कर रखा
उनको वह खोज निकालता है
अपने व्यवहारों से उसको अद्
निर्मित कर देता है। यह मे
विचार-धारा, हो सकता है, ग
हो। किन्तु इसी विचारधारा
कारण मैं प्रकृति एवं मानव जी
को उपादान के रूप में स्वीकृत क
काव्य-रचना करने में सफल
गया हूँ।

प्रकृति मेरे लिए एक खुली
पुस्तिका है। वह प्रतिक्षण नू
अनुभूतियाँ मेरे अन्तरंग में उत्
करती है। कभी-कभी वह एक
विशद प्रतीक के समान मेरे सा

प्रतिभासित हो जाती है। तब मैं उसके पीछे विद्यमान उस अनादि सर्ग-सत्ता की याद कर सकता हूँ। मानव-जीवन तो प्रकीर्ण है। उसमें प्रकृति-सौन्दर्य को सी स्वच्छता नहीं। इसी स्वच्छता के आधिक्य के कारण प्रकृति की सुन्दरता के माध्यम से सत्य तक पहुँचना और उसका दर्शन करना आसान हो जाता है। पर इसका यह अर्थ नहीं निकालना

प्रकृति मेरे लिए एक खुली हुई पुस्तिका है। वह प्रतिक्षण नूतन अनुभूतियाँ मेरे अन्तरंग में उत्पन्न करती है।

चाहिए कि मानव-जीवन का मैंने एकदम तिरस्कार कर दिया है"

कुरुप जी का काव्यारंभ भी प्रकृति के वर्णन से होता है। महाकवि वल्लत्तोल के सम्पादकत्व में 'आत्मपोषिणी' नामक एक पत्रिका चलती थी, जिसमें कुरुप जी का एक वर्षावर्णन, चार पंक्तियों का, प्रकाशित हुआ—

नीरंध्र नील जलदप्पलकप्पुरत्तु
वारंचिटुन्न म.षविल्लु वरच्चु माच्चुं
नेरट्ट कैवळकळाल् चिल मिन्नल् चेत्तूं
पारं लसिक्कुममलप्रकृतिक्कु कूप्पाम्।

(अत्यंत प्रसन्न उस विशुद्ध प्रकृति का मैं वन्दना करता हूँ जो नीरंध्र एवं नील जलद के फलक पर अतीव सुन्दर इन्द्र धनुष्य को रचती और पोंछती है और श्रेष्ठ सिम्बॉलिक कवि जी० शंकर कुरुप वक्र चूड़ियों के द्वारा चमक पैदा कर देती है।)

कवि यह कहते हुए गर्व का अनुभव कर रहा है कि मुझे वर्षा ने ही एक कवि बना दिया है। जाने कितनी बार वर्षा, जो अपने नयनों से उदासीनता हलका सफेदीपन पोंछ डाल रही है, अत्यंत मनोहर इन्द्रधनुष के द्वारा सत्य-सौन्दर्य लक्ष्मी के रत्नगोपुर की ओर इंगित करती रही है। कितनी बार बिजलियों के बहाने वह देवी अपने ध्वजाग्र की पताकाओं को दर्शाती रही। जब 'जी' तिरुविल्वामला की हाई स्कूल में अध्यापक रहे थे, तब इन्द्रधनुष से विशेष आकृष्ट होकर उन्होंने गाया-

मत्त सह्याचल बर्हि विरुत्तिय
चित्तम कवरुन्न पिच्छांचलम।'

[उन्मत्त सह्याचल रूपी मोर ने चित्ताकर्षक पंख फैलाया]

(क्रमशः)

❀

तमसो मा ज्योतिर्गमय

श्री० साईराम

श्री. साईराम

कट! कट!...कट!—
दिन में कट
रात में कट
समय-असमय में कट
जब देखो कट ही कट!
मेरा मतलब कि
अब की 'पवर' कट
अजीब करंट कट!

* * *

हम ने पहले
कई कटों को देखा है —
भोगा है
— हेयर कट
— जेब कट
— राशन में कट
— वेतन में कट
पर ऐसा कट
अब तक देखा नहीं,
सुना नहीं!
अरे वाह! रात में भी करंट कट
यह सोचते
हँसी आ ही जाती है!
इस कट ने
दर असल
हमारा सब कुछ 'कट्टा' है!

* * *

बिजली जलेबी सी
चमकीली बिजली
चमचमाती जगमगाती
हमारे जीवन में तू चढ़ आयी
हम आपस में मिले जुले
फूले-फले
गुदगुदाये—मदमदाये
चकाचौंध में तन मन
भूले पड़े।

* * *

बिजली प्राणों प्यारी बिजली
तू ने हम सब का
मन मोह लिया,
सब का जीवन

सुख से परिपूर्ण किया।
चढ़ती जवानी में बहती वधु-सी आयी
अब तेरे बिना एक छन भी
जीना असंभव है।
तेरे शुभ आगमन से
जीवन में रोशनी फैली
आनन्द छाया
ऐश-आराम हुआ।
घर-घर में हर दिन
दीवाली ही दीवाली थी

* * *

तू अकेली न आयी
तेरे दहेज में
फ्रिड्ज, रेडियो, टी. वी., मिक्सी
और क्या क्या साथ न लायी !
हाय ! इस विकराल कट में
कोई भी काम न आते
सब घर के कोने में
सूने पड़े हैं !

* * *

स्विच हचकते हो
तू जो ठुमुक ठुमुक कर आती थी
अब बार बार
और जोर जोर
दबाने पर भी
हिलती नहीं,
डुलती नहीं !

* * *

पंखे के झोंके में
बाबू बेटा सोता था
एक दम उसके रुकते ही
उठ बैठ कर वह रोता है !
रेडियो ट्यून करता हूँ
विजयलक्ष्मी आ न टपकती !
टी वी. का तो क्या कहना
वह 'इडियट' तो है निकली !
मिक्सी मक्कार करने से
बीबी रानी बेबस है
दफ़्तर का तो समय हो गया
वो कैसे खाना पकायेगी !
फ्रिड्ज के निश्चल होते ही
सारा सामान बेकार हुआ
पीने को 'वाटर' नहीं !
खाने को पकवान नहीं !

* * *

हे भगवान, यह हाल कब सुधरेगा ?
काल में वर्षा बरसती नहीं
न जाने क्यों
अकाल ही वर्षा बरसती है।
बूढी नानी कहती है—
यह कलिकाल की केली है !

* * *

हे भगवान ! हम हैरान हैं
—बेहद हैरान हैं !
देश के जलाशय सारे
रूखे-सूखे काली हैं

ज्यों सरकारी खजाना है !
हे भगवान !
अपनी करनी पर हमें पछतावा है
हम हाथ जोड विनती करते हैं—
रहम की वर्षा बरसाओ और
कट के इस संकट से
हमें बचाओ।
सुना है तानसेन ने दीपक गाकर
उस दिन दीप जगाया था।
और राग मलार से
पानी भी बरसाया था।
आज हम भी मुक्त कंठ हो
मेघ मलार आलापते हैं—

उमड़-घुमड घन घिर घिर आये
रिम झिम वरसे पानी !

भगवान दयावान है—हमें भरोसा है
अविलंब अवलंब मिलेगा ही ।
पानी जम कर बरसेगा
और जलाशय होंगे जलसंपूर्ण !
नाच उठेगी नव-जीवन पा
बिजली रानी पहले-सी !!
और यह कट सदा केलिये
हट !... हट !... हट !...

कविता

तपोभूमि

हरित पहाडियाँ
नील नदियाँ
हरित वाटिकायें
आज कहाँ ?
सुमधुर गीत, सुनानेवाला
सुन्दर कोयल कहाँ गया ?
देश को पुन: हरित कुंज बनायें
रमणीय तपोभूमि बनायें।

दीप्ति, नेटुंप्रम
चोक्ली, तलश्शेरी

दूरभाष : 61378

तार । "जय हिन्दी"

केरल ज्योति

पुष्प 22
दल 7

एक प्रति—1 रु० 50 पं०

सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका

वार्षिक—15 रु०

अक्तूबर 1987

हिन्दी दिवस/सप्ताह सार्थक हो

भारत सरकार के गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग द्वारा एक वार्षिक कार्यक्रम बनाया जाता है जिस में यह सुझाया जाता है कि राजभाषा के रूप में हिन्दी का प्रगामी प्रयोग सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न मंत्रालयों, उपक्रमों, निगमों तथा राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा एक वर्ष के दौरान क्या क्या किया जाना चाहिए। कई वर्षों से इस कार्यक्रम में यह भी सुझाया जा रहा है कि वर्ष में एक बार हिन्दी दिवस या हिन्दी सप्ताह मनाया जाये।

प्रायः सभी केन्द्र सरकारी कार्यालय वर्ष में एक बार हिन्दी दिवस या हिन्दी सप्ताह मनाते भी हैं। पर हिन्दी दिवस की या हिन्दी सप्ताह की तिथि हर कार्यालय अपनी सुविधा के अनुसार निश्चित करता है। यह कुछ अजीब सा लगता है। अन्य सभी राष्ट्रीय दिवसों जैसे गणतंत्र दिवस, स्वतंत्रता दिवस, अध्यापक दिवस, बाल दिवस आदि—की तिथि निश्चित है। एक ही दिन सारा राष्ट्र जब कोई एक त्योहार या विशेष दिवस मनाता है तो उसका प्रभाव अलग ही होता है। हमारा आग्रह है कि हिन्दी दिवस/सप्ताह भी उक्त त्योहारों के समान किसी निश्चित तिथि को राष्ट्र भर में मनाया जाये। तभी उस का कुछ अर्थ निकलेगा। नहीं तो वह निरा शब्द रह जायेगा।

केरल में इस संबंध में कुछ प्रयोग होते रहे हैं। इस वर्ष के हिन्दी सप्ताह का संक्षिप्त सचित्र विवरण इस अंक में दिया गया है। चौदह सितंबर को संविधान में हिन्दी को राजभाषा स्वीकार किया गया था। इसलिए चौदह सितंबर से सात दिवस का समय हमने हिन्दी सप्ताह के लिए चुना।

हमारी कार्यशैली की यह विशेषता रही कि समारोह को राज्य स्तरीय बनाया गया। हर कार्यालय के छोटे छोटे समारोहों के अतिरिक्त/बदले सभी

इस अंक में

कार्यालयों के सम्मिलित प्रयास से ... स्तरीय कार्यक्रम जब आयोजित हु... उन की गरिमा और भी बढ़ी। उन... प्रभाव और भी बढा। उन की उपयोगि... और भी बढ़ी।

केरल के समारोह की तीसरी विशे... यह रही कि इस में सरकारी और ... सरकारी संस्थायें एक जुट हो कर काम ... सकीं जिस से जनता का भागभागित्व ... गया। केरल स्थित केन्द्र सरकारी कार्याल... उपक्रमों, निगमों और राष्ट्रीयकृत बैं... एवं केरल हिन्दी प्रचार सभा के संयु... तत्वावधान में यह समारोह मनाया गया... केरल के महामहिम राज्यपाल ने समारो... का उद्घाटन कर के इस का गौरव बढ़ाया... केन्द्र सरकार एवं केरल सरकार के ... मंत्रियों और अधिकारियों ने इस ... सफलता के लिए अपना योगदान दिया... केरल के वरिष्ठ साहित्यकारों ... बुद्धिजीवियों का भी पर्याप्त सहयो... प्राप्त हुआ। कर्मचारियों के परिवारों ... सदस्यों ने भी समारोह में अपनी विशिष्ट... भूमिका निभाई।

हमारा विश्वास है कि यदि प्रति... इसी ढंग से 14 सितंबर से समूचे राष्ट्र ... सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं ... सहयोग से हिन्दी सप्ताह मनाया ... सके तो हिन्दी की ही नहीं समस्त भारती... भाषाओं की प्रतिष्ठा बढ सकेगी और... राजभाषा का स्थान भारतीय भाषायें पू... रूप से ग्रहण कर सकेंगी।

अंग्रेजी के प्रभुत्व से मुक्त हों

श्री० एम पी. वीरेन्द्र कुमार
प्रबन्ध निदेशक, मातृभूमि

[केन्द्रीय सरकार की सहायता से केरल हिन्दी प्रचार सभा के तत्वावधान में कोषिक्कोट में 16-9-1987 से 30-9-1987 तक आयोजित हिन्दी प्रचारक नवीकरण पाठ्यक्रम के प्रमाण पत्र वितरण समारोह में 30-9-1987 को दिये उद्घाटन भाषण का सारांश।]

श्री. एम. पी. वीरेन्द्र कुमार

महात्मा गांधी ने देश की एकता को सुदृढ बनाने के लिए हिन्दी भाषा को चुना। पर आज उत्तर भारत में हिन्दी हिन्दुओं की भाषा और उर्दू मुसलमानों की भाषा मानी जाने लगी है।

भाषा एकीकरण का मंत्र है। इसी के माध्यम से मनुष्य मनुष्य का संपर्क स्थापित हो जाता है।

मेरी शादी कर्नाटक में हुई है। मेरी पत्नी मराठी बोलती है। वहाँ भाषा को लेकर बड़े तर्क वितर्क हो रहे हैं। आज सबसे अधिक स्फोटक वस्तु भाषा है। भाषा के नाम पर मनुष्य मनुष्य का शत्रु बन जाता है। इससे हम अनुमान कर सकते हैं कि हमारा चिंतन और कार्य कितना विकृत हो गया है।

केरल हमेशा हिन्दी अध्ययन को प्रोत्साहित करता रहा है। राष्ट्र-भाषा के रूप में हिन्दी का अध्ययन

(शेष पृष्ठ 5 पर)

संगच्छध्वम्, संवदध्वम् ।

प्रो० सुकुमार अ.पीक्कोट
भूतपूर्व उपकुलपति, कोषिक्कोट विश्वविद्यालय

[केन्द्र सरकार की सहायता से केरल हिन्दी प्रचार सभा के तत्वावधान में कोषिक्कोट में 16-9-1987 से 30-9-1987 तक आयोजित हिन्दी प्रचारक नवीकरण पाठ्यक्रम के समापन समारोह में 30-9-1987 को दिये गये अध्यक्षीय भाषण का सारांश]

हिन्दी प्रचारकों के नवीकरण पाठ्यक्रम के सिलसिले में आयोजित प्रमाण-पत्र वितरण सम्मेलन में अध्यक्षीय भाषण दे रहे हैं प्रो. सुकुमार अ.पीक्कोट । श्री. एम. के. वेलायुधन नायर (मंत्री, केरल हिन्दी प्रचार सभा), श्री. पी. पी. उम्मर कोया (भूतपूर्व शिक्षा मंत्री, केरल), श्री. एम. पी. वीरेन्द्र कुमार (प्रबन्ध निदेशक, मातृभूमि) एवं डा० जी. गोपीनाथन (प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, कालिकट विश्वविद्यालय) मंच पर बैठे हैं ।

स्वतंत्रता संग्राम के समय इस देश के आकाश को अस्पष्ट नीलिमा के नीचे नक्षत्र मण्डल के ऊपर से आने-वाला एक प्रकाश था। वह एक ऐसा अपूर्व इन्द्रधनुष था जो यहाँ की विविध जातियों, धर्मों, प्रान्तों और भाषाओं के वर्णों का समन्वयन करता था। वह यहाँ की सभी भिन्नताओं के ऊपर छाया हुआ था। स्वतंत्रता संग्राम के समय केरल के कवियों ने गाया—"हे इन्द्रधनुष, तू अमिट बना रह। यह इन्द्रधनुष यहाँ के संपूर्ण जीवन के सौन्दर्य का सत्य था। इस के वर्ण सौन्दर्य के एक अंश के रूप में हिन्दी प्रचार का आरंभ हुआ।

इस देश में एक आम भाषा की संकल्पना बहुत पुरानी है। आसेतु-हिमाचल फैले इस देश में जब विविध समूहों के लोग बस गये तब उनके हृदयों से एक प्रार्थना निकली—यहाँ के लोगों के लिए एक भाषा हो। ऋग्वेद की अंतिम ऋचा है—संगच्छध्वम् संवदध्वम्। मिल के चलो। मिल के बोलो। यह तभी संभव है जब यहाँ की सारी जनता का मन एक हो। महाकवि कुमारन आशान ने गाया –

"आप लोगों का एक देश हो
आप लोगों की एक भाषा हो।"

पंजाबी, गुजराती, मलयाली जैसे विविध भाषा भाषी भारतीयों के मन को एक करने के लिए एक भाषा चाहिए। इसलिए गांधीजी ने हिन्दी को चुना। उन्होंने हिन्दी प्रचार को अपने रचनात्मक कार्यक्रमों में प्रमुख स्थान दिया।

हिन्दी अध्यापन का लक्ष्य भारत के हृदयों को निकट लाना होना चाहिए। हिन्दी अध्यापकों को अपने अध्यापन के समय आकाश की ओर देखना है और यह सुनिश्चित करना है कि वहाँ इन्द्रधनुष दिखने लगता

(पृष्ठ 3 से आगे)

अनिवार्य है। विश्व के सभी प्रमुख राष्ट्रों की अपनी अपनी राष्ट्रभाषायें हैं। सोवियत संघ में अनेक प्रान्तीय भाषायें भी हैं, राष्ट्र भाषा भी है। आज भी हमारे देश में अंग्रेज़ी का प्रभुत्व है। स्वतंत्रता का अर्थ है जीर्णता से आत्मा की मुक्ति। अंग्रेजी के प्रभुत्व से हमें मुक्त होना है। तमसो मा ज्योतिर्गमया। ❀

है। हिन्दी अध्यापन से इन्द्रधनुष का मनोहर वर्ण मिटने नहीं पायी।

हिन्दी के प्रचारक बन्धु हिन्दी अध्यापन को एक नौकरी या जीविकोपार्जन का एक उपाय न मानें। हिन्दी भाषा सिखाने का उद्देश्य अन्य भाषाओं के अध्यापन के उद्देश्यों से भिन्न है। मानव हृदयों को मिलाना ही हिन्दी अध्यापन का लक्ष्य है। हिन्दी अध्यापन के द्वारा हम भारत के बिछुड़े हुए अंगों को मिला लें।

हिन्दी को भारतीय संस्कृति का सुन्दरतम अंश बनायें। हिन्दी प्रचार को देशसेवा का कार्य मानें। स्वतंत्रता संग्राम की टूटी कड़ियों को मिलाने में हिन्दी प्रचार समर्थ हो सके।

हिन्दी प्रचारकों का नवीकरण पाठ्यक्रम, कोंडिक्कोट। श्रोताओं का एक दृश्य

हिन्दी प्रचारक राष्ट्रशिल्पी हैं

श्री. पी. पी. उम्मरकोया
(भूतपूर्व शिक्षा मंत्री, केरल)
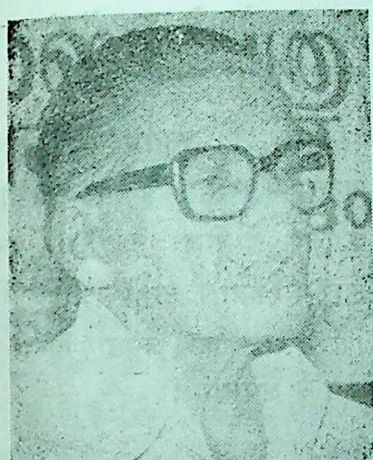
श्री. पी. पी. उम्मरकोया

[केरल हिन्दी प्रचार सभा के तत्वावधान में कोषिक्कोट में आयोजित हिन्दी प्रचारक नवीकरण पाठ्यक्रम के समापन समारोह में प्रचारकों के प्रमाण पत्र वितरण करते हुए दिये गये भाषण का सारांश ।]

सन् 1934 में गांधीजी यहाँ आये थे। कोषिकोट टाउण हॉल में उन्होंने ए. माधवन नायरजी का चित्र अनावृत किया था। उन दिनों में मैं प्राइमरी स्कूल का विद्यार्थी था गांधीजी को देखने गया। पर इतनी भीड थी कि देख नहीं पाया।

फिर मद्रास में गांधीजी आये। मलबार के कुछ नेता उनसे मिलने गये। आगाखान महल की कैद से छूट कर गांधीजी कुछ दिन बीमार रहे। उसके बाद वे देश का भ्रमण कर रहे थे। हमें मुलाकात का समय मिला। प्रार्थना सम्मेलन के बाद गांधीजी जब अपने निवास के छत पर टहलते थे उस समय हमें मिलना था। हम भी प्रार्थना सम्मेलन में उपस्थित रहे। सम्मेलन में गांधीजी ने कहा— इस देश की जनता का कर्तव्य क्या है? इस देश की सारी जनता को एक करना। हम सब एक हैं। ऐसा विचार जब इस देश की सारी जनता के हृदय में समा जायेगा तब हमारी राष्ट्रीयता पूर्ण होगी। तब कोई साम्राज्य शक्ति इस देश की स्वतंत्रता का निषेध नहीं कर सकेगी।

सम्मेलन के तुरन्त बाद हम छत पर चढ गये। लो, वे आ रहे हैं। मुस्कुराते हुए छत पर चढ रहे हैं। उन्होंने कहा—यह मेरे टहलने का समय है। आप को कष्ट होगा। इसलिये यहाँ बैठे बात करें। हमारी

टोली के नेता मुयुतु मौलवी साहब थे। उन्होंने कहा :— नहीं बापुजी, आप टहलियेगा। हम आप के साथ टहलेंगे। 'तो मैं धीरे धीरे टहलूंगा।' ऐसा कह कर वे टहलने लगे। उन्होंने कहा—अब हमारे देश को स्वतंत्र होने में अधिक विलंब नहीं लगेगा। ओनली ए मेटर ऑफ टाइम। बिना विलंब हमें स्वतंत्रता मिलेगी। पर मेरे मन को उद्विग्न करनेवाली समस्या दूसरी है। स्वतंत्रता पाने पर उसे कायम रखने केलिए क्या देश की जनता मिलजुल कर रह सकेगी? इस देश के विविध प्रांतों की जनता अपने को इस देश की जनता मान कर जीने केलिए तैयार हो जायगी? यदि नहीं तो क्या इस देश की स्वतंत्रता कायम रह सकेगी? यही समस्या मुझे दुःखी बना रही है। इस देश की स्वतंत्रता चाहने वालों का धर्म यही है कि इस देश की जनता में एकता लाने केलिए यथाशक्ति प्रयत्न करें। जनता में फूट डालनेवाले प्रयत्नों को पराजित करने का परिश्रम करें।"

दक्षिण की जनता और उत्तर की जनता में रागात्मक संबंध जोड़ने के लिए गांधीजी ने हिन्दी प्रचार आरंभ किया। उन्होंने आग्रह किया कि दक्षिण की जनता हिन्दी को प्रेम से अपनाये।
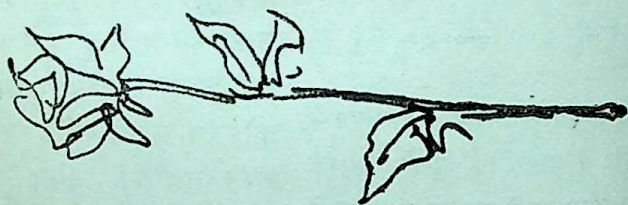
मेरा नम्र लेकिन दृढ अभिप्राय है कि जब तक हम हिन्दी भाषा को राष्ट्रीय और अपनी अपनी प्रान्तीय भाषाओं को उन का योग्य स्थान नहीं देते तब तक स्वराज्य की सब बातें निरर्थक हैं।

—महात्मा गांधी

हिन्दी माध्यम में एक तकनीकी संगोष्ठी

श्रीमती वी. एस. कोमल कुमारी
हिन्दी अधिकारी
विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केन्द्र
तिरुवनन्तपुरम

वी. एस. एस. सी. में जुलाई 21 एवं 22, 1987 में "अन्तरिक्ष प्रौद्योगिकी के विकास" पर एक अन्तर-केन्द्र संगोष्ठी एवं कार्यशाला आयोजित की गयी है। यद्यपि तकनीकी विषयों में संगोष्ठियाँ और कार्यशालाएँ चलायी हैं तथा केन्द्र में राजभाषा के रूप में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग के लिए अनेक कदम उठाये हैं फिर भी तकनीकी विषय पर हिन्दी में इस प्रकार संगोष्ठी एव कार्यशाला आयोजित करना हमारा पहला प्रयास है। यह, विविध डी. ओ. एस/इसरो केन्द्रों/यूनिटों के प्रतिनिधिओं को अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के विविध विकास पहलुओं को मानव भलाई केलिए प्रयुक्त करने के बारे में मिलकर चर्चा करने का अवसर ही नहीं बल्कि तकनीकी चर्चाओं में माध्यम के रूप में हिन्दी को अपनाने की उसकी दक्षता को भी प्रमाणित किया है।

तकनीकी विषय पर हिन्दी में इस प्रकार संगोष्ठी एवं कार्यशाला आयोजित करना हमारा पहला प्रयास है।

इस संगोष्ठी एवं कार्यशाला में देश के विविध भागों से 120 प्रतिनिधियों ने भाग लिया था। इसका
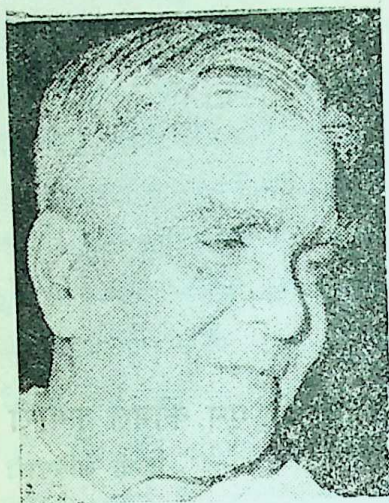
श्री. पी. रामचन्द्रन

उद्घाटन केरल के महामहिम राज्यपाल श्री. पी. रामचन्द्रन ने किया। महामहिम राज्यपाल ने अपने उद्घाटन भाषण में राष्ट्रभाषा के विकास
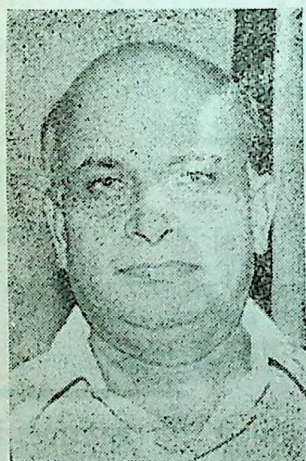
श्री. एस. सी. गुप्त

को बढावा देने के महत्व पर विचार करते हुए देश के अनुसंधान और विकास क्रिया-कलापों में ऐसी संगोष्ठियों की उपयोगिता पर भी प्रकाश डाला। डॉ० एस. सी. गुप्त निदेशक, वी एस. एस. सी. ने अपने अध्यक्षीय भाषण में वैज्ञानिक तथा तकनीकी हिन्दी शब्दावली के निर्माण तथा विकास कार्य — संस्कृत भाषा द्वारा कैसे संभव है इसपर विशद विवरण दिया। उन्होंने कहा कि हिन्दी के प्रचार के लिए केवल आमफहम शब्दों का उपयोग किया जाना चाहिए और दूसरी भाषाओं के प्रचलित शब्दों का उपयोग करने में ज़रा भी हिचक नहीं होनी चाहिए। श्री. के. बी. पिल्लै, नियत्रंक और अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति ने प्रतिनिधियों का स्वागत किया। डॉ० पी. वी. मनोरंजन राव, अध्यक्ष, संगोष्ठी संयोजक समिति, ने कृतज्ञता प्रकट की।

पाँच तकनीकी सत्रों द्वारा 50 लेख प्रस्तुत किये गये। संगोष्ठी में निम्न क्षेत्रों पर चर्चा हुई: प्रमोचन यान प्रौद्योगिकी, उपग्रह प्रौद्योगिकी, दूरमिति, अनुवर्तक एवं दूरादेश को सम्मिलित कर भू-केन्द्र एवं परासर का विकास, प्रदाय-भार विकास

अंतरिक्ष उपयोग और "स्पिन आफ" अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी विकास-विशेष परिचर्चा। इसके अलावा डॉ० डी. के. गुप्त, उपनिदेशक, हिन्दी प्रकाशन बोर्ड, बनारस हिन्दु विश्व-विद्यालय के प्रोफेसर के. किशोर, अकर्बनिक रसायन विभाग, भारतीय विज्ञान संस्था, बंगलौर तथा डॉ० एम. सी. गुप्त, निदेशक (अनुसंधान), राजभाषा विभाग, नई दिल्ली जैसे विशेष आमंत्रित विशेषज्ञों के भाषण भी थे। उन्होंने अपने जोशीले भाषण में यह

तकनीकी कार्यों में हिन्दी के प्रयोग को बढावा देना उचित रहेगा।

विचार व्यक्त किया कि हिन्दी के प्रचार से हुई उपलब्धियों को हम कैसे संग्रहीत करें तथा अपने कार्यक्रम को कसे आगे बढाएँ।

कार्यशाला में तकनीकी क्षेत्रों में हिन्दी भाषा का विकास हिन्दी में इंजीनियरी और तकनीकी शिक्षा तकनीकी और वैज्ञानिक क्षेत्रों में हिन्दी का उपयोग जैसे हिन्दी भाषा के तीन पहलुओं पर चर्चा हुई। उक्त विषयों के आधार पर 10 लेख प्रस्तुत किये गये।

समापन सत्र में डॉ० डी. के. गुप्त, उपनिदेशक, बनारस हिन्दु विश्व-विद्यालय ने इस संगोष्ठी एवं कार्यशाला से उत्पन्न आश्चर्यजनक प्रतिक्रिया पर प्रशंसा व्यक्त की। उन्होंने सुझाव दिया कि ऐसी संगोष्ठी एवं कार्यशालाएँ आवधिक रूप में अन्य केन्द्रों में भी आयोजित करके अब जनित उत्साह को बनाये रखना तथा तकनीकी कार्यों में हिन्दी के प्रयोग को बढावा देना उचित रहेगा। प्रतिनिधियों ने एकमत से व्यक्त किया कि इस संगोष्ठी एवं कार्यशाला के सफलतापूर्वक आयोजन से यह प्रमाणित हुआ है कि संगठन के दैनंदिन क्रियाकलापों में हिन्दी का आगे इस्तेमाल करना संभव है। उन्होंने बताया कि अन्य केन्द्रों में भी इस प्रकार की संगोष्ठी एवं कार्यशालाएँ आयोजित करने के बारे में विचार करना है।

हिन्दी सप्ताह समारोह—1987

हिन्दी सप्ताह समारोह–1987

योजना सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए केरल परिमण्डल के पोस्ट मास्टर जनरल श्री. सी. जे मात्यु बोल रहे हैं। बैठे हैं श्री. बी. गप्त (प्रबन्ध निदेशक, स्टेट बैंक आफ ट्रावनकोर), श्री. आनन्द शंकर (महालेखाकार, केरल) एवं डा० एन. ई. विश्वनाथ अय्यर।

आयोजन

केरल हिन्दी प्रचार सभा के नेतृत्व में 14 से 20 सितंबर तक 1987 का हिन्दी सप्ताह समारोह राज्य स्तर पर मनाया गया। इस में केरल स्थित केन्द्र सरकारी कार्यालयों, उपक्रमों, निगमों एवं राष्ट्रीयकृत बैंकों का पूर्ण सहयोग रहा।

समारोह के आयोजन के लि 24-8-1987 को सभा भवन में के सरकारी कार्यालयों के प्रतिनिधि का एक सम्मेलन बुलाया गया सम्मेलन की अध्यक्षता स्टेट बैं ऑफ ट्रावनकोर के प्रबन्ध निदे श्री. बी. गुप्त ने की।

सम्मेलन का उद्घाटन करते हु केरल के पोस्ट मास्टर जनरल

केन्द्र सरकार के विभिन्न कार्यालयों, उपक्रमों, निगमों एवं राष्ट्रीयकृत बैंकों के प्रतिनिधि हिन्दी सप्ताह समारोह—1987 के विविध कार्यक्रमों पर चर्चा कर रहे हैं ।

तिरुवनन्तपुरम के नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष श्री. सी. जे. मात्यु ने आह्वान किया कि संविधान द्वारा भारत की राजभाषा स्वीकृत हो चुकी, हिन्दी का प्रगामी प्रयोग करने का प्रयत्न केरल स्थित सभी केन्द्र सरकारी कार्यालय करें। उन्होंने कहा कि तिरुवनन्तपुरम की दोनों नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियां हिन्दी के प्रयोग में दत्तचित्त हैं, जिसके उपलक्ष्य में हाल ही में गृह मन्त्रालय का राजभाषा षील्ड तिरुवनन्तपुरम को मिला है। उन्होंने आग्रह किया कि हिन्दी सप्ताह के दौरान हिन्दी के प्रयोग को प्रगामी बनाने केलिए प्रभावी प्रयत्न किये जायें।

अपने अध्यक्षीय भाषण में स्टेट् बैंक ऑफ ट्रावनकोर के प्रबन्ध निदेशक श्री. बी. गुप्त ने कहा कि स्वतंत्रता के चालीसवें वार्षिक समारोह के इस अवसर पर हिन्दी सप्ताह समारोह का आयोजन पूर्वाधिक सफलता के साथ किया जाय। उन्होंने आशा व्यक्त की कि केरल हिन्दी प्रचार सभा के नेतृत्व में आयोजित

यह कार्यक्रम अन्य प्रान्तों के लिए अनुकरणीय निकलेगा।

केरल के महालेखाकार (लेखा परीक्षा विभाग) श्री. आनंदशंकर ने केन्द्र सरकारी कार्यालयों, उपक्रमों, निगमों एवं राष्ट्रीयकृत बैंकों के कर्मचारियों से अनुरोध किया कि वे राजभाषा के रूप में हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग करें।

चर्चाओं में भाग लेते हुए डॉ०एन. ई. विश्वनाथ अय्यर (भूतपूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, कोच्चिन विश्वविद्यालय), डॉ० वी. एन. उण्णि (निदेशक, आकाशवाणी, तिरुवनन्तपुरम केन्द्र), श्री. एन. केशवन नायर (उप प्रधान पत्र सूचना अधिकारी, तिरुवनन्तपुरम), श्री. जी. पी. कुमारस्वामी आचारी (वैज्ञानिक, सेन्ट्रल मरैन रिसर्च इनस्टिट्यूट), श्री. पी. रामनकुट्टी (लेखा अधिकारी, महालेखाकार का कार्यालय, तिरुवनन्तपुरम) आदि ने आयोजन की सफलता के लिए आवश्यक सुझाव दिये।

केरल हिन्दी प्रचार सभा के मंत्री श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने स्वागत भाषण दिया और सभा के उपाध्यक्ष अधिवक्ता श्री. के. पी. अलिकुञ्ञु ने कृतज्ञता प्रकाशित की।

समारोह के आयोजन के लिए समिति का गठन किया गया जि[...] विवरण नीचे दिया जा रहा है।

अध्यक्ष :

श्री. सी. जे. मात्यु
पोस्ट मास्टर जनरल
केरल परिमण्डल एवं
अध्यक्ष, नगर राजभाषा का[...]
समिति, तिरुवनन्तपुरम

प्रधान संयोजक :

श्री. एम. के. वेलायुधन नायर
मंत्री, केरल हिन्दी प्रचार सभा
तिरुवनन्तपुरम एवं
सदस्य, केन्द्रीय हिन्दी समिति

सदस्य :

श्री. बी.ए० प्रभु
उप-महा प्रबन्धक, कैनरा बैंक
मण्डल कार्यालय
स्पेन्सर जंक्शन, तिरुवनन्तपुरम
तथा
अध्यक्ष, नगर राजभाषा का[...]
समिति (बैंक), तिरुवनन्तपुरम

श्री. बी. गुप्त
प्रबन्ध-निदेशक
स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोर
प्रधान कार्यालय, पूजप्पुरा
तिरुवनन्तपुरम-695 012

श्री. आनन्द शंकर
महा लेखाकार (लेखा परीक्षा)
केरल, तिरुवनन्तपुरम

श्री. के. वी. पिल्ल
नियन्त्रक,
विक्रम साराभाई अन्तरिक्ष केन्द्र
तिरुवनन्तपुरम-695 022

श्री. वी. एन. उण्णि
निदेशक, आकाशवाणी
तिरुवनन्तपुरम-695 014

श्री. के. कुन्हिकृष्णन
निदेशक, दूरदर्शन केन्द्र
कुटप्पनक्कुन्नु,
तिरुवनन्तपुरम-695 005

श्री. यू. वी. नायक
महाप्रबन्धक, दूरसंचार
केरल परिमंडल,
तिरुवनन्तपुरम-695 033

डा० पी. वी. एस. नंपूतिरिप्पाट
प्रबन्ध–निदेशक
हिन्दुस्तान लैटक्स, पूजप्पुरा
तिरुवनन्तपुरम-695 012

श्री. सी. वी. नायर
अधीक्षक–इंजिनीयर
केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग
केशवदासपुरम
तिरुवनन्तपुरम-695 004

श्री. बी. टी. पिल्लै
संयुक्त निदेशक,जनगणना विभाग
गृह मंत्रालय, कवटियार
तिरुवनन्तपुरम-695 003

श्री. बी. एस. मागन
मुख्य क्षेत्रीय प्रबन्धक
भारतीय स्टेट बैंक
तिरुवनन्तपुरम-695 003

श्री आर. रामन
सहायक कमान्डैन्ट
केन्द्रीय रिसर्व पुलिस केन्द्र
पल्लिप्पुरम-695 316

श्री० एन. केशवन नायर
उप-प्रधान पत्र सूचना अधिकारी
पत्र सूचना कार्यालय, तंपानूर
तिरुवनन्तपुरम-695 001

श्री. आर. सी. गुप्त
महा प्रबन्धक
कोवलम अशोक बीच रिसोर्ट
भारत पर्यटन विकास निगम, कोवलम

श्री. प्रताप सिंह बुन्धा
दूर संचार नियन्त्रक, हवाई अड्डा
तिरुवनन्तपुरम-695 007

डा० वी. एस. गोपालन
क्षेत्रीय सलाहकार,
एन. सी. ई. आर. टी.
पूजप्पुरा, तिरुवनन्तपुरम-695 012

श्री. पी. रामनकुट्टि
लेखा परीक्षक
महालेखाकार का कार्यालय
तिरुवनन्तपुरम-695 039

श्री. जो. पी. कुमारस्वामी आचारी
वैज्ञानिक, केन्द्रीय समुद्रवीय मत्सिकी
विषिन्जम

श्री. पी. के. के. मेनोन
कल्याण अधिकारी
पोस्ट मास्टर जनरल का कार्यालय
तिरुवनन्तपुरम-695 033

डा० जोस [illegible]
सहायक निदेशक
हिन्दी शिक्षण योजना, गृह मंत्रालय
विक्रम साराभाई स्पेस सेन्टर, तुम्पा
तिरुवनन्तपुरम-695 022

श्री. सी. के. शशिकुमार
हिन्दी अधिकारी,
महाप्रबंधक का कार्यालय, दूर संचार
तिरुवनन्तपुरम-695 033

श्रीमती इन्दिरा जी. नायर
हिन्दी अधिकारी
जिला प्रबंधक का कार्यालय
तिरुवनन्तपुरम दूर संचार
भारती मन्शन, प्लामूट
तिरुवनन्तपुरम-695 004

श्रीमती रमा वारियर
वैज्ञानिक सर्वेक्षक, वैज्ञानिक सर्वेक्षण
पूर्वी तंपानूर, तिरुवनन्तपुरम-695 014

श्री. एम. ए. जोसफ
उप-प्रबंधक (लेखा परीक्षा)
भारतीय खाद्य निगम
मुनिसिपल कारपरेशन बिल्डिग
तिरुवनन्तपुरम-695 033

श्रीमती बी. सरोजिनी
पोस्ट-ग्राजुबेट अध्यापिका
केन्द्रीय विद्यालय, पट्टम
तिरुवनन्तपुरम-695 004

श्रीमती पी. कोमलकुमारी अम्मा
हिन्दी अधिकारी
विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केन्द्र, तुम्पा
तिरुवनन्तपुरम-695 022

श्री ए. माधवन नायर
प्रबंधक (राजभाषा)
स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोर
प्रधान कार्यालय, पूजप्पुरा
तिरुवनन्तपुरम-695 012

डा० राजेष कुमार जैन
राजभाषा अधिकारी, यूनियन बैंक
महात्मा गांधी रोड,
तिरुवनन्तपुरम-695 001

डा० एन. ई. विश्वनाथ अय्यर
भूतपूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
कोचिन विश्वविद्यालय टूटेर्स लेन
तिरुवनन्तपुरम-695 001

प्रो० पी. जे. जोसफ
अध्यक्ष, केरल हिन्दी प्रचार सभा
तिरुवनन्तपुरम-695 014

प्रो० एम. जनार्द्दनन पिल्लै
कोषाध्यक्ष, केरल हिन्दी प्रचार सभा
तिरुवनन्तपुरम-695 014

श्री. के. जी. बालकृष्ण पिल्लै
संपादक, 'केरल ज्योति"
तिरुवनन्तपुरम-695 014

श्री. सी ए. जेकब
हिन्दी अधिकारी, रबर बोर्ड
कोट्टयम

हिन्दी सप्ताह समारोह समिति की बैठकें कई बार पोस्ट मास्टर जनरल, तिरुवनन्तपुरम के सम्मेलन कक्ष में आयोजित हुई जिन में समारोह के विविध कार्यों का प्रारूप बनाया गया।

भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी पर युवा पीढी के हृदय में गर्व उत्पन्न करना राजभाषा के रूप में उसका उपयोग व्यापक बनाने के लिए अत्यन्त अपेक्षित है ।

उद्घाटन

समारोह का उद्घाटन स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोर के मुख्य कार्यालय, पूजप्पुरा में आयोजित सम्मेलन में केरल के माननीय राज्यपाल श्री. पी. रामचन्द्रन ने किया। उन्होंने
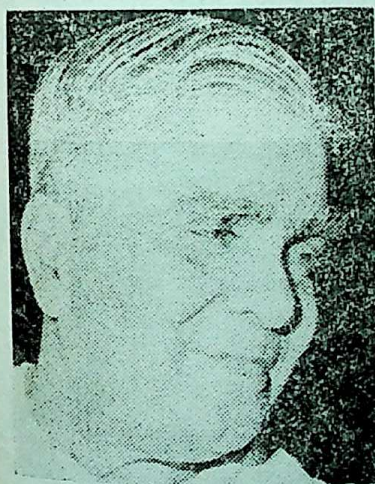
श्री. पी. रामचन्द्रन

कहा:—"भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी पर युवा पीढी के हृदय में गर्व उत्पन्न करना राजभाषा के रूप में उसका उपयोग व्यापक बनाने के लिए अत्यन्त अपेक्षित है। एक न एक दिन हमारे प्रशासन में हिन्दी को प्रथम स्थान मिलेगा ही। भाषा की समस्या में भावुकता अभिलषणीय नहीं है। हिन्दी के प्रचार के लिए वर्द्धित उत्साह से कार्य करें।"

सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए श्री. बी. गुप्त ने कहा कि स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोर हिन्दी के प्रयोग

श्री. बी. गुप्त

के लिए आवश्यक कर्मचारियों के पदों का सृजन किया जा चुका है।

केरल परिमण्डल के पोस्टमास्टर जनरल श्री. सी. जे. मात्यु ने इस आशंका को निर्मूल साबित किया कि

श्री सी. जे मात्यु

हिन्दी को राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने पर हिन्दीतर भाषा भाषियों के लिए नौकरी पाने के अवसरों में कमी पड जायेगी। हिन्दी दिवस के सिलसिले में स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोर द्वारा अपने कर्मचारियों के लिए आयोजित विविध हिन्दी प्रतियोगिताओं के विजेताओं को श्री. सी. जे. मात्यु ने पुरस्कार वितरित किये।

महालेखाकर श्री. आनंदशंकर ने इस वाद का खंडन किया कि भारतीय भाषायें राजभाषा का कार्य करने में

जिस प्रकार केरल में हिं[दी] प्रचार केलिए अनुकूल वातावर[ण] उत्पन्न करके इतर प्रान्तों [में] नौकरी पाने के अवसर केरल [के] युवकों केलिए उपलब्ध किये [जा] रहे हैं उसी प्रकार इतर प्रान्[तों] में भी किया जाय।

सक्षम नहीं हैं और कहा कि उपयो[ग] करते करते भाषा की क्षमता ब[ढ़] सकते हैं।

श्री. आनंद शंकर

के[...] अध्यक्ष[...] आग्रह[...] प्रति [...] जा[...]
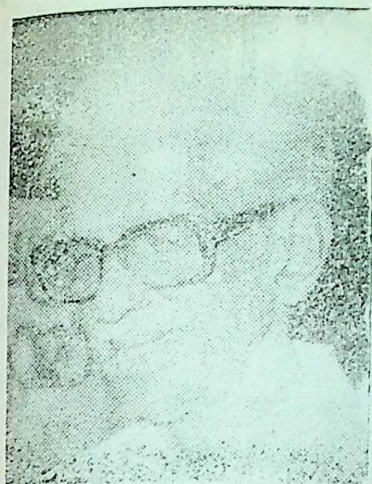
प्रो० एस. गुप्तन नायर

केरल साहित्य अकादमी के अध्यक्ष प्रो० एस. गुप्तन नायर ने आग्रह किया कि केरल हिन्दी के प्रति जो सौहृद दिखाता रहा है वह जारी रहे। केरल हिन्दी प्रचार सभा के मंत्री श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने कहा कि जिस प्रकार केरल में हिन्दी प्रचार के लिए अनुकूल वातावरण उत्पन्न करके इतर प्रान्तों में नौकरी पाने के अवसर केरल के युवकों के लिए उपलब्ध किये जा रहे हैं उसी प्रकार इतर प्रान्तों में भी किया जाय।
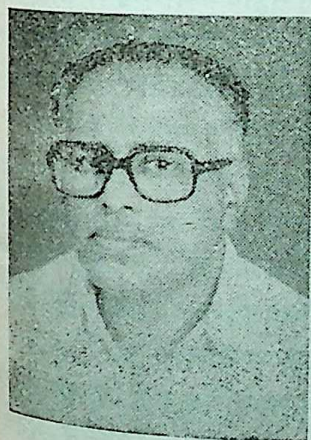
स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोर के महाप्रबन्धक श्री. एस. श्रीनिवासन ने स्वागत भाषण दिया और स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोर के प्रबन्धक (राजभाषा विभाग) श्री. ए. माधवन नायर ने कृतज्ञता प्रकट की।

प्रदर्शनी

समारोह के सिलसिले में भारत सरकार के प्रकाशन विभाग द्वारा
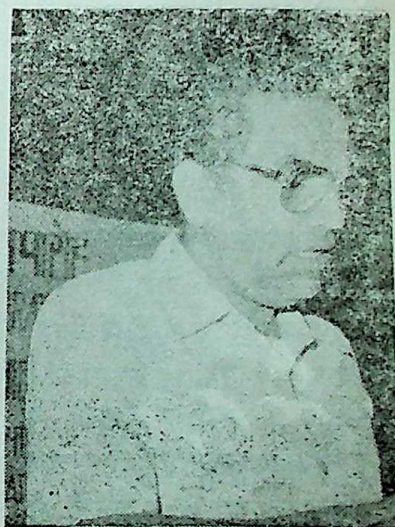
श्री. एम के वेलायुधन नायर

श्री. बी, ए. प्रभु

प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए श्री० बी. ए. प्रभु (उप महाप्रबन्धक, कैनरा बैंक ... कार्यालय, तिरुवनन्तपुरम)। दूरसचार, केरल परिमण्डल के महाप्रबन्धक श्री० यू. वी. ... अपर महाप्रबन्धक श्री० सी. करुणाकरन, उपप्रधान पत्र सूचना अधिकारी श्री० एन. केशवन ... केरल हिन्दी प्रचार सभा के मंत्री श्री. एम. के. वेलायुधन नायर आदि चित्र में दिखाई दे रहे हैं।

वी. जे. टी. हॉल, तिरुवनन्तपुरम में सज्जीकृत प्रदर्शनी का उद्घाटन 15-9-1987 को कैनरा बैंक के परिमण्डल उप महाप्रबन्धक एवं तिरुवनन्तपुरम स्थित बैंकों की नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष श्री. बी. ए. प्रभु ने किया। उन्होंने कहा :—"प्रशासनिक कार्यों में हिन्दी का अधिकाधिक उपयोग करना और संपर्कभाषा के रूप में हिन्दी के विकास केलिए प्रयत्न करना हमारा एक प्रमुख कर्तव्य है। हिन्दी की उत्कृष्ट कृतियों का और राजभाषा के रूप में हिन्दी के प्रयोग के ... निर्मित सहायक सामग्रियों का प्र... करना कर्मचारियों में हिन्दी ... अधिकाधिक उपयोग करने ... उत्साह बढ़ा देगा।"

सम्मेलन की अध्यक्षता करते ... दूरसंचार केरल परिमण्डल के ... महाप्रबंधक श्री. सी. करुणा... ने ऐसी प्रदर्शनियों की उपयोगि... पर प्रकाश डाला।

प्रकाशन विभाग के तिरुवनन्त... विक्रय केन्द्र के बिज़नेस मैने... श्री. श्यामनाथ ने स्वागत भा...

श्री. सी करुणाकरर
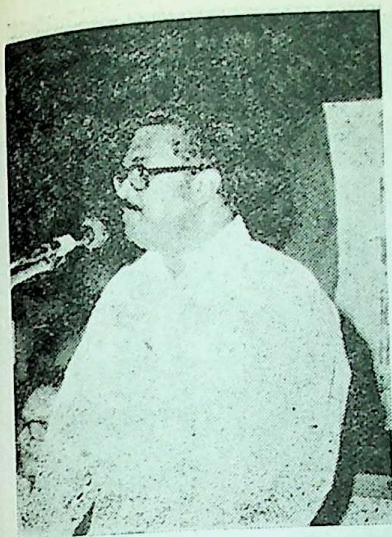
श्री यू.वा. नायक

दिया और केरल के पोस्टमास्टर जनरल के कार्यालय के कल्याण अधिकारी श्री. पी. के. मेनन ने कृतज्ञता ज्ञापित की।

संगोष्ठी

15-9-1987 को तिरुवनन्तपुरम वी. जे. टी. हॉल में एक हिन्दी संगोष्ठी आयोजित हुई जिसका प्रायोजन विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केन्द्र, तुम्पा ने किया।

संगोष्ठी का उद्घाटन करते हुए दूरसंचार केरल परिमंडल के महाप्रबन्धक श्री. यू. वा. नायक ने बताया कि राजभाषा के रूप में हिन्दी का उपयोग करने में कर्मचारियों को जो कठिनाइयाँ होती हैं उनका निवारण करने केलिए आवश्यक जानकारी उपलब्ध कराने में ऐसी संगोष्ठियाँ अत्यन्त सहायक हैं। संगोष्ठी की अध्यक्षता करते हुए इटली के वेनिस विश्वविद्यालय के
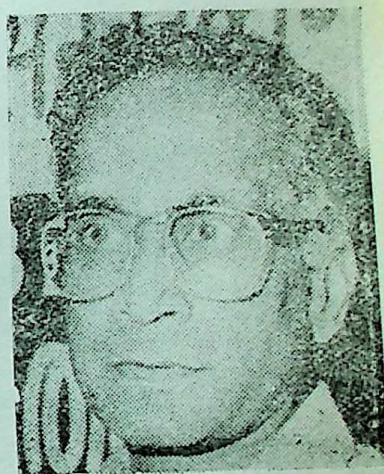
डा० महेश जायसवाल

वैज्ञानिक और तकनीकी क्षेत्रों में हमें विविध भाषाओं के उपयुक्त शब्दों को स्वीकार करना चाहिए।

भूतपूर्व अतिथि प्रोफसर डा० महेश जायसवाल ने कहा कि वैज्ञानिक और तकनीकी क्षेत्रों में हमें विविध भाषाओं के उपयुक्त शब्दों को स्वीकार करना चाहिए।

'राजभाषा के रूप में हिन्दी' पर डा० जोस आस्टिन ने प्रबन्ध प्रस्तुत किया। तकनीकी भाषा के रूप में
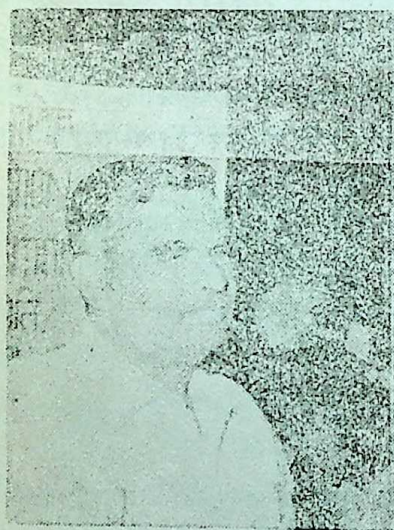
डा० जोस आस्टिन
प्रबन्ध प्रस्तुत कर रहे हैं।

हिन्दी पर डा० एन. ई. विश्वनाथ अय्यर का प्रबन्ध श्री. ए. माधवन

श्री. ए. माधवन नायर

डा० एन. ई. विश्वनाथ अय्यर जी का प्रबन्ध 'हिन्दी—राजभाषा तथा तकनीकी भाषा के रूप में' उनकी अनुपस्थिति में प्रस्तुत कर रहे हैं।

नायर ने प्रस्तुत किया। चर्चा में भाग लेते हुए श्री. सी. ए. जेकब, डा० वी. एन. गुप्त, श्री. आर. सी. चौधरी और श्रीमती मरियाम्मा ने विषयों के विविध पहलुओं पर प्रकाश डाला।

विक्रम साराभाई अन्तरिक्ष केन्द्र की हिन्दी अधिकारी श्रीमती पी. कोमलकुमारी अम्मा ने स्वागत भाषण दिया और तिरुवनन्तपुरम रेलवे डिविशन के हिन्दी अधिकारी श्री. पी. रवि ने कृतज्ञता प्रकाशित की।

कवि सम्मेलन

शाम को वी. जे. टी. हॉल में आयोजित भारतीय भाषा कवि सम्मेलन का उद्घाटन श्री. आर. रामचन्द्रन नायर आइ. ए. एस. ने किया। महाकवि श्री. एम. पी. अप्पन अध्यक्ष रहे। निम्नलिखित कवियों ने कवितायें प्रस्तुत कीं :—
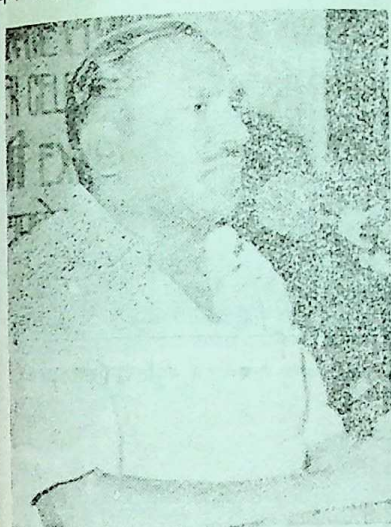
श्री. आर. रामचन्द्रन नायर आई. ए. एस
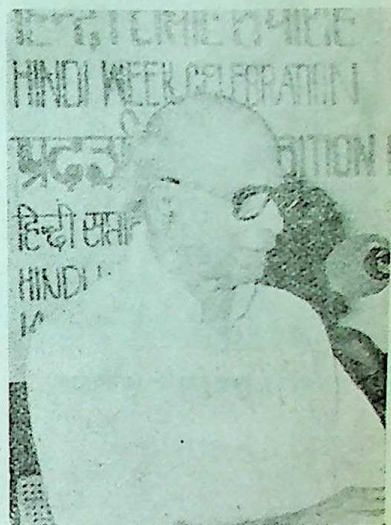
प्रो० पी. सी. देवस्या (संस्कृत)
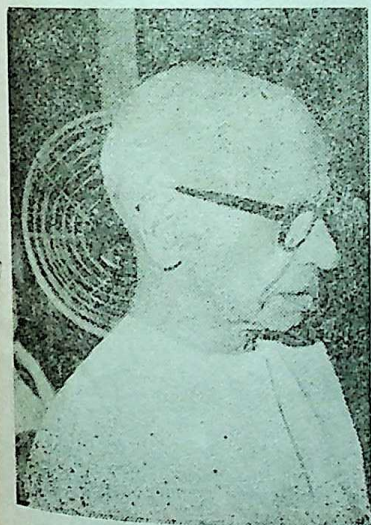
महाकवि एम. पी. अप्पन

डॉ० रती सक्सेना (संस्कृत)

श्रीमती बी. सुगतकुमारी (मलयालम)
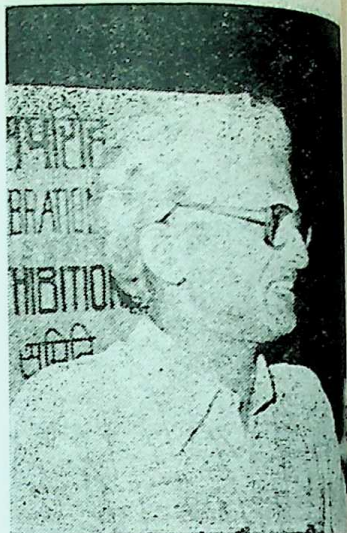
प्रो० विष्णु नारायणन नपूतिरी (मलयालम)

श्री सुभाष चन्द्र गेन्धर (पंजाबी)
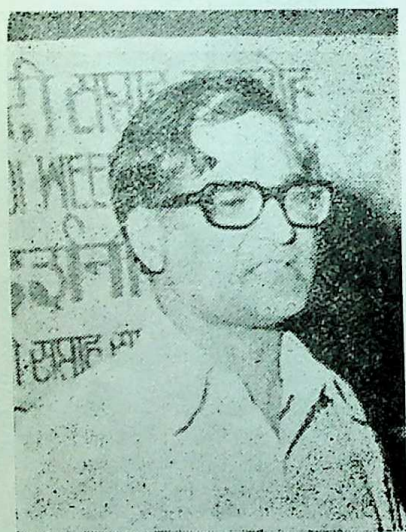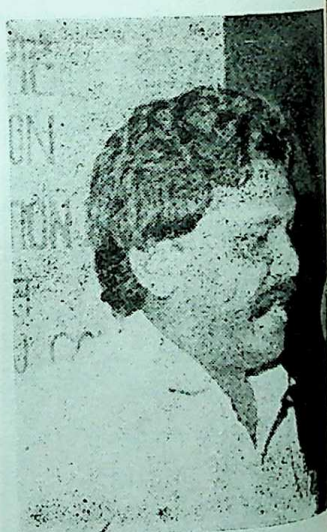
श्री. नल्लै मुत्तु (तमिल)

श्री. मुरलीधर (तेलुगु)

श्रीमती विद्या कुलकर्णी (मराठी)

श्रीमती अर्चना बन्दोपाध्याय (बंगला)
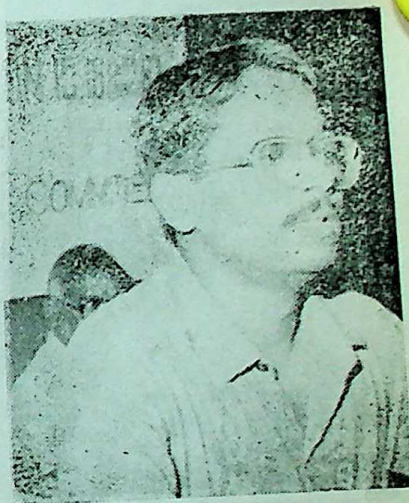
श्री. सन्तोष कुमार सिंह (ओडिया)

डॉ० एम. चन्द्रशेखरन नायर (हिन्दी)

श्री. सुरेश रस्तोगी (हिन्दी)

श्री. एस. रामय्यर 'साईराम' (हिन्दी)

सांस्कृतिक संध्या

15-9-1987 को सायंकाल में वी. जे. टी. हॉल, तिरुवनन्तपुरम में कलासंध्या का आयोजन हुआ जिस में केन्द्र सरकारी कार्यालयों के कर्मचारियों के बच्चों ने विविध राज्यों का संगीत और नृत्य प्रस्तुत किया। केन्द्रीय विद्यालयों के विद्यार्थियों ने विशेष भूमिका निभायी। कार्यक्रमों का उद्घाटन करते हुए आकाशवाणी के तिरुवनन्तपुरम केन्द्र के निदेशक श्री. वी. एन. उण्णि ने बताया कि भारत की विविध संस्कृतियों, भाषाओं और कलाओं के विविध वर्णों से इन्द्रधनुष बनाने का काम हिन्दी प्रचार से हो
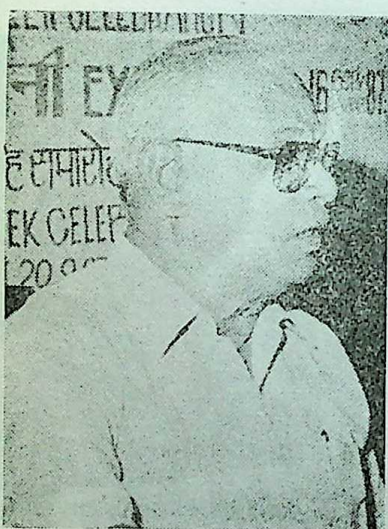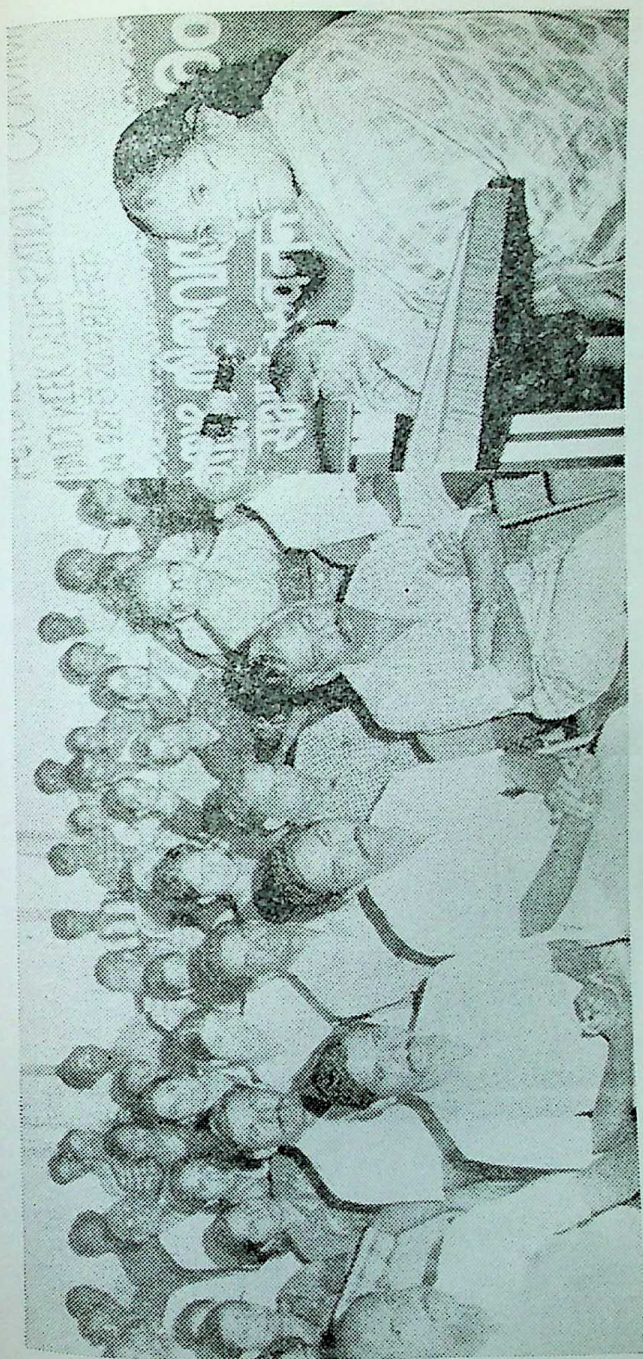
कर्मचारियों के लिए आयोजित प्रतियोगिताओं के उद्घाटन सम्मेलन में अध्यक्षीय भाषण दे रही हैं श्रीमती विजयलक्ष्मी सुन्दरराजन (सहायक निदेशक, आकाशवाणी, तिरुवनन्तपुरम)। प्रतियोगिताओं में भाग लेनेवाले कर्मचारी भी चित्र में दिखाई दे रहे हैं।
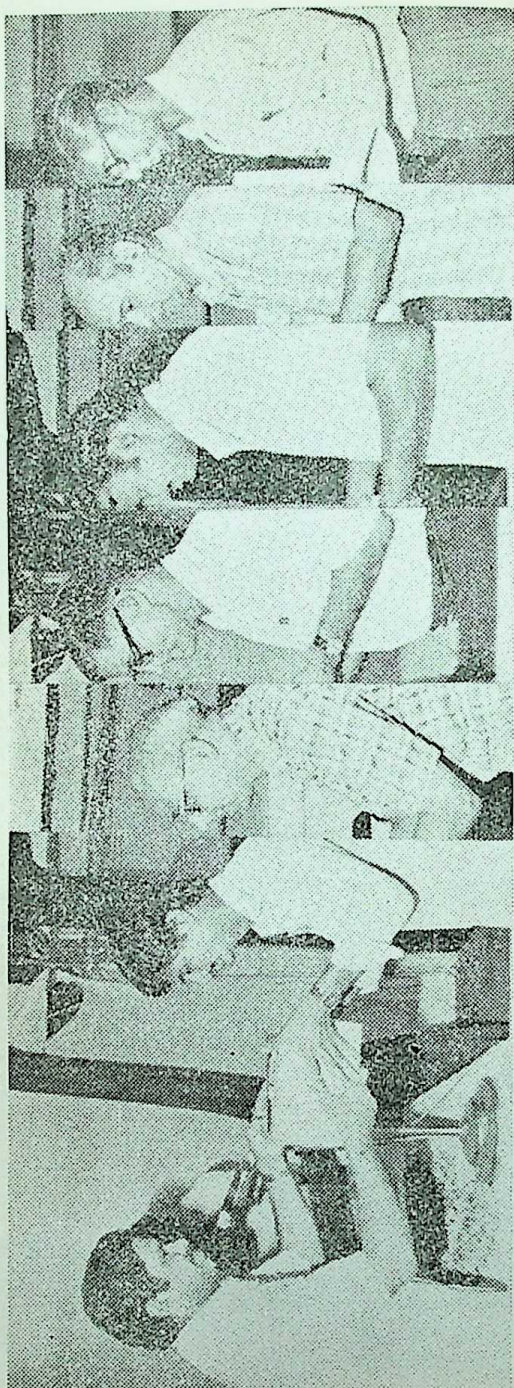
कर्मचारियों के लिए आयोजित विविध प्रतियोगिताओं के विजेता श्री. के. शंकरनारायण पिल्लै (परिवहन मंत्री, केरल सरकार) से पुरस्कार प्राप्त कर रहे हैं ।
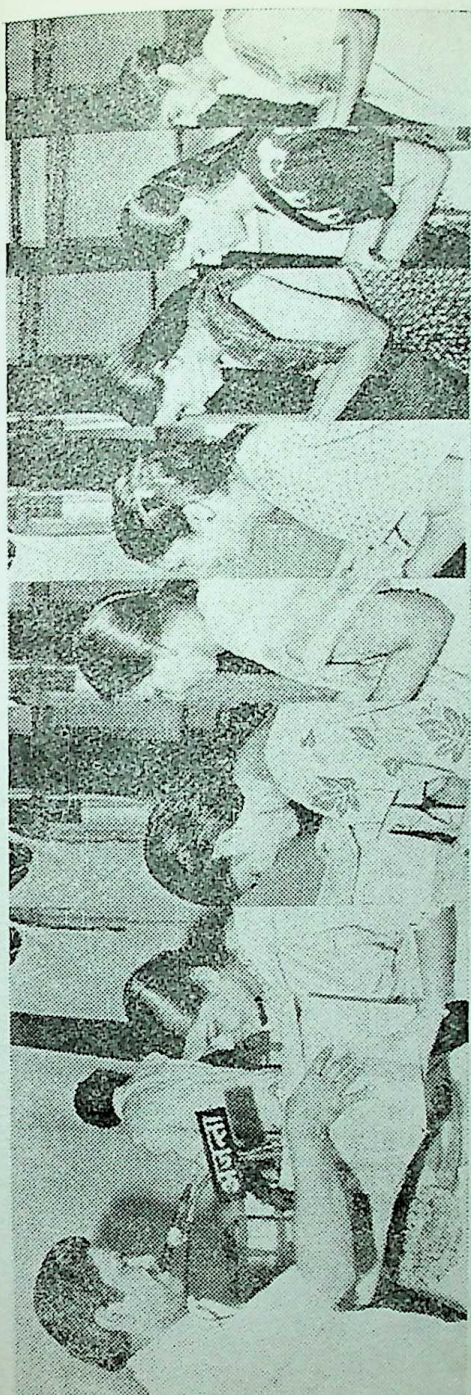
कर्मचारियों की प्रतियोगिताओं में विजयी केन्द्र सरकार के विभिन्न कार्यालयों की महिलाएँ केरल के परिवहन मंत्री श्री. के. शंकरनारायण पिल्लै से पुरस्कार प्राप्त कर रही हैं ।
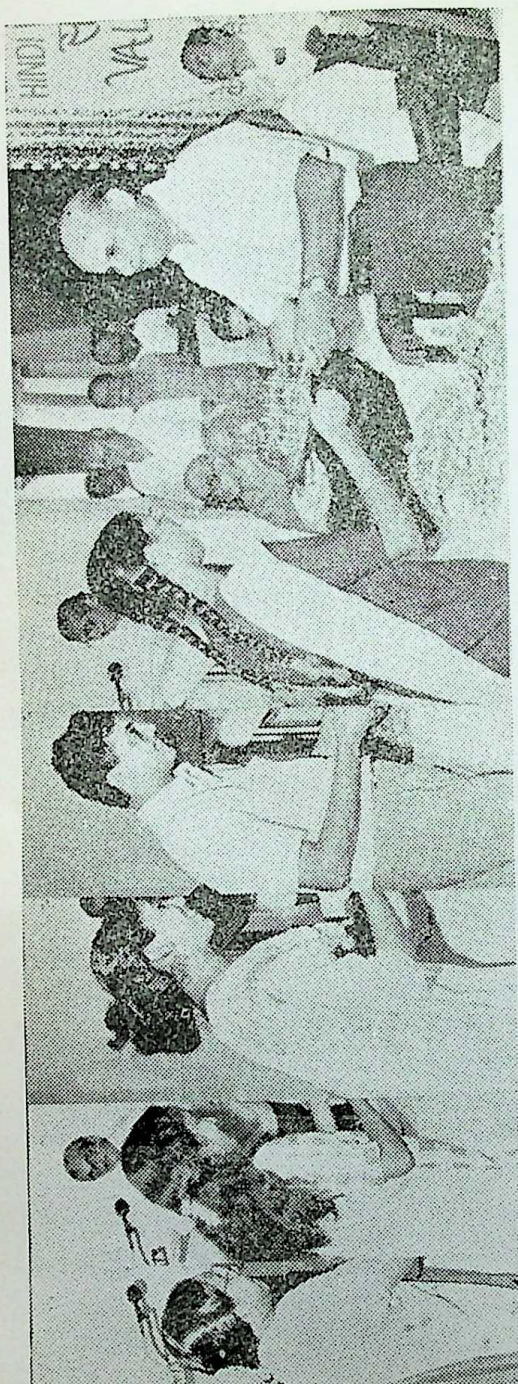
हिन्दी सप्ताह के सिलसिले में समारोह समिति द्वारा केन्द्र सरकार के कर्मचारियों के बच्चों के लिये केरल हिन्दी प्रचार सभा में आयोजित विविध प्रतियोगिताओं में विजयी छात्र-छात्राओं को विक्रम साराभाई अन्तरिक्ष केन्द्र के निदेशक डा० एस. सी. गुप्त पुरस्कार दे रहे हैं।

सांस्कृतिक संध्या का उद्घाटन वी. जे टी. हॉल, तिरुवनन्तपुरम में श्री. वी. एन. उण्णि (निदेशक, आकाशवाणी) कर रहे हैं । पास बैठे हैं श्री. के. कुन्हिकृष्णन (निदेशक, दूरदर्शन केन्द्र, तिरुवनन्तपुरम) ।

विविध राज्यों के बच्चों द्वारा विविध भाषाओं की कलाओं की एक ही मंच पर प्रस्तुति देश की भावात्मक एकता को सुदृढ करने में बहुत सहायक होगी ।

...ला है जिसके द्वारा देश की एकता सुदृढ हो सकती है । उन्होंने कहा कि भाषा के प्रचार में कला का स्थान महत्वपूर्ण है ।

सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए तिरुवनन्तपुरम दूरदर्शन केन्द्र के निदेशक श्री. के. कुन्हिकृष्णन ने बताया कि विविध राज्यों के बच्चों द्वारा विविध भाषाओं की कलाओं के एक ही मंच पर प्रस्तुति देश की भावात्मक एकता को सुदृढ करने में बहुत सहायक होगी ।

दूरसंचार के केरल परिमण्डल के महाप्रबन्धक कार्यालय के हिन्दी अधिकारी श्री. सी. के. शशिकुमार ने स्वागत भाषण दिया ।
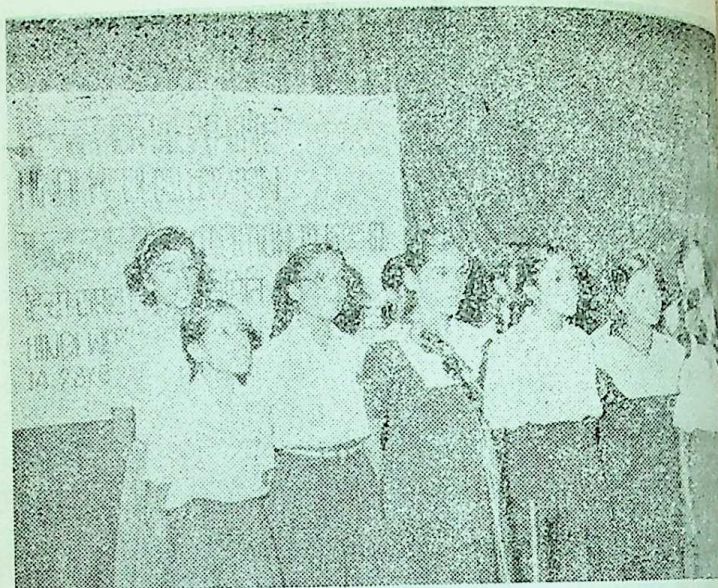
केन्द्रीय विद्यालय, पट्टम की छात्राएँ कला-संध्या में समूहगान प्रस्तुत करती हैं।

दक्षिण एयर-कमान के कर्मचारियों के बच्चे रंगारंग कार्यक्रम में भाग लेते हुए।

कर्मचारियों के लिए प्रतियोगितायें

केरल स्थित केन्द्र सरकारी कार्यालयों, उपक्रमों, निगमों एवं राष्ट्रीयकृत बैंकों के कर्मचारियों के लिए 18-9-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा भवन में निम्न लिखित राज्य-स्तरीय प्रतियोगितायें आयोजित हुईं :

1. हिन्दी में टिप्पण, आलेखन एवं पारिभाषिक शब्दावली
2. अंग्रेज़ी से हिन्दी में और हिन्दी से अंग्रेज़ी में अनुवाद
3. हिन्दी में निबन्ध लेखन
4. हिन्दी में वक्तृता
5. हिन्दी में टंकण
6. हिन्दी में कवितापाठ

प्रतियोगिताओं का उद्घाटन करते हुए हिन्दुस्थान लाटक्स के प्रबन्ध निदेशक डॉ० पी. वी. एस. नम्पूतिरिप्पाट ने आह्वान किया कि हिन्दी अध्ययन की प्रेरणा आर्थिक लाभ की अपेक्षा राष्ट्र का व्यापक हित हो। उन्होंने आग्रह किया कि भारत की विभिन्न भाषायें आदान प्रदान द्वारा पारस्परिक पोषण करें। उन्होंने हिन्दी अध्यापन के संबन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए बताया कि विद्यार्थियों मे वाचिक कुशलता उत्पन्न करने पर अधिक

डा० पी. वी. एस. नंपूतिरिपाट

ज़ोर दिया जाये। हिन्दुस्थान लाटक्स में राजभाषा के रूप में हिन्दी का जो प्रयोग केरल हिन्दी प्रचार सभा के सहयोग से हो रहा है उस पर उन्होंने विस्तृत प्रकाश डाला।

सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए आकाशवाणी के तिरुवनन्तपुरम केन्द्र की सहायक निदेशक श्रीमती विजयलक्ष्मी सुन्दरराजन ने सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं के सम्मिलित प्रयास से हिन्दी सप्ताह समारोह मनाने की केरल की रीति की प्रशंसा की।

हिन्दी अध्ययन की प्रेरणा आर्थिक लाभ की अपेक्षा राष्ट्र का व्यापक हित हो।

तिरुवनन्तपुरम के हवाई अड्डे के कम्यूणिकेषन्स कण्ट्रोलर श्री. प्रतापसिंह धुन्धा ने स्वागत भाषण दिया और तिरुवनन्तपुरम दूरसंचार जिला प्रबन्धक कार्यालय की हिन्दी अधिकारी श्रीमती इन्दिरा जी. नायर ने कृतज्ञता प्रकट की।

कर्मचारियों के बच्चों के लिए प्रतियोगितायें

केरल स्थित केन्द्र सरकारी कार्यालयों, उपक्रमों, निगमों और राष्ट्रीयकृत बैंकों के कर्मचारियों के बच्चों के लिए 19-9-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा भवन में निम्न लिखित राज्य स्तरीय प्रतियोगितायें आयोजित हुई :

1. हिन्दी में वक्तृता
2. हिन्दी में निबन्ध लेखन
3. हिन्दी गीत *(एकल)*
4. हिन्दी गीत *(समूह)*
5. सुलेखन
6. हिन्दी में प्रश्नोत्तरी
7. हिन्दी में कविता-पाठ
8. एकाभिनय

प्रतियोगिताओं का उद्घाटन करते हुए केरल विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ० ए. सुकुमारन नायर ने बताया कि हिन्दी भारत की अखण्डता का प्रतीक है। उन्होंने

डा० ए. सुकुमारन नायर

बताया कि स्वतंत्रता प्राप्ति के ही हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा सं हो चुकी है। राष्ट्र की एकता बनाये रखने के लिए जनता पारस्परिक विचार संप्रेषण
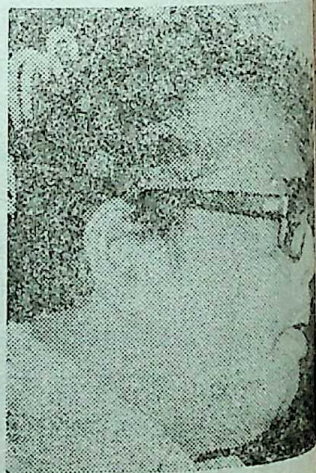
श्री. एन. केशवन नायर
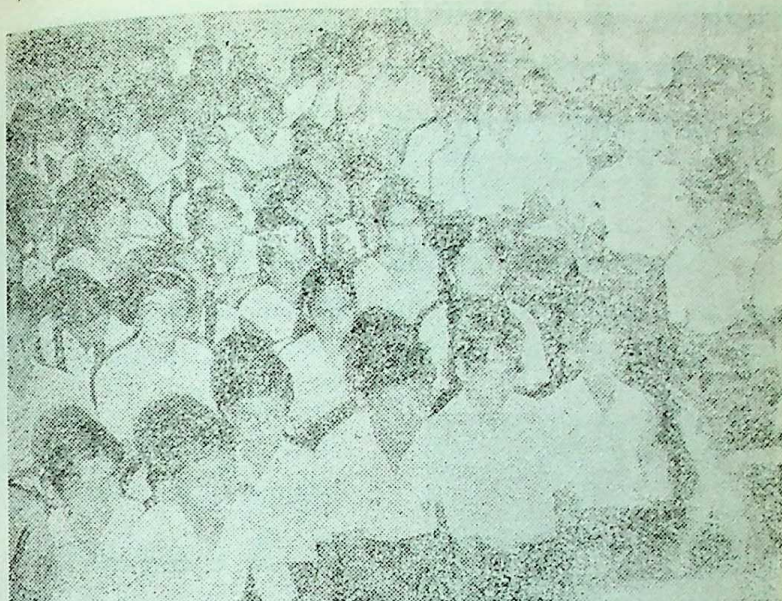
कर्मचारियों के बच्चों की प्रतियोगिताओं में भाग लेने वाले छात्र-छात्राओं का एक दृश्य ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले ही हिन्दी हमारी राष्ट्राभाषा स्वीकृत हो चुकी है ।

माध्यम के रूप में हिन्दी का व्यापक प्रचार करना चाहिए । सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए पत्र सूचना कार्यालय के उपप्रधान सूचनाधिकारी श्री. एन. केशवन नायर ने स्मरण दिलाया कि श्री. के. वासुदेवन पिल्लै जैसे तपोनिस्ठ हिन्दी सेवियों के निस्तन्द्र प्रयत्न से ही केरल हिन्दी प्रचार के क्षेत्र में प्रगति कर सका है ।

डॉ० एन. ई. विश्वनाथ अय्यर ने स्वागत भाषण दिया और श्री. के. जी. बालकृष्ण पिल्लै ने कृतज्ञता प्रकट की ।

समापन सम्मेलन

20-9-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा भवन में आयोजित समापन सम्मेलन का उद्घाटन केन्द्र संसदीय कार्य राज्यमंत्री श्री. एम. एम. जेकब ने किया । उन्होंने कहा "भारत की राष्ट्रभाषा और राजभाषा हिन्दी का प्रचार शीघ्रतापूर्वक करना राष्ट्र की सुस्थिति और प्रगति के लिए

प्रशासनिक कार्य में भारतीय भाषाओं का प्रयोग अधिकाधिक करने से ग्रामीण जनता की कठिनाइयाँ दूर होती जायेंगी।

आवश्यक है। प्रशासनिक कार्यों में भारतीय भाषाओं का प्रयोग अधिकाधिक करने से ग्रामीण
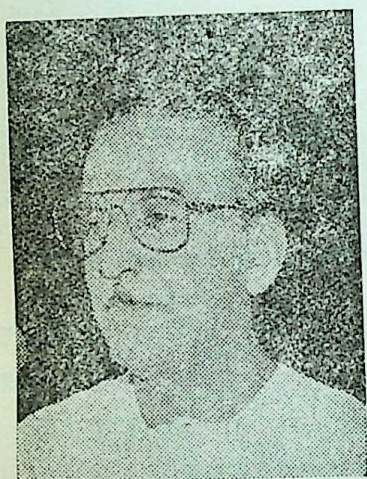
श्री. एम. एम. जेकब

जनता की कठिनाइयाँ दूर होती जायेंगी। हमें हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में हृदय से स्वीकार करना है। नर्सिंग, टंकण और अकौन्टन्सि जैसे विषयों में प्रशिक्षित केरलीय युवकों को हिन्दी में प्रशिक्षण देने का कदम केरल सरकार को उठाना चाहिए।"
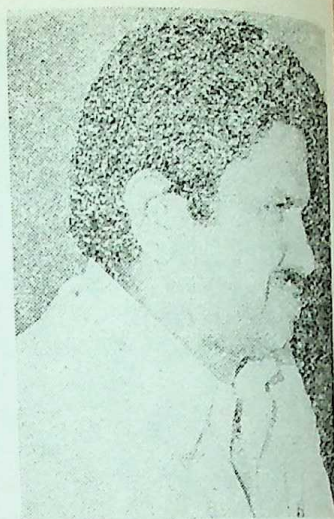
श्री. के. शंकरनारायण पिल्लै

केरल के परिवहन मंत्री श्री. के. शंकरनारायण पिल्लै ने बताया:- "अंग्रेजी भारत की राष्ट्रभाषा नहीं हो सकती। हिन्दी ही इस पद के लिए योग्य है। सभी भाषायें श्रेष्ठ हैं। भारत में भाषा विरोध की जो दुरवस्था है उसे दूर किया जाना है। जो भारत से प्रेम करते हैं वे हिन्दी को भी स्वीकृत करेंगे।"

कर्मचारियों की प्रतियोगिताओं के विजेताओं को श्री. पिल्लै ने पुरस्कार और षील्ड वितरित किये। कर्मचारियों की प्रतियोगिताओं में सबसे अधिक पायिंट पानेवाले संस्था बैंक ऑफ ट्रावनकोर का षील्ड

भारत में भाषा विरोध की जो दुरवस्था है उसे दूर किया जाना है। जो भारत से प्रेम करते हैं वे हिन्दी को भी स्वीकृत करेंगे।

महाप्रबंधक श्री एस. श्रीनिवासन को, द्वितीय स्थान पानेवाले महालेखाकार कार्यालय का शील्ड महालेखाकार श्री. वी. लक्ष्मीनारायण को और तृतीय स्थान पानेवाले विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केन्द्र का शील्ड केन्द्र निदेशक डॉ० एस. सी. गुप्त को दिया गया।

पोस्टमास्टरजनरल श्री.सी.जे.मात्यु सम्मेलन के अध्यक्ष रहे। कर्मचारियों के बच्चों की प्रतियोगिताओं के पुरस्कार डॉ० एस. सी. गुप्त ने वितरित किये। श्री. वी. लक्ष्मीनारायणन, श्री. एस. श्रीनीवासन
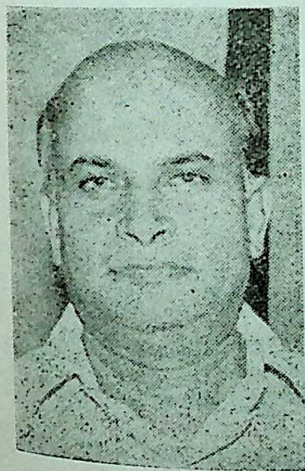
श्री. वी. लक्ष्मी नारायणन

डा० एस. सी. गुप्त
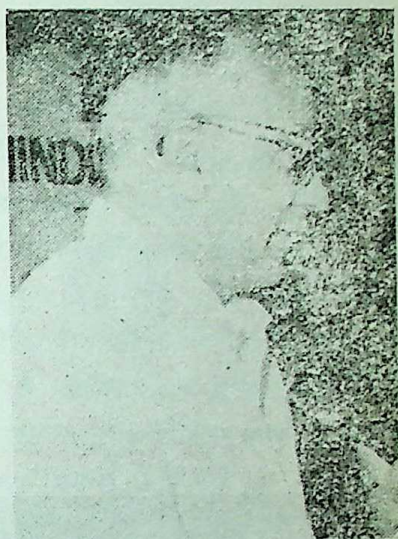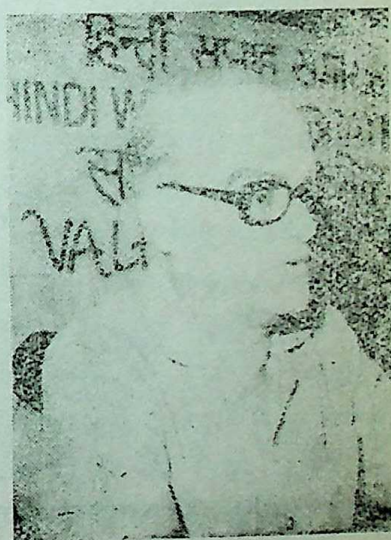
श्री. एम. श्रीनिवासन

और श्री. पी. टी. भास्कर पणिक्कर ने आशीर्वाद भाषण दिया।

केरल हिन्दी प्रचार सभा के मंत्री श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने स्वागत भाषण दिया और केरल ज्योति के संपादक श्री. के. जी. बालकृष्ण पिल्लै ने कृतज्ञता प्रकट की।
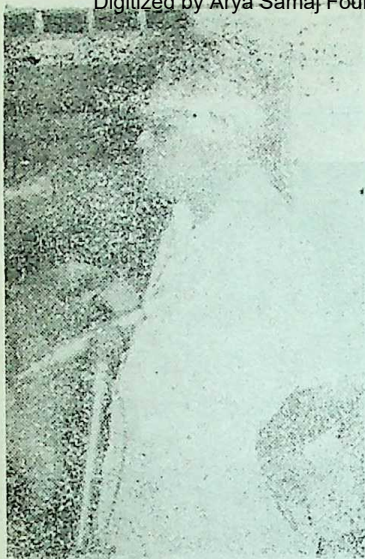
श्री. पी. टी भास्कर पणिक्कर।
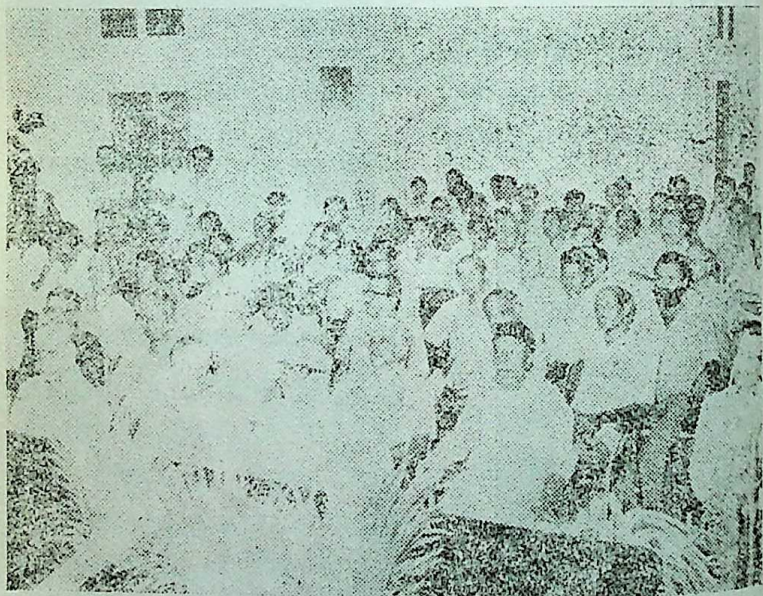
हिन्दी सप्ताह समारोह का उद्घाटन-श्रोताओं का एक दृश्य ।

महादेवी वर्मा के अंतिम दिन

श्रीमती शकुन्तला सिरोठिया
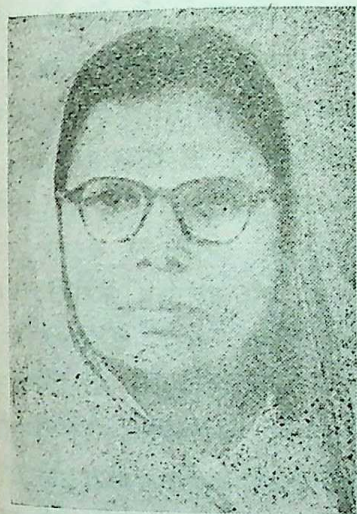
महीयसी महादेवी वर्मा

जैसे ही सुबह अखबार तो पढ़ कर स्तब्ध रह गयी। महादेवी जी अस्वस्थ हैं! अर्धमूर्छित हैं' मैं 10 बजे ही उनके निवास चल दी। पाँच लोग और बैठे थे। गीता जी और राम जी पांडे के चेहरे उदास थे। मैंने कहा— आप तो एक दिन में ही मुरझा गए राम भाई? वे मेरे पास आकर बोले सिरोठियाजी! मेरा क्या होगा। मैं तो बचपन से देवीजी के संरक्षण में रहता आया हूँ इसके बाद तो मैं अनाथ हो जाऊँगा।"

रामजी ने जो कुछ कहा था हृदय से कहा था। अंतर का दर्द और व्याकुलता मुख पर भी झलक रही थी। उनकी वेदना का मेरे पास कोई उत्तर नहीं था। और गीता तो देवी जी के जीवन की विगत कई वर्षों से एक अनिवार्य अंग ही बन गयी थी। उसने बताया मैं बहुत दिनों से अपने घर, पहाड, नहीं गयी थी। गत माह बड़ी मुश्किल से देवीजी ने जाने की अनुमति दी थी। वापस आने पर सुना कि वे मुझे याद तो करती ही थीं और कहती थीं कि गीता मुझे छोड़ कर घर चली गयीं।

कहते कहते गीता की आँखें छलछल आयीं। एक अज्ञात आशंका से गीता और रामजी पांडे भयभीत लग रहे थे। यह आशंका और भय 11 सितंबर निर्मूल नहीं था। 11 सितंबर की रात को उनकी आशंका साकार घटित हो गयी। पंछी पिंजरा छोड़कर उड गया। यह दुर्भाग्य की बदली अचानक घिर आयी थी। अस्वस्थ तो महादेवी जी विगत कई वर्षों से चल रही थीं किंतु अचानक

उनके जाने की आशंका किसी को नहीं थी। 6 सितंम्बर की रातको वे सोते सोते बिस्तर से लुढ़क कर नीचे गिर पड़ीं। पास सोए लोग गीता आदि ने उन्हें उठाया। उनकी इच्छा पर बाथ रूमतक ले गयी किंतु प्रातः होते तक वे अर्ध मूर्छित हो गयीं और फिर चैतन्य नहीं हो पायीं और 11 सितम्बर को डाक्टरों के अथक प्रयास करने पर भी वे चिर निद्रा की गोद में चली गयीं। सारा राष्ट्र स्तब्ध रह गया।

तुम ऐसी सोयीं देवि, दिया
झकझोर राष्ट्र की निद्रा को।

जो जहाँ था सुनकर देवी जी के अन्तिम दर्शन करने भागा आया। समय या दूरी का अंतर किसी ने नहीं देखा 12 ता० को उन्हें चिर विदा करने हजारों की भीड़ उनके निवास स्थान पर एकत्रित थी। सभी तरह के सभी वर्ग के लोग उपस्थित थे, सभी वय के भी। सभी के नयन नीर भरे थे। सभी की आंखें बरस रही थीं। ऐसा कोई नहीं था जिसके पास महादेवी के अपने मीठे संस्मरण नहीं थे। प्रत्येक व्यक्ति अनुभव कर रहा था कि देवीजी की उस पर विशेष कृपा थी कि वह उनका विशेष स्नेहाधिकारी था। वे किसी की मित्र, किसी की बहिन तो किसी की... थी।

लगभग 15 वर्ष पूर्व तक लोगों ... यह धारणा थी कि महादेवीजी ... मिलना एक समस्या है। बाहर ... आए दर्शनार्थी बहुधा निराश लौ... जाते थे। वे व्यस्त तो रहती ही ... मिलने आने वालों की भीड़ से ... भी हो जातीं थीं। ऐसा तो हो ... सकता था कि वे बाहर आतीं और ... दर्शन देकर तुरन्त अंदर हो जातीं। आनेवाला अपना परिचय देता ... साहित्यिक वार्तालाप करता ... देवी जी उसे जलपान करातीं ... उसके बिदा करने के बाद ... दूसरा भक्त दर्शनार्थी का आगमन हो जाता। युवा साहित्यिक बैठे ... उनके दर्शनों के लिए व्यग्र हो रहा था। मेरे पास अभी भी कई ... आए हुए हैं जिनमें देवी जी के दर्शन करवा दें, लिखिए कब आऊं लिखा हुआ है। अतिथि को बिना कुछ जलपान कराए विदा कर देना महादेवीजी की परम्परा में नहीं था। पर खिलाने पिलाने का स्वभाव उनकी दुर्बलता बन गयी थी जिससे मैं विगत 57 वर्षों से परिचित थी। 1930 ई० में मैं पहली बार उनके सान्निध्य में आयी थी...

तबसे उनके स्वभाव और आदतों से पूर्ण रूप से परिचित हूँ। 3 वर्षों तक बराबर उनके निकट रह कर मैंने उन्हें जैसा जाना और पहिचाना है शायद ही किसी ने जाना हो। उनके युवावस्था का रूप और स्वभाव तथा उनके वृद्धावस्था का परिवर्तित रूप और स्वरूप, पाँच दशकों का अन्तराल था।

मार्च 1987 का होली दिवस। महादेवी का अन्तिम जन्म-दिवस-पर्व। मैं सपरिवार, पुत्र, पुत्र वधु और पौत्रों के साथ उन्हें बधाई देने गयी थी। कैमरा साथ ले गयी थी। देवी जी ने होली जला कर अपनी अस्वस्थता में भी होली की धधकती ज्वाला की परिक्रमा की। सबको तिलक लगाया सब की नजरें उतारीं। उस समय की उनकी मुस्कुराती हुई उजली छवि देखते ही बनती थी। नजर उतरवाते हुए अमृतराय जी के ठहाके अपने बच्चों की नजरें उतरवाने के लिए माताओं की उतावली। उफ़, किसे मालूम था कि यह महकता खिलखिलाता वातावरण, जिसे मैंने अपने रंगीन कैमरे में [illegible] पुनरावृत्ति फिर नहीं होगी कि फिर कभी होली पर महादेवी की खिलखिलाहट नहीं गूँगेगी कि अशोक नगर के गृह प्रांगण में उनके साथ मेरे परिवार के उस अवसर के चित्र, अन्तिम चित्र होंगे। इसकी मैंने स्वप्न में भी कल्पना या आशंका नहीं की थी।

देखने वाले को उनकी साधना और प्रतिभा की तरंगें अन्दर तक छू जाती थीं।

महादेवी का एक अपना युग था जिसका अवसान हो गया। छायावाद युग के अन्तिम दीप की भी बुझ गयी। हिन्दी के अनेक उद्भट विद्वान हुए हैं और भविष्य में भी होंगे किन्तु कोई महादेवी दूसरी नहीं होगी। महीयसी महादेवी, कवयित्री और चित्रकर्त्री महादेवी, उच्च विचारक, श्रोताओं को मुग्ध करनेवाली महादेवी, दूसरी नहीं होंगी।

आयु वृद्धि के साथ महादेवीजी के रूप और चरित्र का उजास बढ़ता

हो गया। युवावस्था से भी अधिक आकर्षक था उनके वृद्धावस्था का रूप। देखने वाले को उनकी साधना और प्रतिभा की तरंगें अन्दर तक छू जाती थीं। उनके व्यक्तित्व का विभा-मंडल जिसे अंग्रजी में 'औश' कहते हैं बहुत विकसित था। आने वाले को वह दूर से ही स्पर्श करने लगता था, एक जबर्दस्त कशिश भी उनके चेहरे पर, उनकी वाणी में। व्यक्तित्व का यह शक्तिशाली विभा-मंडल साधारण व्यक्ति में नहीं होता। महादेवी जी में यह था। इस जन्म की ही नहीं पूर्व जन्म की उपलब्धियाँ भी महादेवी जी के व्यक्तित्व में सन्निहित थीं। वे सचमुच महादेवी थीं।

बाई का बाग

इलाहाबाद

गीति-काव्य के क्षेत्र में महादेवी

श्रीमती के. ओ. सुषमा

गीति-काव्य का प्रवाह आदि काल से ही प्रवाहित होता चला आ रहा है। सृष्टि के आरम्भ से ही मनुष्य कभी अपने आनन्दाय और परहिताय गुनगुनाता और गाता चला आ रहा है। गायन और रोदन की प्रवृत्ति मनुष्य में स्वाभाविक रूप में पाई जाती है। हिन्दी गीतिकाव्य उतना ही अधिक प्राचीन है जितना कि वेद। क्योंकि वेदों में भी भावमय संगीत दृष्टिगोचर होता है। वैदिक साहित्य में काव्य और गीत में कोई भेद नहीं था। बारहवीं शताब्दी में रचित जयदेव के गीतगोविन्द ने भारतीय गीतिकाव्य में उत्क्रांति सी मचा दी। हिन्दी गीतिकाव्य पर जयदेव का प्रभाव पडा है विशेष कर विद्यापात तो उनके चिरऋणी हैं। हिन्दी में गीति काव्य का प्रारम्भ संत कवियों द्वारा हुआ है। कबीर, सूरदास और मीरा आदि ने हिन्दी गीति-काव्य को विकसित किया। उनके गीत हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि हैं। इस गीति-कविता को अंग्रेजी साहित्य में 'लिरिक पोइट्री' कहा गया है।

वाड्सवर्थ के शब्दों में कविता 'शक्तिमय आवेगों का आँसू-प्रवाह' है।

'दीपशिखा' की भूमिका में गीत की परिभाषा देते हुए महादेवी ने कहा है "साधारणत: गीत व्यक्तिगत सीमा में तीव्र सुख दु:खात्मक, अनुभूति का वह शब्दरूप हैं जो अपनी ध्वन्यात्मकता में गेय हो सके।"

गीति रचना में एकरूपता, प्रवाहपूर्णता, आत्माभिव्यक्ति, आत्म-निवेदन और भावातिरेक, ये सभी विशेषताएँ होती हैं। संक्षिप्तता गीतिपूर्ण रचना का प्राण है। एडगर एलेनपो ने कहा है कि "भावना की तीव्रता जो गीत को गीत बनाए रखने के लिए नितान्त आवश्यक है, एक लम्बी कविता में आदि से अन्त

तक नहीं बनी रह सकती" । गीत हृदय और हृदयगत भाव की वस्तु है । चाहे तो वह कृष्ण के प्रेम में मतवाली मीरा का आत्मनिवेदन हो, चाहे कबीर की निर्गुण ब्रह्म को पति मानकर पति के रूप में आराधना हो अथवा महादेवी के विरहोद्गार और करुणोद्गार हों ।

महादेवी जी ने अपने काव्य की रचना प्रायः गीतिकाव्य के रूप में ही की है । महादेवी जी गेयता को गीति काव्य के लिए अनिवार्य समझती हैं और गेयता के लिए स्वर के संगीत तथा शब्दयोजना के संगीत का आश्रय लिया है । उनके गीतों का लय अत्यंत सरल है और बहुत ही भावानुकूल है ।

उदाहरणार्थ : —

हुए शूल अक्षत मुझे धूलि चन्दन
अगरुधूम सी साँस सुधि गन्ध सुरभित
बनी स्नेह-लौ आरती चिर अकम्पित,
हुआ नयन का नीर अभिषेक जलकण!
सुनहले सजीले रँगीले छबीले,
हसित कंटकित अश्रु–मकरन्द गीले,
बिखरते रहे स्वप्न के फूल अनगिन !

महादेवी ने अपने गीतों को अधिकाधिक गेय बनाया है । उन्होंने कुशल स्वर्णकार के समान काट-छाँट कर अपनी सूक्ष्म भावनाओं को कोमलतम कलेवर दिया है ।

महादेवी जी की कविता [में] संगीत की गति का अच्छा [निर्वाह] हुआ है ! उन्होंने सर्वत्र अपना ही [राग] अलापा है और अपने हृदय के [हर] स्पन्दन को ही अंकित करने [की] इच्छा प्रकट की है । 'जीवन [विरह] का ज़लजात' प्रत्येक पद के अ[न्त में] दोहराकर लिखा गया है, [जिससे] उनकी घनीभूत पीडा की [सहज] अभिव्यंजना हो जाती है ।

विरह का जलजात जीवन विरह [का]
जल[जात]
वेदना में जन्म, करुणा में मिला
आ[वास]
अश्रु इसका दिवस चुनता अश्रु
गिनते [रात]
जीवन विरह का जलजात ।
आसुओं का कोष उर दृग अश्रु [की]
ट[कसाल]
तरल जल–कण से बने घन-सा
क्षणिक मृदु [गात]
जीवन विरह का जलजात ।

शुक्ल जी महादेवी जी के गीति काव्य की प्रशंसा इस प्रकार [करते] हैं" गीत लिखने में जैसी स[फलता] महादेवी जी को हुई वैसी और [किसी] को नहीं ।"

> महादेवी ने लोक गीतों को सरल, सहज लय अपनाकर अपने गीति- काव्य को और भी मोहक और मधुर बना दिया है।

महादेवी जी के गोतों की आधार-भूमि आध्यात्मिक है और उनके गोतों में लोक-गीतों का लय है, भावप्रवणता है। महादेवीजी ने लिखा है 'मेरे गीत अध्यात्म के अमूर्त आकाश के नीचे लोक गीतों की धरती पर पले हैं।' उनका प्रियतम विश्व-व्यापक दिव्य सत्य है। वह उसकी अनुभूति में पार्थिव संसार से विरक्त-हो, द्वैत-अद्वैत की बाधा से मुक्त हो, उसी में एकाकार हो जाती है तथा उन्हें वेदना भी अत्यन्त मधुर प्रतीत होती है।

मेरे बिखरे प्राणों में
सारी करुणा ढुलका दो
मेरी छोटी सी सीमा में
अपना अस्तित्व मिटा दो।

महादेवी ने लोक गीतों की सरल, सहज लय अपनाकर अपने गीति-काव्य को और भी मोहक और मधुर बना दिया। 'कहाँ से आये बादल काले, मैं क्यों पूछूं यह विरह निशा कितना बीती क्या शेष रही, आदि गीतों में लोक-गीतों का लय है।

महादेवो जी के आराध्य निर्गुण हैं और उन्होंने अपने आराध्य की आराधना माधुर्य-भावना के आधार पर की है। वे अपने प्रिय से समता के धरातल पर मिलना चाहती हैं। अपने प्रिय के रूप-रंग से अपरिचित होने के कारण ही महादेवी जी ने उसे "कौन तुम मेरे हृदय में" कहकर सम्बोधित किया है।

कौन तुम मेरे हृदय में ?
कौन मेरी कसक में नित मधुरता
भरता अलक्षित,
कौन प्यासे लोचनों में, घुमड घिर
झरता अपरिचित।

मीरा के समान ही महादेवी को भी बाह्य जगत में सुख नहीं मिलता। अतएव अपने कल्पनालोक का आश्रय लेती है। महादेवो का स्वप्नलोक या प्रियतम अस्पष्ट, धुंधला सा, रहस्यमय छायामय सा रहता है।

महादेवी जी के गीतों में दार्शनिक तत्व के दर्शन होने पर भी उसमें संगीतात्मकता भी समान रूप से पाई जाती है। महादेवी जी के गीत उन की कलात्मक प्रतिभा के सहारे केवल पूजा आरतो के गीत न होकर साहित्य की अनुपम निधि भी है।

'नीहार' में कल्पना-प्रवणता अधिक है कुतूहल-मिश्रित वेदना के

दर्शन भी होते है। 'रश्मि' में दार्शनिक चिन्तन कुछ बढ गया है और पुरानी अनुभूतियों का चिंतन भी स्पष्ट दिखलाई पडता है। 'यामा' कोई पृथक स्वतन्त्र काव्य-कृति नहीं अपितु 'नीहार', 'रश्मि, ''नीरजा' व 'सांध्यगीत' की 185 कविताएँ एक ही संग्रह में संकलित कर'यामा' नाम से प्रकाशित की गयी हैं। 'नीरजा' कवयित्री के अनुभूति व चिन्तन प्रधान अट्ठावन गीतों का संकलन है। इनमें निराशा के साथ आशा की ज्योतिर्मयी रेखा भी स्पष्ट झलकती है। नीरजा में गीतों के साथ लोक गीतों और उर्दू शैली में रूपान्तर किये गये नवीन गीतों का प्रयोग दृष्टिगत होता है। 'नीरजा, में गीतिकाव्य का पूर्ण विकास है, इसमें तो संदेह का अवकाश है ही नहीं।'

पुलक पुलक उर सिहर तन
आज नयन आते क्यों भर भर?
पिक की मधुमय वंशी बोली
नाच उठी सुन अलिनी भोली

महादेवी ने हिन्दी गीति-काव्य को समृद्ध करने में निस्संदेह अपना अत्यंत महत्वपूर्ण योग दिया है। श्री ओमप्रकाश अग्रवाल के अनुसार "महादेवी जी के गीत प्रगीतत्व से तो पूर्ण हैं ही, उनमें काव्य-कला का [illegible] मनोहर सौष्ठव है।" महादेवी [illegible] अपने क्षेत्र में करुणापूर्ण नारी सु[illegible] हृदय की स्वाभाविक प्रेमाभिव्य[illegible] में अतुलनीय है। उनके गीतों [illegible] संस्कृत शब्दों का बाहुल्य होते [illegible] भी प्रसाद गुण की प्रचुरता है। [illegible] के गीत लोकप्रिय और साहित्य [illegible] नीधि है।

दु:ख की बात है कि आज [illegible] मधुर वीणा काल के कठोर हाथों [illegible] फंस गयी है। समय के बीत जा[illegible] पर सब कुछ दूर-दूर निकलेगा ऐ[illegible] कहा जाता है, लेकिन महादेवी जी [illegible] कैसे भूलें ये मधुर गीत!

तुम को पीड़ा में ढूँढा, तुम में
ढूँढूँगी पीड़ा।"

सुभवन,
चिट्टल्लूर रोड, कवडि[illegible]
तिरुवनन्तपुरम–695 0[illegible]

दूरभाष : 61378 तार । "जय हिन्दी"

केरल ज्योति

पुष्प 22
दल 8

सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका
एक प्रति—1 रु० 50 पं०
वार्षिक—15 रु०

नवम्बर 1987

हिन्दी अध्ययन का सही अर्थ

गत गांधी जयन्ती सप्ताह समारोह के अवसर पर केरल हिन्दी प्रचार सभा भवन में एक संगोष्ठी आयोजित हुई । विषय था 'संपर्क भाषा – गांधीवादी दृष्टि में' ।

संगोष्ठी में भाग लेते हुए केरल के मुख्य गांधीवादी कार्यकर्ता श्री. के. करुणाकरन (भूतपूर्व मुख्य मंत्री, केरल), श्री. पी. गोपीनाथन नायर (गांधी शांति प्रतिष्ठान), डा० एन. चन्द्रशेखरन नायर (भूतपूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, महात्मा गांधी कॉलेज, तिरुवनन्तपुरम) तथा प्रो० एम. पी. मन्मथन (सर्वोदय संघ एवं केरल मद्य निरोधन समिति) ने उक्त विषय पर जो विचार प्रकट किये उनका निरूप इस अंक में दिया गया है ।

श्री. के. करुणाकरन, श्री. पी. गोपीनाथन नायर और डा० एन. चन्द्रशेखरन नायर ने इस बात पर जोर दिया है कि भारत की एकता और स्वतंत्रता को बनाये रखने तथा भारत के नक्शे में स्थान पाने केलिए हिन्दी का अध्ययन अत्यंत आवश्यक है । श्री. करुणाकरन ने यह चेतावनी दी है कि यदि केरलवाले हिन्दी का अध्ययन अच्छीतरह नहीं करेंगे तो भारत के नक्शे में केरल का स्थान शून्य बन जायेगा । यह बात केरल के लिए जितना सत्य है, हर हिन्दीतर प्रांत के लिए सत्य हो सकता है । आशा है कि सभी हिन्दीतर प्रान्तों के नेता और प्रशासक इस चेतावनी पर ध्यान देंगे और अपने प्रान्त की युवा पीढ़ी के भविष्य को ध्यान में रखकर हिन्दी के विधिवत अध्ययन की सुविधा प्रदान करने का प्रयत्न करेंगे ।

प्रो० मन्मथन ने हिन्दी अध्ययन को एक दूसरे दृष्टिकोण से देखा है । उन्होंने वर्तमान युग के हिन्दी अध्ययन अध्यापन को निरी व्यापारिक मनस्थिति पर आधारित और इस कारण दूषित बताया है ।

इस अंक में

उन की दृष्टि में आज की हिन्दी [illegible] रहित है, राष्ट्रीयता रहित है। अध्याप[क] वेतन पाने के लिए पढाते हैं, विद्या[र्थी] नौकरी पाने के लिए सीखते हैं। [illegible] वास्तविक अर्थ में हिन्दी अध्ययन नहीं [illegible] उन की दृष्टि में हिन्दी अध्ययन का [illegible] है हिन्दी के द्वारा भारत की आत्मा [का] दर्शन पा लेना। इस प्रेरणा से हिन्दी सीखने[वाला] वाला इस देश के लिए मर मिटेगा। [इस] देश की अखंडता को आंच लगानेवाली समस्त शक्तिओं से लोहा लेगा। इस देश के समस्त दुःखों में भाग लेगा। इस देश को दु:ख पहुँचानेवाली हर एक घटना [से] दुःख दग्ध होगा।

कितना व्यापक दृष्टिकोण! कैसा [illegible] दर्शन! हिन्दी की स्वैच्छिक संस्थाओं [के] कार्यकर्ताओं और छात्रों के सामने, हिन्दी के प्राध्यापकों एवं लेखकों के सामने प्रो० मन्मथन का उक्त आदर्श एक चुनौती है। क्या हिन्दी को हम भारत की जनता के दुःखों की आवाज बना सकते हैं? हिन्दी में पुनः गांधी को प्रतिष्ठित कर सकते हैं? हिन्दी को पुनः देश प्रेम और देशाभिमान से जोड सकते हैं? क्या हिन्दी को वह माध्यम बना सकते हैं जिस के द्वारा भारत की आत्मा का दर्शन संभव हो सके? क्या हिन्दी में वह शक्ति फूँक सकेंगे जिस से उसे पढनेवाले सहज ही देश के लिए मर मिटने केलिए तैयार हो जायेंगे? हिन्दी के वाङ्मय में पाठ्क्रम में और शिक्षण विधि में तदनुकूल परिवर्तन कर सकेंगे?

जो हिन्दी नहीं पढ़ेंगे उनका स्थान भारत में शून्य रहेगा

श्री. के. करुणाकरन
भूतपूर्व मुख्य मंत्री, केरल

[गान्धी जयन्ती सप्ताह के सिलसिले में "संपर्क भाषा गान्धीजी की दृष्टि में" विषय पर केरल हिन्दी प्रचार सभा में आयोजित संगोष्ठी में दिये गये उद्घाटन भाषण का सारांश]
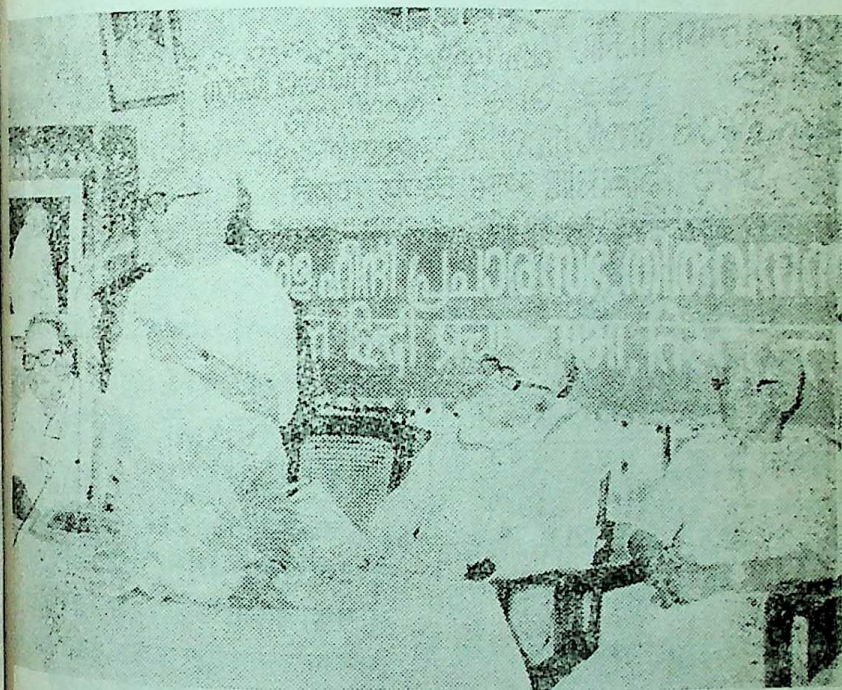
गान्धी जयन्ती सप्ताह समारोह

6-10-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा के तिरुवनन्तपुरम परिसर में "संपर्क भाषा—गांधीजी की दृष्टि में" विषय पर आयोजित संगोष्ठी का उद्घाटन कर रहे हैं श्री. के. करुणाकरन (विपक्षी नेता, विधान सभा, केरल)। बैठे हैं (बायें से) विख्यात हिन्दी लेखक डा० एन. चन्द्रशेखरन नायर, शराब बंदी आन्दोलन के मुख्य नेता प्रो० एम. पी. मन्मथन एवं मुख्य गान्धीवादी कार्यकर्ता श्री पी. गोपीनाथन नायर।

क्या अंग्रेजी भारत में किसी नागरिक की मातृभाषा है ?

सत्तर करोड लोगों के इस भारत में करीब 1052 भाषायें हैं। इनमें 33 भाषायें ही ऐसी हैं जिनके बोलने वालों की संख्या एक लाख से अधिक हैं।

गांधीजी ने कई बातें ध्यान में रखकर संपर्क भाषा के लिए हिन्दी को चुना। विभिन्न भाषाओं, आचार विचारों और धर्मों के इस देश को एक बनाये रखनेवाले सबसे बडे साधन के रूप में उन्होंने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के लिए चुना। हिन्दी आसान भाषा है। अधिक लोग हिन्दी बोलते हैं और समझ सकते हैं। सरकारी कर्मचारी आसानी से हिन्दी में कामकाज कर सकते हैं।

लोग कहा करते हैं कि हम अंग्रेजी में इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि अब उसे छोडना कठिन है। क्या अंग्रेजी भारत में किसी नागरिक की मातृभाषा है ? जीविकोपार्जन के लिए हम ने अंग्रेजी सीखी। दीर्घकाल तक भारतीय जनता पर इसका आधिपत्य था। क्यों कि दो शताब्दियों तक यह यहाँ शास[illegible] की भाषा थी।

स्वतंत्रता संग्राम के समय [illegible] गांधीजी ने राष्ट्रभाषा के लि[illegible] हिन्दी को चुना। दक्षिण भारत [illegible] हिन्दी प्रचार के नेतृत्व का भा[illegible] उन्होंने राजाजी पर सौंपा। गांधी[illegible] जानते थे कि प्रान्तीयता के ना[illegible] पर दक्षिण और उत्तर के बी[illegible] झगडा हो सकता है। इस [illegible] निवारण के लिए उन्होंने हिन्दी [illegible] अपनाया। पर दुर्भाग्य से कुछ लो[illegible] ने द्रविड भाषाओं के नाम पर हि[illegible] का विरोध किया। इस घटना[illegible] राष्ट्र को बडी वेदना और चो[illegible] पहुँचायी। इस बात में कोई सं[illegible] नहीं कि भविष्य की पीढी य[illegible] हिन्दी अच्छी तरह नहीं पढ़ेगी [illegible] राष्ट्रीय जीवन में हमारा [illegible] स्थान नहीं रहेगा।

एक जमाना था जब केरल[illegible] लोग राष्ट्र के निर्माण में महत्व[illegible] भूमिका निभाते थे। रियासतों [illegible] मिलाकर नवभारत का गठन क[illegible] में सरदार वल्लभभाई पटेल [illegible] सहायता स्व० वी. पी. मेनोन [illegible] की थी। अन्तर्देशीय मंच पर [illegible] के. पी. एस. मेनोन विख्यात [illegible] आर्थिक क्षेत्र में डा० जोण म[illegible] का नाम प्रमुख है। पर [illegible]

केरल [illegible]

गान्धी जयन्ती सप्ताह समारोह—श्रोताओं का एक दृश्य।

स्थिति बदल गयी। अखिल भारतीय प्रतियोगिताओं में बहुत कम केरलवाले विजय पाते हैं। जो विजय पाते हैं उन में अधिकांश दिल्ली में बसे हुओं की संतानें हैं। यदि केरलवाले हिन्दी अच्छी तरह नहीं पढ़ेंगे तो भारत के नक्शे में केरल का स्थान शून्य बन जायेगा। अपने अनुभवों के आधार पर मैं यह चेतावनी दे रहा हूं।

हिन्दी भारत की जनता को एक पुष्प गुच्छ में बांध सकती है। इसी

यदि केरलवाले हिन्दी अच्छी तरह नहीं पढ़ेंगे तो भारत के नक्शे में केरल का स्थान शून्य बन जायेगा।

बात को ध्यान में रख कर गांधीजी ने अपने रचनात्मक कार्यक्रमों में हिन्दी प्रचार को भी स्थान दिया। इन्दिरा गांधी ने हिन्दी को विश्व

मंच पर उचित स्थान दिलाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। कई विश्व सम्मेलनों में उन्होंने हिन्दी में भाषण दिया।

केरल वाले यदि हिन्दी का अच्छा अभ्यास करें तो हिन्दी भाषण में वे उतरभारतीयों से होड लगा सकते हैं। श्री शंकर के इस जन्म स्थान की जनता भाषा सीखने में विशेष कुशल हैं। केरल की जनता हिन्दी के प्रचार में प्रगति करती जाये जिस से यह हमारी संपर्कभाषा बन सके, यही मेरी शुभकामना है। इन शब्दों के साथ मैं इस संगोष्ठी का उद्घाटन करता हूँ।

मैं इंग्लैंड में काफी गया हूँ और मैं जानता हूँ कि वहाँ कोई अंग्रेज़ किसी दूसरे अंग्रेज़ से अपनी मातृभाषा को छोडकर अन्य किसी भाषा में वार्तालाप नहीं करता। जब मैं भारतीयों को अपने भारतीय भाइयों के साथ विदेशी भाषा में बोलते देखता हूँ तब मुझे बडी वेदना होती है।

महात्मा गांधी

राष्ट्र के प्राण शक्ति और चेतना है हिन्दी

प्रो० एम. पी मन्मथन
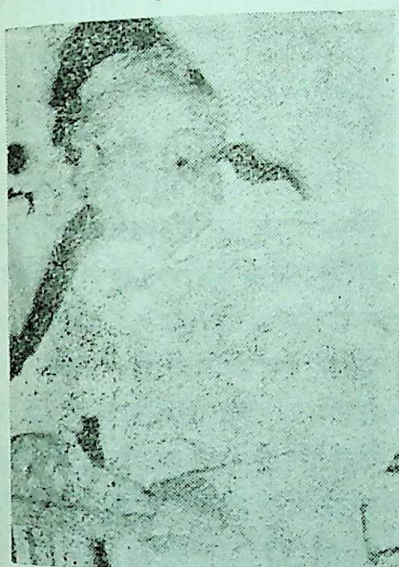
प्रो० एम. पी. मन्मथन

[6-10-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में "संपर्क भाषा - गांधीजी की दृष्टी में"—विषय पर आयोजित संगोष्ठी में दिया गया अध्यक्षीय भाषण]

मैं ने स्वतंत्रता संग्राम के समय थोडी सी हिन्दी पढी थी । उन दिनों इस राज्य में हिन्दी सिखाने वाले कुछ अध्यापक घूमते फिरते थे । उन में एक अध्यापक ने मुझे हिन्दी पढने केलिए प्रेरित किया था और हिन्दी की तीसरी परीक्षा उत्तीर्ण करायी थी । वे बडे गरीब थे । उन का खादी का कुर्ता फटा पुराना था । फीस की उन्हें कोई चिंता नही थी । लालटेन लिये वे घर घर जा कर हिन्दी सिखाते थे । उन्हें जेल भी जाना पडा था । अदम्य देश प्रेम ही उन के हिन्दी प्रचार का

उस ज़माने के वे हिन्दी प्रचारक केरल के देशीयमंच की विभूतियाँ थे ।

प्रेरक था, पैसे का या सुख सुविधा का मोह नहीं । हिन्दी उनके राष्ट्रीय बोध का एक अंग थी । उस ज़माने के वे हिन्दी प्रचारक केरल के राष्ट्रीय मंच की विभूतियाँ थे । वह जमाना बीत गया ।

आज हिन्दी का वह स्थान नहीं रहा । मद्रासवाले "हिन्दी नहीं चाहिए, हिन्दी हट जाये" वाले नारे लगाते हैं । हम तो हिन्दी को ज़रूरत भर के लिए स्वीकार करने की व्यापारिक मनस्थिति रखनेवाले हैं ।

हिन्दी को हम जीविका का एक उपकरणमात्र मानते हैं। गांधी सोचते थे कि हिन्दी मेरे देश की भाषा है, हिन्दी बोलते हुए मैं उज्वल देशाभिमान से रोमांचकंचुकित हो जाता हूँ। वह दृष्टि अब नहीं रही। गांधीजी ने कहा था कि जब खादी पहनते हैं, तब याद रखें कि हम गरीब का कपडा पहनते हैं। इसका मतलब है कि खादी पहननेवाले भाग्यवान हैं। क्यों कि वे इस देश के गरीबों की वेदना को आत्मसात करते हैं। हिन्दी सीखनेवाले विशाल भारत की सांस्कृतिक परंपरा को आत्मसात करते हुए देशाभिमान से पुलकित होनेवाले हैं। इसी दृष्टि से गांधीजी ने हिन्दी सीखने का उपदेश दिया।

हम सब चीजों का मूल्यांकन उपयोगिता के आधार पर करते हैं।

हिन्दी सीखनेवाले विशाल भारत को सांस्कृतिक परंपरा को आत्मसात करते हुए देशाभिमान से पुलकित होनेवाले हैं।

माता बच्चे से पूछती है — क्या हिन्दी अच्छी है? हिन्दी पढने से नौकरी मिलेगी? यदि मिलेगी तो हिन्दी सीखने की कोशिश करो। यह दृष्टि हम में नहीं है कि हिन्दी मेरे देश की भाषा है, मेरे राष्ट्र की भाषा है। अपने राष्ट्र पर गर्व करने वाले आज कोई है?

हमारी शिक्षा में देशाभिमान का कोई स्थान नहीं। हमारे विद्यालयों में दुनियाँ भर के विषय सिखाये जाते हैं, पर देश प्रेम नहीं सिखाया जाता। मैं भारतीय हूँ, भारत की मिट्टी में जन्मा हूँ। यह सोच का अभिमान विजृंभित होने वाली पर नयी पीढी को रूप देने वाली शिक्षा हमारे देश में नहीं है। पहली कक्षा से एम. ए. कक्षा तक पढने पर भी यहाँ देश प्रेम का पाठ नहीं मिलता। उलटे यहाँ गोरों को जन्म देने वाली शिक्षा दी जा रही है। अंग्रेजी माध्यम स्कूलों की संख्या कुकुरमुत्तों की तरह बढ रही है। चार साल का बच्चा छोटा निकर, कोट और कण्ठ कौपीन पहने एक दुर्वह पेटी थामे स्कूल बस में जब चढ जाता है तो देखनेवाले को लगता है कि यह पूर्व जन्म में गधा रहा होगा। उसके लिए और उस

उसके लिए और
उसके अध्यापक के लिए
दुर्ग्राह्य कुछ विषय
उसके गले में इस प्रकार
ठूंस दिये जाते हैं कि
उसकी आँखें बाहर
निकल आती हैं।

के अध्यापक के लिए दुर्ग्राह्य कुछ विषय उस के गले में इस प्रकार ठूंस दिये जाते हैं कि उस की आँखें बाहर निकल आती हैं। यही 'अंग्रेजी मीडियम' नामक अनावश्यक स्कूलों में होता है। इस के विरुद्ध आवाज़ उठाने केलिए इस राज्य में कोई नहीं है। मेरा विचार है ये सब स्कूल बंद किये जायें। गोरे को आत्मा में प्रतिष्ठित करने वाले ये स्कूल बन्द नहीं कराये जायें तो यह कहना निरर्थक होगा कि हम राष्ट्र का ख्याल रखते हैं। तो भी सभ्य समाज की दृष्टि इस ओर है। डेढ़ हज़ार ढाई हज़ार रुपयों की रिश्वत देकर इन स्कूलों में प्रवेश पाते हैं। कैसी दयनीय अवस्था है! अंग्रेजों द्वारा पाली पोसी गयी इस व्यापारिक संस्कृति पर पलने वाले हम लोग हिन्दी पर कैसे गर्व कर सकेंगे!

मेरे हिन्दी अध्यापक जो फटा पुराना कुर्ता पहनकर लालटेन लिये हिन्दी सिखाने आते थे किसी किसी से महीने दो रुपये की फीस पाते थे। कोई कोई फीस नहीं देते। तो अध्यापक कहते—"फीस की चिंता मत करो। तुम पढ़ते जाओ" वह केवल हिन्दी का आवेश नहीं था। जन्मभूमि के हितचिंतन से उत्पन्न आवेश था। देशाभिमान से अवगुंठित वह हिन्दी अध्ययन आज नहीं रहा। व्यावारिक मनोवृत्ति से प्रेरित होकर लोग हिन्दी सीखने आते हैं। जिस में यह अभिमान है कि हिन्दी मेरे राष्ट्र की भाषा है उसके हिन्दी भाषण में वह अभिमान झलकेगा। उलटे आज ऐसे हिन्दी भाषण सुनने को मिलते हैं जिन से उनकी यह दयनीय मनोवृत्ति प्रकट होती है कि मुझे विवश हो कर हिन्दी सीखनी पड़ी। हम हिन्दी बोलते हुए इस अभिमान का अनुभव नहीं कर पाते कि हिन्दी पर मैं गर्व करता हूँ। यह मेरे राष्ट्र

मेरा विचार है ये सब स्कूल बंद किये जायें।

की भाषा, यह मेरे राष्ट्र के प्राण, शक्ति और चेतना है। इसलिये यद्यपि हिन्दी केरल में प्रचुर हो रही है तो भी वह गान्धी रहित है, देशीयता रहित है, देशीय आवेश से अभिभूत नहीं है, निर्जीव है। यहाँ जो हिन्दी सीखी जाती है वह निरे व्यापार केलिए है। इसके विपरीत हिन्दी सीखनेवालों से राष्ट्र को एक नया नेतृत्व मिलना है ।

देशाभिमान से अवगुंठित वह हिन्दी अध्ययन आज नहीं रहा।

हरिजन सेवकों की भी यही बात है। हरिजन सेवकों को चाहिए कि वे हरिजनों की सेवा करते-करते एक ऐसी मानसिक वृति तक पहुंच जाये जिस में वे समस्त राष्ट्र को अपना मान कर उस के लिए जीवाहुति तक के लिए तैयार हो जावें। इसी को हरिजन सेवा कहते हैं। एक दूसरे प्रकार की हरिजन सेवा भी है। अंगडाई लेते हुए हरिजन सेवा के नाम पर माहवार वेतन पाना। यही वर्तमान समय का हरिजन प्रेम है। गांधीजी ने हरिजनों के लिए इक्कीस दिन का उपवास किया। भारत को स्तब्ध करनेवाली ऐसी

हिन्दी सीखनेवा[लों] से राष्ट्र को [एक] नया नेतृत्व मिलना है

कोई दूसरी घटना नहीं घटी इस देश की हरिजनेतर जनता मन में हरिजनों के प्रति प्र आभिमुख्य और सेवा भाव उ करना ही इस उपवास का था। कई लोगों ने सोचा कि लीला समाप्त हो जायेगी। अनेकों युवक हरिजनों की कुटियों गये, हरिजन बालकों को नहला वस्त्र पहनाया, तिलक लगा हरिजनों को तसल्ली दी, उन की की। इस सेवा कार्य के द्वारा वे सेवक नवभारत की आत्मा के द कर रहे थे।

मेरी दृष्टि में हिन्दी अध्ययन अर्थ भी हिन्दी के द्वारा भारत आत्मा के दर्शन पा लेना है। हि सीखनेवाला इस देश के मर मिटेगा। इस देश की अखंड

अंगडाई लेते हुए हरिज[न] सेवा के नाम पर माहवा[र] वेतन पाना। यही वर्तमा[न] समय का हरिजन प्रेम है

मेरी दृष्टि में हिन्दी अध्ययन का अर्थ भी हिन्दी के द्वारा भारत की आत्मा के दर्शन पा लेना है।

को आंच लगानेवाली शक्तियों से लोहा लेगा। इस देश के समस्त दुःखों में भाग लेगा। इस देश को दुःख पहुंचानेवाली घटनाओं से वह दुःखदग्ध होगा।

एक उदाहरण दूँगा। **दो व्यक्ति** गंगा स्नान करने गये। दोनों युवक हैं और फैशन परस्त हैं। पहले ने डुबकी लगाते समय कहा—वाट इस गंगा ? गंगा इस आफ्टर ऑल वाटर। दो भाग हाइड्रजन और एक भाग ओक्सिजन। वही पानी इस में बहता है। इससे बढ कर मैं इस में कुछ नहीं पाता। दूसरे ने डुबकी लगाते समय कहा—यह गंगा है। मेरे देश की पुण्य नदी है। परम पावनी गंगा है। विष्णु के पादकमलों में यह जन्मी। इसे शंकर के जटाजूट में निपतित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। हिमालय की अधित्यकाओं के अनेकों ऐसे गिरिगह्वरों को सहलाती हुई यह बह आयी है जिन में महर्षीश्वर तप कर रहे हैं। इसके तीर पर तप कर के ही महर्षि और राजर्षि मुक्ति पा गये। इतनी महत्वपूर्ण गंगा में डुबकी लगाने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हो रहा है। पहले के डुबकी लगाने से कोई बडा लाभ नहीं हुआ। अच्छी तरह डुबकी लगाया होगा तो उसके शरीर का थोडा मैल निकल गया होगा। दूसरे ने जब डुबकी लगायी तो उस के शरीर का मैल तो गया ही, उस के मन का मैल गया और उस की आत्मा पुलकित हो गयी। वह उस डुबकी के द्वारा एक नये राष्ट्र-दर्शन में पहुंच गया होगा।

हिन्दी रूपी गंगा में आप इन दोनों प्रकारों से डुबकी लगा सकते हैं। पहले की सी डुबकी ही आज अधिकतर लगायी जाती है। हिन्दी क्या है ? राष्ट्रभाषा विशारद। फीस देनी है। पढना है। परीक्षा देनी है। उत्तीर्ण होना है। हिन्दी का एक शब्द भी नहीं बोलना है। यह हिन्दी अध्ययन नहीं है।

सही हिन्दी प्रचार के द्वारा हम एक ऐसी पीढी को जन्म देंगे जिसने हिन्दी के द्वारा इस राष्ट्र की आत्मा को देख लिया है। जो इस राष्ट्र के लिए सर्वस्व समर्पण कर सकती है। हमारी चर्चायें और संगोष्ठियाँ हिन्दी के साथ उस प्रकार का एक संबंध, बुद्धि से नहीं, हृदय से जोडने का मार्ग प्रशस्त करे।

जयहिन्द

श्री. पी. गोपीनाथन नायर

स्वतंत्रता बनाये रखने केलिए एक रहें

श्री. पी. गोपीनाथन नायर

[6-10-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में 'संपर्क भाषा गांधीजी की दृष्टि में' विषय पर आयोजित संगोष्ठी में दिये गये भाषण का सारांश]
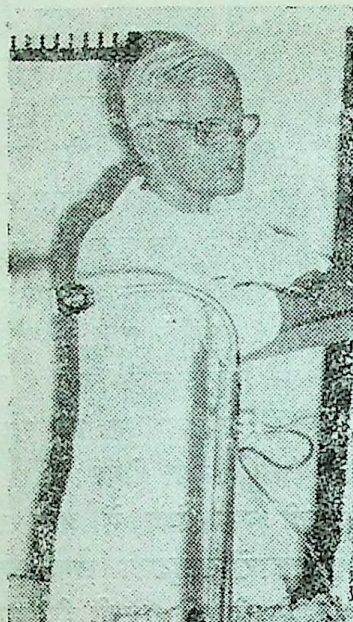
गांधीजी की एक महत्वपूर्ण देन यह है कि उन्होंने भारत की भावात्मक एकता का मार्ग सुगम बनाया। वे एक समन्वय पुरुष थे। जाति, धर्म, प्रान्त आदि सभी भिन्नताओं के बीच आपने एकता की आवाज़ बुलन्द की। इसी उद्देश्य से उन्होंने सारे भारत के लिए एक आम भाषा को स्वीकार करने की अपील की। पर आज भी हम उस तर्क को समझ नहीं पाये हैं। यदि हमें एक होकर जीना है तो हमें एक भाषा चाहिए।

सन् 1757 में प्लासी की लडाई हुई। क्लाइव की सेना में केवल 500 सैनिक थे। भारत के सिराज दौला के साथ 30 000 सैनिक थे। उनकी सहायता करनेवाले राजा के साथ भी 30,000 सैनिक थे। भारत के इन 60 000 सैनिकों को क्लाइव के 500 सैनिकों ने कैसे परास्त किया? एकता का अभाव। देशप्रेम का अभाव। यही कारण था। यदि हमें

भारत के इन 60 000 सैनिकों को क्लाइव के 500 सैनिकों ने कैसे परास्त किया? एकता का अभाव। देशप्रेम का अभाव।

हिन्दी जब राष्ट्रभाषा बनी तो हिन्दीवालों को यह घमंड हुआ कि हम प्रथम श्रेणी के हैं, हमारी भाषा बाकी सब लोग पढ लें।

स्वतंत्र बनाये रखना है तो एकता चाहिए। एकता के लिए एक भाषा चाहिए।

भाषावार प्रान्त जब बने तो भाषा के नाम पर भिन्नता की प्रवृत्ति बढने लगी। तमिलनाड और बंगाल की बात हम जानते हैं। पंजाब में पहले नागरी और गुरुमुखी लिपि में बोर्ड लिखे रहते थे। अब केवल गुरुमुखी में ही बोर्ड लिखे रहते हैं। इस का कारण है। हिन्दी जब राष्ट्रभाषा बनी तो हिन्दीवालों को यह घमंड हुआ कि हम प्रथम श्रेणी के हैं, हमारी भाषा बाकी सब लोग पढ लें। गांधीजी ने जिस हिन्दुस्तानी की बात की वह उत्तरवालों की हिन्दुस्तानी नहीं। उस में तमिल के भी शब्द आयेंगे। मलयालम के भी शब्द आयेंगे। भारत की अन्यान्य सभी भाषाओं के मुख्य शब्द इस में मिल जायेंगे। ऐसी हिन्दी बन रही है।

गांधीजी ने एकता के लिए एक आम लिपि की भी बात की। उनका आग्रह था कि देवनागरी लिपि सार्वत्रिक बन जाये।

❀

हिन्दी का प्रचार करते हुए हमें यह भी ध्यान में रखना होगा कि दूसरी क्षेत्रीय भाषाएँ बोलनेवाले लोगों को यह महसूस नहीं होना चाहिए कि उनके ऊपर हिन्दी थोपी जा रहा है। जो काम हम प्यार से और समझा कर कर सकते हैं, वह जबरदस्ती करने से नहीं हो पायेगा।

—श्री राजीव गांधी

भारतीय नेतृत्व केवल हिन्दी द्वारा संभव है

डा० एन. चन्द्रशेखरन ना

[6-10-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में संपर्क भाषा गांधीजी की दृष्टि में—विषय पर आयोजित संगोष्ठी में दिये गये भाषण का सारांश]
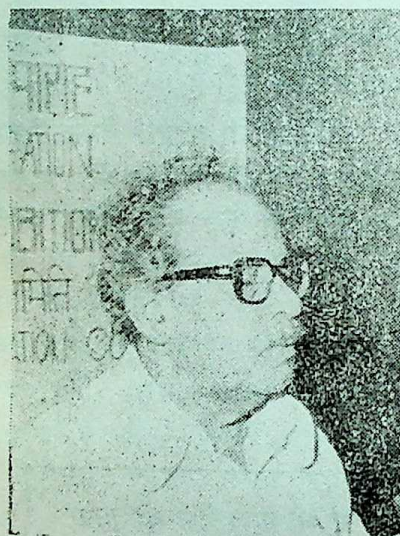
डा० एन. चन्द्रशेखरन नायर

गांधीजी ने एक बार कहा—इस विशाल भारत का नेतृत्व संभालने के लिए हिन्दी का ज्ञान अनिवार्य है।

यदि प्रो० एम. पी. मन्मथन जैसे वाग्मी जो श्रोताओं को मधुर शब्दों से आवृत सुशक्त औषध पि स्वस्थ बनाने में सक्षम हैं यदि में भी भाषण दे पाते तो सम लिए हितकारी अपने भाष के कोने कोने में पहुंचा पाते।

गांधीजी जब दक्षिण आफ्रि लौटे तो उनसे गोखले अनुरोध किया कि वे इस दे राजनीतिक नेतृत्व संभाल ले गांधीजी ने भारत भर को देखना चाहा। भारत भर में दौरा किया। भारत के सम जीवन को उन्होंने आत्मसात कि उन्होंने समझ लिया—इन लो मेरी बात कहने केलिए एक की ज़रूरत है। मलयाली, ब मराठी सभी को मेरी बात सम है। जनता का हृद्स्पंदन और उनसे बोलने केलिए एक भाषा की ज़रूरत है। इसी वि से उन्होंने 1918 में इलाहाबाद हि साहित्य सम्मेलन के एक दी

पृथ्वी

डा० एम. षणमुखन

बहुत पुरानी बात है —
एक दफा
सीने को चीरकर
पृथ्वी ने तह में समा लिया था
सीता को ।
पर आज,
सुधर गयी है
वो वक्त के साथ ।
आज भी,
राम-रावणों से पीड़ित
कितनी सीतायें चिल्लाती हैं—
और वो चिल्लाहट
बादल-सी घेर गयी है
अंतरिक्ष को ।

आत्मायें अनागत बच्चों की
भटकती हैं, आकुलता से-
रेंगते हैं विषैले मानव
उसकी ही जोहन में ।
पर इनसान को ढ़ोते-सहते
जम गया है कलेजा उसका
हो गयी है एकदम पक्की, सख्त
नहीं तो,
कब से जिगर उसका
छलनी हो गया होता
फोड़कर कब से
खुद फूँक दिया होता ।

हिन्दी विभाग
कोचिन विश्वविद्यालय
कोचिन-682022

समारोह में कहा कि हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा हो ।

गान्धीजी ने कहा कि दक्षिण भारत में हिन्दी का प्रचार आरंभ करना है । अपने पुत्र देवदास को उन्होंने उस केलिए दक्षिण भेजा । वे जानते थे कि तमिलनाड से ही हिन्दी का विरोध उभर सकता है । इसीलिए उन्होंने मद्रास में हिन्दी प्रचार के वटवृक्ष का बीज बोया । ❀

वे जानते थे कि तमिलनाड से ही हिन्दी का विरोध उभर सकता है । इसीलिए उन्होंने मद्रास में हिन्दी प्रचार के वटवृक्ष का बीज बोया ।

विभीषिका

प्रद्युम्न 'विद्यावाचस्पति'

रात और दिन
मेहनत करके
मकड़ी, अपने मनसूबों का
ताना-बाना बुनती है,
शून्य में-उमंग से
सृजन के गीत रचती है।
मगर ! हाय रे दुर्भाग्य !
सृजन के धुन में
सब कुछ भूल जाती है,
स्वयं में घिर जाती है।
और.... ....
सृजन के जाले में फाँस फाँसकर
कितने ही निरीह कीटों का
शोषण करती है,
फिर भी..................
प्रगति का दम भरती है।
एक दिन स्वयं ही,
अपने ही द्वारा बनाए
जाल में उलझकर
दिशाहीन हो जाती है।
और .. ....
दुनियाँ से विदा हो जाती है।
सिर्फ, निशान के रूप में
जाल के बीच में टँगी,
नश्वर देह रह जाती है।
आज,
हर मकड़ी इस चित्र को
देख रही है,
फिर भी
सृजन की—
विभीषिका को
बारम्बार
दुहरा रही है।

राष्ट्रभाषा कुटीर
पञ्चरापाली
जि: रायपुर (मध्यप्रदेश)
पि.न-493 558

यह आवाज़ किसकी है?

श्री. वी. के. बालकृष्णन नायर

आवाज़ गूँजती थी आज़ाद आर्ष भारत की
एक माँ की सन्तान है रहेंगी एक हम ।

आज आवाज़ गूँज रही है आर्ष भारत की
हिन्दू हैं, सिक्ख, इसाई, मुसलमान हैं ।

सोच रहा हूँ, जाने क्या हो गया हमको
सोच रहा हूँ हमारे हैं मन कितने !
हमने कदम बढाया गुलामी में एक साथ
अब क्या हुआ जनता को भारत माँ की ?

धर्म-चक्र का धर्म दूर रहा, पहिया शेष रहा
अरमान उमड़ते रूहों पर, झलकती हैं चिनगारी ।
कितनों के आँसू छलके, कितनों के गोद सूने पडे
किसका, क्या लाभ हुआ यहाँ, उत्तर मिलता न कहीं ॥

आज़ादी का, शान्ति चक्र का दीप जलाया हमने
आज जलता बर्बरता का दीपक शर · शर…शर…
आवाज़ कानों में गूँजती भारत माँ की—
आज़ादी का दीप जलाओ, हे मानव, मानव बन !

सेन्ट जोसफ बी. एछ. एस.
तलशेरी, केरल

भारत महिमा

डा० बदरीनाथ कल्ल

इदं हि प्रिय भारतम्
शान्तिमार्ग दर्शकम्
विश्वशान्ति दायकम्
इदं हि. ।

अशोकचक्र चिन्हितं
त्रिरङ्गध्वज शोभितं
समान भाव दर्शकं
इदं हि. ।

अनेक प्रान्त शोभितं
विभिन्न जाति भूषितं
विभिन्न वाद गुञ्जितं
इदं हि. ।

पंचशील राजितं
बौद्ध धर्म प्रेरितं
जाति भेद हारकं
इदं हि. ।

गान्धिवाद प्रचारकं
नेहरू नीति पालकं
समाजवाद दर्शकं
इदं हि. ।

गिरिराज राजितं
सुधाधार धारकं
सर्वलोक पालकं
इदं हि. ।

विदेशि चित्त हारकं
सुरम्य दृश्य शोभितं
'कश्यप सीर' गर्वितं
इदं हि. ।

प्राध्याप
कश्मीर विश्वविद्याल
श्रीनग

मलयालम लेख

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'

मूल
प्रो विष्णुनारायण नंपूतिरी

अनुवाद :
श्री. एम. एस. विनयचन्द्रन
शोधछात्र, केरल विश्वविद्यालय, तिरुवनन्तपुरम
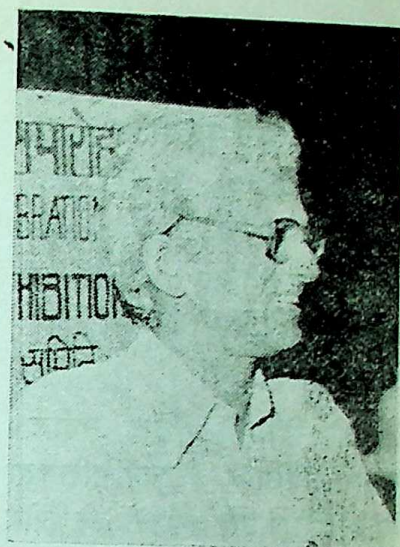
प्रो. विष्णुनारायण नंपूतिरि
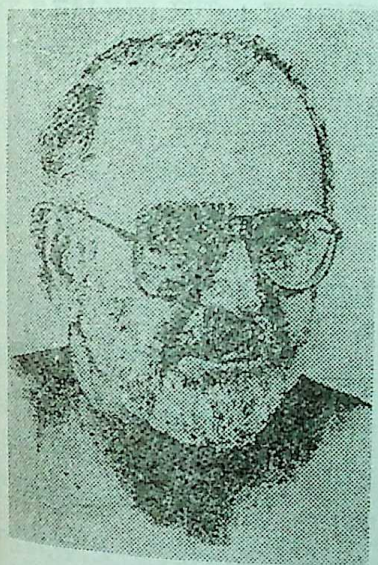
अज्ञेय

I

कितनी नावों में कितनी बार
ओ मेरी छोटी सी ज्योति !
मैं तुम्हारी ओर आया हूँ
कई हवाओं और बहाओं में फँस कर
चौंधियाते तथ्यों की दूरी की ओर
तोभी अक्लान्त, क्षमापूर्वक
ओ मेरे सत्य !
कितनी बार ''

वात्स्यायनजी के तार-स्वर हैं ये। असंभव अलगाव के; अज्ञेय होने पर भी अनुभूत होनेवाले किसी जीवन-दशा का सशक्त संप्रेषण। सच्चाई की तरफ एक कदम आगे रखने का आभास !

''चाय पीते हुए
मैं अपने पिताके बारे में सोच रहा हूँ।
अच्छी बात नहीं है
पिताओं के बारे में सोचना
अपनी कलई खुल जाती है

x x x x x x x

हम कोई दूसरे हुए होते
तो पिता के अधिक निकट हुए होते
अधिक उन जैसे हुए होते

x x x x

क्या पिता भी
सबेरे चाय पीते हुए
पिता के बारे में सोचते थे ?
निकट या दूर ?"

वही दिल में पैठता सवाल। सहज लावण्य। नित्यनैमित्तिकता के सहारे स्थायी दशाओं की ओर ले जानेवाली सहज निपुणता। वात्सायनजी का विभुत्व यही है।

"मेरा घर
दो दरवाजों के बीच है

x x x x

शहर में सभी दरवाज़े
भीतर की ओर खुलते हैं
रहस्यों के बन्द कमरों की ओर।

x x x x

मैं ही अपना घर हूँ
उसमें, जो कि प्रकाश की कतार में है,
घुसने पर, घर के अलावा सब
कुछ देख सकोगे।
अवनि और आकाश देख सकोगे।
देखा है तुमने
वैसा घर कहीं ?

x x x x

सत्य के ये तीव्र स्वर एक ब[...] इटशेरी के मुँह से भी निकले थे। अपने घर को देख कर कोई इसे दूसरे की नकली न बताये—उनकी चेतावनी भी सुनी थी।

वात्स्यायनजी का "घर" अपने अंतिम कविता संग्रह के हृदय बि[...] के तौर पर दर्शित होता है। उनके जीवन में भी घर का बिंब एक कुं[...] बना। निस्संतान वात्स्यायनजी ने बच्चों के लिए एक छोटा सा मचान बनाया था। मगर जिस दिन वे उ[...] घर का दरवाजा खोल देनेवाले [...] उसी दिन सीढी पर गिर पड़े औ[...] चल बसे।

II

मलयालम के विख्यात क[...] वैलोप्पल्ली मास्टर के जन्म से [...] दो महीने पूर्व 11 मार्च 1911 [...] उत्तर प्रदेश के कसिया शहर [...] सच्चिदानंद वात्स्यायन अज्ञेय [...] जन्म हुआ। बालक वात्स्या[...] पुरातत्व अनुसंधान में रत पिता [...] खुदाई के वातावरण में पुरात[...] की गंध लेते हुए पला था। बातों [...] विवेकपूर्वक ग्रहण करना सीख [...] विज्ञान में उपाधि प्राप्त की। [...] शहरों में पढ़ते-लिखते और [...] करते रहे। चन्द्रशेखर आज[...]

आवाज़ में, व्यवहार में, दृष्टिकोण में, विश्लेषण में यह उच्चता आपने बनाये रखो।

भगतसिंह आदि के प्रभाव में तीव्र-वादी बन गये। देश की स्वतंत्रता के लिए आतंकवादी आन्दोलन में शामिल हो गये। जेल में बीती लंबी अवधि में 'अज्ञेय' नाम से कविताएँ प्रकाशित करते रहे। एशिया, यूरोप तथा अमेरिका में खूब यात्रा की। पश्चिमी विश्वविद्यालयों में अध्यापन-कार्य किया। स्वतंत्र भारत के टैगोर के बाद के सर्वश्रेष्ठ सांस्कृतिक व्यक्तित्व एवं प्रभावकारी शक्ति बने रहे। जयप्रकाशजी की प्रेरणा से समस्त-क्रान्ति की मुखपत्रिका 'एवरीमैन' का संपादन आपातकाल में उसके बंद होने तक किया था। केन्द्र साहित्य अकादमी तथा ज्ञानपीठ ने उन्हें समुन्नत पुरस्कारों से सम्मानित किया। आलोचकों ने फिर भी उन्नत शीर्ष होकर सदा भीड में विचरण करनेवाले प्रतिभाशाली वात्स्यायन जी की प्राय: उपेक्षा की। वात्स्यायन जी ने उनकी उपेक्षा की उपेक्षा की। अंग्रेज़ी शब्द 'स्टैचर' (उदग्र शीर्षत्व) का ठीक पता पाने केलिए वात्स्यायन जी से दस मिनट की बातचीत काफी है। आवाज़ में, व्यवहार में, दृष्टिकोण में, विश्लेषण में यह उच्चता आपने बनाये रखी।

III

सिर्फ साधारण व्यवहार तथा पंडितों की चर्चा में व्यवहृत 'खडी बोली' को आधुनिक हिन्दी भाषा का रूप देने का सर्वाधिक श्रेय वात्स्यायन जी को है। उन्होंने 'तार सप्तक' शीर्षक संग्रह से एक पीढी की काव्य भाषा को अपनी रूढिगत बेडियों से मुक्त किया। सब प्रकार से बाहर से पूर्ण स्वतंत्र प्रतीत होनेवाले अपने वाग्मय में हृदयहारी सूक्ष्म ताल संक्रमित करने में वात्स्यायन जी को किसी कठिनाई का अनुभव नहीं हुआ। परदेश में जाकर भटकते राजहंस के प्रति लिखी दस पंक्तियों की कविता में राजहंस के पंखों की फडकन, लहरियों का कलरव तथा गृहातुरता भरी दीख पडती है। करीब पाँच दशकों की काव्य कृतियाँ 'सदा नीरा' नामक दो संग्रहों में संकलित हैं। 'शेखर एक जीवनी' जैसे उपन्यास, 'अरे यायावर रहेगा याद?' आदि यात्राविवरण तथा अन्य कई निबन्ध रचनाएँ हिन्दी गद्य

विधा को आधुनिक चिंतन एवं आधुनिक संवेदनाओं का समर्थ संवाहक सिद्ध करती हैं। वात्स्यायन जी यह सिखा देते हैं विज्ञान व तकनीकी क्षेत्र में हो रहे पट परिवर्तनों की इस शताब्दी में असली भारतीय संस्कृति का साक्षात्कार कैसे संभव है। अतीत और भविष्य के धागों का बना है उनका प्राणसूत्र। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय विचारधाराओं को समन्वित करने की ऊर्जा वात्स्यायन की प्रतिभा ने बहुत पहले अर्जित की थी। 'नीलाबंरी' नामक उनके अंग्रेज़ी कविता-संग्रह में वात्स्यायन जी का एक और मुख प्रतिबिंबित है। भारतीय कवियों के बीच से, अरविन्द और सरोजिनी देवी के बाद यथार्थ यूरोपीय स्वर सिर्फ वात्स्यायन जी के मुंह से ही निकला था। साथ ही वह स्वर भारतीय संवेदन का सारांश निवेदित करता है। रूईदार फल के समान पासपोर्ट लेकर सदा विदेशों में उडान भरने वाले इंडो-आंग्लियन लेखकों से इस महामनीषी तक की दूरी थोडी नहीं है।

IV

महात्माजी और ऐनस्टीन की भाँति अपने बुढापे की गहन सुंदरता अपनी सुडौल मूर्ति से प्रकट करते [illegible] इस असाधारण व्यक्ति को देख[illegible] और उनके साथ चार दिन ठहर[illegible] का सुअवसर मुझे प्राप्त हुआ। इस[illegible] लिए मैं भोपाल के भारत-भवन [illegible] अधिकारियों का ऋणी हूँ। [illegible] आयोजित 'कवि-भारती' में विभि[illegible] भारतीय भाषा-भाषी कवियों [illegible] कूटस्थ के रूप में वात्स्यायन[illegible] आद्यंत विराजमान थे। विभिन्न [illegible] के विभिन्न अध्यक्ष थे। फिर [illegible] वस्तुत: वात्स्यायनजी का सान्नि[illegible] ही हर दिन अध्यक्षता करता था[illegible] पलथी मार कर बैठकर छोटी बा[illegible] को भी उन्होंने गौर से सुना। [illegible] देवी (नाम कितना सार्थक!) [illegible] कपिला वात्स्यायन के साथ के दु[illegible] दांपत्य जीवन के बाद की उन[illegible] सहधर्मिणी बनी—साथ थीं। [illegible] पर दो तीन बार वात्स्यायन[illegible] उपस्थित हुए। "नृत्त" शी[illegible] कविता का वाचन किया।

"दो खंभों के बीच तनी रस्[illegible]
रस्सी पर नृत्त पादचलन, घुम[illegible]
मु[illegible]

नीचे ताली बजाते दर्शक
वे दोनों छोर नहीं देख रहे
बीच की रस्सी भी नहीं देख [illegible]
पादन्यास नहीं देख रहे

केरल [illegible]

मुद्रायें नहीं देख रहे
देख रहे हैं केवल नृत्त......"

संगोष्ठी में भाग लेकर उन्होंने कहा—"भारतीय भाषाओं का अनुवाद अंग्रेजी में नहीं, बल्कि हिन्दी में प्रचलित होना चाहिए। एक दूसरे को समझने तथा जानने के लिए यही उपाय है। सारी रचनाओं का लिप्यन्तरण देवनागरी लिपि में संपूर्ण भारत में सुलभ हो जाए।" ऐसी कुछ बातें, नपे-तुले शब्दों में शांत भाव से सुनायीं। बीच में हृद्य

"भारतीय भाषाओं का अनुवाद अंग्रेजी में नहीं, बल्कि हिन्दी में प्रचलित होना चाहिए। एक दूसरे को समझने तथा जानने के लिए यही उपाय है।

मुस्कुराहट। स्वागत समारोह में गप्पेबाजी में शामिल नहीं हुए। मगर मित्र मंडली से दूर भी नहीं रहे।

30 मार्च को कवि भारती का समापन हो गया। लेखक बिदा लेने लगे। लॉज में सावित्री के साथ मैं बातें करता खड़ा था। तब इलादेवी पास आईं और कहा—"आपका पता लिख दीजिएगा? उन्होंने माँगा है।

आश्चर्य के साथ मैं ने अपना पता लिख दिया और सकौतूहल पूछा—इसकी क्या ज़रूरत?

"उन्हें आप से कुछ कहना है। और कुछ देना भी चाहते हैं।"

"अच्छा। यह मेरेलिए बड़े गौरव की बात है। मैं वहाँ आ जाऊँगा। यह बताइए कि कल उनको कब फुरसत मिलेगी और वे ठहरे कहाँ है?"

'कल दुपहर तक फुरसत है। होटल जहानुमा में ठहरे हैं।'

दूसरे दिन हम तालाब के किनारे से होकर होटल चले। मेरा मन व्यग्र था। इस असाधारण प्रीति का क्या मर्म है?

विशाल प्रांगण में वे इलादेवी के साथ हाज़िर थे। हरी घास बिछी जमीन। फूलों से भरा आंगन। मन्द हवा। मगर वात्स्यायनजी अशान्त थे। दोनों हाथ बार-बार मल रहे थे। मैं ने बताया कि कथकली में यह विषाद की मुद्रा है। यह सुनते ही उन्होंनेशान्त कोमल स्वर में कहा—'हाँ विषाद तो है, यद्यपि मैं ऐसा स्वीकार नहीं करता।" वे बहुत कम

आर्यावर्त अस्त हो गया है। आज जो है वह मध्यदेश है। सभी अर्थों में।

ही बोले। सारभूत शब्द। दीर्घ अन्तराल। कहने से ज़्यादा बिना कहे ही संप्रेषित करना। शायद यही उनकी काव्य कला का जैत्र-तत्र था उन्होंने पूछा—'आप यजुर्वेदी हैं ?''

दर असल उस प्रश्न ने मुझे चौंका दिया। 'क्या ऊन्हें अन्तर्दृष्टि है ?'

'हाँ'—मैं ने कहा।

'मैं ने ऐसा ही सोचा था। हाँ—आप के अनुष्ठुप गाने का ढंग व राग सुनते ही मालूम हुआ।

मैं ने बताया कि उज्जैनी में दो दिन ठहरने के बाद ही मैं इधर कवि भारती में आ गया हूँ। तब उन्होंने कहा—'कालिदास मालव के हैं। ऋतु संहार में वर्णित तरु लतादि, भू-प्रकृति, जलवायु तथा जनता के आचार-विचार यही सूचित करते हैं। उधर की आंचलिक संस्कृति कालिदास में मुद्रित हो गयी है। बाद को एक विस्तृत भारतीय भूमिका उन कृतियों में विकसित होती नजर आती है। आर्यावर्त (भारतवर्ष) के बारे में पूछने पर "आर्यावर्त अस्त हो गया है। आज जो है वह मध्यदेश है। सभी अर्थों में। (आवाज़ में हल्का कंपन था।)

मैं ने वैलोप्पलिल का स्मरण किया। मध्यदेश की मंडली से मुर्झित न होने का आदेश उन्होंने क्रान्तिकारियों को दिया था ("कुटियोषिप्पिक्कल"—वेदखंडी) ये क्रान्तिकारी भी इसकी ओर संकेत कर रहे हैं।

वात्स्यायनजी फिर कहने लगे—"शहरों में संस्कृति अस्त होती जा रही है। अतिथिकक्ष के शोपीस को आज संस्कृति समझते हैं। "क... छिलका। टूटी-फूटी अंग्रेज़ी ही ... को प्रिय है। भारत में सिर्फ देहातों में एक जीवन-चर्या के तौर पर संस्कृति बनी हुई है। वह गरीबों की है। धोती और कुर्ता भी वे लोग पहनते हैं।"

मैं ने पूछा—"संस्कृति के दिन की लंबाई और बढाने के लिए हम क्या कर सकते हैं ?"

"लगता है, मुश्किल की बात होगी। शासित और शासक दोनों चिल्लाते हैं—'जनता' 'जनता' मगर वास्तव में जनता को इन लोगों

ने देखा भी नहीं। उनके पास गए भी नहीं। लोगों में प्रवाहित संस्कृति को आत्मसात् करने की कोशिश भी तो नहीं की है।

'अच्छा, लेखक इस दिशा में क्या कर सकता है ?'

"शान्त होकर, कुछ मौलिक मूल्यों पर अटल रहना चाहिए। क्रोध उनको शोभा नहीं देता। संस्कृति को

शासित और शासक दोनों चिल्लाते हैं—'जनता' 'जनता'। मगर वास्तव में जनता को इन लोगों ने देखा भी नहीं।

छोड़ बिना समकालीन समस्याओं में धार्मिक संशोधन करना साहित्यकार का दायित्व है। अपने अस्तित्व और जीवन शैली के सहारे संस्कृति की रक्षा करनी चाहिए। क्रोध में ज्वालामुखी नहीं बनें। शान्त और स्थिर बुद्धि किसी भी परिस्थिति को सीधे मार्ग में ला सकती है।"

फिर कुछ देर मौन।

"भारतीय को आज संस्कृति की जरूरत होती ही नहीं। औरों केलिए भारतीय संस्कृति आजकल कुतूहल की वस्तु है।"

संस्कृति को छोड़ बिना समकालीन समस्याओं में धार्मिक संशोधन करना साहित्यकार का दायित्व है।

वात्स्यायनजी ने 'महाकवि' के प्रति अपनी व्यक्तिगत ममता और केरल यात्रा की यादों पर वार्तालाप किया।

सहसा चारों ओर हाथ घुमाकर बताया—"आँखें खोलकर देखो। ग्रीस का विनाश भी कुछ इसी प्रकार हुआ था।"

वह दर्द मेरे भीतर कहीं एक तीर सा लगा।

इलादेवी हमें बरामदे में ले गयीं। चाय का प्रबन्ध हुआ। मैं ने देखा कि चीनी के बिना ही वात्स्यायनजी चाय पी रहे हैं। नहीं तो मिठास की जरूरत भी क्या? "भारत को आजाद होना ही है। शिक्षा की नींव त्रिभाषा-सूत्र मात्र नहीं होनी चाहिए। व्यापक संस्कृत-शिक्षण

आँखें खोलकर देखो। ग्रीस का विनाश भी कुछ इसी प्रकार हुआ था।

भारत के अस्त न होने देने केलिए शान्त और अचंचल रूप से हमें यत्न करना चाहिए । शब्दों को कर्म में बदलना चाहिए ।

भी उसमें ज़रूर हो ।" —उनके ये मंत्र-मुग्ध स्वर सुनने पर किसी भी पेय पदार्थ में मधुरिमा स्वत: आ जायेगी ।

'ऐसा कोई घर'—नामक अपनी नयी किताब तथा 'नीलांबरी' नामक एक और पुस्तक मुझे उन्होंने अपने हस्ताक्षर सहित प्रेमपूर्वक दीं । मैंने उनका चरण-प्रणाम करके उन्हें स्वीकार किया ।

"भारत के अस्त न होने देने के लिए शान्त और अचंचल रूप से हमें यत्न करना चाहिए । शब्दों को कर्म में बदलना चाहिए ।" ...भरी मुस्कान से उन्होंने हमें विदा दी ।

तीन दिन बाद रेल से घर पहुँचते वक्त सभी संचार माध्यम मेरी पंचेन्द्रियों में गूँज उठे । वह ज्योति यह तेजोलोक पार कर चल बसी थी ।

"ओ मेरा राष्ट्र सत्य के छोटे दीपक
तेरी ओर
कितनी बार
कितनी नावों में......"

(कुंकुमम् पत्रिका से साभार अनूदित)
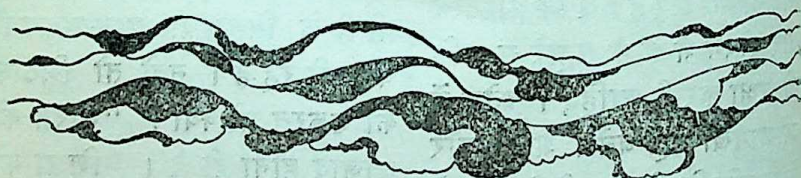
राजनीति के चक्रव्यूह में फँस कर यह प्रश्न ऐसा उलझ गया है कि जो भाषा मनुष्य-मनुष्य के बीच में स्नेह सूत्र स्थापित करने केलिए आविष्कृत हुई थी, वही अब उनको तोडने का कारण बन रही है ।

श्री विष्णु प्रभाकर

सभी भारतीय भाषाओं की आत्मा एक है

श्री. विष्णु प्रभाकर

विख्यात हिन्दी लेखक एवं केन्द्र साहित्य अकादमी के सदस्य श्री. विष्णुप्रभाकर ने बताया कि सभी भारतीय भाषाओं की आत्मा एक है। कविता, नाटक, उपन्यास आदि विविध साहित्यिक विधाओं की सभी नूतन प्रवृत्तियाँ हिन्दी साहित्य में भी पायी जाती हैं।

स्वतंत्रता संग्राम के समय देश की स्वतंत्रता ही साहित्यकार का लक्ष्य था। उन दिनों देश केलिए हर प्रकार का त्याग सहने तथा मर मिटने केलिए भी साहित्यकार तैयार थे।

7-9-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा भवन में "भारतीय साहित्य की नूतन प्रवृत्तियाँ" विषय पर आयोजित चर्चा का उद्घाटन कर रहे थे श्री. विष्णु प्रभाकर।

आप ने आगे कहा—स्वतंत्रता संग्राम के समय देश की स्वतंत्रता ही साहित्यकार का लक्ष्य था। उन दिनों देश के लिए हर प्रकार का त्याग सहने तथा मर मिटने के लिए भी साहित्यकार तैयार थे।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कई अधुनातन प्रवृत्तियाँ हिन्दी साहित्य में उपजीं और विकसित हुईं। कुछ लोग मानने लगे हैं कि किसी प्रत्यय शास्त्र के प्रति प्रतिबद्धता साहित्यकार के लिए अपेक्षित है। पर यह

7-9-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा भवन पधारे विख्यात हिन्दी साहि... श्री विष्णु प्रभाकर को सभा का स्नेहोपहार प्रदान कर रहे हैं केरल विश्वविद्यालय के ... कुलपति डा० वी. के. सुकुमारन नायर।

केवल एक विभाग की विचारधारा है। अब सभी साहित्यिक विधाओं में 'स्त्री-मोचन,' 'सेक्स से मुक्ति' जैसे विषय चर्चित हो रहे हैं।

पचहत्तर वर्ष की आयुसीमा पार कर रहे श्री. विष्णु प्रभाकर को केरल हिन्दी प्रचार सभा की ओर से केरल विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति डा० वी. के. सुकुमारन नायर ने तथा केरल के साहि... की ओर से केरल साहित्य अका... के अध्यक्ष प्रो० एस. गुप्तन ना... स्नेहोपहार भेंट किये। को... विश्वविद्यालय के हिन्दी विभा... भूतपूर्व अध्यक्ष एवं विख्यात ... डा० एन. ई. विश्वनाथ अय्य... श्री. विष्णु प्रभाकर का अभिन... करते हुए भाषण दिया।
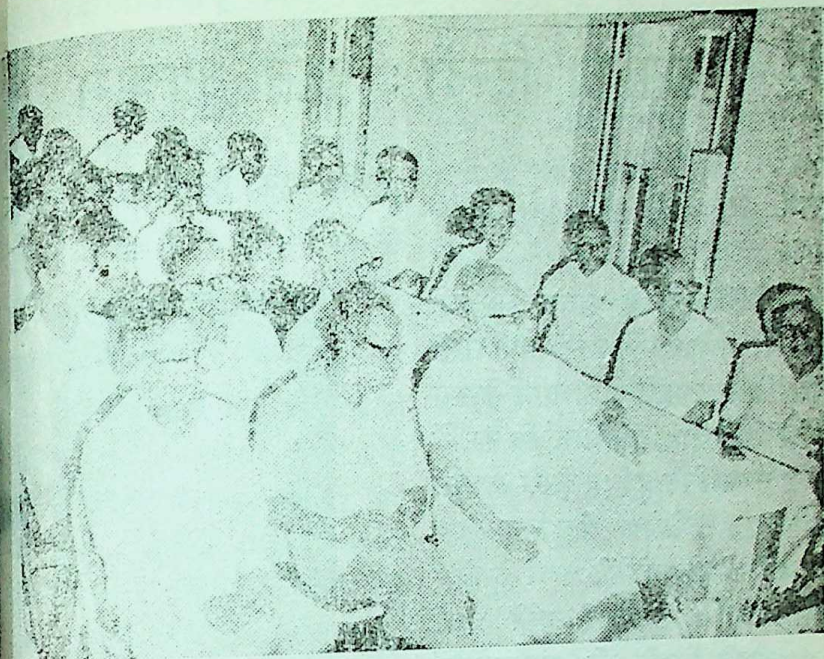
श्री विष्णु प्रभाकर के सम्मान में 7-9-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा भवन में आयोजित प्रीतिमिलन में सम्मिलित साहित्यकार, पत्रकार, प्राध्यापक एवं अन्य बुद्धिजीवी ।

सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए संस्कृत विश्वविद्यालय के भूतपूर्व विशेष अधिकारी एवं केरल हिन्दी प्रचार सभा के भूतपूर्व अध्यक्ष डा० पी. के. नारायण पिल्लै ने कहा कि श्री. विष्णु प्रभाकर केरल के धीर देशाभिमानी वेलुत्तंपी दलवा पर 'केरल का क्रांतिकारी' शीर्षक मौलिक हिन्दी नाटक रचकर केरलीय जनता के विशेष स्नेहादर के पात्र बन गये हैं।

केरल हिन्दी प्रचार सभा के मंत्री श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने स्वागत भाषण दिया और प्रो० सी. जी. राजगोपाल ने कृतज्ञता ज्ञापित की।

*

तकनीकी हिन्दी : बढ़ते आयाम

डॉ० एन. ई. विश्वनाथ अ
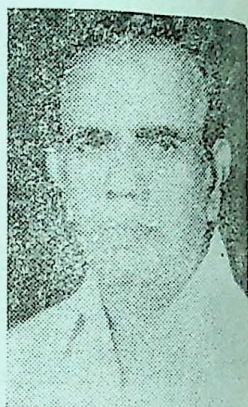
दिल्ली मेरठ के आसपास लोगों की बोली के रूप में जन्मी खडीबोली का विकास पहले राष्ट्रभाषा के रूप में हुआ। आगे राजभाषा के रूप में वह सम्मानित हुई। इसके पश्चात उसका उपयोग वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों की चर्चा के लिए होने लगा। अब सबसे नयी चर्चा तकनीकी हिन्दी की संभावनाओं पर चलती है। इसी दृष्टि से मैं भी यहाँ तकनीकी हिन्दी पर कुछ लिखने बैठा हूँ। मगर जब निबन्ध लिखने लगा तब जाने क्यों, कबीर का एक दोहा कलम पर आ बैठा है। वह कहता है—मुझे कागज़ पर उतार दो— दोहा है—

जिन डूबा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठि।
हौं बपुरा डूबन डरा रहा किनारे बैठि॥

तकनीकी भाषा सचमुच गहरा पानी है। उसमें भाषा से बढकर तकनीकी विषयों का महत्व है।

डा० एन. ई. विश्वनाथ अय्यर

विज्ञान, प्रौद्योगिकी, विधि या ही अन्य किसी विषय में आधि रिक ज्ञान प्राप्त करने के बाद उसकी भाषा और शब्दावली बारीकियों का पूरा पता सकता है। मैं तो मूलतः भाषा और कुछ कुछ साहित्य का रहा। मेरा तकनीकी ज्ञान अख में आते थोडे से शब्दों तक सीमि है। ऐसी हालत में मैं गलतियों प्रवाह में डूबने के डर से इस वि के किनारे ही बैठा हूँ। इस विव

के लिए क्षमा-प्रार्थी हूँ। किनारे बैठे-बैठे नदी के कलरव का—बीच-बीच में ऊपर आती मछलियों के दृश्य का—आनन्द उठाया जा सकता है। इसी तरह भाषा के अन्य उपायों से तकनीकी हिन्दी को समझने का जो कार्य मैं ने किया है उसका ही परिणाम इस आलेख में मिलेगा।

हिन्दी की बोलियों का विवरण देते हुए धीरेन्द्र वर्माजी ने पश्चिमी हिन्दी और पूर्वी हिन्दी के दो भेद बताए हैं। खड़ीबोली, ब्रजभाषा, अवधी आदि बोलियों को औचित्य के अनुसार इनके अंतर्गत रखा है। अब तो हिन्दी के और भी कई रूपों का उल्लेख होता है—साहित्यिक हिन्दी, वैज्ञानिक हिन्दी, तकनीकी हिन्दी, प्रशासनिक हिन्दी अथवा राजभाषा हिन्दी, जनसंचार हिन्दी, व्यापारिक हिन्दी, आदि। एक हिन्दी के कितने रूप व कितने नाम! इन सब की वर्णमाला एक है, व्याकरण एक है, फिर भी भाषाएँ भिन्न-भिन्न मानी गई हैं, यही अचरज की बात है। इस तरह के विभाजन की कसौटी उसमें चर्चित विषय है और विषय-प्रतिपादन की शैली भी। प्रतिपादन-शैली के अंतर्गत शब्दावली, वाक्यांश या पदबंध, मुहावरे आदि भी निहित है।

तकनीकी हिन्दी अपेक्षाकृत नया विषय है। हिन्दी यद्यपि ग्यारहवीं सदी में गढ़ी गयी तो भी उसका स्वरूप सदियों तक लोक भाषा का—बोलचाल की भाषा का था। साहित्य उसकी कई बोलियों में गढ़ा गया। परंतु अभिजात वर्ग के साहित्य, ज्ञान-विज्ञान आदि का माध्यम उस समय संस्कृत ही रही। खगोल-विज्ञान, आयुर्विज्ञान, वास्तु-विज्ञान आदि विज्ञानों के ग्रंथ बहुधा संस्कृत में थे और उनका अध्ययन करने वाले सीमित थे। तमिल आदि देश भाषाओं में भी ऐसे ग्रंथ थे। मगर वे सीमित क्षेत्र में ही पढे व समझे गये।

बडी मात्रा में वैज्ञानिक विस्फोट पन्द्रहवीं-सोलहवीं सदी में यूरोप में प्रारंभ हुआ। आगे प्रत्येक सदी में अनेक नये आविष्कार होते गये। वैज्ञानिकों की संख्या बढती गयी। विज्ञान की विविध शाखाओं में ग्रंथ, निबंध, पुस्तिकाएँ-पत्रिकाएँ आदि रची गयीं। शिक्षा-क्रम में विज्ञान को मुख्य स्थान जब दिया जाने लगा तब तो विज्ञान के पाठ्य-ग्रंथों की रचना होने लगी। वैज्ञानिक

आविष्कारों के क्षेत्र में विभिन्न देश परस्पर होड करते थे। इसलिए एक देश की भाषा में लिखी गई वैज्ञानिक सामग्री का अनुवाद अन्य देश की भाषा में किया जाने भी लगा। अंतर्राष्ट्रीय तकनीकी भाषाओं में अंग्रेज़ी, फ्रांसीसी, जर्मन, इटालियन, रूसी, जापानी आदि मशहूर हैं।

आधुनिक युग में विश्व-भर में विज्ञान का जो विस्फोट होता आया उससे भारत भी परिचित होने लगा। यह ब्रिटिश शासन के दिनों में ही मुख्यत: हो सका। देशव्यापी शिक्षाक्रमों के विविध स्तरों पर वैज्ञानिक सामग्री को महत्व दिया गया। व्यावहारिक जीवन के विविध क्षेत्रों में यंत्रों की भूमिका अधिक सक्रिय होती गयी। इन सबका माध्यम मुख्यत: अंग्रेज़ी रही। होशियार अंग्रेज जिस किसी भाषा में वैज्ञानिक सामग्री पाते रहे उससे उसका अनुवाद अंग्रेज़ी में करते रहे। इससे अंग्रेज़ी समृद्ध हो सकी। खैर।

इसी पृष्ठभूमि में हिन्दी के तकनीकी भाषा-रूप के विकास पर और तकनीकी लेखन पर विचार करना चाहिए। भारत विदेशी शासन से मुक्त हो सका और प्रभुत्व-संपन्न गणराज्य घोषित हो गया तो

प्राय: 'तकनीकी हिन्द'... चर्चा में तकनीकी शब्दाव... और शब्दावली के अनुवाद तक चर्चा सीमित रखी जा... है। यह पर्याप्त नहीं है।

भारत की अपनी भाषा के ... हिन्दी स्वीकृत हुई। हिन्दी ... अभिव्यंजना शक्ति, ग्रंथ राशि ... को समृद्ध करने की बडी आवश्य... इसी वातावरण में बढ़ती ... वैज्ञानिक आदि विषय-शाखा... हिन्दी की संपत्ति बढ़ानी थी। ... तकनीकी हिन्दी के विकास पर ... सोचने लगे।

प्राय: "तकनीकी हिन्दी" ... चर्चा में तकनीकी शब्दावली ... शब्दावली के अनुवाद तक ... सीमित रखी जाती है। यह पर्या... नहीं है। तकनीकी हिन्दी पर ... कुछ व्यापक दृष्टिकोण से विच... करना है। अब "विज्ञान" का ... विविध आयामों में विकसित हुआ है... विज्ञान का प्रायोगिक पक्ष तकना... जी या प्रोद्योगिकी के नाम से प्रसि... है। विज्ञान की याने वैज्ञानिक दृष्टि... से संसार के सारे विषयों का विवेच... होने लगा और इस विवेचन ...

तकनीकी विवेचन पुकारा गया। इन विकास-दिशाओं के परिणाम-स्वरूप "तकनीकी भाषा" शब्द का प्रयोग अत्यंत व्यापक परिप्रेक्ष्य में किया जाने लगा। व्यापार, विज्ञान चिकित्साविज्ञान, विधि, प्रशासन, अभियांत्रिकी (इंजिनीयरिंग) आदि एक दूसरे से असंबद्ध अनेक विषयों की भाषा एक सामान्य नाम से अर्थात 'तकनीकी भाषा' नाम से अभिहित की गयी।

हिन्दी की तकनीकी भाषा के रूप में जैसी स्थिति है उसका परिचय एकाध वाक्य में देना उचित हैं। प्राचीन भारत में जैसा ज्ञान विकास हुआ था उसका परिचय संस्कृत ग्रंथों से उत्तराधिकार में हिन्दी को मिला। इसका लाभ यह रहा कि सैकडों तकनीकी शब्द हिन्दी को विरासत में मिले। प्राचीन ग्रंथों में चर्चित बातों का हिन्दी में पुनराख्यान या अनुवाद तैयार हो सका।

आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय तकनीकी विषयों की सामग्री हिन्दी में प्रस्तुत करना जरूरी हो गया। तकनीकी हिन्दी का विकास इस पर बहुत निर्भर रहा। ऐसे विषयों की संकल्पनाएँ एवं सामग्रियाँ हिन्दी में पहले नहीं थीं। अतएव तकनीकी हिन्दी का विकास मुख्यतः अनुवाद के माध्यम से ही हो सकता था। भारतीय विद्वान आधुनिक तकनीकी विषयों का अध्ययन प्रायः अंग्रेजी के माध्यम से ही करते थे। इसलिए वे अनुवाद की प्रविधि से ही इन नये ग्रंथों का निर्माण कर पाते हैं। इसलिए तकनीकी हिन्दी की प्रमुख विशेषताओं में पहली यह है कि वह बहुधा अनूदित भाषा शैली की होती है। जब आधुनिक विषयों को प्रस्तुत करना पडता है और उनकी संकल्पनाओं के बोधक मौलिक शब्द हिन्दी में नहीं मिलते तब इसके लिए कुछ उपाय करने पडते हैं। विभिन्न विद्वानों ने अनेक तरीके सुझाये और अपनाये हैं। इनमें मुख्य ये हैं :—

(1) अन्तर्राष्ट्रीय शब्दों को ज्यों का त्यों या हिन्दी की प्रकृति के अनुसार अनुकूल करके उतारना।

(2) हिन्दी में शब्द गढना।

हिन्दी में शब्द गढ़ने की बात को लेकर काफ़ी बहस हुई है। भारतीय परंपरावादी प्रत्येक तकनीकी शब्द का पर्यायवाची हिन्दी शब्द गढने के पक्ष में रहे। मगर यह अतिशय कृत्रिम और भारी नीति प्रमाणित हुई। औचित्य और आवश्यकता के

अनुसार दोनों तरीकों में से उचित चुनना व्यावहारिक स्वीकृत हुआ है।

तकनीकी हिन्दी के विकास का संक्षिप्त इतिहास भी उल्लेख-योग्य है। हिन्दी को शिक्षा, न्यायालय आदि के क्षेत्र में स्थान देने का सामूहिक प्रयास सर्वप्रथम करने का श्रेय नागरी प्रचारिणी सभा एवं हिन्दी साहित्य सम्मेलन को है। इन दोनों संस्थाओं ने कुछ तकनीकी शब्दावलियों का निर्माण भी कराया। आगे स्वतंत्र भारत में विविध माध्यमिक शालाओं तथा कालेजों, विश्वविद्यालयों में हिन्दी के माध्यम से विज्ञान, नियम, अभियांत्रिकी आदि विषय सिखाने का प्रयास प्रारंभ हुआ। इसके लिए तकनीकी विषयों के पाठ्यग्रंथों का निर्माण होने लगा। इस क्षेत्र में सार्वजनिक संस्थाओं का योगदान था ही। परिश्रमी और व्यावसायिक बुद्धि वाले व्यापारी व्यक्तिगत रूप से अनेक पाठ्यग्रंथ लिखाकर प्रकाशित करने लगे। इनकी संख्या काफ़ी बडी रही। इनके स्तर पर मत-भेद हो सकता है।

पाठ्यपुस्तक तकनीकी भाषा की प्रारंभिक सीढ़ी है। उच्च स्तरीय और विश्वविद्यालय स्तरीय तकनीकी की पाठ्यपुस्तकें ज़रूरी थीं। इसी केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकार के अधीन कई ग्रंथ अकादमियाँ स्थापित हुई। मंत्रालयों के प्रोत्साहन-पुरस्कार की योजनाएँ कार्यान्वित होने लगीं। इन सब को मार्गदर्शन देने का काम वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग करता रहा। आयोग मुख्यतः तकनीकी शब्दों का निर्माण करता आया है जिनका उपयोग करके अन्य संस्थाएँ ग्रंथ लिखा सकती । इन अकादमियों के अलावा हैउत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान जैसी संस्थाएँ हैं। दिल्ली विश्वविद्यालय जैसे विश्वविद्यालयों ने अपना हिन्दी कार्यान्वयन केन्द्र खोला है। वे विविध विषयों के तकनीकी ग्रंथ लिखाते और अनूदित कराते रहे हैं।

तकनीकी हिन्दी की कुछ तकनीकी समस्याओं पर भी विचार अपेक्षित है। तकनीकी ग्रंथों के दो भेद हैं (1) शुद्ध तकनीकी और (2) अर्ध तकनीकी एवं लोकप्रिय। इनमें दूसरी कोटि के बहुत से और बड़े ग्रंथ निजी क्षेत्र के प्रकाशकों ने निकाले हैं। शुद्ध तकनीकी ग्रंथ लिखते समय जिन शब्दों के हिन्दी पर्याय चाहिए उनके पर्याय एकत्र उपलब्ध होना ज़रूरी है। वैज्ञानिक

शुद्ध तकनीकी ग्रन्थ लिखते समय जिन शब्दों के हिन्दी पर्याय चाहिए उनके पर्याय एकत्र उपलब्ध होना ज़रूरी है।

शब्दावली आयोग के शब्द-संग्रह कुछ मदद अवश्य करते हैं। बारीकी से विषयों की चर्चा में बहुत से नये शब्दों की ज़रूरत पडती है। इनकेलिए नये शब्द गढ़ना, द्विभाषी शब्दों का प्रयोग करना, मूल भाषा के शब्द ही ग्रहण करना आदि कई उपाय होते हैं। हमारे देश में जो वैज्ञानिक एवं प्रोद्योगिकी के विशेषज्ञ हिन्दी क्षेत्र में हैं और हिन्दी भाषी हैं उन्हें भी तकनीकी भाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग नया और अभ्यास माँगनेवाला विषय है। और तो और, शुद्ध तकनीकी विषय सामान्य पाठकों के लिए नहीं हैं। इसलिए उनकी समझ में न आने की दलील तकनीकी हिन्दी के विषय में वाजिब नहीं है।

तकनीकी हिन्दी की संरचना की कुछ विशेषताएँ भी विचारणीय हैं। सामान्यत: भाषा सहज रूप से सजीव और नानार्थकता की ओर उन्मुख रहती है। परंतु तकनीकी भाषा में नानार्थकता भ्रामक होगी। विशिष्ट क्षेत्र और विशिष्ट अर्थ तकनीकी के धर्म हैं। परस्पर अपवर्जिता भी तकनीकी शब्द का धर्म है। यह विशिष्ट अर्थ कल्पित करने के कई उपाय हो सकते हैं—रूढि, परंपरा, यौगिक व्यापार या योग रूढि व्यापार या अन्य कोई। इन्हें किसी संख्या तक सीमित रखना कठिन है। परन्तु तकनीकी शब्द का उचित वक्त पर प्रयोग अनिवार्य शर्त है। मूलत: एक ही भाव, परंतु बारीकी में भिन्न-भिन्न भाव का बोध कराने वाले विभिन्न शब्दों की गठन तकनीकी भाषा में करनी पडती है। यों गठित शब्द अभ्यास से चालू हो जाते हैं।

तकनीकी हिन्दी का प्रयोग करने के मौके अब बढ रहे हैं। दृश्य-श्रव्य सामग्री का वैज्ञानिक प्रयोग अब हिन्दी क्षेत्र में बढ़ रहा है। इलक्ट्रोणिक टंकन, टेलेक्स आदि हिन्दी के माध्यम से चालू हैं। देवनागरी का उपयोग करनेवाले कंप्यूटर अब बाज़ार में आ गये हैं। इन सब आविष्कारों से तकनीकी हिन्दी का उपयोग बढेगा, दायित्व भी।

तकनीकी हिन्दी की ताकत बढाना और उसकी वैज्ञानिकता बनाये रखना—दोनों एक साथ करना पडेगा। यह एक चुनौती है।

भारतीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद द्वारा संकलित हिन्दी वैज्ञानिक और तकनीकी प्रकाशन निदेशिका के दो खंड प्रकाशित हैं। [1965 तक पहला और 1980 तक दूसरा] इसके आधार पर श्यामसुंदर शर्मा ने बताया है कि

तकनीकी हिन्दी की ताकत बढाना और उसकी वैज्ञानिकता बनाये रखना—दोनों एक साथ करना पडेगा। यह एक चुनौती है।

14 विज्ञानों के कुल 4800 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हैं जिनमें 760 तक अनूदित हैं। शेष 4000 ग्रंथ मौलिक रूप में लिखे हैं। इसके अलावा (वेल्थ आँफ इंडिया) का अनुवाद "भारतीय संपदा" के नाम से कई जिल्दों में किया गया है।

तकनीकी हिन्दी में ग्रंथ-रचना, पत्रिका प्रकाशन, चर्चा गोष्ठियाँ, प्रतिवेदन, शोध-प्रकाशन आदि के क्षेत्र में भी कुछ कार्य इधर अधिक उत्साह से हो रहा है। इला...
की विज्ञान परिषद की ...
स्वतंत्र रूप से इस दिशा में होने...
सराहनीय प्रयास है। वह कई...
से बडे परिश्रम से चल रहे...
स्वामी सत्य प्रकाश इसके ...
स्रोत हैं। रूड़की एंजि...
विश्वविद्यालय, पंत-नगर ...
विश्वविद्यालय, आई. आई...
कानपूर आदि संस्थानों ने हिं...
तकनीकी विषयों पर शोध पत्र...
कराके गोष्ठियाँ की हैं। उनमें...
प्रतिभाशील युवकों ने बडी ...
वैज्ञानिक भाषा के नमूने प्रस्तु...
थे। भारतीय विज्ञान संस्था...
"विज्ञान परिचय" उल्लेखनी...

एक नयी और स्वस्थ परं...
प्रशंसा यहाँ करना चाहता हूँ। ...
मंत्रालय, सार्वजनिक उपक्रम ...
राजभाषा के कार्यान्वयन को ...
औपचारिक मानते थे। ...
तकनीकी विषयों से संबंध...
वाले मंत्रालय हिन्दी के माध्य...
शोध गोष्ठियाँ चलाने लगे हैं। ...
तक मुझे सूचना है, खान और इ...
मंत्रालय में इस प्रकार की गो...
सबसे अधिक हुई हैं। हिंदु...
कापर, राँची हेवी इंजिनि...
हैदराबाद भू-खनन विभाग...
की गोष्ठियां तथा स्टील अथ...

केरल...

तिरुवनन्तपुरम के विक्रम साराभाई अन्तरिक्ष केन्द्र में उनके वैज्ञानिकों ने अखिल भारतीय स्तर पर हिन्दी में जो संगोष्ठी की थी वह सचमुच प्रशंसनीय है।

के तत्वावधान में तकनीकी लेखन की कार्यशाला चली है जो सराहनीय प्रयास है। तिरुवनन्तपुरम के विक्रम साराभाई अन्तरिक्ष केन्द्र में उनके वैज्ञानिकों ने अखिल भारतीय स्तर पर हिन्दी में जो संगोष्ठी की थी वह सचमुच प्रशंसनीय है।

तकनीकी हिन्दी के क्षेत्र में सबसे नये प्रकाशन के रूप में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आई. आई. टी.) नई दिल्ली ने "जिज्ञासा" के नाम से एक अर्धवार्षिक का प्रकाशन प्रारंभ किया है। इसका एक ऐतिहासिक महत्व है। यहाँ हिन्दी में शोध ग्रंथ प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं थी। इसको लेकर सर्वोच्च न्यायालय तक पैरवी हुई थी। अधिकारियों की आपत्ति मुख्यतः स्तर को लेकर थी। इसी संस्थान में 'जिज्ञासा' का प्रकाशन सुखद आश्चर्य का विषय है।

उपसंहार

भाषा परिमार्जन माँगती है। हिन्दी की तकनीकी भाषा भी इसका अपवाद नहीं है। अधिकाधिक लोग जब इसका प्रयोग करते जायेंगे तब इसकी कमज़ोरियाँ दूर की जा सकेंगी। परिवर्तन—परिवर्धन हो सकेगा। केवल तकनीकी शब्द-निर्माण पर्याप्त नहीं है। तकनीकी शब्द निर्माण की सार्थकता तभी होगी जब उसका उपयोग करके बडी संख्या में ग्रंथ लिखे जावें। ग्रंथ लिखते-लिखते समस्यायें उठेंगी तो उनका समाधान होता रहेगा।

अधिकाधिक लोग जब इसका प्रयोग करते जाएँगे तब इसकी कमजोरियाँ दूर की जा सकेंगी।

❀

26/2034, ट्यूटर्स लेन
तिरुवनन्तपुरम-695 007

दिवंगत महादेवी वर्मा के प्रति

कहाँ उड़ चली पंछी सी तुम

देव, केरलीय

नश्वर जर्जर दु:ख-नीड तज
कहाँ उड़ चली पंछी सी तुम ?
तुम्हें नहीं थी चाह ज़रा भी
मन में स्वर्गिक अनश्वर सुख की।
विकसित होते स्वर्ग लोक के
पुष्प, किन्तु नहीं वे मुर्झाते,
दीपक भी तो जलते रहते
स्नेहहीन भी न बुझ जाते ।
नयन सुरों के खुले ही रहते
किन्तु नहीं उनमें तो आँसू,
बिछी हुई मिल जाती शय्या
पीड़ा उस पर न सो पाती ।
नन्दन वन की अपूर्व भंगिमा
देख न होगा तुम्हें संतोष
सुर तरु की शीतल छाया में
न चाहोगी तुम सुस्ताना ।
प्रियतम प्रभु ने तुम्हें दिया था
दु:ख-राज्य का शासन
लात मार कर राज पाट पर
कहाँ चली तुम हे रानी ?
दु:ख-सम्पदा साथ रखकर
अति ही कठिन वहाँ जीना,

संभालेगा कौन धरा पर
तावक दुःख-धरोहर ?
शब्द स्पर्श रस गन्ध
आदि का, नाम न लेगा कोई,
अमरों का वह जडमय जीवन
रास न होगा तुमको।
छायावादी महल न गिरे
इसका रक्षण करना है,
करुणा पूरित राग सुनाकर
जन-मानस मंथन करना है।
मिलाया तुम ने अपना वर स्वर
विश्व-वीणा में अनश्वर,
अब किस वीणा को करोगी मुखरित
स्वर्ग लोक में जाकर ?
करुणा और वेदना का तो
वहाँ न गुंजन होगा।
सुर-कानन का गन्ध पवन तो
तुम्हें पसन्द न होगा,
नम्र निवेदन तुम से मेरा
आना शीघ्र धरा पर
छायावादी कविता-धारा
बहती रहे हमेशा,
दुःख की बदली बनकर न आना
कवितामृत नित बरसाना।
सुखमय वारिद बनकर बरसो
सरसे, रसिकों का भव-जीवन,
तेरे पावन स्मृति-मन्दिर में
मुखरित हो मम वाणी।

❀

हिन्दी संस्कृत विद्याभवन
कोट्टयम-686 004

आपकी 'केरल ज्योति' पत्रिका मिली और पढ़कर मन प्रसन्न हो गया। इस छोटी सी पत्रिका में आपने विषय और शिल्प की दृष्टि से जो सामग्री प्रस्तुत कर दी है, वह उल्लेखनीय है और यहाँ गागर में सागर भर देने की कहावत चरितार्थ हो रही है। पत्रिका का अक्तूबर अंक '87 में आपने महादेवी वर्मा के सम्बन्ध में जो कलात्मक सामग्री दी है, ऐसा हिन्दी भाषी पत्रिकाएें भी नहीं कर पायी हैं। उसके लिए आपको बार बार बधाई है। हिन्दी प्रचार प्रसार के क्षेत्र में जो कार्य आप कर रहे हैं, वह एक ऐतिहासिक दस्तावेज होगा ऐसा मेरा बिचार है। आप सचमुच में ऐसा कार्य करके बापू के चरणों का अनुगमन कर रहे हैं। उसके लिए मेरी बधाई स्वीकारें।

डा० रामप्रीत उपाध्याय
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
कलकत्ता विश्वविद्यालय

'केरल ज्योति' का स्तर का[illegible] उन्नत हो गया है। स्तरीय ले[illegible] प्रकाशित देख कर बडा आन[illegible] होता है। लेखक बन्धुओं [illegible] अभिनन्दन करता हूँ।

डा० पो. के. केशवन ना[illegible]
वट्[illegible]
कोट्टयम-686[illegible]

'केरल ज्योति' को जुलाई [illegible] अंक की सामग्री अतिशय सर्जना[illegible] उपादेय, और प्रेरक है।

डा० विश्वनाथ शु[illegible]
[illegible]
हिन्दी वि[illegible]
अलीगढ विश्वविद्या[illegible]

दूरभाष : 6 1 3 7 8 तार : "जय हिन्दी"

केरल ज्योति

पुष्प 22
दल 9

एक प्रति—1 रु० 50 पं०
वार्षिक—15 रु०

सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका
दिसम्बर 1987

हिन्दी प्रान्तों में भी हिन्दी का प्रचार करें

जब से हिन्दी प्रचार अभियान आरंभ हुआ तब से हिन्दीतर भाषा भाषी प्रान्तों की जनता को हिन्दी पढना लिखना सिखाने पर ही विशेष ध्यान दिया जाता रहा है। इन प्रान्तों में हिन्दी सीखनेवाले बहुधा ऐसे ही लोग हैं जो मातृभाषा में साक्षर हो चुके हैं। इसलिए हिन्दी प्रचार देश की निरक्षरता के निवारण में कोई योगदान नहीं दे पाया है।

भारत एक ऐसा देश है जहाँ कई ऐतिहासिक और सामाजिक कारणों से निरक्षरता का अन्धकार अत्यधिक छाया हुआ है। वर्ण व्यवस्था ने पहले निम्न कहलायी गयी जातियों को साक्षरता से दूर रखा। अब शिक्षा के द्वार सब केलिए खुल गये हैं। तो भी ग्रामीण भारत की अधिकांश जनता आज भी निरक्षर हैं। निरक्षरता का प्रतिशत राजस्थान, बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश जैसे हिन्दी भाषी प्रान्तों में अन्य प्रान्तों की अपेक्षा अधिक है।

निरक्षरता और विकास में परस्पर आश्रय का संबन्ध है। निरक्षरता जहाँ अधिक है वहाँ विकास की गति धीमी रह जाती है। साक्षरता जहाँ अधिक है वहाँ विकास की गति तीव्र हो जाती है। निरक्षर जनता अनेकों ऐसे अंधविश्वासों से जकडी हुई जो उन्हें आगे बढने नहीं देती। वे अपनी समस्याओं का अनुभव ही नहीं करते। फिर उन समस्याओं के निवारण के उपाय कैसे सोचें?

हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी और स्वतंत्रता संग्राम के अन्य नेता एक ऐसे भारत का सपना देखते थे जो सब प्रकार के शोषणों से मुक्त हो। निरक्षर जनता शोषण की शिकार बनी रहती है। विद्या ही उन्हें मुक्ति दिला सकती है। "सा विद्या यया विमुच्यते।' विद्या के सहारे ही वे दरिद्रता की रेखा के ऊपर उठ सकेंगे।

केरल हिन्दी प्रचार सभा में 29-11-1987 को आयोजित पुरस्कार वितरण समारोह का उद्घाटन करते हुए केरल के विधान सभाध्यक्ष श्री. वर्कला राधाकृष्णन ने देश की इस गंभीर समस्या की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है। उन्होंने कई विदेशी राष्ट्रों का उदाहरण देकर साबित किया है कि अनेकों राष्ट्र जो साक्षरता में

इस अंक में

भारत के पीछे थे अपने योजना... निरक्षरता उन्मूलन कार्यक्रमों के कार्यान्वय... के फलस्वरूप अपनी अधिकांश जनता... साक्षर करवाये हैं। पर विश्व का संस्कृ... का स्रोत कहलाता रहा भारत ... निरक्षरता के गर्त में पड़ा हुआ है। उन... आशंका इक्कीसवीं सदी के प्रारंभ के पह... हम कैसे संपूर्ण साक्षरता का लक्ष्य प्रा... कर सकेंगे। वे आह्वान करते हैं कि हि... प्रान्तों में भी हिन्दी प्रचार कार्य आरंभ... जिससे वहाँ की जनता को हिन्दी में साक्ष... बनाया जा सके (भाषण का सारांश इ... अंक में प्रकाशित देखें।)

यह कार्य मात्र सरकारी प्रयत्न ... संभव नहीं। अनौपचारिक शिक्षा के लि... स्वैच्छिक कार्यक्रम आयोजित हैं। लख... स्थित साक्षरता निकेतन में इस क्षे... आवश्यक कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित क... की पर्याप्त सुविधायें हैं। वर्षों से ... साक्षरता प्रचार संबंधी प्रयोग होते ... रहे हैं। पर इन कार्यकर्ताओं को कौ... चुनेंगे? उन के प्रशिक्षण का व्यय कौ... वहन करेंगे? ग्राम ग्राम में अनौपचारि... शिक्षा केन्द्र आरंभ करने का बीड़ा कौ... उठायेंगे? जो प्रौढ़ पढ़ने लिखने को तैया... हो जाते हैं उनको अध्ययन सामग्री कौ... उपलब्ध करायेंगे? ये सब कुछ ऐसी समस्या... हैं जो अनौपचारिक शिक्षा के लिए प्रतिब... स्वैच्छिक संस्थायें ही कर सकती हैं।

केरल में जिस प्रकार का कार्य केरल... अनौपचारिक शिक्षा एवं विकास समिति... (KANFED) करती है वैसा ... करने के लिए हर हिन्दी प्रान्त में प्रय... स्वैच्छिक संस्थायें बनानी हैं। ... सेवक इस के लिए आगे आयें।

हिन्दी का प्रचार हिन्दी प्रान्तों में भी करें

श्री. वर्कला राधाकृष्णन
अध्यक्ष, विधान सभा, केरल

[केरल हिन्दी प्रचार सभा में 29-11-1987 को आयोजित पुरस्कार वितरण समारोह में दिये गये उद्घाटन भाषण का सारांश]

श्री. वर्कला राधाकृष्णन

इस हिन्दी प्रचार सभा के साथ मेरा दीर्घकाल से संबंध रहा है। स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेते समय मैं ने थोडी हिन्दी सीखी भी थी। उन दिनों हिन्दी सीखने का एक आवेश और लक्ष्यबोध था। स्वतंत्रता संग्राम के कई लक्ष्यबोध हमने भुला दिये हैं।

हिन्दी हमारी एक आम भाषा है। भारत में सर्वाधिक लोग हिन्दी का उपयोग करते हैं। इसीलिए हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने हिन्दी

उन दिनों हिन्दी सीखने का एक आवेश और लक्ष्य बोध था।

को हमारी राष्ट्रभाषा बनाना चाहा। पर इस केलिए कुछ शर्तें थीं। हिन्दी किसी जनता पर थोपी नहीं जाये। जनता के बोध मंडल से यह विचार स्वमेधया उभर आये कि हिन्दी इस देश की राष्ट्रभाषा है और देश के एकीकरण के लिए सहायक है। निर्भाग्य से कई वैरुध्यों के बीच भाषायी पागलपन ने हमारे देश को

पर हिन्दी प्रान्तों की साक्षरता का प्रतिशत केवल तीस प्रतिशत है। वहाँ की सत्तर प्रतिशत जनता हिन्दी पढना-लिखना नहीं जानती। उनको पहले हिन्दी पढना-लिखना सिखायें।

विपत्तिपूर्ण स्थिति में पहुँचा दिया है। धर्मनिरपेक्षता, देश की एकता आदि कई बातों में आज तक सन्निग्ध अवस्था है। हिन्दी की भी यही स्थिति है।

इस बात में कोई सन्देह नहीं कि देश की सर्वाधिक जनता की भाषा हिन्दी का हमें स्वागत करना चाहिए। सन्देह इस बात का है कि क्या हिन्दी के प्रचारक हिन्दी के प्रति अन्याय नहीं कर रहे हैं? हमारे देश में कई भाषायें हैं, कई आचार विचार हैं। प्रान्तीय भाषाओं के विकास के साथ साथ राष्ट्रभाषा हिन्दी का भी विकास हो। यह एक प्रकार का 'वन वे ट्रेफ़िक' न हो जाये। प्रादेशिक भाषाओं को विकास की स्वतंत्रता हो। और हिन्दी भाषी जनता प्रादेशिक भाषाओं को प्रधानता स्वीकार करे। राष्ट्रभाषा हिन्दी की प्रमुखता इतर भाषा भाषी जनता स्वीकार करे। इस प्रकार यह एक 'बाई वे ट्राफ़िक' रहे। इस प्रकार का एक क्रमीकृत सपीपन हो तो यह समस्या सुलझ सकेगी।

हिन्दीतर प्रान्तों में हिन्दी सीखना चाहिए, हिन्दी का प्रचार करना चाहिए। इसमें कोई सन्देह नहीं। हमें ऐसा करना ही चाहिए। हम तो त्रिभाषा सूत्र के आधार पर हिन्दी सीखते हैं। यहाँ मलयालम, हिन्दी और अंग्रेजी सब बच्चे सीखते हैं। हम केरलीय स्वमेधया बडी रुचि से हिन्दी सीखते हैं। पर हिन्दी प्रान्तों की साक्षरता का प्रतिशत केवल तीस प्रतिशत है। वहाँ की सत्तर प्रतिशत जनता हिन्दी पढना-लिखना नहीं जानती। उनको पहले हिन्दी पढना-लिखना सिखायें।

राष्ट्र-संघ का लक्ष्य है कि 2000 ई० तक संपूर्ण साक्षरता हासिल करें। हमें तो कम से कम आधा मंजिल तय करना है। क्या तय कर पायेंगे? अभी तेरह साल रह गये हैं। राष्ट्र की सुस्थिति के लिए साक्षरता अत्यंत आवश्यक है। बिहार, मध्यप्रदेश, राजस्थान जैसे राज्यों में निरक्षरता

अधिक है। निरक्षरता के कारण अनाचार और दुराचार दुहराये जाते हैं। न्यायालय ने निर्णय किया है कि सति हिन्दु धर्म पर अधिष्ठित नहीं है। तो हिन्दी प्रान्तों में हिन्दी भाषियों को हिन्दी पढना लिखना सिखाना भी हिन्दी प्रचार का भाग है।

भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्वतंत्र हुए आफ्रिकी राष्ट्र जैसे अनेकों राष्ट्र जो भारत के बहुत पीछे पडे हुए थे वहाँ अब साक्षरता अस्सी प्रतिशत तक बढ गयी है। ज़ांबिया, एथियोपिया जैसे राष्ट्र। एथियोपिया तो बहुत गरीब था। वहाँ की जनता घास फूस खाती थी। नैजीरिया इन सभी राष्ट्रों

तो हिन्दी प्रान्तों में हिन्दी भाषियों को हिन्दी पढना लिखना सिखाना भी हिन्दी प्रचार का भाग है।

में साक्षरता प्रचार पर बहुत ज़ोर दिया जाता है। भारत विश्व संस्कृति का स्रोत माना जाता है। यह भारत आज साक्षरता में बहुत पीछे पडा हुआ है। इस समस्या को सुलझाने के लिए हिन्दी भाषी प्रान्तों के गरीब प्रौढों केलिए अनिवार्य अनौपचारिक शिक्षा की योजना बनानी है।

केरल में हम सब तरह के त्याग सहकर हिन्दी का प्रचार करेंगे। तमिल भाषी और तेलुगु भाषी जनता का हिन्दी विरोध मलयालम भाषी जनता में नहीं है। केरल हिन्दी प्रचार सभा की सेवायें निस्तुल हैं। सभा की हिन्दी प्रचार योजनायें अत्यन्त स्तरीय हैं, वैज्ञानिक हैं, निस्वार्थ हैं।

बडे संतोष के साथ मैं इस सम्मेलन का उद्घाटन करता हूँ।

केरल हिन्दी प्रचार सभा की सेवाएँ निस्तुल हैं। सभा की हिन्दी प्रचार योजनायें अत्यन्त स्तरीय हैं, वैज्ञानिक हैं, निस्वार्थ हैं।

★

हिन्दी प्रान्तीय साहित्यों का परिचय कराये

श्री. के. शंकर नारायण पिल्लै
परिवहन मंत्री, केरल सरकार

[केरल हिन्दी प्रचार सभा द्वारा आयोजित सुगम हिन्दी परीक्षा पुरस्कार वितरण समारोह में दिये गये भाषण का सारांश]
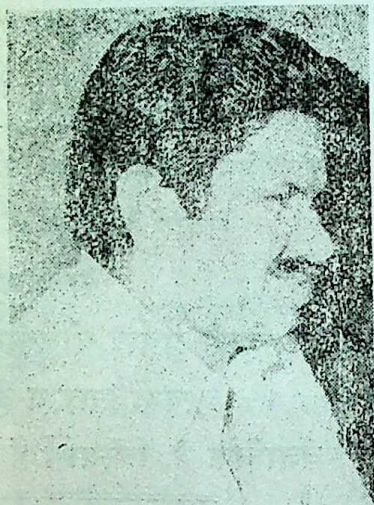
श्री. के. शंकर नारायण पिल्लै

साक्षरता के क्षेत्र में केरल काफी आगे है। तो भी भाषा के उपयोग के विषय में केरल के लोग बहुत पीछे हैं। भारत के इतर प्रान्तों में यद्यपि साक्षरता का प्रतिशत कम है—तो भी वहाँ के पढ़े लिखे व्यक्ति भाषाओं का उपयोग करने में आगे हैं। केरल में अंग्रेजी जाननेवाले बहुत हैं। पर उन में एक प्रतिशत भी अंग्रेजी बोल नहीं पाते। इसलिए जब वे केरल के बाहर जाते हैं तो उन्हें दूसरों का आश्रय लेना पडता है। हिन्दी के संबन्ध में भी यही बात है। जन संख्या के अनुपात में देखें तो हिन्दी-तर प्रान्तों में केरल ही हिन्दी अध्ययन में आगे है। पर यहाँ के विद्यार्थी हिन्दी का उपयोग बहुत कम करते हैं। यदि सीखी हुई भाषा का उपयोग नहीं करेंगे तो भाषा का अध्ययन व्यर्थ है।

मैं ने दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की राष्ट्रभाषा विशारद परीक्षा उत्तीर्ण की है। काँलेज में मेरी द्वितीय भाषा हिन्दी रही। पर, मैं हिन्दी का उपयोग नहीं कर पाता।

यदि सीखी हुई भाषा का उपयोग नहीं करेंगे तो भाषा का अध्ययन व्यर्थ है ।

केवल वाचन से भाषा का प्रयोग नहीं आएगा । बोलने और लिखने से ही भाषा का प्रयोग आएगा ।

आज हमारे देश में प्रान्तीयता की भावना बहुत कट्टर हो रही है। हर एक व्यक्ति अपनी भाषा को श्रेष्ठतम मानता है । राष्ट्रीय संगोष्ठी में केरलवाला मलयालम में बोलता है । तमिलनाडुवाला तमिल में बोलता है । भाषाप्रेम अच्छा है । लेकिन ऐसी भाषायी कट्टरता अभिलषणीय नहीं है ।

कुछ लोगों में यह आशंका है कि यदि हिन्दी भारत की एकमात्र राजभाषा बन जाएगी तो इतर भाषा भाषी हिन्दी भाषियों से होड़ नहीं लगा सकेंगे । अंग्रेजी भारत में किसी की मातृभाषा नहीं है । इसलिए अंग्रेजी के संबंध में ऐसी आशंका भी नहीं है । हिन्दी के संबंध में ऐसी जो आशंका है वह हिन्दी के प्रचार में एक हद तक बाधक भी हो रही है ।

इस देश केलिए एक संपर्क भाषा विकसित करनी है । संपर्क भाषा

हिन्दी के संबंध में ऐसी जो आशंका है वह हिन्दी के प्रचार में एक हद तक बाधक भी हो रही है ।

इतर भारतीय भाषाओं से शब्द ग्रहण करके अपने को विकसित करे । मलयालम के शब्दों में अधिकांश इतर भाषाओं से लिये गये हैं । हिन्दी का विकास भी इसी ढंग से करना चाहिए । हिन्दी को उर्दू से परहेज

सभी भारतीय भाषाओं से शब्दों को ग्रहण करते हुए हिन्दी को आगे बढना है ।

नहीं करना है । सभी भारतीय भाषाओं से शब्दों को ग्रहण करते हुए हिन्दी को आगे बढना है । इतर भारतीय भाषाओं की उत्तम साहित्यिक कृतियों का अनुवाद हिन्दी में किया जाना चाहिए । केरल के तकषि शिवशंकर पिल्लै, वैक्कम मुहम्मद बषीर, पी. केशवदेव, एम. टी. वासुदेवन नायर, माधविकुट्टी आदि की रचनायें हिन्दी में अनूदित हों । हिन्दी सभी प्रान्तीय भाषाओं के साहित्यों का पारस्परिक परिचय कराये । हिन्दी के प्रचार केलिये यह प्रक्रिया अधिक सहायक होगी ।

हिन्दी के प्रचार को व्यापक बनाने में केरल हिन्दी प्रचार सभा जो सेवा कर रही है वह अत्यंत स्तुत्यर्ह है । इस परीक्षा में जिन विद्यालयों ने उन्नत स्थान पाया और जिन विद्यालयों ने उन्हें परीक्षा में प्रस्तुत किया उनका मैं हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ ।

हिन्दी अध्यापन का स्तर कैसे सुधारें

श्री पी. टी. भास्कर पणिक्कर

[29-11-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा द्वारा आयोजित सुगम हिन्दी परीक्षा पुरस्कार वितरण समारोह में दिये गये आशीर्वाद भाषण का सारांश]

यद्यपि केरल के अनेकों छात्र हिन्दी पढते हैं तो भी केरल के स्कूलों के हिन्दी अध्यापन का स्तर अभी उन्नत नहीं माना जा सकता।

पाँचवीं कक्षा से विद्यार्थी हिन्दी सीखते हैं। लेकिन विद्यार्थियों को हिन्दी पर पर्याप्त अधिकार प्राप्त करने का अवसर नहीं मिलता।

पाँचवीं कक्षा से विद्यार्थी हिन्दी सीखते हैं। लेकिन विद्यार्थियों को हिन्दी पर पर्याप्त अधिकार प्राप्त करने का अवसर नहीं मिलता।

राष्ट्रीय एकता को सुदृढ करने के एक महत्वपूर्ण उपाय के रूप में हम ने हिन्दी प्रचार का कार्य आरंभ किया। हिन्दी भारत में सर्वाधिक प्रचलित भाषा है। इसका प्रचार
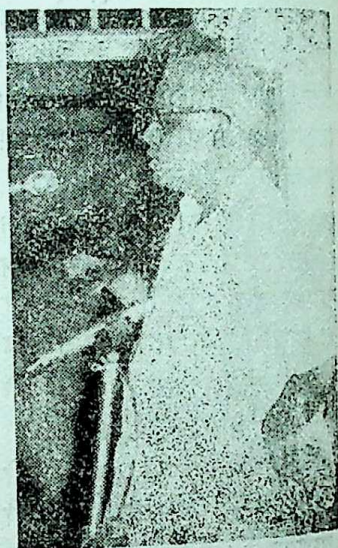
श्री. पी. टी. भास्कर पणिक्कर

यदि केरल, तमिलनाड, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, गुजरात, उडीसा जैसे प्रान्तों में प्रभावी ढंग से करना है तो हमें इन प्रान्तों के स्कूलों में हिन्दी अध्यापन का स्तर उन्नत करना है।

ये सब बातें विद्यार्थियों को समझाने का दायित्व मुख्यत: हिन्दी अध्यापकों का है ।

त्रिभाषा सूत्र के अनुसार हम तीन भाषायें स्कूलों में सिखाते हैं मातृभाषा, हिन्दी और अंग्रेज़ी। मातृभाषा सिखाने का उद्देश्य प्रान्त-वासियों को आपसी वार्तालापों के लिए सक्षम बनाना है, जनता को आधुनिक युग की बातें समझाना है । कृषि, इंजिनीयरिंग, बाह्य आकाश यात्रा, देश की गरीबी जैसे विषयों की जानकारी साधारण जनता को देनी है । गरीबी, सूखा आदि के कारणों से साधारण जनता को अवगत कराना है। यह सब मातृभाषा के द्वारा ही संभव है ।

हिन्दी शिक्षण का उद्देश्य राष्ट्रीय एकता को प्रश्रय देना है । भारत की प्राचीन गरिमा क्या थी ? भारत कैसे स्वतंत्र हुआ ? स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हम किधर जा रहे हैं ? ये सब बातें विद्यार्थियों को समझाने का दायित्व मुख्यत: हिन्दी अध्यापकों का है। क्या हमारे हिन्दी अध्यापक यह दायित्व निभा रहे हैं ? शिक्षा विभाग द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार कुछ पाठ पढाने मात्र से वे अपना दायित्व निभा नहीं पायेंगे । जैसे श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने बताया, दक्षिण में हिन्दी प्रचार का आरंभ राष्ट्रीय अभियान के अंग के रूप में हुआ । साधारण जनता को राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा की ओर लाने केलिए ही राष्ट्रीय अभियान आरंभ हुआ था । इस में हिन्दी का प्रमुख स्थान है ।

मान लीजिए अखिल भारतीय कांग्रेस का सम्मेलन हो रहा है। या अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन सम्मेलन हो रहा है। या भारतीय साहित्य सम्मेलन हो रहा है। ऐसे सभी सम्मेलनों में और लोक सभा में भी आज सबसे अधिक सुनायी पडनेवाली भाषा हिन्दी है । जो लोग हिन्दी नहीं जानते वे ऐसी सभाओं में होनेवाली चर्चा समझ नहीं पायेंगे ।

इसलिए हमें चाहिए कि राष्ट्र-भाषा हिन्दी के अध्यापन को एक नया रूप प्रदान करें । सरकार द्वारा हिन्दी परीक्षाओं केलिए जो प्रश्न पत्र तैयार किये जाते हैं वे बच्चों के भाषा कौशल का मूल्यांकन करने केलिए बहुत उपयोगी हैं। हिन्दी प्रचार सभाओं के प्रश्न पत्रों

में अपनी कुछ विशेषताएँ होनी चाहिए। दो तीन ऐसे प्रश्न भी हो जो हिन्दी प्रचार संस्था के दर्शन पर आधारित हैं।

हमारी आज की शिक्षा पद्धति में ऐसे अंश बहुत कम हैं जो देशाभिमान उत्पन्न कर सकें, देश प्रेम उत्पन्न कर सकें, देश के स्वतंत्रता संग्राम से संबन्धित जानकारी प्रदान

जो लोग हिन्दी नहीं जानते वे ऐसी सभाओं में होनेवाली चर्चा समझ नहीं पायेंगे।

कर सकें, सामाजिक बोध उत्पन्न कर सकें, धार्मिक पागलपन नष्ट कर सकें, जातिपाँति का भेदभाव मिटा सकें, स्त्रियों के प्रति किये जानेवाले अत्याचारों का अन्त कर सकें तथा हरिजनों और गिरिजनों के प्रति अधिक करुणा उपजा सकें। यदि ऐसे अंश हमारी शिक्षा पद्धति में समाविष्ट होते तो हमारे देश की प्रगति का स्वरूप दूसरा ही होता। हमारे देश के शिक्षित जनों में भी कई प्रकार के अन्धविश्वास पाये जाते हैं। कई प्रकार की गलतफहमियाँ पाई जाती हैं। समाचार पत्रों में आनेवाली वार्ताओं को वे वेदवाक्य मानते हैं। इन वार्ताओं की असलियत समझने की जिज्ञासा

यदि ऐसे अंश हमारी शिक्षा पद्धति में समाविष्ट होते तो हमारे देश की प्रगति का स्वरूप दूसरा ही होता।

उनमें नहीं है। इन घटनाओं के कारण ढूँढने केलिए उनके पास फुर्सत नहीं है। इसका कारण यही है कि शिक्षा वह क्षमता नहीं उत्पन्न करती जिस से पुराने और नये अन्धविश्वासों के विरुद्ध सोच सके और कार्य-कारण-संबन्ध समझ सकें। ऐसी क्षमता उत्पन्न करने में सहायक कुछ प्रश्न भी हिन्दी प्रचार सभा के प्रश्न पत्रों में दिये जायें तो

ऐसा नहीं करें तो हिन्दी अध्यापकों की क्षमता में ह्रास होता जाएगा।

अच्छा होगा। इससे हिन्दी परीक्षाओं की उपयोगिता बढेगी।

हिन्दी अध्यापकों को नवीकरण पाठ्यक्रमों में प्रशिक्षित करना भी अत्यन्त आवश्यक है। स्कूलों और कॉलेजों के हिन्दी अध्यापकों केलिए ऐसे नवीकरण पाठ्यक्रम हिन्दी प्रचार सभा के तत्वावधान में आयोजित किये जाएँ। ऐसा नहीं करें तो हिन्दी अध्यापकों की क्षमता में ह्रास होता जाएगा।
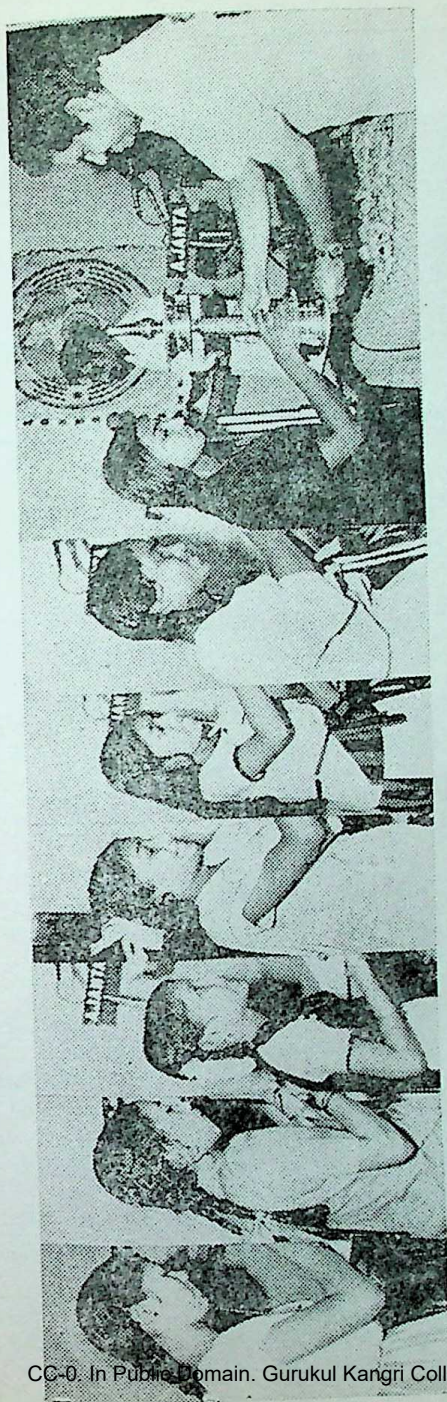
केरल हिन्दी प्रचार सभा द्वारा 1986, 1987 वर्षों में राज्य के विविध स्कूलों में चलायी गयी सुगम हिन्दी परीक्षाओं में उन्नत स्थान पाये विद्यार्थी केरल के परिवहन मंत्री श्री. के. शंकरनारायण पिल्लै से पुरस्कार प्राप्त कर रहे हैं ।
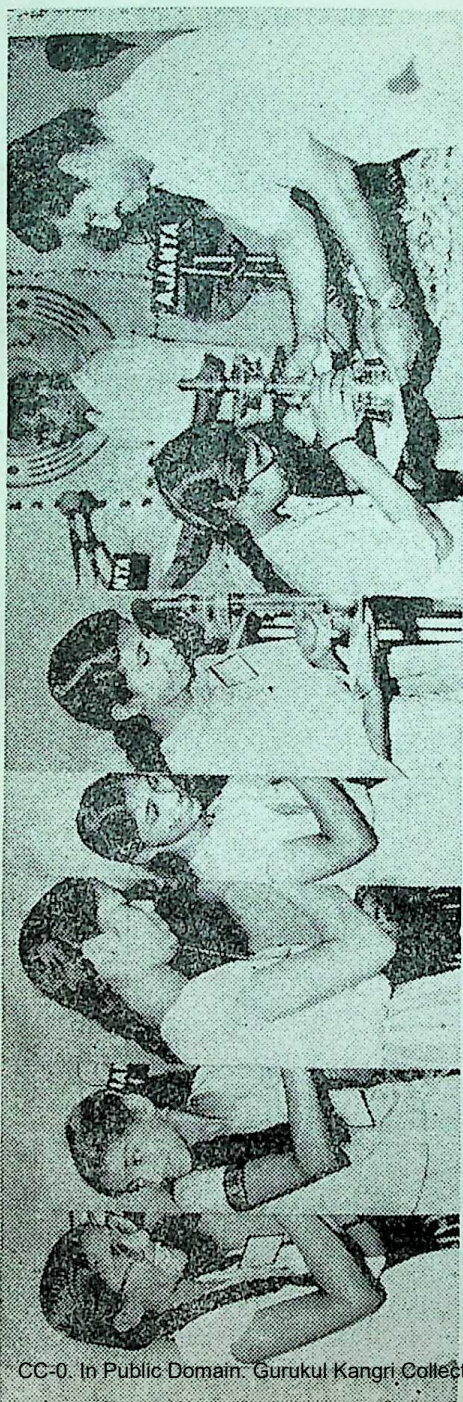
सभा की सुगम हिन्दी परीक्षाओं में राज्य स्तर पर उन्नत स्थान पाये विद्यार्थियों को पुरस्कार एवं प्रमाण-पत्र वितरण कर रहे हैं केरल के परिवहन मंत्री श्री. के. शंकरनारायण पिल्लै ।

मानस मइने वरू....

डा० भोलाभाई पटेल
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुजरात विश्वविद्यालय

मेरी मातृभाषा गुजराती है, आपकी मातृभाषा मलयालम है; लेकिन हम मिल रहे हैं तो वह अनुवाद हो है।

*[5-11-1987 को केरल **हिन्दी प्रचार** सभा में 'अनुवाद की समस्यायें' पर आयोजित संगोष्ठी में दिये गये **भाषण** का सारांश]*

श्री. तकषी शिवशंकर पिल्लै

अनुवाद है क्या ? अनुवाद का मतलब है दो भाषायें बोलनेवालों का मिलना। मेरी मातृभाषा गुजराती है, आपकी मातृभाषा मलयालम है; लेकिन हम मिल रहे हैं तो वह अनुवाद ही है।

मलयालम की प्रसिद्ध किताब 'चेम्मीन'—जिस में करुत्तम्मा—एक पात्र है—का परिचय हमें कैसे प्राप्त हुआ ? मैं मलयालम नहीं जानता। पर मैं ने इस किताब के बारे में गुजराती भाषा में एक लेख भी लिखा। अनुवाद के माध्यम से इस ग्रंथ का परिचय मैं पा सका। इस किताब को पढने के बाद इसकी फिलम आयी। भाषा नहीं आती थी। तो भी फिलम देखने गया। नायक का वह गाना "मानस मइने वरू......" अब भी कानों में गूँजता है। यहाँ का लैंडस्केप, यहाँ के लोग, यहाँ का सागरतट !! जब भी यहाँ

के सागरतट पर जाता हूँ तो वह सारा लैंडस्केप हमारे मन के सामने प्रस्तुत होता है।

फिर हमने एक अच्छी मलयालम कहानी पढी—पोनकुन्नम वर्की की। अंग्रेजी में। उस के बारे में हमने गुजराती में एक लेख लिखा। यह कहानी गुजरात में भी हो सकती है, उत्तर प्रदेश में भी हो सकती है।

ऐसे इस भाषा का परिचय होता गया और इस संस्कृति के साथ प्रेम होता गया। इस का कारण है अनुवाद।

हिन्दीवालों को चाहिए कि वे दूसरी भाषाओं से हिन्दी में अच्छी चीजें ले आयें। लेकिन वे नहीं करते।

हिन्दीवालों को चाहिए कि वे दूसरी भाषाओं से हिन्दी में अच्छी चीज़ें ले आयें। लेकिन वे नहीं करते। इसलिए हम अपनी चीज़ें हिन्दी में ले जायें। और हिन्दी में जो अच्छी चीज़ें हैं, अपनी भाषा में ले आयें। दूसरी भाषाओं से हिन्दी में जिन पुस्तकों का अनुवाद हुआ है उसे हिन्दी के माध्यम से मलयालम में लायें। हम द्विभाषी हैं। इसलिए मात्र हिन्दी जाननेवालों की अपेक्षा हमारे पास तर्की भी आती है, शक्ति भी आती है।

जो एक ही भाषा का साहित्य सीखता है वह कभी साहित्य नहीं सीखता। कम से कम दो तीन भाषाओं के साहित्यों को सीखने से हम अपनी भाषा के सहित्य का भी सही अन्दाज़ लगा सकते हैं।

कबीर और रहीम के मार्ग पर चलें ।

डा० साने

[5-11-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा भवन में दिये गये भाषण का सारांश]

यह मेरा सौभाग्य है कि आप लोगों से मिलने का अवसर मिला। आप तो मलयालम हिन्दी सुनते ही हैं। आप ने अभी गुजराती हिन्दी सुनी। अब मैं आप को मराठी हिन्दी सुनाऊँगा।

हिन्दी जो गुजरात में बोली जाती है, केरल में बोली जाती है या महाराष्ट्र में बोली जाती है वही राष्ट्रभाषा हिन्दी होगी, जो बनारस में बोली जाती है, वह नहीं।

महाराष्ट्र पत्थरों का, कंकडों का प्रदेश माना जाता है। बडा रूखा सूखा प्रदेश होता है। जितनी हरियाली यहाँ दिखाई दी वह हरियाली यदि महाराष्ट्र में होती तो न जाने महाराष्ट्र का क्या होता।

आप की भाषा बहुत मधुर है। आप मीठी बात करते हैं। आप का रिक्शावाला, दूकान का विक्रेता, बस कन्डक्टर सब बडी मीठी बोली बोलते हैं। कबीर ने कहा है:—

हिन्दी जो गुजरात में बोली जाती है, केरल में बोली जाती है या महाराष्ट्र में बोली जाती है वही राष्ट्रभाषा हिन्दी होगी।

ऐसी बानी बोलिए मन क अ ा खोई
अपना तन शीतल रे और क
सुख होई।

हमारे यहाँ रिक्शे पर और तांगे पर लिखा रहता था कि "शब्द एक शस्त्र है, इसका उपयोग संभल कर कीजिए।"

इस का अब रहीम के रास्ते के आना है। वह रास्ता है प्रेम का। रहीम कहते हैं:—

रहिमन धागा प्रेम का, मत तोडो चटकाई
टूटे सो फिर न मिले, मल गाँठ
जाई।

मेरी आप की मधुर वाणी से यही प्रार्थना है आप अपने मिठास को अगर प्रेम के रास्ते और ले जायें तो कबीर के प्रति, रहीम के प्रति और भाषा के प्रति चरितार्थता सिद्ध करदेंगे। ★

केरलीयता और भारतीयता

प्रो० पी. माधवन पिल्लै

[5-11-1987 को केरल हिन्दी प्रचार सभा में 'अनुवाद की समस्याएँ' पर आयोजित संगोष्ठी में दिये गये भाषण का सारांश ।]

केरल के हम लोग हिन्दी सीखते हैं। हमारे पूर्वजों ने भी कई साल से हिन्दी सीखी है। इस के पीछे की मनोवृत्ति केवल नौकरी पाने की या समय बिताने की नहीं है। हमारी पिछली पीढी के डा० विश्वनाथ अय्यर जैसे गुरुजनों ने राष्ट्र प्रेम से प्रेरित हो कर हिन्दी को अपनाया था। हम इस सुदूर दक्षिण में रहने वाले लोग इस देश की अन्य विशाल जनराशि से इस हिन्दी के माध्यम से संपर्क रखते हैं। हमारी अपनी भाषा है, हमारे अपने आचार विचार हैं। हमें इस पर गर्व भी होता है। गर्व होना चाहिए भी। जिस प्रकार महाकवि वल्लत्तोल ने गाया था—

"भारतमेन्न पेरु केट्टाल अभिमानपूरित
आकणम अन्तरंगम
केरलम एन्नु केट्टालो तिळक्कणम
चोर नमुक्कु ञरम्पुकळिल"

भारत का नाम सुनते ही हमारा अन्तरंग अभिमान से भरापूरा होना चाहिए। साथ ही, केरल का नाम सुनते ही हमारे रग रग में रक्त का संचार होना चाहिये।" आप को लगेगा कि इस में थोडा सा विरोध है। नहीं। वह तो केवल विरोधाभास है। पहले हमें अपनी भाषा पर, अपने प्रान्त पर, अपने आचार विचारों पर, अपनी रीतिरिवाजों पर, अपने साहित्य पर, अपनी सामाजिक परिस्थिति पर, सब पर गर्व होना चाहिए। हीनता की भावना नहीं। उस के साथ ही साथ हमें यह विचार रहना चाहिए कि हम इस विशाल

भारत का नाम सुनते ही हमारा अन्तरंग अभिमान से भरापूरा होना चाहिए ।

विराट देश के एक अविभाज्य अंग हैं। हमारी केरलीयता हमारी भारतीयता के सामने एक विघ्न के रूप में उपस्थित न हो जाये। जब ऐसा विचार आ जाता है तब हम उस संकुचित प्रान्तीयता के शिकार हो जाते हैं जो अखण्ड भारत की सृष्टि में बाधक सिद्ध हो जाती है। संकुचित प्रान्तीय विचारों की सीमाओं को लांघ कर जब हम समस्त मानवता के प्रति उन्मुख हो जाते हैं तभी अनुवाद आवश्यक हो जाता है। केरल में रहनेवाले हम लोग अपनी भाषा की साहित्यिक रचनाओं को हमारे पडोस में रहने वाले भाई बहनों के सामने जब प्रस्तुत करते हैं तब हमारी संस्कृति का, हमारे साहित्य का, हमारे लोक गीतों का, हमारे लोकनृत्यों का सन्देश हम उन्हें देते हैं। इस केलिए अनुवाद को छोड कर और कोई माध्यम नहीं है।

हमारे इस केरल के तकषि नामक एक गाँव में जन्म लेने वाले शिवशंकर पिल्लै समस्त संसार की भाषाओं में विख्यात हो गये हैं। हमारे केशवदेव हिन्दी में गये हैं। जी. शंकर कुरुप समस्त भारतीय भाषाओं में, रूस में, अमेरिका में, लैटिन अमेरिकन राज्यों में गये हैं। एस के. पोट्टक्काट गये हैं। पोनकुन्नम वर्की गये हैं। के. टी. मुहम्मद की 'आँखें' नामक कहानी विश्वप्रतियोगिता में अव्वल आयी है। तो इस क्षेत्र के हम लोग अनुवाद के माध्यम
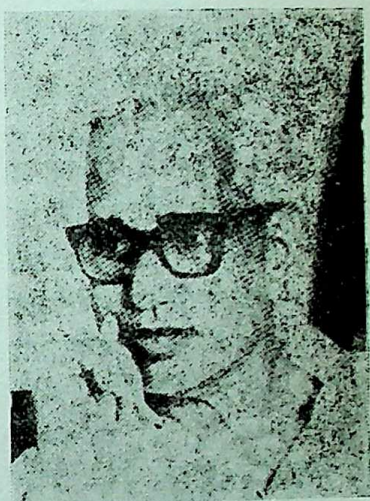
श्री. जी. शंकर कुरुप

से सारे संसार को अपने में ला सकते हैं और सारे संसार को अपनी कुछ दे सकते हैं।

इस क्षेत्र के हम लोग अनुवाद के माध्यम से सारे संसार को अपने में ला सकते हैं और सारे संसार को अपनो कुछ दे सकते हैं।

राजभाषा हिन्दी— केरल में कहाँ तक ?

प्रस्तुति : श्री. एम. पी. गोपालकृष्णन
राजभाषा अधिकारी
कैनरा बैंक, तिरुवनन्तपुरम

बैंकों की नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की छठी बैठक दिनांक 29-9-1987 कोअपराह्न 3.00 बजे होटल प्रशान्त, तिरुवनन्तपुरम में संपन्न हुई । बैठक की अध्यक्षता समिति के अध्यक्ष एवं केनरा बैंक के उप महाप्रबंधक श्री. बी. ए. प्रभु ने की । राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के प्रतिनिधि के रूप में,श्री.डी. कृष्ण पणिक्कर, सहायक निदेशक, दक्षिणी क्षेत्र, बेंगलूर पधारे हुए थे । भारतीय रिजर्व बैंक के सहायक मुख्य अधिकारी श्री, पी. के. एस. नायर के अलावा मंच पर उपस्थित थे,कैनरा बैंक के मंडल प्रबन्धक श्री. यु. पी. कामत एवं श्री: आर. एस. एल. प्रभु । केरल हिन्दी प्रचार सभा के सचिव श्री. एम. के. वेलायुधन नायर विशेष आमंत्रित के रूप में पधारे हुए थे ।

बैठक के प्रारंभ में श्री. यु. पी. कामत ने सभी सभासदों का स्वागत किया । कैनरा बैंक के राजभाषा अधिकारी एवं समिति के सचिव श्री. एम. पी. गोपालकृष्णन ने समिति के कार्यकलापों के संबन्ध में छ: माही रिपोर्ट प्रस्तुत की ।

अपने प्रारंभिक वक्तव्य में श्री. पणिक्कर ने बैंकों से अनुरोध किया कि सरकार की नीति का पालन करने केलिए भरसक कोशिश करें। उन्होंने हिन्दी पत्राचार को बढाने की जरूरत,पर प्रकाश डाला

इस बैठक में चर्चा के लिए आयी कुछ विशेष मदें थीं—तिरुवनन्तपुरम में अनुवाद प्रशिक्षण की सुविधा, विभिन्न हिन्दी परीक्षाओं के शुल्कों की बढ़ायी गयी दरें, नगर में पर्याप्त मात्रा में हिन्दी पाठ्य पुस्तकों का उपलब्ध न होना, केरल राज्य की नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के प्रतिनिधियों का सम्मेलन आदि। साथ ही, सदस्य बैंकों की प्रगति रिपोर्टों की समीक्षा की गयी।

चर्चाओं का समापन करते हुए केनरा बैंक के मंडल प्रबंधक श्री. आर. एस. एल. प्रभु ने, भारत सरकार की राजभाषा ट्रॉफी प्राप्त करने के उपलक्ष्य में समिति को बधाई दी। उन्होंने घोषणा की कि केनरा बैंक की तरफ से इस समिति के सदस्य बैंकों के लिए एक रोलिंग शील्ड की व्यवस्था की जाएगी।

इस अवसर पर बोलते हुए श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने आश्वासन दिया कि बैंकों के कर्मचारियों को हिन्दी में प्रशिक्षण देना आदि कार्यों में केरल हिन्दी प्रचार सभा अपना पूरा सहयोग प्रदान करेगी। उन्होंने समिति के कार्यकलापों के प्रति संतोष व्यक्त किया।

अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री. बी. ए. प्रभु ने, सदस्य बैंकों को उनके सहयोग एवं सहभागिता के लिए धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा कि यह समिति अपने लक्ष्यों के प्रति सजग है और उन लक्ष्यों तक पहुँचने केलिए सामूहिक प्रयासों की जरूरत है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि आनेवाले समय में हम और भी कई पुरस्कार प्राप्त करेंगे।

विजया बैंक, प्रभागीय कार्यालय, तिरुवनन्तपुरम की श्रीमती पी. सरस्वती अम्मा के धन्यवाद प्रस्ताव के साथ बैठक समाप्त हुई।

दुर्गा

डा०. विश्वनाथ शुक्ल
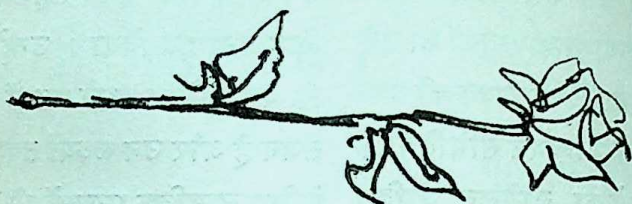
सच्चिदानन्द-विग्रह
विभु की दुरत्यया माया शक्ति-
दश-प्रहरण-धारिणी
सिंहवाहिनी दुर्गा
दसों दिशाओं की शासिका है
दैविक-दैहिक-भौतिक
त्रिविध तापों के त्रिशूल से
केवल स्वोदरंभरि
असुरों की उर विदारिका है।
सदा सर्वत्र दुर्धर्ष वर्ग संघर्ष
जो आज बन गया है
जीवन-निष्कर्ष
या मानवोत्कर्ष-पर्याय
वह है त्रिविध तापों का
ही लम्बा अध्याय।
संघर्ष पशुस्तर तक
सही है।
योग्यतम के अस्तित्व
की बात ही विज्ञान ने कही है
मनुष्य ही तो योग्यतम है
मनुष्यों में संघर्ष शोचनीय है।
उसका स्वरूप सच्चिदानन्दमय है।
और वही स्पृहणीय है।

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
अलीगढ विश्वविद्यालय
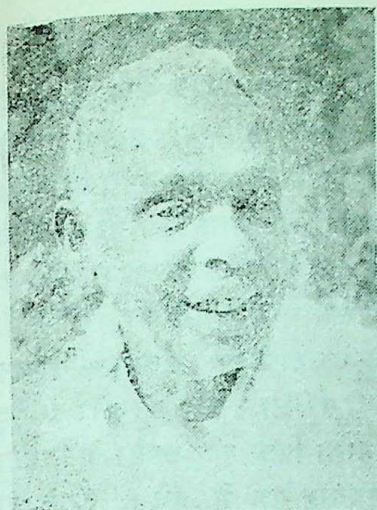
श्री. तकषी शिवशंकर पिल्लै

श्री. देवानन्द चक्कुंगल

अपने सर्वोत्कृष्ट उपन्यास 'कयर' (रस्सा) पर ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त श्री. तकषी तीसरे मलयाली लेखक हैं जिन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला। इसके पूर्व महाकवि श्री जी. शंकर कुरुप को उनकी कविता-संग्रह "ओटकुषल" (बांसुरी) एवं श्री एस. के. पोट्टकाट को उनकी कृति "ओरु देशत्तिनटे कथा" (कथा एक प्रान्तर की) पर यह पुरस्कार प्राप्त हो चुका है।

श्री. तकषी के उपन्यास "कयर" को मलयालम का सर्वोच्च साहित्य पुरस्कार "वयलार अवार्ड" पहले ही मिल चुका है। आपके अन्य उपन्यास "रण्डिटंगषी" (दो सेर धान) को केरल साहित्य अकादमी पुरस्कार और "चेम्मीन" (झींगा) को केन्द्र साहित्य अकादमी अवार्ड प्राप्त हुए हैं। चेम्मीन पर जब चल-चित्र बना तो इसके सर्वोत्तम अभ्रकाव्य को राष्ट्रपति स्वर्ण-पदक प्रदान किया गया। साहित्य सेवा केलिये आपको सोवियत लेंड नेहरु पुरस्कार दिया गया। हाल ही में आपको "पद्म-भूषण" की उपाधि से सम्मानित किया गया है। एक साहित्यकार के रूप में ज्ञानपीठ पुरस्कार आपका अब तक का सबसे बड़ा सम्मान है, जो केवल आपका ही नहीं वरन् मलयालम भाषा का सम्मान है।

भारत के सत्तर करोड़ लोगों में से केवल साढ़े तीन करोड़ लोगों की मातृ भाषा मलयालम है, फिर भी

इसके तीन साहित्यकारों को ज्ञान-पीठ पुरस्कार मिलना इस भाषा के लिये गर्व की बात है, जो उसकी समृद्धि का प्रतीक है। मलयालम की

भारत के सत्तर करोड़ लोगों में से केवल साढ़े तीन करोड़ लोगों की मातृभाषा मलयालम है, फिर भी इसके तीन साहित्यकारों को ज्ञानपीठ पुरस्कार मिलना इस भाषा के लिये गर्व की बात है, जो उसकी समृद्धि का प्रतीक है।

अनेक पुस्तकों का विश्व की विभिन्न भाषाओं में अनुवाद हुआ है और इस प्रकार विश्व-साहित्य में उसने विशिष्ट स्थान प्राप्त किया है इसके लिये श्री तकषी का योगदान सराहनीय है। इसके अतिरिक्त देश-विदेश की अनेक भाषाओं की प्रमुख कृतियों का मलयालम में अनुवाद होने के कारण यह भाषा काफी समृद्ध है तथा इसे राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कराने का श्रेय काफी हद तक श्री तकषी को दिया जाता है।

जीवन परिचय :

प्रकृति की गोद में कुट्टनाट प्रदेश के एक छोटे-से गांव तकषी में अप्रेल 1912 में आपका जन्म एक किसान परिवार में हुआ। प्राथमिक शिक्षा तकषी में, माध्यमिक अम्पलप्पुषा, उच्चतर माध्यमिक वैकम और करुवाट्टा में हुई। सन् 1934 में कानून की परीक्षा उत्तीर्ण की और इसी वर्ष माता-पिता की इच्छा के अनुसार विवाह-सूत्र में बंधे। इसके बाद आपने वकालत शुरू की। परन्तु आपका कहना था कि, "मैं वकील बाद में हूँ, किसान पहले।"

व्यक्तित्व एवं कृतित्व

सूर्योदय के पूर्व पक्षियों के साथ सोकर उठना, गांव के खुले वातावरण में दूर तक पैदल चलना, गांव की एक चाय की दूकान पर जलपान करना फिर खेतों की ओर मुड़ जाना, उनका सूक्ष्मता से निरीक्षण करना आपकी नियमित दिनचर्या है। आपका कहना है कि, "मैं लेखक के रूप में जाना जाता हूँ। अनेक लोगों से, अनेक संस्थाओं से, हजारों पाठकों से मुझे लेखक के नाते सम्मान मिला है। पर मैं आज कहना चाहता हूँ कि मैं लेखक बाद में हूँ, केरल का

किसान पहले हूँ और इसका मुझे गर्व है। एक किसान का जीवन जीते हुए मुझे जो अनुभव प्राप्त हुए, जो लोग मुझे मिले, जिस वर्ग को मैंने टनिक से जाना, जिसकी पीड़ा,

मुझे कथाकार कम पर कथाएँ कहने वाला किसान मानिए।

संघर्ष और जीवन—शक्ति को पहचाना उसी की सीधी-सादी कथाएँ मैं ने कही हैं। अत: मुझे कथाकार कम पर कथाएँ कहने वाला किसान मानिए।"

लेखन में आपका रुझान और लगन बचपन से ही थी। "केसरी" के सम्पादक एवं प्रख्यात समीक्षक ए. बालकृष्ण पिल्लै से आप काफी प्रभावित हुए और केसरी के लिये आपने कुछ कहानियाँ भी लिखीं जिनसे आपकी लेखन सम्भावना के बीज का स्पष्ट अंकुरण हुआ। सन् 1934 में ही आपके पहले कहानी संग्रह ने साहित्य जगत में तहलका मचा दिया। इसके कुछ ही समय बाद आपके प्रथम उपन्यास "प्रतिफलम्" ने आपको प्रतिष्ठित साहित्यकारों की श्रेणी में स्थापित कर दिया। इसके बाद तो आपका लेखन न केवल आपकी लेखन प्रतिभा को परिमार्जित करता गया वरन् पास परिवेश से, समाज और राष्ट्र के विघटित मूल्यों से, विसंगतियों एवं अत्याचारों से सार्थक संघर्ष करता रहा। "तोट्टियुटे मकन"(मेहतर का बेटा), "रंटिटंग.षी" (दो सेर) तथा "कयर" (रस्सा) उपन्यासों ने श्री.तकषी को शीर्षस्थ उपन्यासकार के रूप में प्रतिष्ठित किया है।

आपकी सभी कहानियों एवं उपन्यासों की पृष्ठभूमि उनका जन्म स्थान कुट्टनाट ही है। इनके सभी पात्रों को हम यहाँ देख सकते हैं। पीड़ितों एवं दलितों की कहानी लिखने में तकषी सिद्धहस्त हैं। उनकी

अपने 55 वर्ष के साहित्यिक जीवन में श्री. तकषी ने लगभग 35 उपन्यास, 500 कहानियाँ, निबंध, यात्रावर्णन, नाटक तथा इतिवृत्त आदि लिखे।

"बहुत छोटे से मनुष्यों के बारे में बहुत बड़ी कहानी लिखने वाले एवं विश्वसाहित्य मंडल के सबसे ज्यादा जाने पहचाने जानेवाले प्रतिभाशाली साहित्यकार हैं, श्री. तकषी शिवशंकर पिल्लै ।"

वेदनाएँ और यातनाएँ, मोह और मोहभंग, पराजय और पराधीनता को आपने बड़ी कुशलता से रेखांकित किया है । दंभ एवं द्वेष, बड़बोलेपन तथा सैद्धांतिक पाखंडों से ग्रसित साहित्य जगत में इस किसान की सीधी सादी परन्तु लेखकीय गरिमा से युक्त बातें पाठकों में काफी गहरे पैठ गयीं । "चेम्मीन" पर बनी फिल्म पर राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त करने वाली यह महान विभूति सन् 1984 के ज्ञानपीठ पुरस्कार के लिये चुनी गई ।

अपने 55 वर्ष के साहित्यिक जीवन में श्री. तकषी ने लगभग 35 उपन्यास, 500 कहानियाँ, निबंध, यात्रावर्णन, नाटक तथा इतिवृत्त आदि लिखे । 73 वर्ष की आयु में भी आप असाधारण प्रतिभा के धनी हैं । आप कहते हैं कि मुझे अपना सर्वश्रेष्ठ उपन्यास लिखना अभी बाकी है । आपके बारे में केरल के प्रसिद्ध कवि एवं ज्ञानपीठ पुरस्कार समिति के मलयालम विभाग के प्रोफेसर ओ. एन. वी. कुरुप का कहना है कि "बहुत छोटे से मनुष्यों के बारे में बहुत बड़ी कहानी लिखनेवाले एवं विश्वसाहित्य मंडल के सबसे ज्यादा जाने पहचाने जानेवाले प्रतिभाशाली साहित्यकार हैं, श्री. तकषी शिवशंकर पिल्लै ।" चार-पाँच पीढ़ी की कहानी कहने वाले एक हजार से अधिक लोगों का इतिहास है आपका "कयर" (रस्सा), जिसने आपको ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता बनाया। बधाई !

*

हिन्दी साहित्य समिति
सत् प्रचार प्रेस
इन्दौर-452 001
मध्यप्रदेश
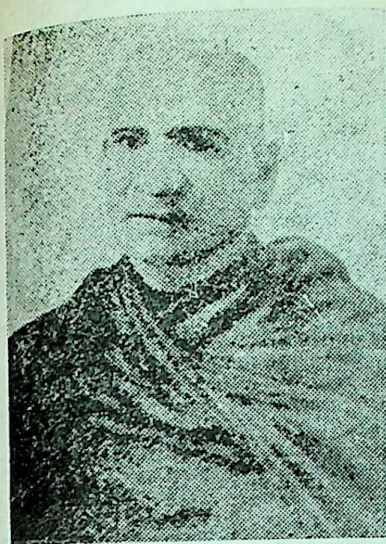
भारतीय नव जागरण और स्वामी श्रद्धानन्द

श्री. विष्णु प्रभाकर

स्वामी श्रद्धानन्द

(पूर्वप्रकाशित से आगे)

लेकिन क्या यह आश्चर्यजनक नहीं लगता कि जो व्यक्ति जीवन को इतनी ऊँचाइयों पर प्रतिष्ठित कर सका, वह प्रारंभ में वही सब कुछ करता था जोर छोटे-मोटे विलासी जमींदार औ रईस करते रहे हैं। तब उस व्यक्ति का नाम

लेकिन पतन के उस मोहक मार्ग पर आगे बढते हुए भी उस में ऐसा कुछ था जो एक आवारा व्यक्ति को अन्तत: मसीहा बना देता है।

था मुंशीराम और मांस-मदिरा और नारी, कुछ भी नहीं छूटा था उसमे। लेकिन पतन के उस मोहक मार्ग

श्री. विष्णु प्रभाकर

पर आगे बढते हुए भी उसमें ऐसा कुछ था जो एक आवारा व्यक्ति

को अन्ततः; मसीहा बना देता है। अपराजेय कथा-शिल्पी शरत् ने पाप की कौन-सी गली में पैर नहीं रखा? कौन-सा कुकर्म नहीं किया? पर फिर भी वह गर्व से यह कह सके, "मेरा जीवन अन्ततः मानो एक उपन्यास ही है। इस उपन्यास में सब कुछ किया है पर छोटा काम कभी नहीं किया है। जब मरूंगा निर्मल खाता छोड जाऊँगा। उसके बीच स्याही का दाग कहीं भी नहीं होगा।

यह छोटा काम क्या है, इसकी व्याख्या इतनी महत्वपूर्ण नहीं है जितनी महत्वपूर्ण यह बात है कि इस प्रकार का दावा करने वालों में वह कौन-सी विशेषता होती है जो उन्हें 'कल्याण मार्ग का पथिक' बना देती है और भीतर की इन्सानियत को नष्ट नहीं होने देती।

ऐसे मनुष्यों के भीतर एक कुरेदना होती है, एक जिज्ञासा होती है कि जो है, उससे आगे कुछ और है। उससे इतर भी कुछ और है। उनकी चिन्तन की प्रक्रिया और तलाश निरन्तर प्रवहमान रहती है। 'नेती-नेती' न इति, न इति, इतना ही नहीं, इतना ही नहीं, और भी है। यहीं तक नहीं, यहीं तक नहीं— और आगे भी है। यही नहीं कुछ और भी है।

वैज्ञानिक युग में सत्य से बड़ा सत्य की तलाश का महत्व होता है। जो महाप्राण हैं वे अन्धी-गलियों में विचरण करते हुए भी तलाश का दिया जलाए रहते हैं। यह दिया ही उन्हें अपने सही मार्ग को खोज लेने में मदद दिया करता है। आवारा या पथभ्रष्ट व्यक्ति नितान्त गुणहीन नहीं होता, केवल दिशाहीन होता है। ऊर्जा उसमें होती है बल्कि कुछ अधिक ही होती है और जब इस ऊर्जा को दिशा मिल जाती है तो वह मसीहा ही बनता है।

स्वामी श्रद्धानन्द आर्य समाज के प्रथम पंक्ति के नेताओं में अन्य[illegible] थे। पर यह योग्यता उन्हें विरासत में नहीं मिली थी। इस विश्वास को उन्होंने स्वयं अर्जित किया था। जो विरासत में मिलता है उसका सही-सही मूल्य हम नहीं आंक सकते पर जो हम स्वयं अर्जित करते है वह हमारा वास्तविक मूलधन होता है। उस मूलधन को प्राप्त करने की योग्यता भी होनी चाहिए। उसी योग्यता का नाम तलाश। इसी तलाश ने कहीं-कहीं नहीं भटकाया मुन्शीराम को

विरासत में उन्हें विलासिता के साथ-साथ धर्म में अटूट आस्था भी मिली थी। जिन दिनों वह अपने पिताजी के साथ बनारस में रहे थे उन दिनों सारी विलासिता के बावजूद वह नित्यप्रति विश्वनाथ के दर्शन करने जाया करते थे। एक दिन क्या हुआ कि पुलिस कांस्टेबिल ने उन्हें अन्दर जाने से रोक दिया, कहा "अभी रीवां की महारानी दर्शन कर रही हैं। उनके बाद आप जा सकेंगे।"

उस क्षण मुन्शीराम के मन में यह प्रश्न उभरा, "विश्वनाथ तो विश्व के स्वामी हैं। उनकी दृष्टि में सभी समान हैं फिर उन्हीं के दरबार में रींवां की महारानी के साथ यह पक्षपात क्यों?" यही प्रश्न आगे चलकर उत्कट तलाश में परिणित हो गया। तलाश की इस प्रक्रिया में वह ईसाई धर्म की ओर आकर्षित हुए। और वह आकर्षण इस सीमा तक बढा कि वह बपतिस्मा लेने को तैयार हो गये। इसी इरादे से एक दिन वह ईसाई धर्माध्यक्ष के पास पहुँचे। लेकिन वहाँ जाकर उन्होंने देखा कि वे तो एक नन के प्रणयपाश में आबद्ध हैं। मन पर फिर आघात हुआ। सोचने लगे कि अगर धर्माध्यक्ष भी वही कुछ करते हैं जो

अगर धर्माध्यक्ष भी वही कुछ करते हैं जो करने पर हम विलासी कहलाते हैं तो, हममें और उनमें अन्तर क्या है?

करने पर हम विलासी कहलाते हैं तो, हममें और उनमें अन्तर क्या है?

प्रश्नाकुलता की इसी स्थिति में उन्होंने मन्दिरों में व्यभिचार के अड्डों को पनपते देखा। उन्होंने देखा कि जब कोई नारी माँ नहीं बन सकती तो, कोई दूसरी नारी उसे संतान प्राप्त कराने केलिए इन तथाकथित धर्माध्यक्षों के पास ले जाती हैं और वे धर्मपिशाच समाज में धर्मप्राण महापुरुषों रूप में पूजे जाते हैं।

एक बार तीर्थाटन करते हुए वे मथुरा पहुँचे। मंदिर में दर्शन के समय उन्होंने एक युवती की चीख सुनी। दृष्टि उठाकर उस ओर देखा तो पाया, कि एक गुसाईं महाराज एक युवती का हाथ पकड़कर मोर बांधने की चेष्टा कर रहे हैं। वे तुरन्त वहाँ पहुंचे। उन्हें देख कर गुसाईं महाराज बोले, "यह बालिका भीड़ में घबरा गयी है। मैं इसे शान्त करने की चेष्टा कर रहा हूँ।" ❀

(क्रमश.)

जी. शंकर कुरुप प्रकृति और पुरुष

डा० एन. चन्द्रशेखरन नायर

(पूर्वप्रकाशित से आगे)

उसी आकाशपुत्र को कवि ने 'आनन्द' का नाम दे कर पुकारा। अपने आह्लाद को प्रकट करने के लिए उसे "वह संगीत! जिसे कभी देखा नहीं" ऐसा संबोधन दिया। इससे भी कवि की उन्मद कल्पना शांत नहीं हुई। गा गया—

डा० एन. चन्द्रशेखरन नायर
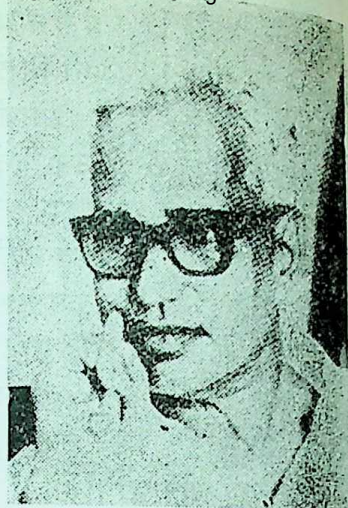
"अंधकार में शीतल कुंकुम बिखेरनेवाली तेरी बढ़ती हुई कांति की ज्वाला देखकर अलस और उदास बना हुआ उत्साह रूपी पक्षी पुन: पंख खोलकर उडना चाहता है। इस प्रकार उस इन्द्रधनुष के सामने खड़े होकर कवि ने स्वयं एक इन्द्रधनुष बनना चाहा। कवि का हृदय और आत्मा दोनों विश्वव्यापी चेतना और उस चेतना के सौन्दर्य की निकटता को प्राप्त करते गये। छायावाद-रहस्यवाद की इस गति में वर्षा-लक्ष्मी ने कवि को एक और भावात्मक गीत गाने का अवसर दे दिया। कवि स्वयं बादल बना और सविता के सम्मुख खड़ा हो गया। 'मेघगीत' की रचना हो गयी!

'जी' की आत्मा प्राकृतिक दृश्यों की अलौकिक सुन्दरता में स्वयं तल्लीन हो जानेवाली है। प्रकृति के प्रति श्रद्धा-भक्ति ही उसे सत्यान्वेषक के रूप में आगे ले चली थी। उसी सत्यान्वेषणोत्सुकता ने कवि को नित्यता, 'निमिष' और 'काल' आदि उपाधियों में से ले जाकर अंत में 'विश्वदर्शन' तक पहुँचा दिया है। 'जी' की प्रकृति का **अंग–प्रत्यंग** मधुर है। उषा सन्ध्या दोनों ने 'जी' की काव्य कल्पना को **चरमोत्कर्ष** पर लाकर खड़ा कर दिया है। उषा को कवि प्यार करता था और उषा कवि को भी प्यार करती थी। शैशव में बालक कुरूप को एक आँख देखे बिना वह नहीं जाती थी —

"उन दिनों, जब उषा पड़ोसिन के रूप में सवेरे उठकर अपने काम पर ससंभ्रम जाती थी, तब मेरे घर के सामने आकर खड़ी होती और

उषा को
कवि प्यार करता था
और उषा
कवि को भी
प्यार करती थी।
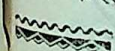
यदि मैंने तुझे ममत्व की डोरी से कसकर बाँधा और दुख दिया, मुझे क्षमा कर दे।

अपने सुन्दर कर को मेरी ओर बढ़ाकर ही जाती।" प्रकृति उषा रूप में कुमार के प्रति असीम वात्सल्य अर्पित करती थी। वस्तुत: यह ममत्व–सम्बन्ध कौमार दशा में सघन आस्था को प्राप्त करेगा। धीरे–धीरे युवावस्था में प्रवेश कर पाने पर प्रकृति के प्रति ममत्व में ढीलापन आने लगता है। कवि कुरुप को भी यही अनुभव हुआ। इसपर कवि को अपार व्यथा लगती है। वे उषा से फिर एक बार पूछते हैं –

"प्रिये, तुझे उठा लेने की इच्छा इस अपार विश्व में जिसे नहीं होती, ऐसा कोई नहीं मिलेगा। अम्बर को भी देखो, चन्द्रमा को नीचे रखकर मुस्कुराते हुए झुककर खड़ा है। कनक धूप अपनी नन्हीं-नन्हीं अंगुलियों से तेरे ललाट को मधुर सहला लेती है। मल्लिका-लता अपने बिकसित पुष्पों को हँसाते हुए मृदुल डाली का कर बढ़ाये रहती है। यदि मैंने तुझे ममत्व की

डोरी से कसकर बाँधा और दुख दिया, तो मुझे क्षमा कर दे ।

'जी' प्रकृति–प्रेम से तरलित कवि हैं । कहा जा चुका है कि उनका प्रकृति के प्रति ममत्व बचपन से था । बाद में कवि को उस प्रकृति के साथ एक विराट चेतन शक्ति का आभास हुआ । इस भावना के साथ कवि में रहस्यात्मक भावों का उदय हुआ । इस प्रकार 'जी' की आगे की कविताओं में आध्यात्मिक- दार्शनिक विचारों का आधिक्य होने लगा । शुद्ध एकांत प्रकृति के नाना रूपों को देखकर भी 'जी' की कल्पना में उस प्रकृति के परे के परम तत्व को जानने- की प्रवृत्ति है । प्रस्तुत आध्यात्मिक– दार्शनिक चिन्ताएँ 'जी के मानव प्रेम के हेतु रूप में अभिव्यक्त होती हैं । प्रकृति और मानव दोनों का यह प्रेम 'जी' की कविताओं में घुल मिलकर रहता है । प्रकृत्युपासक कवि कुरुप ने मनुष्य को भूलकर— मनुष्य के अलावा— कुछ नहीं गाया है । शंकर कुरुप ने अनेक बार नक्षत्रों और सागर के बारे में काव्य रचे हैं । लेकिन, उन्होंने वे काव्य नक्षत्रों और सागर केलिए नहीं रचे, बल्कि अपने लिए और हमारेलिए रचे । प्रकृति के जितने दर्शनीय विष उन सबके बारे में उन्होंने कवि रची है । 'जी' सौन्दर्योपा हैं । प्रकृति सौन्दर्य-धाम है इसलिए वे वर्षा और वसन्त विशिष्ट गुणों को देखकर आन विस्तृत हो जाते थे, बाल्यावस्था में युवावस्था में वही सौन्दर्योपास कवि को नवीन उन्मेषकारी भा को प्रदान करती थी । प्रकृति और मानव जीवन दोनों एक मनु व्यक्ति के हृदय में सन्दर्भ के वैवि से प्रतिबिम्बित विभिन्न अनुभ को सृष्टि करते हैं । सन्ध्या और सांध्य तारा दोनों ने व्यक्ति की भावना को कितनी बार स्पन्दित नहीं किया है ? अब कित नूतन भावों की सृष्टि वे नहीं करते प्रकृति के सौन्दर्य में सन्ध्या ने 'जी' को सर्वाधिक आकर्षित किया है सन्ध्या की छवि की स्मृति में उनकी कल्पनाएँ प्रफुल्लित हो जाती हैं नूतन भावनाएँ पंख खोलकर उड़ चाहती हैं ।

(क्रमशः)

नवाबों की नगरी की यादें

डॉ० एन. ई. विश्वनाथ अय्यर

मेरे एक मित्र कभी कभी व्यंग्य के लहजे में मार्के की बात सुनाया करते हैं। उनकी एक बात मुझे बारंबार याद आती है—'दुःख-दर्द के विषय में सभी समाजवादी हैं।' कोई ऐसा नहीं मिलेगा जिसे जाहिर या छिपा दुःख महसूस नहीं होता। दुःख की

डा० एन. ई. विश्वनाथ अय्यर

रजनी को हम इसी आशा से झेलते व काटते हैं कि सुख का सबेरा आयगा। यों अपने कष्ट-सहन और साधना का परिणाम किसी सुखद प्रसंग में जब होता है तब हमें धन्यता अनुभव होती है।

हिन्दी मेरे जीवन का अभिन्न अंग हो गई है। चालीस वर्ष पहले प्रारंभ हुई हिन्दी सेवा के कई कदम मैंने पार किये हैं। इस लंबे अरसे में हिन्दी के उत्सव मेरे लिए जीवन के असुलभ उत्सव रहे हैं। ये व्यावहारिक जीवन की मेरी मूर्खताओं-व्यथाओं को भुलाने के मौके साबित हुए हैं। ऐसे उत्सवों में सबसे नया है लखनऊ का सातवाँ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्यकार-संम्मान समारोह। यह 1987 सितंबर 14 को हिन्दी दिवस पर लखनऊ में आयोजित हुआ था।

यात्रा के साधन के रूप में भारतीय रेल महान सेवा करती आ रही है। वही स्टेशन हैं। डिब्बे कुछ नयों के बाद बदले हैं। कोयले के एंजिन की जगह डीजल एंजिन आ गये हैं। यह फर्क भी हम भूल से गये हैं। फिर भी हर यात्रा में कुछ नया अनुभव होता है। पुरानी यादें ताज़ी हो उठती हैं।

हरिद्वार के गुप्ताजी 'मद्रासी होटल' बोर्ड लगाके इड्डुली सांभर' देने की घोषणा, करके हमें जो खिलाते हैं वह मद्रासी को सिर्फ नामधारी लगता है ।

कोचिन-गोरखपुर एकसप्रेस से अब केरलवासी सीधे लखनऊ पहुँच सकते हैं। इसी में मैं भी सफर कर रहा था। कोचिन से ही मुझे कुछ किशोर सहयात्री मिले जो एन. सी. सी. शिबिर में भाग लेकर घर लौट रहे थे। स्कूली छात्र आगरा, अलीगढ़, मुरादाबाद, बरैली आदि उत्तरप्रदेशीय नगरों से केरल में 'तलयोलप्परंपु' नामक छोटे शहर में अखिल भारतीय एन. सी. सी. शिबिर में भाग लेने आयेथे। किशोरी के कोमल मन में भारत की एकता का भाव जमाने का कितना अच्छा उपाय था ! लडके खुशी से अपने अभनुव सुना रहे थे। किसी वर्ष गढवाल जैसे पहाडी स्थान पर शिबिर लगता, किसी वर्ष समुद्रतट के स्थान पर। बच्चों को एक ही शिकायत थी कि खाने केलिए अच्छी रोटी व दाल नहीं मिल रहे थे। खान-पान के फरक की यह समस्या ज़रूर है। केरल के गाँवों में बडी कोशिश करने पर भी किसी उत्तर भारतीय नगर के परिवार में जैसी चिकनी रोटी या फुलके बनते हैं वैसे बनाना बडा कठिन होता है। उसी तरह हरिद्वार के गुप्ताजी 'मद्रासी होटल' बोर्ड लगाके 'इड्डुली सांभर' देने की घोषणा करके हमें जो खिलाते हैं वह मद्रासी को सिर्फ नामधारी लगता है। दोनों जगह अपनी अपनी सीमाएँ, विवशताएँ हैं।

हर लंबी रेलयात्रा में दिखाई देने वाली कुछ बातें उल्लेखनीय हैं। एक है नगरीकरण। दूसरी है औद्योगीकरण की प्रक्रिया। तीसरी है नगरों में झोंपड-पट्टियों और गंदगी की बढती। चौथी है अधिकांश गावों की अपरिर्वातित स्थिति। पाँचवीं है दीन-हीन, लोगों का नज़ारा। दीनों के बीच में आवारा भी होते हैं। जब सीधा रास्ता मुश्किल निकलता है तब कुछ लडके व जवान हाथ की सफ़ाई से जिंदगी को सुखमय बना लेते हैं। इसका विशाल व भीषण रूप रेल के डाके में मिलता है। इधर एक नया संकट बढता रहा है। वह है पर्यावरण-प्रदूषण। किसी-

किसी स्थान पर गाडी के पहुँचते पहुँचते तेज़ बू नथुनों को फाडती है। आप कह सकते हैं कि कोई कारखाना नज़दीक है। जैसे—बल्हारशाह स्टेशन से आगे बढते ही वहाँ के कागज़-मिल से निकलते गंदे विषैले पानी की बू आप के सिर को भन्नाने लगती है। लगता है कि इसका ठीक उपचार नहीं हो पा रहा है। यों विजयवाडा स्टेशन के पास पहुँचते पहुँचते आप को गरीबों की

बल्हारशाह स्टेशन से
आगे बढते ही
वहाँ के कागज़ मिल से निकलते
गंदे विषैले पानी की बू
आप के सिर को
भन्नाने लगती है।

झोंपड-पट्टियाँ मिलती हैं—जो मेरी याद में बीसों वर्षों से वहीं बनी हैं।

नागपुर के संतरे अब सियार के खट्टे अंगूर हो गये हैं क्योंकि पहले जिस रकम से पूरी टोकरी ली जा सकती थी वहाँ अब मुश्किल से पाँच संतरे ख़रीदे जा सकते हैं। नागपुर स्टेशन का दर्शन करता हूँ तो वहाँ वर्षों पहले आयोजित प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन की मधुर स्मृति आती है। उस महासम्मेलन के मञ्च से महीयसी महादेवी ने जो उज्ज्वल भाषण दिया था वह अब भी नहीं भूलता। यों बीना जंकशन जब नज़र आता है तब अपनी सागर-यात्रा और सागर-प्रवास की स्मृति बरबस आती है। सागर विश्वविद्यालय के महामानव आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी का मंदहासपूर्ण मुखमंडल स्मरण आता है। उन्होंने इस सीपी में हिन्दी साहित्य-साधना का स्वातिजल भरके मोती बनाया था। वह मोती घाटिया निकला तो दोष सीपी का है।

अब की यात्रा में झाँसी तक मन प्राय: नदी के लट्ठ की तरह बहता रहा क्योंकि यह चक्कर कितनी ही बार लग चुका। मगर झाँसी स्टेशन आने पर मन सजग हो उठा। झाँसी भारतीय रेलवे का एक बडा जंकशन है। उत्तरी दिशा में दिल्ली की ओर और पूर्वी दिशा में कानपुर से होकर जानेवाली सारी गाडियाँ इसी जंक़शन से गुज़रती हैं। इसीलिए स्टेशन काफी बडा है, इन्तज़ाम भी खराब नहीं है।

"झाँसी" नाम भारत के बच्चे-बच्चे को पुलकित करता है। यहाँ पहले एक रियासत थी और इसकी

रानी लक्ष्मीबाई ने सन् सतावन के स्वतंत्रता-संग्राम का नेतृत्व किया था। मुश्किल से अठारह वर्ष पार किये हुए उस वीर वनिता ने अंग्रेज़ों के छक्के छुडाये थे। मगर सुखेच्छु कायरों की वजह से वह संग्राम असफल रहा। लक्ष्मीबाई और साथी वीरों की सहादत अगले स्वतंत्रता-संग्राम की प्रेरक शक्ति तो बन सकी। झांसी की रानी का वह दुर्ग या दुर्ग का अवशेष अब पर्यटकों का आकर्षण केंद्र बना है।

झांसी से कानपुर की तरफ़ जब बढते हैं तब प्रथम भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम के विभिन्न दृश्य आपके मनोमुकुर में अंकित होते हैं। कालपी और तांत्या तोपे नगर इसी मार्ग में हैं। कालपी पर स्वतंत्रता-सेनानी और अंग्रेज़ सैनिक भिड पडे थे। ताँत्या तोपे लक्ष्मीबाई के विश्वास-पात्र वीर थे। झाँसी के तुरंत बाद तो चिरगाँव स्टेशन आता है। यह स्टेशन ज़रूर छोटा है, इस स्थान ने हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में अमर यश पाया है। इसी गाँव ने गुप्तबंधुओं को मैथिलीशरण गुप्त और सियाराम शरण गुप्त—जन्म दिया था। उनसे मिलने केलिए हिन्दी की कितनी ही विभूतियाँ चिरगाँव आती थीं। अब वे दोनों नहीं रहे। राजकीय सम्मान का प्रतीक स्मारक बना है। कई वर्ष बाद इस स्मारक को देखने-वाले इतना ही समझेंगे कि हिन्दी के कोई कवि थे। उन्हें क्या मालूम कि यहाँ स्वाधीनता संग्राम के दिनों में हिन्दी की राष्ट्रीय कविता और खडीबोली काव्य के आंदोलन के दिनों में विविध काव्यरूप रचकर धन्यता पाये हुए महान कवि ही मैथिलीशरण गुप्त हैं।

आगे उन्नाव का छोटा जंकशन आता है। उन्नाव से महाकवि निराला का संबन्ध रहा था। मेरे गुरुवर आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी जी का जन्मस्थान उन्नाव जिले में था। अब भी उन्नाव का गौरव रखते हुए यहाँ के कुछ साहित्य-प्रेमी अपनी पत्रिका "अनुमेहा" चला रहे हैं।

इन सभी स्टेशनों की एक सामान्य विशेषता रही है। स्टेशन के छूटते ही रेलगाडी प्रकृति की हरी गोद में पहुँचती है। दोनों तरफ लहलहाते खेत आँखों को शीतलता देते हैं—भारत के नगरों की सर्व-नाशकारी प्रवृत्ति के बावजूद अन्न समस्या का सुगम समाधान प्रस्तुत कर रहे हैं।

इस पथ का एक विख्यात स्टेशन कानपुर है । कानपुर नाम सुनकर बड़े शहरों के भाई बहनों को कानपुर के चमड़े के बक्से और चप्पलें याद आती हैं । हिन्दी के प्रेमियों को कानपुर हिन्दी के साधकों की पुण्यभूमि है । 'प्रताप' के संपादक और राष्ट्रसेवक गणेश शंकर विद्यार्थी इसी नगर में पत्रिका चलाते थे और यहीं पर अपनी इच्छा से शहादत का वरण किया । यहाँ कई कविसमाज थे । आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी भी कुछ वर्ष यहाँ थे । अब तो कानपुर औद्योगिकीकरण का प्रमुख प्रतीक हो चुका है । कानपुर के कारखानों की लंबी लंबी चिमनियाँ और उनसे निकलते धुए के बादल आप का स्वागत करते हैं । इन कारखानो के पुर्जों की तरह हजारों लोग यहाँ बसे हैं । उनमें पोष-बंगलों के निवासी हैं, मध्यम वर्ग के लोग हैं, एक रूम फ्लैटवाले हैं, झोंपडी-झुग्गी के निवासी भी हैं । यहाँ मशीनों के धुएँ से आकाश प्रदूषित रहता है । फैक्टरियों का प्रदूषित जल बाहर निकलकर गंगा में मिलता है । इससे बहुत खतरनाक स्वास्थ्य-समस्या बनी हुई है । प्रदूषण को दूर करने का प्रयत्न भी चलता है । इस नगर का सार्वजनिक मनोरंजन यहाँ के फिल्म-थियेटर कराते हैं । कानपुर का अपना विश्वविद्यालय है । यहाँ का भारत-प्रौद्योगिकी संस्थान अपने में निराली संस्था है जहाँ भारत के कोने कोने से छात्र प्रवेश लेते हैं ।

कानपुर के बाद फिर वहाँ कृषक क्षेत्र ! अच्छे से अच्छे खेत ! वैसे लखनऊ मन में जोर से समाया था जिससे रास्ते के अन्य स्थानों पर मन नहीं रम रहा था ! होते होते लखनऊ भी आ गया और हम अपने चिरप्रतीक्षित स्टेशन पर मित्रों के दर्शन कर सके ।

"लखनऊ" का प्रयोग भाषा-वैज्ञानिक ध्वनि विपर्यय के उदाहरण में देते हैं और कहते हैं कि कुछ लोग इसका उच्चारण 'नखलऊ' करते हैं । संस्कृत की व्युत्पत्ति के अनुसार लखनऊ लक्ष्मणपुरी है । अयोध्या रामपुरी है ! मगर पुराणों का अन्य कोई प्रमाण नहीं बचा है । लखनऊ का ठोस इतिहास मुगल काल के अंतिम दिनों का इतिहास है । अंग्रेज़ कंपनी ने मुगल बादशाहत की आखिरी लौ के दिनों में लखनऊ को अपनी कठपुतली बनाये रखने के वास्ते नवाब स आदतखाँ को सुबेदार

की उपाधि देकर 1732 ई०में लखनऊ की गद्दी पर बिठाया। कंपनी का इरादा था कि हमेशा केलिए हमारा शासन बना रहेगा। मगर नवाब स आदतखाँ के पौत्र शुजा-उ-दौला ने बंगाल के मिर कासिम से मित्रता कर अंग्रेज कंपनी से संघर्ष किया। अंग्रेज़ अधिक सशक्त थे और उनके पास तोप-बारूद की ताकत थी। इसलिए शुजा-उ-दौला अपने नगर में एक ब्रिटीश रेजिडेंट को स्वीकार करने मजबूर हो गये।

आगे आसफ-उ-दौला का ज़माना आया। अंग्रेज़ों के प्रति श्रद्धालु इतिहासकारों ने आसफ.उ-दौला को सुखभोग का प्रेमी एवं शासन के अयोग्य बनाया है। लेकिन आज जो लखनऊ है वह आसफ-उ-दौला की प्रतिभा का स्मारक है। यही नहीं उन्होंने उर्दू साहित्य के इतिहास में लखनऊ के योगदान को अमर बना डाला। दिल्ली के बादशाह जब सल्तनत से वंचित हुए और दिल्ली पर नादिरशाह आदि का आक्रमण हुआ तब दिल्लीवासी उर्दू कवि निराश्रय हो गये। उनमें से कई शायरों और कुछ राजवंशजों तक ने लखनऊ के आसफ-उ-दौला की शरण ली। आसफ-उ-दौला को शायरी व संगीत-नृत्त का शौक़ [था।] इसके अलावा वे विरासत में मि[ली] संपत्ति से लखनऊ नगर की सद[ा] बढाने और नये नये भवन बनवा[ने] में लगे। उनके बनाये भवनों में [स]से नामी 'बड इमामबाडा' है [जो] अब भी लखनऊ आनेवालों का [बड़ा] आकर्षण बना हुआ है।

आगे और कई नवाब हु[ए।] अंतिम नवाब वाजिद अली [शाह] थे। ये इस हालत में पहुँच गये [थे] कि अंग्रेज़ सत्ता का सामना न[हीं] कर सके। इनके पास संपत्ति थी। अतएव वाजिद अली शाह ने अप[नी] ज़िन्दगी में सारा मौज पाना चाहा। वे दिनरात सुरा व सुन्दरी के सा[थ] रहे। गायकों-नर्तकों से उन्हों[ने] राजनीतिक परामर्श तक कि[या] जिससे राज्य की बरबादी ही [हो] सकती थी। लखनऊ नगर का [एक] मुहल्ला कैसरबाग वाजिद अली शा[ह] की रंगरेलियो का स्मरण करा[ता] है। कैसरबाग में छोटे छोटे मका[नों] की कतार मिलती है। कहा जा[ता] है कि यहाँ सैकडों की संख्या [में] युवतियाँ रहती थीं जिनसे वाजि[द] अली शाह जवानी का शुतुत्फ उठा[ते] थे। यह भी कहते हैं कि शाह प्रति[] वर्ष एक उत्सव मनाते थे जिसमें []

उन्हें अपनी सुखभोग की अनबुझी प्यास की भारी कीमत चुकानी पडी ।

स्वयं श्रीकृष्ण बनते—उनकी बेगमें, चहेतियाँ आदि बडी संख्या में गोपियाँ बनतीं । गीत, नृत्य और रासलीला चलती । वाजिद अली शाह ने जीवन के अंतिम दिनों में प्रायश्चित्त करना चाहा । उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के कर्णधारों से मिलकर अंग्रेजों को भगाना चाहा । मगर उनकी योजना को पहले ही ताडकर वेल्लेसली ने उनके राज्य औध को ब्रिटिश भारत में मिला लिया । नवाब और वंशजों को पेंशन दिया गया । वाजिद अली शाह ने आखिरी उपाय के रूप में इंग्लैंड जाकर महारानी विक्टोरिया से कंपनी की शिकायत करनी चाही । मगर वे अंतिम दिन कलकत्ते में बिताने केलिए मजबूर हुए । उन्हें अपनी सुखभोग की अनबुझी प्यास की भारी कीमत चुकानी पडी ।

लखनऊ के नवाबों और उनके दरबारों की याद दिलानेवाले कुछ दृश्य अब हमें सिर्फ फिल्मों में मिलते हैं । कोई सारंगी बजाता है, कोई तबले पर उँगलियाँ चलाता है । बीच में खडी खूबसूरत नर्तकी पैरों पर पायल, बदन पर चुस्त कपडे और लहराता दुपट्टा धारे नाचती जाती है । नाच से बढकर मोहक अदाओं से हर दर्शक के दिल को घायल करती है । मसनद के सहारे बैठे हुक्का पीते नवाब और उनके दोनों तरफ़ बैठे दरबारीगण नर्तकी की वाहवाही करते हैं, अशर्फियाँ, कपडे बहुत कुछ उसकी तरफ़ फेंकते हैं । बदले में नर्तकी सिर झुका झुकाकर आदाब बजाती है । यह कत्थक नृत्य का दरबारी रूप रहा । कत्थक नृत्य का विकास अब किया गया है । उस में शृंगारेतर काव्यमय प्रसंगों का प्रस्तुतीकरण अब होता है । अनेक नगरों में कत्थक-केन्द्र बने हैं । मोहक अदाएँ, ताल, तनकार और द्रुतगति कत्थक की विशेषताएँ हैं ।

नवाबों की नज़ाकत और स्वाभिमान की याद अब केवल कहानियों में रह गयी है । चतुरसेन शास्त्री की 'ककडी की कीमत' उल्लेखनीय है । प्रेमचंद की 'शतरंज के खिलाडी' उस दुर्दशा का स्मरण कराती है जिसमें वीर अपने बादशाह को कंपनी द्वारा कैदी बनाते देखकर चुप

रहे और शतरंज के बादशाहों के पीछे परस्पर तलवार चलाई । लखनऊ की नजाकत का एक निशान अब भी बचा है। वह है लखनऊ का चिकन-कुर्ता, चिकन साडियाँ। चिकन के बेलबूटों से सजे महीन कपडे के कुर्ते पहनकर आप बाँके जवान बन सकते हैं । चिकन-साडियाँ जोबन की लहर को और लहराती हैं। बीती जवानी को फिर लाने में मदद करने का लोभ भी देती हैं । किशोर-किशोरियाँ तो

चिकन के बेलबूटों से सजे महीन कपडे के कुर्ते पहनकर आप बाँके जवान बन सकते हैं।

चिकन-कपडों में चुस्त नजर आती हैं। आप नवाब नहीं बन सके न सही चिकन-कुर्ता व पाजामा पहनकर नवाबज़ादा बन सकते हैं। नवाबी ज़माने की याद दिलानेवाला तकल्लुफ़ अब भी लखनऊ में मिलेगा। यहाँ के मामूली लोग भी आप से बातें करते हुए ऊर्दू के प्यारे शब्दों का प्रयोग करते हैं--तशरीफ़ लाइए, आदाब, फ़रमाइए आदि।

आसफ-उ-दौला के बनवाये इमामबाडे की चर्चा पहले हो चुकी। लखनऊ के ये इमामबाडे मुगल स्थापत्यकला के अनमोल नमूने... बादशाहों की धार्मिक श्रद्धा के... 'इमामबाडा' का मतलब है प्रार्थ... स्थान जिसे शिया-मुसलमानों... मुहर्रम मनाने के उपलक्ष में प्रचलि... किया। बिना अधिक खंभों... विशाल कक्ष-मेहराब, गुंबद आ... पुरानी वास्तुकला के अजीब नमू... हैं। कहते हैं कि उन दिनों लखन... में बडा अकाल पडा था और ... अकाल में लोगों को नौकरी से म... करने केलिए इसका निर्माण करा... गया। पहले धनी रहे हुए अने... नागरिक तक अकाल में बडे गरी... हुए थे। वे भी इमामबाडे के निर्मा... में भाग लेते थे। कहा जाता है... इसके हिस्से पहले बनाये जाते, फि... तोडे जाते, फिर से बनाये जा... ताकि अधिक से अधिक मजदूरी ... जा सके। जो भी हो, इमामबाड़ा... शाही दौलत का निशान तो है ही... साथ ही वह जनता की भीष... दरिद्रता का भी स्मरण कराता है।

इमामबाडे के मध्य के कमरे... आसफ़-उ-दौला का मकबरा है... चाँदी के घेरे से सजा है और उ... मखमली चादर तनी है। शा... नवाब की सोने के तारों की प... रखी है। यह दृश्य एक तरफ़ नवा...

इसमें कमरों दीवारों और कमरों में प्रवेश करने की ड्योढियों का निर्माण ऐसा किया गया है कि आप पथ-प्रदर्शकों की सहायता के बिना उनमें आसानी से प्रवेश करके वापस आ नहीं सकते ।

शान की याद दिलाता है साथ ही यह भी बताता है कि नवाब का भी अंत मकबरे में होता है । इमामबाडे का सबसे बडा आकर्षण वहाँ का भूल भुलैया है । भूलभुलैया मुगल काल की अनोखी इंजनीयरिंग-कला है जिसकी प्रविधि कुछ रहस्य-भरी है । इसमें कमरों, दीवारों और कमरों में प्रवेश करने की ड्योढियों का निर्माण ऐसा किया गया है कि आप पथ-प्रदर्शकों की सहायता के बिना उनमें आसानी से प्रवेश करके वापस आ नहीं सकते । आप की फुसफुसाहट तक दूसरी दिशा में खडे आदमी को सुनाई देती है । यह विशेष प्रविधि दुश्मनों से बचने और जासूसी करने आये लोगों को फँसाने के लिए स्वीकार की गयी होगी ।

अगर लखनऊ पहले नवाबों का शहर था तो अब वह विधायकों का नगर है । यह विशाल उत्तर प्रदेश की राजधानी है । माननीय राज्यपाल, मंत्रीगण, विधायक, सचिवालय आदि सरकारी तंत्र यहीं हैं । बढती नागरिकता के चिह्नों के साथ शासन की शान बढाने के लिए बनती बहुमंजिली अट्टालिकाओं की संख्या भी बढती जा रही है । अंग्रेज सरकार के दिनों में अंग्रेजों के नाम याद करानेवाली सडकें, भवन आदि बने । लखनऊ विश्वविद्यालय इसका नमूना है । अंग्रेज सरकार से संघर्ष करनेवाले शहीदों की एक भव्य स्मारक इस नगर की शान बढाता है । पुरानी और नयी वास्तुकला का समन्वय और तुलना करानेवाले चार पुल इस नगर में हैं, जिनमें 'लौह पुल' पुरानी इंजिनीयरी का निशान है ।

उत्तर प्रदेश की राजधानी होने के नाते लखनऊ हिन्दी भाषा व साहित्य को प्रश्रय देनेवाला सरकारी केन्द्र बना हुआ है । हिन्दी के संरक्षण एवं विकास के लिए उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान यहीं स्थापित है । वह राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन के नाम पर स्थापित हिन्दी भवन में कार्य कर रहा है । पुरुषोत्तमदास टंडन नई पीढी के लिए कम परिचित होंगे । पुरानी पीढी के बहुत लोग पूर्वाग्रह

से उनका मूल्यांकन करते हैं। टंडन जी देश की राष्ट्रभाषा हिन्दी के लिए समर्पित थे। देशप्रेम की साधना उनका जीवनव्रत थी। वे भारतीय संस्कृति की वाहिनी के रूप में हिन्दी का विकास करने के पक्ष में थे। उन्हीं के प्रयत्न से हिन्दी साहित्य सम्मेलन जैसी संस्थाएँ स्थापित हो सकीं। टंडनजी गांधीजी के बड़े प्रिय थे। मगर 'हिन्दुस्तानी' केलिए जब गांधीजी ज़ोर देने लगे तब टंडनजी उनसे स्पष्ट असहमत हुए। गांधीजी चाहते थे कि हिन्दू और मुसलमान दोनों हिन्दुस्तानी के ज़रिये एक हो जावें और उन्हें फारसी या नागरी लिपि चुनने की आज़ादी दी जाय। टंडनजी का दृढ मत था कि इस तरह उर्दूवालों को खुश करना असंभव है। भारत के आज़ाद होने पर उर्दू पाकिस्तान की भाषा हो गई। यहाँ भी उर्दू का दावा पहले से बढ रहा है। यह देश की एकता के लिए हानिकारक है।

हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग में लखनऊ का योगदान भी उल्लेखनीय है। प्राचीन परंपरा के दुलारेलाल भार्गव ने यहीं पर दुलारे दोहावली रची थी। यहीं "गंगा-ग्रंथागार" था जिसने वृन्दावनलाल वर्मा के ऐतिहासिक उपन्यास प्रकाशित किये थे। प्रेमचन्दजी यहीं से प्रकाशित 'माधुरी' में कहानियां लिखते थे। 'माधुरी' में उनकी लिखी "मोटेराम शास्त्री की कहानी" अदालत तक पहुँच गई। 'चित्रलेखा' उपन्यास के रचयिता और छायावादी युग के कवि भगवतीचरण वर्मा यहीं थे। केरल-वालों के प्रिय कथाकार यशपाल लखनऊ में रहे थे। बुजुर्ग लेखकों में श्री. अमृतलाल नागर लखनऊ की शोभा बढा रहे हैं। लगता है कि लखनऊ की मस्ती नागरजी में समाई है। 'नई कविता' धारा के कवि श्री. कुंवरनारायण यहीं हैं। और भी कितने ही कवि, कथाकार हैं, जिनका विस्तृत परिचय स्वतंत्र लेख माँगता है।

हिन्दी साहित्य के समीक्षात्मक पक्ष को लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग का योगदान प्रशंसनीय रहा है। व्रजभाषा मथुरा-वृन्दावन की ज़रूर है। फिर भी व्रजभाषा-वाङ्मय का मूल्यांकन, व्रजभाषा-कोश का प्रकाशन आदि कार्य लखनऊ के डॉ० दीनदयालु गुप्त, डॉ० प्रेमनारायण टंडन और अन्य विद्वानों ने ही पहले किया। जब उत्तर प्रदेश में सिर्फ दो चार

विश्वविद्यालय थे तब इसी विश्व-विद्यालय ने मध्यकालीन काव्य में खूब अनुसंधान कराया। यहाँ आधुनिक साहित्य के विशेषज्ञ भी हुए। केरल के कई मित्रों ने इसी विश्व-विद्यालय से हिन्दी में एम. ए. और पी.एच डी की उपाधि ली है। यों जो नगर हिन्दी साहित्य की रंगस्थली था वह अब प्रकाशन में एकदम पिछड गया है। इलाहाबाद और दिल्ली प्रकाशन में नेतृत्व कर रहे हैं। लखनऊ में सरकार की हिन्दी समिति और अन्य विभागों के प्रकाशन ही छपते हैं! काश! लखनऊ फिर से चमक उठता!

नवाबी नगर की यादों में सबसे महत्वपूर्ण तो सितंबर 14 के भारत भारती सम्मान समारोह क याद है। उत्तर प्रदेश सरकार इधर कुछ वर्षों से प्रतिवर्ष विशिष्ट साहित्य-कारों को पुरस्कारों से सम्मानित करती है। पिछले दो तीन वर्षों में यह रुक गया था। अतएव इस वर्ष तीनों वर्षों के पुरस्कार एकसाथ विराट समारोह में दिये गये। पुरस्कार-समारोह का आनंद-उल्लास महान कवयित्री महादेवी के दुःखद निधन से कुछ मंद पड गया था। हाँ, महादेवीजी की अस्सी वर्ष की

पुरस्कार-समारोह का आनंद-उल्लास महान कवयित्री महादेवी के दुःखद निधन से कुछ मंद पड गया था।

अवस्था, दिनों से उनकी रुग्णता आदि के कारण मृत्यु अप्रत्याशित दुर्घटना नहीं रही। संम्मान-समारोह के अवसर पर मनोरंजन का कार्य-क्रम छोड दिया गया। शांत गंभीर वातावरण में सारा कार्यक्रम चला।

इस सम्मान-समारोह की सब से बडी विशेषता मुख्य अतिथि का व्यक्तित्व थी। जीवन के पंचानवे वसंत पार किये हुए श्री. श्रीनारायण चतुर्वेदी ही मुख्य अतिथि थे। 'सरस्सती' के संपादक, ललित निबंधकार, हिन्दी के प्रबल समर्थक आदि विविध रूपों में चतुर्वेदीजी यशस्वी हैं। उनके करकमलों से पुरस्कार का ग्रहण कुलगुरु के हाथ से शिष्यों के अशीर्वाद- ग्रहण की तरह आनंददायी रहा। सम्मानित करने की भारतीय प्रविधि भी हृदय को पुलकित कर रही थी।

कई प्रकार के पुरस्कार थे। सब से बडा व्यक्तिगत सम्मान डा० रामकुमार वर्मा और अज्ञेय

अज्ञेय का पुरस्कार इला वात्स्यायन ने भींगी आँखों से स्वीकार किया ।

को दिया गया । अज्ञेय का पुरस्कार इला वात्स्यायन ने भींगी आँखों से स्वीकार किया । आठ वरिष्ठ साहित्यकार पुरस्कृत हुए जिन में विष्ण प्रभाकर, उपेन्द्रनाथ अश्क, जानकीवल्लभ शास्त्री, कन्है या लाल मिश्र प्रभाकर, अमृतराय आदि थे । इसके बाद 'सौहार्द पुरस्कार' से दस व्यक्ति सम्मानित हुए । इन में केरल से दो व्यक्ति थे "युगप्रभात" के संस्थापक संपादक और मलयालम के प्रशस्त साहित्यकार एन. वी. कृष्णवारियर और मैं । इसके बाद कई ग्रंथों पर नामित पुरस्कार दिये गये । नामित इस मतलब से कि ये पुरस्कार हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकारों के नामों से जुडे थे । यह पुरस्कार पानेवाले करीब पच्चीस-तीस थे । इनमें बुजुर्ग थे, युवक भी । इनके अलावा अनेक पुस्तकों को सामान्य पुरस्कार की घोषणा की गई ।

साहित्यकारों को सरकार द्वारा सम्मानित करने के विषय में मतभेद हो सकता है । कुछ लोग इसे लेखकों को सस्ता खरीदने का उपाय बताते हैं । जो साहित्य के क्षेत्र में अपने योगदान से उच्चतम पद पर पहुँच चुके उन केलिए यह सम्मान खास प्रेरणादायक नहीं होता । मगर सृजन-सुख के अलावा अभिनन्दन का सुख भी साहित्यकार केलिए प्रिय होता है । जो बहुत ऊँचे नहीं हो सके उन्हें प्रेरणा मिलती है ।

सरकार अपने राज्य के कलाकारों व साहित्यकारों का सम्मान करे यह सरकार का कर्तव्य भी है ।

उनकी कृतियों की माँग बढती है । सरकार अपने राज्य के कलाकारों व साहित्यकारों का सम्मान करे यह सरकार का कर्तव्य भी है ।

जो भी हो, व्यक्तिगत रूप से मेरे मन में इस सम्मान-समारोह की मधुर स्मृति बनी रहेगी । इतनी बडी संख्या में हिन्दी साहित्य के साधकों के बीच में एक सुहावनी संध्या बिताने का लाभ प्रभु की कृपा ही मानता हूँ ।

दूरभाष : 61378

तार । "जय हिन्दी"

FREE पुष्प 22
दल 10

केरल ज्योति

सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका
जनवरी 1988

एक प्रति—1 रु० 50 पं०
वार्षिक—15 रु०
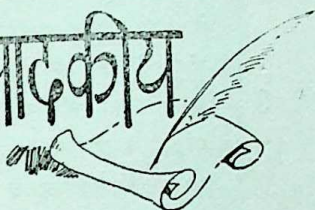
युवक चेतना जागरण का दिवस

स्वामी विवेकानन्द जयन्ती राष्ट्रीय युवक दिवस के रूप में मनाने का भारत सरकार का निर्णय अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस वर्ष उनका 125 वाँ जन्म दिवस भी मनाया जा रहा है। स्वामी विवेकानन्द ऐसे एक युवक थे जिन पर भारत वर्ष ही नहीं, समस्त संसार गर्व कर सकता है। ओजस्विता के वे पर्याय ही थे। उन की बुद्धि अत्यंत प्रखर थी और शरीर भी अतिशय आकर्षक और स्वस्थ था। विद्यार्थी जीवन में उन्होंने संस्कृत और अंग्रेजी पर अच्छा परिचय प्राप्त कर लिया जो आगे चल कर भारतीय दार्शनिक ग्रन्थों के स्वाध्याय व प्रवचन मे उन केलिए अत्यत सहायक सिद्ध हुआ। अन्वेषण बुद्धि इतनी तीव्र थी कि कक्षा में अंग्रेज प्रोफसर के मुँह से श्री रामकृष्ण परमहंस नामक साधु के बारे में सुनते ही उन्हें देखने और उन से भगवान के संबन्ध में पूछने की अदम्य जिज्ञासा जाग उठी। उन का पूर्वसस्कार इतना विशुद्ध था कि श्री रामकृष्ण के स्पर्शमात्र से वे पीयूषाप्लावित हो गये।

उन्नत ज्ञान पाकर भी वे मात्र आत्मविशुद्धि के कर्मों में लीन नहीं रहे। राष्ट्र मंगल और लोक मंगल ही उन के भाषणों और प्रयत्नों का लक्ष्य था। उन्होंन भारत भर में पर्यटन कर के जन जीवन का बारीकी से अध्ययन किया। समझा कि भारत की प्राचीन गरिमा क्या थी वर्तमान दुर्दशा के कारण क्या हैं और भविष्य को उज्ज्वल बनाने के उपाय क्या हैं। भारत की सोयी पडी लोकशक्ति को जगाने में और गुलामी से मुक्ति पाने केलिए जनता को उद्बुद्ध करने में स्वामी विवेकानन्द ने जो योगदान दिया वह चिर स्मरणीय रहेगा।

इस अंक में

स्वतंत्रता संग्राम के ... राष्ट्रीय अभियान ने तूल पकड़ा ... बीज सचमुच स्वामी विवेकानन्द ... था। कितने युवकों मे वे प्राण फूंक ... गुलाम भारत को उन्होंने किस ... साथ आध्यात्मिक जगत का ... स्थापित किया!

स्वतंत्रता संग्राम के समय नव... की जो लहर उठी वह स्वतंत्रता ... के साथ शायद थम गयी है। हमने ... कुंभकर्ण निद्रा आरंभ की है। ... संस्कृति की सुखसुविधाओं का ... पश्चिम के अंधानुकरण की प्रवृत्ति, ... स्वार्थ चिंतन आदि हमें देश की ... समस्याओं की ओर दृष्टिपात ... अवसर ही नहीं देते। हमारी युवा... के सामने कोई सुस्पष्ट लक्ष्य ... रहा। सर्वत्र कुंठा, संत्रास, मृत्युबोध ... बातें उठ रही हैं। युवा पीढ़ी ... दिशा दर्शन देना हमारा कर्तव्य है।

राष्ट्र युवक दिवस हमें ... विवेकानन्द के जीवन और आदर्शों ... ग्रहण करने का अवसर प्रदान ... विवेकानन्द साहित्य सर्वस्व स्वयं ... पढ़ने केलिए हम युवकों को प्रेरित ... विवेकवाणी के शंखनाद में मृत... शक्ति है जो घोर निद्रा से हमें जगा... है, अकर्मण्यता से कर्मण्यता की ... असत से सत की ओर, तम से ज्यो... ओर, मृत्यु से अमृत की ओर हमें ... सकती है। उन्हीं के स्वर में स्वर ... कर कहें :—

उत्तिष्ठत, जाग्रत, प्राप्य वरान् नि...

भाषाध्यापन को अधिक प्रमुखता दें

श्री. के. शंकर नारायण पिल्लै

[30-10-1987 को श्री. पी. जी. कामत अक्षयनिधि पुरस्कार वितरण समारोह में दिये गये भाषण का सारांश]

आर्थिक और कुछ अन्य कारणों से शिक्षा आज भी भारतीय जन-जीवन का प्रमुख अंग नहीं बन पायी है। केरल भारत के इतर प्रान्तों से साक्षरता में आगे है। यहाँ की साक्षरता का प्रतिशत सत्तर प्रतिशत है। इसलिए शैक्षिक कार्यों के प्रति केरल का समीपन इतर प्रान्तों के समीपन से भिन्न है। हिन्दी अध्ययन के संबन्ध में यही बात है।

हम ने त्रिभाषा सूत्र अपनाया है। लेकिन यह ठीक तरह से नहीं कार्यान्वित हो रहा है। तमिलनाड में द्विभाषा सूत्र बन रहा है। उत्तर प्रदेश में यह एकभाषा सूत्र में परिणत हो रहा है। भारत में भाषाध्यापन का संबन्ध केवल भाषा

तमिलनाड में द्विभाषा सूत्र बन रहा है। उत्तर प्रदेश में यह एक भाषा सूत्र में परिणत हो रहा है।

साहित्य या शिक्षा से ही नहीं। यहाँ भाषाध्यापन एक सामाजिक समस्या भी है।

भाषा भावों के संप्रेषण का माध्यम है। इस कारण भारत जैसे एक राष्ट्र में भाषा का प्रयोग कई प्रयोजनों केलिए करना होता है। सभी राष्ट्र स्तरीय परीक्षाओं के माध्यम की बात जब आती है तब

भाषा एक समस्या बन जाती है। कई ऐसे राष्ट्र स्तरीय शैक्षिक संस्थान हैं जो किसी किसी प्रान्त में स्थापित हो चुके हैं और अन्य प्रांतों में नहीं। ऐसे संस्थानों के अध्ययन का माध्यम भी एक समस्या है। भारत के सभी प्रान्तों का विकास समतुलित रूप से नहीं हो रहा है। इसलिए प्रान्त प्रान्त में रोज़गार के अवसरों में भिन्नता है। यह स्थिति भी भाषायी समस्या उत्पन्न करती है। इन सब के कारण भाषा कभी कभी देश में अशान्ति का कारण भी बन जाती है। भाषा के नाम पर नामपट्टों पर कालिक लगाये जाने और रेलवे स्टैशन को आग लगाने की घटनाएँ भी हमारे देश में हुई हैं। जहाँ अवसर कम और जन-संख्या ज़्यादा है वहाँ ऐसी घटनायें स्वाभाविक है।

शिक्षा में भाषाध्ययन का क्या स्थान होना चाहिए यह भी विवादास्पद है। स्कूली स्तर पर भाषाध्ययन का जो स्थान पहले था वह अब नहीं रहा। आज की परीक्षा प्रणाली ही कुछ ऐसी है कि उस में उत्तीर्ण होने केलिए भाषा पर पूर्ण अधिकार पाना आवश्यक नहीं है। अंग्रेज़ी माध्यम स्कूलों में अंग्रेज़ी ज्ञान की पूर्वापेक्षा की जाती है। लेकिन मातृ-भाषा के माध्यम में जिन स्कूलों में अध्ययन होता है उन स्कूलों में भाषा अध्यापन पर उतना ज़ोर नहीं दिया जाता। इस कारण पढ़े लिखे लोगों में अपनी भाषा विषय क्षमता का आत्म-विश्वास नहीं।

विद्यार्थियों में भावग्रहण और सुन्दर भावाभिव्यक्ति केलिए आवश्यक भाषा कौशल विकसित करना अध्यापकों का कर्तव्य है। केरल में हिन्दी प्रचार को बढावा देने केलिए श्री. एम. के. वेलायुधन नायर और केरल हिन्दी प्रचार सभा के अन्य कार्यकर्ता स्तुत्यर्ह कार्य कर रहे हैं।

हिन्दी अध्यापन में प्रशिक्षण पाने-वालों को प्रोत्साहित करने केलिए पी. जी. कामत अक्षयनिधि द्वारा प्रदत्त पुरस्कार पानेवालों का मैं हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ।

★

केरल ज्यो[illegible]

भाषाध्यापन में भारत बहुत पीछे है।

डा० ए. सुकुमारन नायर
उपकुलपति, केरल विश्वविद्यालय

[30-10-1987 को श्री. पी. जी. कामत अक्षयनिधि के पुरस्कार वितरण समारोह में दिये गये आशीर्वाद भाषण]

करीब बीस वर्ष पहले केन्द्र सरकार के नेतृत्व में केरल में दो हिन्दी अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालय खोले गये। तब इनको कालेजों के समतुल्य माना गया था। लेकिन करीब पाँच वर्ष बाद इनका स्थान उन्नत करने के बदले अवनत किया गया और अब इनको ट्रेइनिंग स्कूल के समकक्ष माना जाता है। इस अवनति का कारण संभवत: राजनीतिक था। मेरा प्रबल मत है कि इन्हें पुन: ट्रेइनिंग कॉलेज का उन्नत स्थान देना चाहिए।

राष्ट्रभाषा, संपर्कभाषा और राजभाषा के रूप में हिन्दी की चर्चा की जाती है। भारत में हिन्दी का प्रमुख स्थान है। इसके अध्यापन से सब से अधिक लाभान्वित होनेवाले हैं केरल के विद्यार्थी। इसलिए शैक्षिक, सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रों

शैक्षिक, सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रों में हिन्दी को उचित स्थान देकर उसको परिपुष्ट करना हमारा कर्तव्य है।

में हिन्दी को उचित स्थान देकर उसको परिपुष्ट करना हमारा कर्तव्य है।

आदरणीय मंत्री ने यहाँ ठीक ही बताया कि भाषाध्यापन में जितना ध्यान पहले दिया जाता था उतना आजकल नहीं दिया जाता। करीब तीस वर्ष पहले भाषाध्ययन को शिक्षा का आधारमाना जाता था। भाषा के अधारभूत कौशलों में विद्यार्थी की दक्षता विकसित करने केलिए प्राइमरी स्तर से उच्च स्तर तक अध्यापक प्रयत्न करते थे।

भाषाध्यापन के स्तर में जो पतन होता गया इसकेलिए हम अध्यापक भी एक हद तक जिम्मेदार हैं।

वर्तनी, उच्चारण, विराम चिह्न आदि के सूक्ष्म तत्वों का भी परिचय विद्यार्थी को दिया जाता था। शिक्षा भाषा के माध्यम से दी जाती है। इसलिए गणित, विज्ञान, आदि विषयों से अधिक प्रमुखता भाषा को दी जाती थी। भाषाध्यापन के स्थर में जो पतन होता गया इसकेलिए हम अध्यापक भी एक हद तक जिम्मेदार हैं।

पुराने जमाने में वैज्ञानिक विषयों की उत्तर पुस्तिकायें जाँचते समय भी वर्तनी की अशुद्धियों केलिए न्यूनांक दिया जाता था। आज वह रीति नहीं रही। आज भाषेतर विषयों के अध्यापन में भाषा पर ध्यान नहीं दिया जाता।

भाषाध्यापन में हम उन पद्धतियों का अनुसरण कर रहे हैं जो करीब आधी शताब्दी पूर्व पश्चिम में प्रचलित थी। पश्चिम में भाषा के रूप में अंग्रेजी के शिक्षण केलिए जो विधियाँ आविष्कृत हुई थीं, उन्हीं का परिवर्तन रूप मातृभाषा के रूप में मलयालम और हिन्दी सिखाने केलिए स्वीकृत किया जाता है। मातृभाषा के रूप में हिन्दी सिखाने की जो विधियाँ आविष्कृत हुई हैं उन्हीं का परिवर्तन रूप द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी सिखाने के लिए अपनाया जाता है।

इस प्रकार देखें तो स्पस्ट होगा कि हमारा भारत एक ऐसा देश है जहाँ भाषा का अध्यापन अवैज्ञानिक ढंग से किया जाता है। आफ्रिका, दक्षिण अमेरिका और भारतेतर एशियाई राष्ट्र भाषाध्यापन संबन्धी अनुसंधान करके वैज्ञानिक विधियाँ

पश्चिम को भाषाध्यापन विधियों का अन्धानुकरण करने वाले बहुत कम राष्ट्रों में एक है हमारा भारत।

आविष्कृत कर रहे हैं। पश्चिम की भाषाध्यापन विधियों का अन्धानुकरण करनेवाले बहुत कम राष्ट्रों में एक है हमारा भारत। मातृ-भाषाध्यापन के क्षेत्र में ही हम सब से अधिक पिछड़े हुए हैं। अंग्रेज़ी जैसी पश्चिमी भाषाओं का शिक्षण एशियाई राष्ट्रों में कैसे करना चाहिए इस संबन्ध में पश्चिम के शिक्षाविद निरन्तर अनुसंधान कर रहे हैं और इन अनुसंधानों का परिणाम हैदराबाद और मैसूर के संस्थानों के ज़रिये हमें सिखा रहे हैं।

इन सब सीमाओं के बावजूद हमारे देश में कुछ ऐसे संस्थान हैं जहाँ भाषाध्यापन का अच्छा प्रशिक्षण दिया जाता है। तृश्शूर और तिरुवनन्तपुरम में स्थित हिन्दी अध्यापक प्रशिक्षण केन्द्र ऐसे ही संस्थान हैं। इन में प्रशिक्षित होकर परीक्षा में उन्नत स्थान पाये चार अध्यापकों को आज श्री. पी जी. कामत के नाम पर पुरस्कार दिये जा रहे हैं। श्री. पी. जी. कामत ने हिन्दी भाषाध्यापन के क्षेत्र में अत्यधिक महत्वपूर्ण योगदान दिया है। मैं आशा करता हूँ कि श्री. पी. जी. कामत के समान महान सेवायें अर्पित करने में ये पुरस्कार प्रेरणाप्रद होंगे।

पी. जी. कामत पुरस्कार वितरण समारोह

श्री पी. जी. कामत

30-10-1987 को तिरुवनन्तपुरम हिन्दी अध्यापक प्रशिक्षण संस्थान में पी. जी. कामत पुरस्कार वितरण समारोह आयोजित हुआ।

शैक्षिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में श्री. पी. जी. कामत ने जो विशिष्ट योगदान दिया है उसके उपलक्ष्य में उनके नाम पर प्रतिवर्ष केरल सरकार द्वारा आयोजित हिन्दी टीचर्स ट्रेइनिंग डिप्लोमा परीक्षा में उन्नत स्थान पाकर उत्तीर्ण होनेवाले दो छात्राध्यापकों को पी. जी. कामत पुरस्कार दिया जाता है।

केरल विश्वविद्यालय के उप-कुलपति डा०ए. सुकुमारन नायर की अध्यक्षता में आयोजित उक्त समारोह का उद्घाटन केरल के परिवहन मंत्री श्री. के. शंकर नारायण पिल्लै ने किया। श्री. पिल्लै ने पुरस्कार वितरण भी किया। 1986 की परीक्षा का राज्य स्तरीय पुरस्कार सरकारी शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान, तृश्शूर के श्री. पी ए. रघुराम को और संस्थान स्तरीय पुरस्कार सरकारी शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान तिरुवनन्तपुरम की श्रीमती पी. एन. सावित्री अम्मा को मिला। 1987 की परीक्षा का राज्य स्तरीय पुरस्कार सरकारी शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान तिरुवनन्तपुरम की श्रीमती एस. सुजाता को और संस्थान स्तरीय पुरस्कार सरकारी हिन्दी शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान, तृश्शूर की श्रीमती टी. के. मोलीकुट्टी को प्राप्त हुआ। केरल विधान सभा की सदस्या प्रो० ए. नबीसा उम्माल ने आशीर्वाद भाषण दिया। पी.जी.कामत अक्षयनिधि के संयोजक श्री. आर. सुकुमारन नायर ने स्वागत भाषण दिया और निधि के अध्यक्ष प्रो० सी. जी. राजगोपाल ने कृतज्ञता प्रकट की।
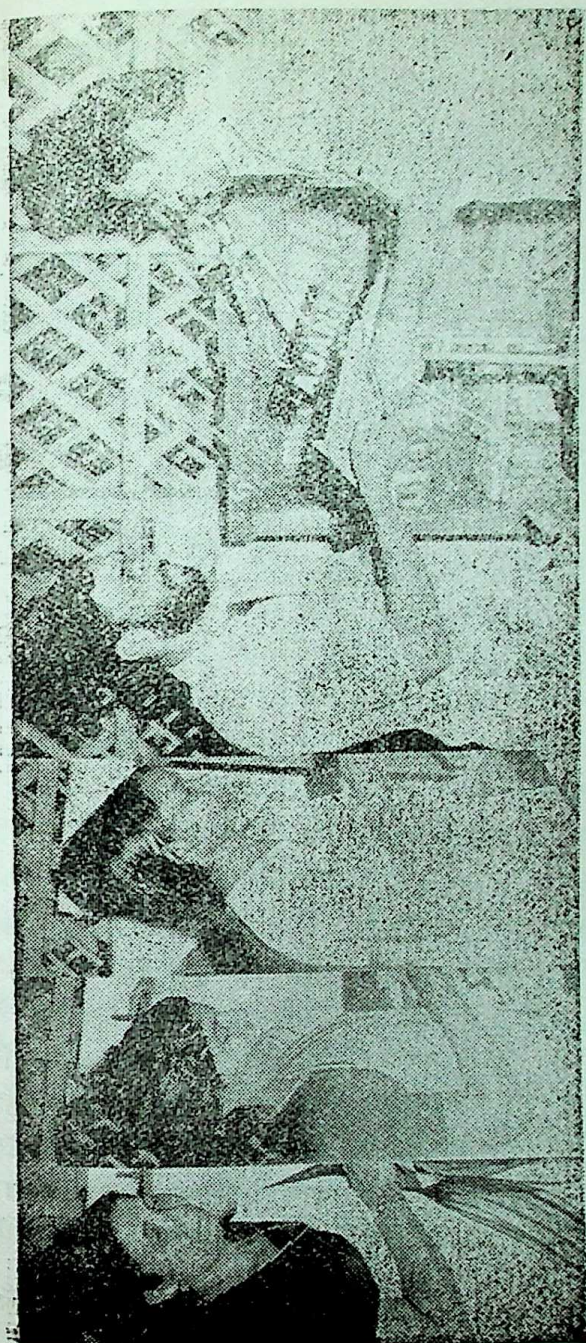
केरल के परिवहन मंत्री श्री. के. शंकर नारायण पिल्लै से पी. जी. कामत अक्षयनिधि पुरस्कार प्राप्त कर रहे हैं (बायें से) श्री० पी० ए० रघुराम, श्रीमती एस० सुजाता, श्रीमती पी० एन० सावित्री अम्मा एवं श्रीमती टी० के० मोलीकुट्टी।

स्वामी विवेकानन्द

मूल : **डा० वी. एस. शर्मा**

अनुवाद : **श्री. के. श्रीकुमार**

[स्वामी विवेकानन्द का 125 वाँ जन्म दिवस 12-1-1988 को मनाया जा रहा है।]

महात्मा श्री रामकृष्ण परमहंस बंग देश में अवतीर्ण हुए थे। उनका आत्मीय चैतन्य आज विश्व भर में व्याप्त हो चुका है। उनके नाम पर अनेक संस्थायें, ग्रन्थ समुच्चय और अन्य प्रकाशन दुनिया भर में प्राप्त हैं। करोडों लोग उनके आदर्शों को आत्मसात करते हैं और अवतार पुरुष के रूप में उनका आदर करते हैं। पीढ़ी पर पीढी वह शक्ति-चैतन्य हस्तान्तरित होता आ रहा है। श्री रामकृष्ण परमहंस को अवतीर्ण हुए एक सौं वर्ष बीत गये। उनकी कीर्ति अनेक रूपों में प्रसारित करने का मुख्य श्रेय उनके शिष्योत्तम स्वामी विवेकानन्द को है।

12-1-1863 को कलकत्ता में नरेन्द्र नाथ दत्त का जन्म हुआ। पिता विश्वनाथ दत्ता थे और माता भुवनेश्वरी देवी थी। अपने कॉलेजीय जीवन में स्कोट चर्च कॉलिज के प्रो० हेस्टी से नरेन्द्र ने श्री रामकृष्ण नामक अद्भुत पुरुष के बारे में सुना। नरेन्द्र ने कई लोगों से यह

प्रश्न किया था, "आपने ईश्वर को देखा है? उनके जवाब नरेन्द्र को तृप्तिकर नहीं लगे। इस निराशा से दुखी होकर नरेन्द्र श्री रामकृष्ण के पास गये। "देखा है, बेटा। जैसे तुझे देख रहा हूँ उस से भी अधिक स्पष्ट रूप में मैं ईश्वर को देख रहा हूँ। चाहे तो तुझे भी दिखा दूँगा।" इस अपूर्व उत्तर ने नरेन्द्र को श्री रामकृष्ण की ओर आकृष्ट किया। बाद को श्री रामकृष्ण की सभी आध्यात्मिक सिद्धियों का उत्तराधिकार भी नरेन्द्र को मिला। श्री रामकृष्ण के साथ अभेद्य संबन्ध स्थापित हुआ उससे नरेन्द्र के जीवन में कायापलट हो गया। 16-1-1886 को श्री रामकृष्ण का स्वर्गवास हो गया। उनके अनेकों आराधक और शिष्य दक्षिणेश्वर में एकत्रित हुए, उन में मुख्य नरेन्द्र ही थे। त्याग, स्नेह और ईश्वर भक्ति से संपन्न उन अनेकों धिषणाशालियों का नेतृत्व नरेन्द्र पर आ गया।

नरेन्द्र के पथप्रदर्शन में श्री रामकृष्ण संघ और श्री रामकृष्ण मिशन रूपीकृत हुए। शिष्यों और भक्तों को साधना द्वारा लोकसेवा करने का मंच मिल गया।

1887 से 1893 तक नरेन्द्र परिव्रज्या ग्रहण कर भारत में घूमते रहे।

कन्याकुमारी के जिस शिलाखण्ड पर वे समाधिस्थ बैठे थे उसे विवेकानन्द शिला कहते हैं।

अनेक पुण्य स्थानों का दर्शन किया। इस परिक्रमा के दौरान वे केरल में भी आए। कन्याकुमारी में भारत के अन्तिम शिलाखण्ड पर वे घण्टों तक प्रार्थना मग्न बैठे रहे। भारतीय जनता की यातनायें, गुलामी, अनाचार जटिल अन्धविश्वास इन सब का उन्होंने प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त किया था। उन्हें एक नया दर्शन मिला। भारतीय नवोत्थान का नया दर्शन। कन्याकुमारी के जिस शिलाखण्ड पर वे समाधिस्थ बैठे थे उसे विवेकानन्द शिला कहते हैं। वहाँ पच्चीस वर्षों पूर्व एक अतिमनोहर स्मारक मन्दिर बना है। यह एक तीर्थस्थान बन गया है।

मित्रों और आराधकों की प्रेरणा से प्रेरित होकर नरेन्द्र अमेरिका में शिकागो में आयोजित विश्व धर्म सम्मेलन में भाग लेने गये। तब तक स्वामी विवेकानन्द कहलाने लगे थे। इस सम्मेलन में वे आमंत्रित नहीं थे। तो भी 11-9-1893 को सम्मेलन का प्रथम भाषण जिस में उन्होंने

स्वामी जी में लोगों ने एक ऐसे पैगम्बर को देखा जिन्हें भारत का आध्यात्मिक महत्व दुनियावालों को समझा देने केलिए खुदा ने भेजा है।

...दस्यों को "अमेरिका के मेरे भाइयो ...ौर बहनो" कहकर अपूर्व ढंग से ...म्बोवित किया था, बाद के उनके अनेकों अभिभाषण, विदेशों की आध्यात्मिक कार्यक्रम — भाषण यात्रायें ये सब अपूर्व घटनायें थीं। स्वामीजी में लोगों ने एक ऐसे पैगम्बर को देखा जिन्हें भारत का आध्यात्मिक महत्व दुनियावालों को समझा देने केलिए खुदा ने भेजा है। सब जगह उनका आदर हुआ। जे. जे. गुडविन ने स्वामीजी के भाषण लिख लिये और सिस्टर निवेदिता ने उनका संपादन करके प्रकाशित किया। यदि उन दोनों ने ऐसा नहीं किया होता तो विवेकानन्द साहित्य जो बाद को सात खण्डों में प्रकाशित हुआ हमें प्राप्त नहीं हुआ होता। उज्वल विवेक वाणी की शक्ति और महत्व ने सबको हठात आर्कषित किया।

अनेकों पुरुषायु के कर्म करने के पश्चात् उनचालीस वर्ष की आयु में 4-7-1902 को स्वामीजी परलोक सिधारे। स्वामीजी ने वाणी और कर्म से विश्व संस्कृति की धारा पर जो छाप छोडी है वह अमिट है। भारतीय नवोत्थान के क्षेत्र में प्रातः स्मरणीय नाम स्वामी विवेकानन्द का है। बारह जनवरी को विवेकानन्द जयन्ती पडती है। केन्द्र सरकार इस दिन राष्ट्रीय युवक दिन मना रही

इस पुण्य अवसर पर भारतीय नवोत्थान के उस महान नेता के जीवन और सन्देश को हम आतमसात करें।

है। इस पुण्य अवसर पर भारतीय नवोत्थान के उस महान नेता के जीवन और सन्देश को हम आत्मसात करें।

प्रोफेसर, मलयालम विभाग
केरल विश्वविद्यालय
कार्यवट्टम, तिरुवनन्तपुरम

1988

आज नया दिन है

श्री. विष्णुप्रभाकर

समय बहती नदी है
कुछ अर्थ नहीं नये-पुराने का।
फिर भी आप कहते हैं, मान लेता हूँ कि
आज नया दिन है।
क्या करूँ बताइये ?
अन्तर में झांकूँ, समाधिस्थ हो जाऊँ या
चारों ओर देखूँ और बागी बन जाऊँ?
या फिर रेडियो, टी० वी० और पाँच सितारा होटलों की
संस्कृति अपनाकर स्याह को सफेद करूँ ?
किसी हसीना का शरीर नोच लूँ ?
किसी पुरुष का विवेक छीन लूँ ?
क्या कहा आपने —
सबसे अच्छा है तटस्थ हो रहना।
जहाँ सूखा पडा है वहाँ आँसू बहा देना।
जहाँ ऐश्वर्य बिखरा है वहाँ क्यू तोड़कर आगे और
आगे बढ जाना।
नहीं, यह सब सपाट बयानी है।
कुछ गहरा उतरिये, कुछ गहरा सोचिये,
कुछ गहरा सुनिये।

वह दूर से आती आवाज़ आपकी ही है
सुनिये उसे ।
वह कह रही है कि तटस्थ होना भागना है
किसी एक का पक्ष आपको लेना है —
घुमड़ते अंधेरे का जो सहलाता है और सुलाता है
उमड़ती किरणों का जो उसका वक्ष चीरने की
चुनौती देती हैं ।
चुनाव आपको करना है ।
चुनौती आपको झेलनी है ।
नव वर्ष मुबारक हो आपको ।।

818 कुण्डेवालान
नई दिल्ली
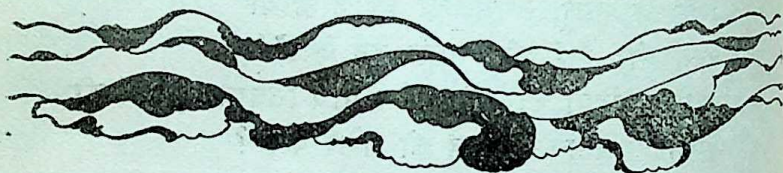
मातृभाषा का अनादर माँ के अनादर के बराबर है । जो मातृभाषा का अपमान करता है वह स्वदेश भक्त कहलाने लायक नहीं ।

—महात्मा गांधी

ढलती आयु में

प्रो॰ टी. के. भास्कर वर्मा
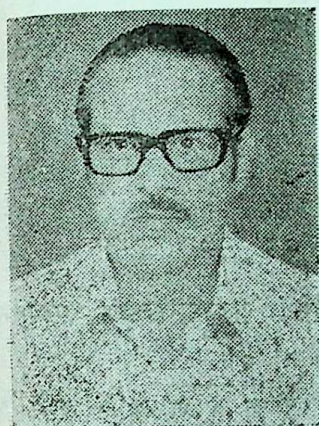
कमान सी टेढ़ी कमर है,
पतली टहनी से हैं दोनों पैर।
लम्बी
लकड़ी का
सहारा लिये,
डगमगाते कदम से,
रेंगता यह कौन ?
क्या यह भी देव
तेरी ही अपूर्व सृष्टि
मनुज है ?
पड़ी हैं झुर्रियाँ कितनी मुख पर
सूखे में पड़े खेत की सी,

तेज नहीं,
ओज नहीं,
नेत्र हैं हाय ! जैसे प्राणहीन;
पलकें नीचे झुकी हैं
अनुभवों के
मानों बोझ से।
जीवन की मधु-ऋतु,
कोकिल कलनाद,
पुष्प-संचय,
चंद्रिकापूर्ण रजनी,
भौंरों का गुंजन
सब आते चलचित्र से
शायद,
उसकी क्षीण स्मृति में ।।
चिर-अतृप्ति खेलती
कैसे
उस विपन्न मुखमंडल पर !
समझ,
जीवन की संध्या,
खुशी का दिनकर
डूबता है शनैः शनैः।
होगी यही मेरी भी,
तुम्हारी भी दशा
निश्चय एक दिन।
अतएव,
न हँसो इस पर
बरसाओ अश्रुकण
दुःख के न सही,
अनुताप के, हे भाई !

हिन्दी में अनुस्वार और अनुनासिकता

डा० एच. परमेश्वरन

नागरी लिपि में शिरोरेखा के ऊपर लगायी जानेवाली बिंदी अनुस्वार का चिह्न है और चन्द्र-बिन्दी अनुनासिकता का चिह्न है। अनुस्वार नासिक्य व्यंजन का प्रतिनिधि है और वह एक पूर्ण, स्वानिम है। अनुनासिकता तो स्वरों के साथ साथ उच्चरित ध्वनिगुण मात्र है। अर्थात् वह स्वतंत्र स्वनिम नहीं है।

अनुनासिकता हिन्दी भाषा की अपनी विशेषता है। संस्कृत के नासिक्य व्यंजन और अनुस्वार तद्भव शब्दों में अनुनासिकता के रूप में विकसित हुए हैं। कभी कभी तदभव शब्दों में अकारण अनुनासिकता भी पायी जाती है। हिन्दी में अनुनासिकता के विकास की एक रूपरेखा यहाँ प्रस्तुत की जाती है।

संस्कृत में वर्गीय व्यंजनों से पू[र्व] वर्गीय नासिक्य व्यंजन ही लि[खे] जाते हैं।

जैसे अङ्क/चञ्चल/दण्ड/तन्[तु] कम्प।

य र ल व श ष स ह से पू[र्व] अनुस्वार का प्रयोग होता है और उसका उच्चारण "म्" के समान होता है।

जैसे: संयम/ संरक्षण/ संल[ग्न] संवाद/ संसार/ संहार।

आगे चलकर वर्गीय स्पर्श व्यंजनों से पूर्व ऐच्छिक रूप से अनुस्वार का प्रयोग होने लगा। ऐसे अवसरों पर अनुस्वार का उच्चारण परवर्ती वर्गीय व्यंजन के आधार पर होता है।

जैसे: अंक = अङ्क। दंड = दण्ड आदि।

इस तरह अनुस्वार वर्गीय नासिक्य व्यंजनों का प्रतिनिधि बन गया। इसी क्रम में य र ल व श ष स ह से पूर्व का अनुस्वार भी इन अन्तस्थ और ऊष्म व्यंजनों के उच्चारण स्थान के आधार पर उच्चरित होने लगा।

संशय = सन्शय। संसार = सन्सार। संलग्न = सन्लग्न। आदि

यहाँ पर ध्यान देने की और एक बात है। नासिक्य व्यंजन के बाद नासिक्य व्यंजन अथवा स्पर्श व्यंजनों से भिन्न कोई व्यंजन आए तो नासिक्य व्यंजन ही लिखा जाता है, अनुस्वार नहीं।

जैसे: नासिक्य + — नासिक्य

पराङ्मुख, वाङ्मय, अक्षुण्ण, मृण्मय, उन्नति, उन्मुख, सन्मान, निम्न

नासिक्य + अन्तस्थ/ऊष्म

कण्व, अन्याय, अन्वेषण, कान्हा, नन्हा, उन्हें, साम्य, सम्राट, अम्ल, तुम्हारा

(नोट: संकृत शब्दों में अनुस्वार के बाद आनेवाले अन्तस्थ ऊष्म व्यंजनों के विषय में यह बंधन नहीं है। उदा: संयम, संवाद, संशय, संसार)

अनुनासिकता का विकास

तत्सम शब्दों से तद्भव रूपों के विकास के दौरान हिन्दी में अनुनासिकता की प्रवृत्ति पायी जाती है। संस्कृत के नासिक्य व्यंजनों से युक्त शब्दों के तद्भव रूप में नासिक्य व्यंजन अथवा अनुस्वार के स्थान पर अनुनासिकता का प्रयोग होने लगा। नासिक्य व्यंजन या अनुस्वार अपने पूर्वस्वर को सानुनासिक बना देते हैं। ऐसा करते हुए नासिक्य व्यंजन का अस्तित्व मिट जाता है। क्षतिपूर्ति के तौर पर सामान्य रूप से पूर्वस्वर का दीर्घीकरण हो जाता है।

अङ्क — अंक — आँकना/आँकड़ा

चञ्चु — चंचु — चोंच

दन्त — दंत — दाँत

पण्डा — पंडा — पाँडे

कम्प — कंप — काँपना

अन्य उदाहरण

अंगण—आँगन। जंघा -जाँघ।

गंज —गाँजा। संध्या—संझा—साँझ।

मंड —माँड। अंचल—आँचल।

पुंजा —पूँजी। गुंज - गूँजी।

संस्कृत पदान्त "म्" अनुस्वार बनकर अनुनासिकता में परिवर्तित हो जाता है।

अहम — हङ — हूँ

पदमध्य द्वयोष्ठ्य "म्" सानुनासिक स्वर + — दन्तोष्ठय "व" हो जाता है।

कुमार — कुँवरा

श्यामल — साँवला।

आमलक — आँवला।

भ्रमर — भँवर — भौंरा।

चामर — चँवर।

अकारण अनुनासिकता

संस्कृत के कुछ शब्द जिनमें कोई नासिक्य व्यंजन या अनुस्वार नहीं है, तद्भव बनते बनते सानुनासिक स्वर युक्त बन जाते हैं। इस प्रवृत्ति को अकारण अनुनासिकता कहते हैं। जैसे :

उष्ट्र — ऊँट। सर्प — साँप।
पाद — पाँव। अक्षि — आँख।
इष्टि— ईंट। उच्च — ऊँचा।
कक्ष — काँख। छाया — छाँह।
हस — हँस।

अनुनासिकता का अंकन

शिरोरेखा के ऊपर कोई स्वर मात्रा ि े ै हो तो अनुनासिकता का अंकन केवल बिन्दी से किया जाता है। जैसे : में, भौंरा, आँखें, लड़कों।

अन्यत्र चन्द्रबिन्दी का प्रयोग होता है। जैसे हँस, आँसू, कुँवर, बूँद।

बिंदी और चन्द्रबिंदी : मुक्त परिवर्तन

अर्थ में भिन्नता न होने पर बिंदी और चन्द्रबिंदी का मुक्त परिवर्तन होता है।

अंधेरा—अँधेरा। सांप—साँप।

दक्षिण भारत के नेता जब तक हिन्दी सीखने से इनकार करते रहेंगे, तब तक दक्षिण शेष भारत से अलग अलग-सा ही बना रहेगा।

—महात्मा गांधी

जी. शंकर कुरुप प्रकृति और पुरुष

डा० एन. चन्द्रशेखरन नायर

(पूर्वप्रकाशित से आगे)

कवि सन्ध्या का चित्रण करता है। "अपनी पल्लव सदृश अंगुलियों से एक प्रफुल्ल प्रकाश का मुकुल नोचकर संध्या उसे कौतुक के साथ देखती रहती है।" यह प्रकाश का खिला हुआ मुकुल नक्षत्र है। विकसित होनेवाले एक मुकुल को तोडकर उसका सौन्दर्य बडे कौतुक के साथ देखनेवाली एक युवती के

डा० एन. चन्द्रशेखरन नायर

रूप में यहाँ सन्ध्या का चित्रण है। "अपने बरामदे में सौम्य और सुन्दर राधा सन्ध्या का एक अन्य रूप धारण करके खडी है।" राधा का चित्रण करते हुए कवि ने सन्ध्या का चित्रण किया है। 'सन्ध्या संजक

श्री. जी. शंकर कुरुप

कविता में कवि ने सन्ध्या को जगत के सारे चराचरों के सामने एक आकर्षक वस्तु के रूप में चित्रित किया है। "उसे देखकर बडे-बडे फीके पर्वतों के चेहरों में आनन्द की रक्त छवि व्यापती है। वृक्ष समूह अपनी डालियों के पत्तों से उडकर उसकी गोद में पहुँच जाना चाहते हैं। कमलपुष्पों के नयनों को मूँदे सरोवर आनन्द-निर्वृति में स्तब्ध हो गये हैं। अनंत सन्ध्या प्रसून आश्चर्य
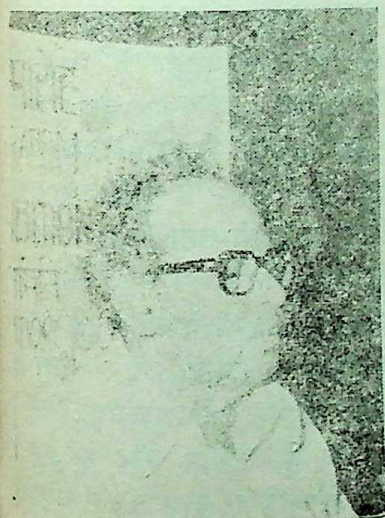
"एकान्त तथा सुनसान आकाश रूपी कमरे में प्रवेश कर जब संध्या नक्षत्रों की लिपियों में लिखा हुआ प्रेमपत्र पढने लगी तब उसके सुन्दर और मृदुल कपोल आरक्त हो उठे ।"

से नयन खोलकर उसे देखते हैं, वे सारे नक्षत्र, जो नीले आसमान में सर्वत्र फैले दिखाई दे रहे हैं। उसके हाथों में ऊपर उठाये हुए मोर पंख नहीं हैं, कि वह जगत को विस्मित, विमूढ कर देने के लिए जादूगरनी का काम करती है !" एक अन्य कविता में संध्या का रागमुग्धा प्रेमिका के रूप में चित्रण है—"एकान्त तथा सुनसान आकाश रूपी कमरे में प्रवेश कर जब संध्या नक्षत्रों की लिपियों में लिखा हुआ प्रेमपत्र पढ़ने लगी तब उसके सुन्दर और मृदुल कपोल आरक्त हो उठे ।"

यही संध्या विविध रूपों में 'जी' की कल्पना में आयी है। नीले आकाश रूपी पिंजरे में पंचवर्णी संध्या जगमोहन पंखों को फैलाकर अपने आह्लाद को प्रकट करती है, जबकि उसके समीप ही अपनी लाल-लाल किरणों को उसकी ओर बढाये अस्तगामी सूरज विराज[illegible] है।" संध्या का एक कामिनी [illegible] रूप में चित्रण इस प्रकार है—"बहु[illegible] ही दूर उस पार संध्यालक्ष्मी [illegible] बैठी है कि किसी के आगमन की प्रतीक्षा में उसके कपोल बार-बार शोणित हो जाते हैं। उसके समी[illegible] ही नीला दुकूल सीने के लिए बि[illegible] पडा हुआ है, जिस पर तरंगों की सिकुडनें हो रही हैं।"

आरेयो चित्रिक्के तुदुक्कुम कविळुम[illegible]
दूरयि ङ्ङिक्कन् वक त्तिरिक्कुम् कविळुमा[illegible]
तुन्नुवान् ओरिञ्ञिट्ट नीलमाँ दुकूलं [illegible]
मिन्नुन्नु निरवळाल् चुळियुं पारावार[illegible]

'जी' मानो, सन्ध्या का वर्ण[illegible] कर के कभी अघाते नहीं। सन्ध्या कवि के सम्मुख अनंत रूपों में प्रत्यक्ष हो जाती है। जीवन के अनेक चित्रों को वह सन्ध्या स्वयं चित्रित करती है। ग्रामीण जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करनेवाली एक सन्ध्या यहाँ देखी जाती है—"मैं सूर्यास्त के साथ टीले से उतरने लगा। सन्ध्या अपने सिर पर सोने के धान (फसल) का बोझा लादने की चेष्टा में थी। इस प्रकार करते समय उसके बोझे से दाने उखडकर पूरे इधर उधर गिरे। जो आकाश में, समीप और दूर, तारे चमकते हैं, वे धान की मणियाँ

हैं। अपने बण्डल में सन्ध्या ने नयी हँसिया लगाकर रखी थी, जिसका छोर जो दिखाई देता है, वही चन्द्रमा की वह कला है।" केरल के ग्रामीण चित्रण में ग्रामबाला का यह रूप सर्वत्र मिलेगा। हरिजन स्त्रियाँ अपनी हँसिया फसल की गाँठ में लगाये रखकर चलती हैं। 'जी' ने सन्ध्या के असंख्य चित्र असंख्य प्रतीकों के माध्यम से प्रस्तुत किये हैं। वे सब प्रसंगवश अन्य कविताओं के बीच-बीच में मिलेंगे

अपने बण्डल में सन्ध्या ने नयी हँसिया लगाकर रखी थी, जिस का छोर जो दिखाई देता है, वही चन्द्रमा की वह कला है।

प्रकृति और उसके अनन्त रूपों के चित्रणों से अछूती कोई कविता जी की नहीं मिलेगी। एक चित्र देखिए संध्या देवी का—"अस्तगामी सूरज के चषक में लाल-लाल मद्य ढालकर सन्ध्यादेवी यथेष्ट पी रही है।" कितनी काल और सन्ध्या के चित्रशलभों की परंपरा पंख फैलाकर उडती हैं आँखों में। "नीरद लतागृह में प्रवेश कर सन्ध्या राग-विभ्रम के साथ मौन बैठी है।" हल्के तम की पँक्तियों में घिरी हुई

आज आकाश सन्ध्या के रंगों की डिबिया-जैसा है।

सुन्दर सन्ध्या कान्ति में वह नक्षत्र सन्ध्या की सुन्दर कलि में दिशा चक्रों से उलझे हुए बादल जब पल्लवित होने लगे। आज आकाश सन्ध्या के रंगों की डिबिया-जैसा है। प्रस्तुत विविध प्रकार के प्रासंगिक सन्ध्या वर्णन संदर्भ को तीव्र एवं स्वाभाविक बनाने में अतीव सक्षम हैं। चन्द्रमा का वर्णन एक ही कविता में अनेक गुणों की पुष्कलता के लिए किया गया है - "हे चन्द्रमा, तेरे समान यह सुन्दर नहीं है (सन्ध्या)। फिर भी, अकलंक और अमृतात्म बना। XX हे चन्द्रमा, तेरे समान यह ऊपर ही नहीं रहा। अपनी जन्मभूमि की छोटी-छोटी कुटियों में नये प्रकाश और धैर्य तथा सौन्दर्य की वृद्धि करने और स्वाधीनता के विकास के लिए मामूली मनुष्यों के साथ घूमता रहा। XX हे चन्द्रमा रो। अन्धकार को दूर करने वाले उस विश्व दीपक को बुझाने के हेतु कृतघ्नता का एक हाथ उठा। XX हे चन्द्रमा, तू दिशा के कन्धे पर मूर्छित होकर गिरता है। अपनी व्यथा से तू पीला-पीला हो गया।

तारक रूपी रत्नों से जडित आकाश की कब्र में मृत दिवा का शवशरीर रखकर, उसे उठाने केलिए दिक् रूपी वाहक, जब सन्नद्ध होकर खड़े होते हैं तब अपने पिता की अर्थी को चूमकर सन्ध्या काँपते हुए मूर्छित हो जाती है ।

तेरे प्रकाश से ही साथ इस पृथ्वी के चन्द्र का मोहन प्रकाश भी विलुप्त हो जायगा । XX भारतेन्दु अप्रत्यक्ष होकर भी अपने धीर सन्देशों की प्रभा राशि से जीवन-मार्ग को सुन्दर बनाते हुए भविष्य में बहुत दूर तक चलता रहेगा ।

सन्ध्या का एक अन्य चित्र, जो ऊपर दिये गये चित्रों से भिन्न है, यहाँ उद्धृत है । 'आज मैं कल तू' कविता 'जी' की एक श्रेष्ठ और प्रसिद्ध रचना है । इसमें दिवा की (दिन की) पुत्री के रूप में सन्ध्या का अवतरण है । ''तारक रूपी रत्नों से जडित आकाश की कब्र में मृत दिवा का शवशरीर रखकर, उसे उठाने केलिए दिक् रूपी वाहक, जब सन्नद्ध होकर खड़े होते हैं तब अपने पिता की अर्थी को चूमकर सन्ध्या कांपते हुए मूर्च्छित हो जाती है।'

तारक रत्न खचितमां पट्टिनाल्
पारमलंकृतमाय विण् पेट्टियिल्
चत्त पकलिन् शवं वच्चेटुप्पति-
नात्तमौनं नालु दिक्कुकळ् निल्क्वे
तन् पिताविन् शवप्पेट्टिमेल् चुम्बिच्चु
कम्पितगात्रियामन्ति मूर्च्छिक्कवे,
जीवितंपोले रण्टट्टवुं काणात्तो-
रावर्पियिकल् तनिच्चु वान् निन्नु पोवु।

'जी' का प्रकृति-प्रेम उनकी श्रेष्ठ कविताओं में मनुष्य-भावानुगामी के रूप में ही प्राप्त होता है । उदात्त और अव्यक्त मानवीय भावों को स्पष्ट करने केलिए प्रकृति के प्रतीकों का प्रयोग कवि अनायास ही करते हैं । उन कविताओं में उनकी प्रकृति अचेतन नहीं है । उनके प्राण होते हैं और व्यापार भी । वह स्वयं बोलती है । 'जी' की प्रकृत्युपासना की अवि-राम गति ने प्रकृति के द्वारा समस्त मानवीय भावों का सभी आध्यात्मिक एवं भौतिक आदर्शों का दर्शन करने और उनकी अभिव्यक्ति करने का अपेक्षित अभ्यास उन्हें दे दिया। इसके फलस्वरूप ही 'जी' ने मलयालम भाषा को ऐसी श्रेष्ठ प्रतीकात्मक तथा रहस्यात्मक कवि-ताएँ प्रदान कर दीं, जो केरल केलिए

अतीव गर्व की वस्तुएँ हैं। सन्ध्या, उषा और ऋतुओं की तरह 'जी' का एक प्रिय प्रकृति-उपादान है नक्षत्र। अनेक प्रकार के भावों की अभिव्यक्ति उन्होंने नक्षत्रों के माध्यम से की है। "प्रारंभ में मेरी कविता की प्राण-धारा प्रकृति-प्रेम और देशप्रेम थी। प्रकृति के प्रति आकर्षण, उसकी समीपता का मोह, बीच में प्रकृति के साथ मेरा तादात्म्य, प्रकृति के माध्यम से उस विराट चेतना की ओर उन्मुखता—वस्तुत: ये सारी वस्तुएँ मुझे साहित्य के किसी एकांत कोने में घुसकर बैठने का अवसर प्रदान करती थीं। जब नक्षत्र हँसते थे, तब मेरा हृदय भी हँस पडता था। इसलिए मैं अनायास ही समझ सका कि मेरे और उस तारे में एक ही चेतना का स्पन्दन होता है। उस अनुभूति से मुझे कितना परम आह्लाद प्राप्त हुआ उस की सच्ची अभिव्यक्ति मैं 'सान्ध्य नक्षत्र' से लेकर 'अन्तर्दाह' तक की कविताओं में भी नहीं कर सका हूँ"- कवि के ये शब्द प्रकृति परक उनके विचार हैं।

'सान्ध्य नक्षत्र' को कवि ने संसार के सभी विशेषण प्रदान किये। तब भी उन्हें तृप्ति नहीं मिली। "जगत

जब नक्षत्र हँसते थे, तब मेरा हृदय भी हँस पडता था। इसलिए मैं अनायास ही समझ सका कि मेरे और उस तारे में एक ही चेतना का स्पन्दन होता है।

की सुन्दरता का तिलक जैसा, तू है कौन? xx उग्र दारिद्रय की गरमी से मूर्छित अक्षरों के किनारों में भी तू सुन्दर मन्दहास को रचता है। xx कौन है तू, आनन्द कन्द, तू शांति की मुस्कान की तरह विराजता है। तू विश्व शांति की कुन्दलता में प्रथम मुकुल जैसा लगता है! प्रेम की सुगन्धि फ़ैला देने केलिए खुली हुई एक सोने की डिबिया! xx तू ईश्वर की करुणा की कणिका है। जगज्जननी ने आकाश के चबूतरे पर सौन्दर्य के तेल में सत्य का दिया जलाकर रखा है, मानों वह कहती है कि ध्यान का समय हो गया है। xx तेरे और मेरे भीतर जगनेवाली ज्योति एक ही है। नहीं तो, तेरा उदय होते ही मेरी अन्तरात्मा क्यों प्रहर्षित हो जावे"? 'प्रभात तारा' के द्वारा कवि अंत में उस परम प्रकाशमय ईश्वर

का स्मरण करता है। — "हे विभात के प्रियपुत्र, तेरा मन्दहास मधुर आनन मात्र मुझे ही आनंदित नहीं कर देता, सारे जगत को भी उत्सव प्रदान करता है। इस अंधकारमय जगत को प्रकाशमय बनाने के लिए आए हुए आप के आगमन के साथ पक्षीवृन्द स्वागत गीत गाता है। हे पावनात्मन, आपका आगमन होते ही सागर भेरी बजाता है; मारुत मार्ग में पुष्प बिछाने के हेतु जल्दी करता हैं; बड़े बड़े विटप, बिना कुछ जाने ही नृत्य करते हैं; नदियों की छाती स्पन्दित होती है। हे कोमल, तेरे दर्शन से हरे-भरे खेत पुलकित हो जाते हैं; हाय, अंधकार का अंतरंग प्रकाशमय बन आता है! आनंद की खोज में भटकनेवाले मेरे हृदय केलिए आप शांतिदायक हैं। तेरा मधुर मौन महाकवि के दिव्य गान से श्रेष्ठ है। परितप्त हृदय को आप अमृत हैं। क्या व्याख्या की जाय, हर

जगज्जननी ने आकाश के चबूतरे पर सौन्दर्य के तेल में सत्य का दिया जलाकर रखा है, मानों वह कहती है कि ध्यान का समय हो गया है।

किसी को इसका व्यंग्य और सौ[ंदर्य] विदित है। xxx हे प्रेमस्व[रूप] भगवान, आपके पदकमल की परा[ग] रेणु भी इतनी सुन्दर हैं, तो आप[का] दर्शन कितना सुन्दर न रहेगा! [इस] प्रकार, प्रकृति और विश्व की उपा[-] सना से विश्वातीत सत्य के दर्शन-योगदर्शन अथवा रहस्यदर्शन-सुन्दर एवं सुपरिचित प्रतीकों [के] प्रयोग से काव्य-भंगिमा के सा[थ] शंकर कुरुप ने मलयालीकाव्य [में] प्रस्तुत किये, और उनको विकसि[त] कर दिया। वस्तुत: 'जी' एक दूरद[र्शी] अथवा क्रांतदर्शी कवि है। नक्ष[त्रों] को कवि ने कितने प्रतीकों में देख[ा] है! 'दूर क्षितिज में कामुक [की] प्रतीक्षा में एक छोटी तारिका अकेली बैठी है।" "मुग्धा निशा के लिखे-लज्जा से उत्तरीय के नीले छोर [से] पोंछ डालने पर भी सारे न धुलकर-नक्षत्र रूपी अक्षर इधर-उधर दीख पडते हैं।"

मुग्धा निशा के लिखे—लज्जा से उत्तरीय के नीले छोर से पोंछ डालने पर भी सारे न धुलकर—नक्षत्र रूपी अक्षर इधर-उधर दीख पडते हैं।

भारतीय नव जागरण और स्वामी श्रद्धानन्द

श्री. विष्णु प्रभाकर

(पूर्वप्रकाशित से आगे)
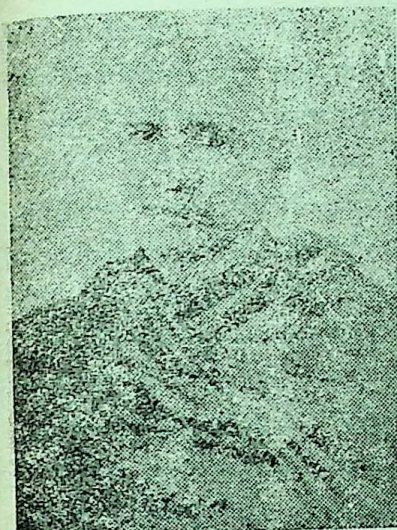
स्वामी श्रद्धानन्द

अभी ऐसी घटनाओं का अन्त नहीं आया था। उस दिन उनकी पीडा का पार नहीं रहा जिस दिन उन्होंने देखा कि एक राजा साहब देवी के प्रतीक के रूप में एक निर्वसना युवती की उपासना कर रहे हैं।

ऐसी घटनाओं ने मुंशीराम को नास्तिक बना दिया। लेकिन अचानक कुरेदना की इस अवधि में एक

युवती ने तुरन्त प्रतिवाद किया, "यह झूठ बोलता है। मैं साधु समझ कर इसके पैर छू रही थी कि इसने मुझे दबोच लिया।"

मुन्शीराम जी ने उस युवती को उस के परिवार के पास पहुंचा दिया। पर उनका मन और भी उद्वेलित हो उठा। कैसा है यह धर्म? कैसे हैं यह धर्म के संरक्षक संवाहक...लेकिन

श्री. विष्णु प्रभाकर

उस दिन
उन को पीडा का पार नहीं रहा
जिस दिन उन्होंने देखा
कि एक राजा साहब
देवो के प्रतीक के रूप में
एक निर्वसना युवती को
उपासना कर रहे हैं।

ऐसी घटना घटी जिसने उनके जीवन की धारा को बदल दिया। उनके पिता श्री नानक चंद जी शहर कोतवाल के पद पर काम कर रहे थे। जिस समय वह बरेली में कार्य-रत थे उसी समय स्वामी दयानन्द सरस्वती अपनी प्रचार यात्रा के दौरान वहाँ आये। वह धार्मिक भ्रष्टाचार पर तीव्र आक्रमण करते थे। उनके आक्रमण से तिलमिला-कर कुछ धर्मान्ध व्यक्ति उनकी सभाओं में विघ्न डालते थे। बरेली में ऐसा न हो, यह देखने का भार श्री नानकचंद को सौंपा गया। नानकचंद ने स्वामी दयानंद का व्याख्यान सुना। वह सनातन धर्म के अनुयायी थे, फिर भी वह उनके व्याख्यान से बहुत प्रभावित हुए। घर लौटकर उन्होंने अपने नास्तिक बेटे से कहा, "एक दण्ड़ी स्वामी इस शहर में पधारे हैं। वे योगी भी हैं और प्रखर विद्वान भी। उनका भाषण सुनकर तुम्हारे संशय दूर हो जाएँगे। कल मेरे साथ चलना।"

और अगले दिन मुंशीराम पिता के साथ स्वामी दयानन्द का व्याख्यान सुनने के लिये गये। वहाँ क्या हुआ उसका वर्णन स्वयं उन्होंने इस प्रकार किया है, "दूसरे दिन बेगम बाग की कोठी में पिता जी के साथ पहुँचा। वहाँ व्याख्यान हो रहा था। उस दिव्य आदित्य मूर्ति को देखकर कुछ श्रद्धा उत्पन्न हुई। और जब पादरी स्कॉट और दो-तीन अन्य योरोपियनों को उत्सुकता से बैठे देखा तो श्रद्धा और भी बढ़ी। अभी दस मिनट भी वक्तृता नहीं सुनी थी कि मन में विचार किया यह विचित्र व्यक्ति है कि केवल संस्कृतज्ञ होते हुए ऐसी युक्ति-युक्त बातें करता है। व्याख्यान परमात्मा के निज नाम 'ओऽम' पर था। वह पहले दिन का आत्मिक आह्लाद मैं कभी भूल नहीं सकता। एक नास्तिक को आह्लाद में निमग्न कर देना ऋषि आत्मा का ही काम था।"

मुंशीराम के जीवन में यह ऐसा मोड़ था, जिसके उस ओर

प्रकाश ही-प्रकाश बिखरा पड़ा था। इसलिए शीघ्र ही यह स्थिति आ गयी कि प्रतिदिन स्वामी जी के साथ होने वाले प्रश्नोत्तर सुनने के लिए वह उनके प्रत्येक व्याख्यान में उपस्थित रहने लगे। वे अपनी शंकाओं का निवारण भी करवाते थे। उन्हीं के शब्दों में "यद्यपि आचार्य दयानन्द के उपदेशों ने मुझे मोहित कर लिया था तथापि मैं मन में सोचा करता था कि यदि ईश्वर और वेद के ढकोसले को पंडित दयानन्द स्वामी तिलांजलि दे दें तो फिर कोई भी विद्वान उनकी अपूर्व युक्ति और तर्कना शक्ति का सामना करने वाला न रहे। मुझे अपने नास्तिकपन का उन दिनों अभिमान था, इतना कि एक दिन ईश्वर के अस्तित्व पर आक्षेप कर डाले पर पांच मिनट के प्रश्नोत्तर में ऐसा घिर गया कि जिह्वा पर मुहर लग गयी। मैंने कहा, "महाराज! आपकी तर्कना शक्ति बडी तीक्ष्ण है। आपने मुझे चुप तो कर दिया परन्तु यह विश्वास नहीं दिलाया कि परमेश्वर की कोई हस्ति (अस्तित्व) है।"

दूसरी बार फिर तैयारी करके गया परन्तु परिणाम पूर्ववत् ही निकला। तीसरी बार फिर पूरी तैयारी करके गया परन्तु मेरे तर्क को फिर पछाड मिली। मैंने फिर अन्तिम उत्तर यही दिया, "महाराज, आपकी तर्कना शक्ति बडी प्रबल है। आपने मुझे चुप तो करा दिया परन्तु यह विश्वास नहीं दिलाया कि परमेश्वर की कोई हस्ति है।"

महाराज पहले हँसे, फिर गम्भीर स्वर में कहा, "देखो, । तुमने प्रश्न किये, मैंने उत्तर दिये—यह युक्ति की बात थी। मैंने कब प्रतिज्ञा की थी कि मैं तुम्हारा विश्वास परमेश्वर पर करा दूँगा। तुम्हारा परमेश्वर पर विश्वास उस समय होगा जब वह प्रभु स्वयं तुम्हें विश्वासी बना देंगे।"

कैसा सहज, विनम्र और तर्क संगत उत्तर दिया स्वामीजी ने। उसे प्रभु की ज्योति कहें या अन्त की ज्योति कहें या स्वतः स्फूर्त ज्योति कहें; जब वह भासमान होती है तभी मनुष्य का अन्तर और बाह्य आलोकित होता है।

मुंशीराम बहुत भटके लेकिन अब जैसे उन्हें दिशा मिल गयी थी। आवारा को मसीहा बना देने वाली दिशा। उसकी दिशा के कारण विलासी और नास्तिक मुंशीराम ने

उसकी दिशा के कारण विलासी और नास्तिक मुंशीराम ने महात्मा मुंशीराम और फिर हुतात्मा श्रद्धानन्द का बिरुद पाकर वह ख्याति अर्जित की जिसका वर्णन पीछे हो चुका है।

महात्मा मुंशीराम और फिर हुतात्मा श्रद्धानन्द का विरुद पाकर वह ख्याति अर्जित की जिसका वर्णन पीछे हो चुका है। वर्षों बाद सन् 1925 में महर्षि दयानन्द के प्रति आभार प्रकट करते हुए स्वामी श्रद्धानन्द ने लिखा—"ऋषिवर, तुम्हें भौतिक शरीर त्यागे 41 वर्ष हो चुके, परन्तु तुम्हारी दिव्य मूर्ति मेरे हृदय पटल पर ज्यों की त्यों अंकित है। मेरे निर्बल हृदय के अतिरिक्त कौन मरणधर्मा मनुष्य जान सकता है कि कितनी बार गिरते-गिरते तुम्हारे स्मरण मात्र ने मेरी आत्मिक रक्षा की है। तुमने कितनी गिरी हुई आत्माओं की काया पलट दी है इसकी गणना कौन मनुष्य कर सकता है...परन्तु अपने विषय में कह सकता हूँ कि तुम्हारे सहवास ने मुझे कैसी गिरी हुई अवस्था से उठाकर सच्चा जीवन लाभ करने के योग्य बनाया।"

स्वामी श्रद्धानन्द के ग्रन्थों के स्वाध्याय से कैसे धीरे-धीरे उनका मन सत्य के आलोक से आलोकित होता गया यह लम्बी कहानी है पर इस कुरेदना के बीज तो बचपन से स्वयं उनके अन्तर में मौजूद थे। एक दिन वह स्कूल नहीं गये। पिता जी ने पूछा, तो कह दिया, "आज छुट्टी है।" लेकिन बाद में उन्हें पता लगा कि बालक मुंशीराम ने झूठ बोला है। स्कूल में छुट्टी नहीं थी। पिताजी की आत्मिक ग्लानि का पार नहीं था। पुत्र ने पिताजी की वेदना को रूप लेते देखा तो अंतर में संघर्ष मच उठा। अंत में उन्होंने अपना अपराध स्वीकार कर लिया और फिर कभी झूठ न बोलने की प्रतिज्ञा की।

इसी तरह जब शराब पीने के कारण बहुत कर्ज चढ़ गया तो उनकी पति-परायणा पत्नी ने अपने हाथ के कड़े बेच देने में संकोच नहीं किया। कोई उपदेश नहीं, प्रताड़णा का एक शब्द नहीं, मुंशीराम का हृदय आत्म-ग्लानि से टीस उठा। उन्होंने अपने पतन की कहानी सुनाते हुए अपना हृदय खोलकर रख

दिया और क्षमा कर देने की प्रार्थना की लेकिन उन देवी ने यही कहा, "आप मेरे स्वामी हैं, यह सब सुनाकर मुझे पाप क्यों चढ़ाते हैं। मुझे तो यह शिक्षा मिली है कि मैं नित्य आपकी सेवा करूँ।"

उस रात दोनों पति-पत्नी बिना भोजन किए ही सो गये। उस दिन उनके मन पर जो प्रभाव पड़ा, उसकी गूंज उनके इन शब्दों में सुनी जा सकती है, "पौराणिक युग में जिस प्रकार आर्य महिलाओं ने सतीत्व का पालन किया, उसी के प्रताप से भारत भूमि रसातल को नहीं पहुंची और उसमें अब तक पुनरुत्थान की शक्ति विद्यमान है। यह मेरा निज का अनुभव है।"

बड़े प्रयत्नों के बाद उनके पिता उनकी नियुक्ति नायब तहसीलदार के पद पर कराने में सफल हो गये थे। इसी अवधि में एक बार सेना ने बरेली के पास पड़ाव डाला। उसे रसद पहुँचाने का दायित्व नायब तहसीलदार के नाते उन पर था। उन्होंने प्रबन्ध किया भी पर, गोरे तो सामान लेकर उसका मूल्य चुकाने में विश्वास नहीं करते थे। कुछ सैनिक एक अण्डेवाले के अण्डे बिना मूल्य दिये ही उठा ले गये।

क्षण भर के लिए अन्तर में संघर्ष का तुमुलनाद उठा पर दूसरे ही क्षण वे कमरे से बाहर आये और नौकरी से इस्तीफा दे दिया।

मुंशीराम जी को पता लगा तो वे कर्नल के पास पहुंचे पर वह तो उल्टा उन्हीं को गुस्ताख कहने लगा। मुंशीराम तो फौलाद के बने हुए थे, अन्याय कैसे सह सकते थे —बोले, "मैं यह अपमान नहीं सह सकता। मैं अपने आदमियों को ले जा रहा हूँ। आप जो कर सकते हों कर लें।"

और वे देखते-देखते घोड़े पर सवार होकर आँखों से ओझल हो गये। शिकायत कमिश्नर के पास पहुंची। उसने आदेश दिया कि मुंशीराम कर्नल से माफी मांगे। क्षण भर के लिए अन्तर में संघर्ष का तुमुलनाद उठा पर दूसरे ही क्षण वे कमरे से बाहर आये और नौकरी से इस्तीफा दे दिया।

परेशान पिता ने उन्हें वकील बनाने का निश्चय किया। वकालत की परीक्षा तो वे अनेक कारणों से न पास कर सके पर मुख्तार अवश्य बन गये। तब पता लगा कि शीघ्र

ही यह नियम बनने वाला है कि जो व्यक्ति बी० ए० पास न होगा वह वकालत की परीक्षा में न बैठ सकेगा। इसलिए उन्होंने फिर वकालत की परीक्षा में बैठने का निश्चय किया। परिश्रम भी खूब किया पर एक परचे में दो अंक से रह गए। किसी ने सुझाया कि रजिस्ट्रार को रिश्वत दो, पास हो जाओगे पर वे नहीं माने। इस तरह वे वकील नहीं ही बन सके, मुख्तार ही रहे।

यह उनके भौतिक जीवन में होने वाले संघर्ष की एक झलक मात्र है लेकिन वे तो किसी और जीवन के लिए बने थे। स्वामी दयानन्द के प्रभाव में आकर वे आर्य समाज की ओर झुक रहे थे। निरन्तर स्वाध्याय करते थे। सत्यार्थप्रकाश भी पढ़ा। जब उनके मनमें उठने वाली सभी शंकाओं का समाधान हो गया तभी वे आर्य समाज के सदस्य बने। अपने पहले ही भाषण में उन्होंने कहा था, "हमारे विचार और कर्म में एकरूपता होनी चाहिए। जो वैदिक धर्म के सिद्धांतों के अनुरूप अपना जीवन नहीं जी सकता उसे उपदेश देने का अधिकार नहीं है। भाड़े के टट्टुओं से धर्म का प्रचार नहीं हो सकता। इस पवित्र काम के लिए निस्वार्थ और त्यागी पुरुषों की आवश्यकता है।"

उनका यह भाषण सुनकर आर्य समाज के वयोवृद्ध नेता लाला साईदास ने कहा था, "आर्य समाज में एक नयी स्पिरिट का प्रवेश हुआ है, देखें वह इसे तारती है या डुबोती है।" इतिहास साक्षी है स्वामी श्रद्धानन्द जीवन भर अपने उस पहले व्याख्यान को ही सार्थक करते रहे। इतिहास इस बात का भी साक्षी है कि स्वामी दयानन्द द्वारा स्थापित आर्य समाज को सही रूप देने में, पुष्पित और पल्लवित करने में जिन व्यक्तियों का योगदान कसौटी पर कसा जाकर कंचन प्रमाणित हुआ है, उनमें स्वामी श्रद्धानन्द का नाम इतिहास के पन्नों पर स्वर्णाक्षरों में लिखा हुआ है।

एक बार आर्य समाज का सदस्य बनकर फिर उन्होंने पीछे मुड़कर नहीं देखा। आगे और आगे ही बढ़ते गये। कैसा संघर्ष करना पड़ा उन्हें, आज तो इसकी कल्पना करना भी कठिन है। घर और बाहर विरोध ही विरोध था। घर का विरोध तो बहुत शीघ्र समाप्त हो गया। प्रारंभ में उन्हें कई बार अपने पिताजी से टकराना पड़ा। उन

दिन वे लाहौर जा रहे थे। पिता जी ने आदेश दिया, "जाओ बेटा! ठाकुर जी को माथा टेक जाओ।"

बेटे के सामने प्रश्न था कि क्या वह पिताजी की आज्ञा मानकर अपने सिद्धान्त की उपेक्षा करे या सिद्धान्त पर दृढ़ रह पिताजी की अवहेलना करे। कई क्षण एक तुमुलनाद घुमड़ता रहा अन्तर में। अन्त में वे बोले, पिताजी, सांसारिक व्यवहार में आप जो कहेंगे मैं वही करूँगा, पर जिन सिद्धान्तों को मैंने स्वीकार किया है उनके विरुद्ध कुछ न कर सकूँगा।"

पिताजी का क्रोध भड़क उठा, बोले, ',क्या तुम ठाकुर जी को निरा पत्थर समझते हो।"

शान्त मन मुंशीराम ने उत्तर दिया, पिताजी! परम प्रभु के बाद आप ही मेरे लिए पूज्य हैं पर क्या आप चाहेंगे कि आपकी सन्तान मक्कार हो।

पिता हतप्रभ से बोले, "नहीं तो। मैं ऐसा कभी नहीं चाहूंगा।"

उन्होंने कहा "जिन मूर्तियों में मेरा विश्वास नहीं उनके आगे सिर झुकाना क्या मक्कारी नहीं होगी।"

उस स्पष्ट उत्तर ने पिताजी को और भी परेशान कर दिया। कह उठे, "आज मुझे विश्वास हो गया कि मरने के बाद कोई मुझे पानी भी न देगा।"

फिर एक क्षण रुके, बोले, "अच्छा! अब जाओ, देर हो जाएगी।

लेकिन ये ही पिताजी एक दिन इतने बदल गये कि जब वे जालन्धर आये तो मुंशीराम साप्ताहिक सत्संग में गये हुए थे। उनके आने का समाचार पाकर तुरन्त सेवा में उपस्थित हुए। पिताजी ने पूछा—"क्या सत्संग समाप्त हो गया।" पुत्र ने उत्तर दिया, "केवल भजन आरती रह गयी थी। आपके आने का समाचार पाकर जल्दी चला आया।"

❀

(क्रमशः)

अनुवाद-संस्कृति पर एक अनुदृष्टि

(डॉ० सत्यभूषण वर्मा से अनुवाद संवाद)

डॉ० आरसु

[डॉ० सत्यभूषण वर्मा जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में जापानी विभाग के आचार्य व अध्यक्ष हैं। वे भारत के जाने माने बहुभाषा-विद्वान हैं। अनुवाद के क्षेत्र में लंबे अरसे से वे सक्रिय सेवारत हैं। जापानी से सीधे हिन्दी अनुवाद करनेवाले भारत के विरले विद्वानों में वे अग्रणी हैं।

सन् 1984 में दिल्ली में प्रथम विश्व अनुवाद सम्मेलन आयोजित हुआ था। डॉ० वर्मा इसके महासचिव थे। इस दौरान कालिकट विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डॉ० आरसु ने डॉ० वर्मा से एक भेंटवार्ता ली थी। यह भेंटवार्ता अनुवाद के उत्सुक छात्रों के लिए रोचक और प्रेरक बातों से भरपूर है।]

प्रश्न : आज अनुवाद के विभिन्न पहलुओं पर वैज्ञानिक और क्रमबद्ध अध्ययन के कुछ लक्षण दिखायी पडते हैं। आप इस क्षेत्र के एक विशेषज्ञ हैं। अनुवाद की आरंभिक स्थिति पर आप का क्या ख्याल है ?

डॉ० वर्मा : अनुवाद की आवश्यकता तब से पड़ी होगी जब से मनुष्य ने भाषा का आविष्कार किया होगा। मनुष्य समाज में रहता है और उसे एक दूसरे के संपर्क में रहने की आवश्यकता पड़ती है। आरंभ में अनुवाद भी मौखिक स्तर पर रहा होगा।

प्राचीन इतिहास में उल्लेख है कि जब एक राजा दूसरे राजा पर आक्रमण करने केलिए निकलता था तब ऐसे लोगों को भी साथ लेकर चलता था जो दुभाषिये का काम कर सकते थे। वह अनुवाद का आदिम पूर्वरूप था। साहित्यिक गतिविधि के रूप में अनुवाद को बहुत बाद में महत्व मिला।

एक देश से दूसरे देश को निकले यात्री संभवतः अनुवाद के प्रारंभिक कार्यकर्ता रहे होंगे। भारत की पंचतंत्र आदि कहानियाँ संसार के कोने कोने में प्रचलित हुई हैं। अनुवाद के माध्यम से ही यह संभव हुआ। चीनी यात्री भारत से लौटते समय भारत के विशाल साहित्य को अपने साथ ले गये। चीन के पण्डित वर्षों तक उन ग्रन्थों के अनुवाद में लगे रहे। चीन में अनुवाद को राज्य द्वारा प्रश्रय दिया गया था। पूर्ण धार्मिक विधि-विधान के साथ अनुवाद किया जाता था। संस्कृत के चीनी अनुवाद जापान में छठी-सातवीं सदी में पहुँचे और जापानी में भी उनका अनुवाद हुआ।

प्रश्न: आज अनुवाद का लक्ष्य मन बहलाव नहीं है। इस को वैज्ञानिक महत्व मिलने की परिस्थितियों पर क्या आप कुछ प्रकाश डाल सकते हैं?

डा० वर्मा: अनुवाद को आधुनिक युग में वैज्ञानिक महत्व प्राप्त हुआ है। इस युग में आदान-प्रदान के साधन सुगम हुए और दूसरे देशों के साहित्य के अध्ययन में रुचि भी बढी। विज्ञान और तकनॉलाजी के विकास के साथ-साथ विपुल जानकारी की आवश्यकता भी बढी। हर देश के सभी प्रमुख विश्वविद्यालयों में विदेशी भाषाओं के अध्ययन-अध्यापन शुरू हो गये जिन्होंने अनुवाद को एक वैज्ञानिक विषय के रूप में अपने पाठ्यक्रमों में स्थान दिया।

प्रश्न: सांस्कृतिक गठबंधन केलिए विदेशी भाषाओं का अध्ययन आवश्यक है। किन्तु दूसरे देशों की तुलना में इस दिशा में हमारी रुचि और दिलचस्पी कहाँ तक बढी है?

डा० वर्मा: दुर्भाग्यवश नहीं। हमारे देश में विश्व-भाषाओं के अध्ययन का सार्थक रूप में आरंभ भी नहीं हुआ। इसका मुख्य कारण अंग्रेजी का प्रभुत्व है। अंग्रेजी की दासता के कारण हम ने अपनी भाषाओं के घर के द्वार अन्य भाषाओं के लिए बन्द कर रखे हैं। दुर्भाग्य पूर्ण स्थिति यह है

हमारे देश में विश्वभाषाओं के अध्ययन का सार्थक रूप में आरंभ भी नहीं हुआ है।

कि इस देश में संसार के साहित्य का अनुवाद केवल अंग्रेजी के माध्यम से होता है। विश्व भाषाओं से भारतीय भाषाओं में सीधे अनुवाद करनेवाले लोग ढूँढने पर भी नहीं मिलते हैं। मूल साहित्य के सृजन केलिए इस देश में कई पुरस्कार मिलते हैं। किन्तु अच्छे अनुवाद केलिए पुरस्कार नहीं हैं। इतना ही नहीं, अच्छे अनुवाद केलिए इधर प्रकाशक भी नहीं मिलते हैं। पत्र-पत्रिकाओं के संपादक यह भी

अच्छे अनुवाद केलिए इधर प्रकाशक भी नहीं मिलते हैं।

चिंता नहीं करते कि अनुवाद मूल भाषा से हुए हैं या नहीं। यह उल्लेख करने की परंपरा इधर नहीं है कि अनुवाद ने किस मूल स्रोत का उपयोग किया है। भारतीय भाषाओं की स्थिति और भी चिंतनीय है। भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा पुरस्कृत देश की सर्वश्रेष्ठ साहित्यक कृतियाँ भी अन्य भाषाओं में उपलब्ध नहीं हैं। अज्ञेय सिर्फ हिन्दी और अमृता प्रीतम सिर्फ पंजाबी के कवि बने रहेंगे। हिन्दी जो राष्ट्र की संपर्क-भाषा कही जाती है, उसमें भी अन्य भारतीय भाषाओं का साहित्य नहीं के बराबर है। नैशनल-बुक-ट्रस्ट और साहित्य-अकादमी जैसी संस्थाएँ भी इस दिशा में एक अंश की ही पूर्ति कर पायी है। हम हमेशा राष्ट्रीय और भावात्मक एकता की बातें करते हैं। लेकिन देश का उत्कृष्ट साहित्य किसी भी एक भाषा में हमारे पास उपलब्ध नहीं है। अनुवाद को हम निम्न श्रेणी की साहित्यिक साधना मानते हैं। अनुवाद को हम ने मौलिक सृजन से हीनकार्य माना है।

प्रश्न : अनुवाद निम्न स्तरीय साहित्यिक साधन नहीं है—खास कर भारत जैसे एक बहुभाषी राष्ट्र में। अनुवाद की सांस्कृतिक भूमिका पर हम अब तक सचेत और सतर्क नहीं हुए हैं। क्या आप को इसपर आपत्ति है?

डा० वर्मा : देश की भावात्मक एकता केलिए आवश्यक है कि देश में साहित्य और संस्कृति के क्षेत्र में परस्पर आदान-प्रदान बढाया जाय जो अनुवाद के माध्यम से ही संभव है। यह भी आवश्यक है कि देश के

भारतीय साहित्य की परिकल्पना अभी हम से बहुत दूर है।

विश्वविद्यालयों में अन्य भाषाओं के अध्ययन के लिए सुविधा उपलब्ध हों। अनुवाद को मौलिक सृजन जैसा महत्व प्रदान करने केलिए एक राष्ट्रीय-अनुवाद-परिषद् की स्थापना हो। श्रेष्ठ अनुवाद को पुरस्कार देने का प्रावधान हो। भावात्मक एकता को राजनीतिक मंचों से नहीं, साहित्य के माध्यम से ही यथार्थ बनाया जा सकता है। भारतीय साहित्य की परिचर्चा के दौरान हम हिन्दी, बंगला, मलयालम आदि प्रान्तीय भाषाओं की बातें करते हैं। भारतीय साहित्य की परिकल्पना अभी हम से बहुत दूर है। भारतीय साहित्य के नाम से जो ग्रन्थ अकादमियों आदि द्वारा प्रकाशित होते हैं उनमें भी अलग अलग भाषा-साहित्यों की चर्चा है। परन्तु संपूर्ण भारतीय साहित्य की अन्तर्धाराओं पर अधिक विचार नहीं किया गया है। भारतीय साहित्य की परिकल्पना में सबसे बडी बाधा अन्य साहित्यों की सीधी जानकारी की कमी है। कोई ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि देश की किसी भी भाषा में रची गयी श्रेष्ठ कृतियाँ यथाशीघ्र अन्यान्य भाषाओं में उपलब्ध हो सकें। हिन्दी से इसका आरंभ किया जा सकता है।

प्रश्न: हमारे देश में पारस्परिक अनुवाद की प्रथम कड़ी के रूप में अंग्रेज़ी को मंजूर करने की नीति के औचित्य पर मुझे सन्देह है। आप किस नीति के पक्षधर हैं?

डॉ० वर्मा: हमारे देश में सारी स्थिति का मूल उत्तरदायित्व अंग्रेजी की दासता है। अंग्रेजी के साथ बंधे रहकर हम ने साहित्य को एक छोटे से वर्ग तक सीमित कर रखा है। भावात्मक एकता केलिए हम एक उधारी भाषा के माध्यम से कैसे आगे बढ सकते हैं? देश के अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचने के लिए देश की भाषाओं में परस्पर सीधा संवाद आवश्यक है। उसके लिए एक पूर्ण 'अनुवाद संस्कृति' (translation culture) के विकास की जरूरत है। हम एक राष्ट्र और एक संस्कृति की कल्पना करते हैं तो साहित्य में भी वह प्रतिबिंबित

होगा । एक भारत-राष्ट्र की कल्पना अंग्रेजों की देन नहीं है । 'आसेतु हिमाचल' की कल्पना बहुत पुरानी है ।

प्रश्न : अनुवाद को कुछ लोग विज्ञान मानते हैं और कुछ लोग कला । इसपर आपका खुला विचार क्या है ?

डॉ० वर्मा : मैं अनुवाद को न विज्ञान मानता हूँ न कला । एक अच्छा अनुवादक केवल भाषान्तर नहीं करता है । वह मूल का अपनी भाषा में पुनः सृजन करता है । मैं यह बात साहित्यिक अनुवाद के संदर्भ में कह रहा हूँ । कविता की एक छोटी सी पंक्ति के कई अनुवाद संभव हैं । अनुवाद को विज्ञान मानने से एक पंक्ति का एक ही अनुवाद संभव होगा । एक ही साहित्यिक कृति का अनुवाद दस अनुवादक दस तरीके से करेंगे और हर अनुवाद का अपना अलग रस और स्वाद हो सकता है । किन्हीं दो भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर लेने से ही कोई अच्छा अनुवादक नहीं बन जाता हैं । अनुवादक में अभिव्यक्ति की वही क्षमता होनी चाहिए जो मूल साहित्य के सृजन के लिए आवश्यक है ।

अनुवादक में अभिव्यक्ति की वही क्षमता होनी चाहिए जो मूल साहित्य के सृजन के लिए आवश्यक है।

प्रश्न : काव्यानुवाद में अनेक पेची-दगियाँ हैं । इस क्षेत्र में अनुवादक को किन किन बातों पर ध्यान देना पडता है ?

डॉ० वर्मा : कविता मन की सूक्ष्म भावनाओं की अभिव्यक्ति है। कविता का संस्कार अपने समाज और संस्कृति के साथ बहुत गहराई से जुड़ा हुआ है। कवि को अपनी ही भाषा में भावाभि-व्यक्ति में कई बार असमर्थ होने का अनुभव होता है। ऐसी स्थिति में एक भाषा में रची गयी कविता को उन्हीं संस्कारों के साथ अभि-व्यक्त करना सहज कार्य नहीं होगा । इसके बावजूद कविता के कई सफल अनुवाद हुए हैं और होते रहते हैं । कविता का अच्छा अनुवाद केवल शाब्दिक और भाषिक अनुवाद नहीं, कविता का पुनःसृजन है ।

प्रश्न : अनुवाद का संबंध केवल भाषा से नहीं है । संस्कृति पर भी

कविता का अच्छा अनुवाद केवल शाब्दिक और भाषिक अनुवाद नहीं, कविता का पुनःसृजन है।

उसका असर पड़ेगा। क्या आप अनूदित कृति द्वारा लाये गये सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों का कुछ दिशा संकेत कर सकते हैं ?

डॉ० वर्मा: मार्क्स का 'कैपिटल' आज 'गीता' की तरह हर भाषा में पढ़ा जाता है। जापान की पूर्ण संस्कृति और जीवन-धारा पर भारत के बौद्ध साहित्य का गहरा प्रभाव पडा है। 'पंचतंत्र' के अनुवाद ने संसार की सभी भाषाओं के लोक साहित्य को समृद्ध बनाया है। तुलसी ने अपने समय के संपूर्ण संस्कृत वाङ्मय के ज्ञान को भाषा (हिन्दी) में अवतरित करके जन जन के मानस में उतार दिया था।

प्रश्न: आपके विश्वविद्यालय (जे. एन.यू.)में विदेशी भाषा-अध्ययन की कुछ अतिरिक्त सुविधाएँ हैं। इसकी खूबी क्या है?

डॉ० वर्मा: संसार की संपूर्ण महत्पूर्ण भाषाओं के अध्ययन-अध्यापन की समुचित व्यवस्था प्रदान करने के उद्देश्य से जे. एन. यू. में पहली बार एक स्वतंत्र भाषा संस्थान की कल्पना की गयी थी। जे. एन. यू. के विदेशी-भाषा-अध्ययन संस्थान की कल्पना मुख्यत: देश की अनुवाद की आवश्यकता से प्रेरित है 'भाषओं का अध्ययन सामाजिक आवश्यकताओं के साथ उसके सांस्कृतिक महत्व के व्यापक संदर्भ में भी बहुत आवश्यक है। जापानी विभाग में प्रतिवर्ष बीस छात्रों को प्रवेश मिलता है। छः अध्यापक हैं। जापानी भाषा जाननेवालों की माँग बहुत तेजी से बढ रही है पर उस अनुपात में जापानी सीखने वालों की संख्या बहुत कम है। अनुवादक के सत्कर्म को कलंकित करनेवाली इतालवी लोकोक्ति (अनुवादक एक प्रवंचक है) की सार्थकता पर आपकी सम्मति क्या है ?

डॉ० वर्मा: कुछ लोग अनुवाद को बहुत सहज कर्म मानकर चलते हैं। उनकी करतूतों के कारण इस प्रकार की धारणाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। असल में अनुवादकों के कारण मूल लेखकों की

से जापानी से अपरिचित अनुवादकों द्वारा हुआ है और उनका वीक्षण भी ऐसे विद्वानों द्वारा कराया गया है जो जापान के बारे में कुछ नहीं जानते।

प्रश्न : हमारे देश में कई भाषाएँ प्रचलित हैं। इसलिए यह (अनुवादों का स्वर्ग) तक माना जाता है। क्या हम उसका सदुपयोग करते हैं।? आप का क्या रवैया है?

डा० वर्मा : मैं कह चुका हूँ कि भारत में अनुवाद की संभानाएँ असीम हैं। देश की पन्द्रह से बाईस भाषाओं के साहित्य को यदि परस्पर अन्य भाषाओं में अनूदित किया जाय तो इसकी कल्पना से ही कार्य की विशालता का अनुमान लगाया जा सकता है। हमारा मौलिक चिंतन देश की भाषाओं में होना चाहिए। आज अंग्रेजी के वर्चस्व के कारण यह संभव नहीं होता है। ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में अनुवाद की अपरिमित संभावनाएँ हैं।

प्रश्न : आपके विश्वविद्यालय के नेतृत्व में एक अन्तर्राष्ट्रीय अनुवाद सम्नेलन 1984 में संपन्न हुआ था। उसके संयोजक की हैसियत

हिन्दी-विश्वकोश में जापानी शब्दों के उच्चारण भी गलत हैं।

से उसकी मुख्य उपलब्धियों को कृपया उजागर करें।

डॉ० वर्मा : यह सम्मेलन विश्व में अपने ढंग का पहला आयोजन था। हमारी मूल आकांक्षा यह रही है कि हम एक ऐसे वातावरण का निर्माण कर सकें जिससे विश्व के साहित्य को भारतीय भाषाओं में और भारत के श्रेष्ठ साहित्य को विश्व की अन्य भाषाओं में पहुँचाने के लिए अनुकूल भूमि तैयार हो सके। 45 देशों से 600 प्रतिनिधि इस में सम्मिलित हुए।

भारत में अनुवाद की संभावनाएँ असीम हैं।

यह सम्मेलन देश में 'अनुवाद संस्कृति' के विकास की ओर एक महत्वपूर्ण कदम कहा जा सकता है। यह केवल एक आरंभ है। सम्मेलन की मुख्य सिफारिश यह थी कि इस प्रकार के सम्मेलन भविष्य में भी आयोजित हों। एक सिफारिश यह भी थी कि एक अन्तर्राष्ट्रीय अनुवाद-परिषद की स्थापना होनी चाहिए। भारत में

भारतीय साहित्य के बहुत कम अनुवाद विदेशी भाषाओं में हुए हैं।

भी राष्ट्रीय-अनुवाद-परिषद् की स्थापना के लिये एक समिति का गठन हो चुका है।

प्रश्न : क्या अनुवाद प्रशिक्षण द्वारा सिखाया जा सकता है? हमारे देश में अनुवाद-प्रशिक्षश के बारे में क्या आप आशान्वित हैं?

डा० वर्मा : साहित्यिक अनुवाद के लिए भाषाओं के ज्ञान के साथ सृजन की प्रतिभा और अभि-व्यक्ति की सामर्थ्य आवश्यक है। प्रशिक्षण उत्प्रेरक का काम कर सकता है। अन्य प्रकार के अनुवाद यथा व्यावहारिक अथवा वैज्ञानिक, तकनीकी आदि के लिए उचित प्रशिक्षण से प्रवीणता प्राप्त की जा सकती है।

हमारे देश में अनुवाद-प्रशिक्षण की ओर विश्वविद्यलयों का ध्यान तो गया है पर ऐसे प्रशिक्षण पाठ्यक्रम अपर्याप्त हैं। पाठ्य-सामग्री का भी अभाव है। इस दिशा में मौलिक चिन्तन अभी बहुत कम हो पाया है।

प्रश्न: भारतय साहित्य का अनुवाद विदेशी भाषाओं में हो रहा है। क्या हमारी संस्कृति को उजागर करने में उसकी कुछ भूमिका रही है? किन किन कृतियों के माध्यम से ऐसा हुआ हैं?

डा० वर्मा "हो रहा है" से यदि आपका तात्पर्य आज की स्थिति से है तो भारतीय साहित्य के बहुत कम अनुवाद विदेशी भाषाओं में हुए हैं। उनका कोई गहरा प्रभाव कहीं पड़ा है, मुझे ऐसा नहीं लगता। सबसे अधिक अनुवाद शायद रवीन्द्रनाथ ठाकुर की रचनाओं के हुए हैं और उसके पश्चात् प्रेमचंद के। इनके अतिरिक्त मैं नहीं जानता कि कोई अन्य भारतीय लेखक विश्व की अधिकांश भाषाओं में अनूदित हुआ हो। रवीन्द्रनाथ ठाकुर और प्रेमचंद की रचनाओं के भी विदेशी भाषाओं के पाठक बहुत कम हैं।

हिन्दी विभाग
कलिकट विश्वविद्यालय
कालिकट, केरल 673 635

दूरभाष : 61378 तार : "जय हिन्दी"

केरलज्योति

पुष्प 22
दल 11
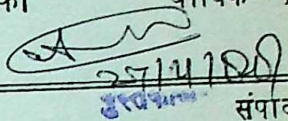
एक प्रति—1 रु० 50 पं०
वार्षिक—15 रु०

सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका
फरवरी 1988

संपादकीय

हिन्दीतर प्रान्तों की प्रतिभाओं का राष्ट्र स्तरीय विकास कैसे करें ?

हमारे विद्यालयों और महाविद्यालयों के विद्यार्थियों की कलात्मक क्षमताओं के विकास पर अधिक जोर दिया जाने लगा है । प्रतिवर्ष स्कूली स्तर पर और विश्वविद्यालय स्तर पर युवजनोत्सव आयोजित हुआ करते हैं जहाँ इन प्रतिभाओं को फूलने का अवसर मिलता है । कवितापाठ, संगीत, नृत्य आदि में प्रतियोगितायें होती हैं । समाचार पत्र इनका सचित्र विवरण प्रकाशित करके छात्रों को उचित प्रोत्साहन देते हैं । विजेताओं को आकर्षक पुरस्कार प्रदान किये जाते हैं ।

इन आयोजनों की एक बहुत बडी सीमा है । भाषा संबंधी सीमा । प्रायः ये सभी कार्यक्रम प्रान्तीय भाषा में आयोजित होते हैं । इसलिए प्रान्तीय स्तर से ऊपर उठकर राष्ट्रीय स्तर पर आने का मार्ग इन प्रतिभाओं केलिए अवरुद्ध है ।

केरल हिन्दी प्रचार सभा ने इस अवरोध को दूर करने के उद्देश्य से एक नयी योजना बनायी है । केरल के विद्यार्थियों केलिए हिन्दी में विविध प्रकार की कला प्रतियोगितायें सभा आयोजित करती है । इन प्रतियोगिताओं में तीन प्रकार के छात्र भाग लते हैं । (1) ऐसे विद्यार्थी जिन्हें पाठ्यक्रम के अलावा हिन्दी सीखने की कोई सुविधा उपलब्ध नहीं है । (2) ऐसे विद्यार्थी जिन्हें हिन्दी भाषी क्षेत्रों में काम करने वाले अपने माँ बाप के साथ हिन्दी भाषी क्षेत्रों में कुछ समय तक रहने और पढने का मौका मिला है । (3) केरल में काम करने वाले हिन्दी भाषी कर्मचारियों के बच्चे । इन तीनों प्रकार के छात्रों के हिन्दी ज्ञान स्तर में भिन्नता अवश्य रहती है । पर इन के पारस्परिक मिलन से हिन्दी एक अनोखा वातावरण उत्पन्न हो जाता है । इससे मलयालम भा

इस अंक में

विद्यार्थियों के हिन्दी उच्चारण में सुधार आ जाती है। हिन्दी भाषी छात्रों से होड़ लगाने का आत्मविश्वास उन में बढ़ जाता है। हिन्दी में भावतृत्व की भूमिका से ऊपर उठ कर कर्तृत्व की भूमिका निभाने की क्षमता उन में विकसित होती है।

अखिल भारतीय स्तर पर हिन्दी साहित्य कला प्रतियोगितायें आयोजित की जानी है जिन में हर प्रान्त के विद्यार्थी भाग ले सकें।

इन प्रतियोगिताओं का आयोजन कौन करेगा ? सरकारी स्तर पर करें या गैर सरकारी स्तर पर ? जैसे विनोबाजी का कथन है, अ-सरकारी काम असरकारी अधिक हुआ करता है। अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ—जिस के साथ देश की बीस मुख्य स्वैछिक हिन्दी संस्थायें जुडी हुई हैं, यह बीडा अपने ऊपर उठा लें तो अच्छा होगा। पहले प्रान्त स्तर पर और फिर राष्ट्र स्तर पर प्रतिवर्ष हिन्दी की साहित्य-कला प्रतियोगितायें सभी हिन्दीतर भाषा भाषी प्रांतों में और हिन्दी भाषी प्रान्तों में अखिल भारतीय हिन्दी संस्था संघ के द्वारा हों। प्रान्तीय स्तर पर और राष्ट्रीय स्तर पर आकर्षक पुरस्कार रास्ट्र के कर्णधारों के कर-कमलों द्वारा प्रदत्त किये जायें। समाचार पत्र, आकाशवाणी, दुरदर्शन जैसे जन संचार माध्यम इन कार्यक्रमों का पर्याप्त प्रचार भी करें। इस से हिन्दीतर प्रान्तों में हिन्दी के प्रति अपनापन की भावना बढेगी। हिन्दीतर भाषा भाषी छात्रों और हिन्दी भाषी छात्रों को मेलमिलाप के अवसर मिलेंगे। भावात्मक एकता भी बढेगी।
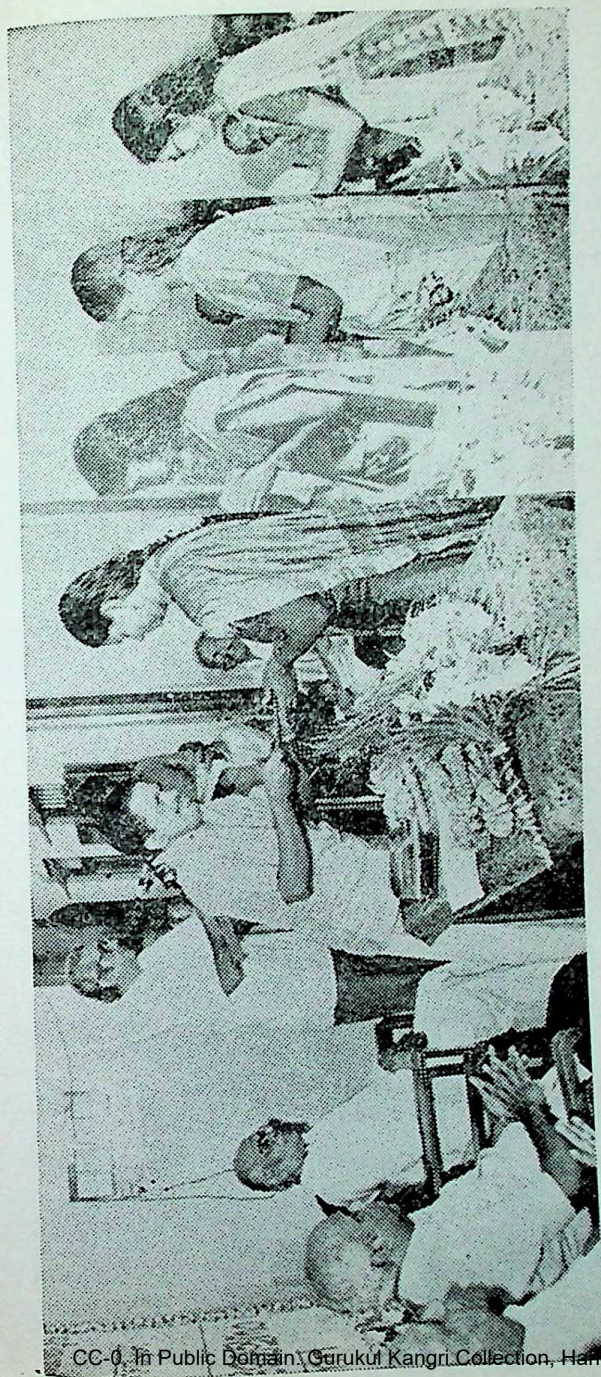
पुरस्कार वितरण समारोह

केरल हिन्दी प्रचार सभा द्वारा 1986-87 में राज्य स्तर पर आयोजित हिन्दी टंकण और आशुलिपि प्रतियोगिताओं के विजेता केरल सरकार के खेल एवं युवाकार्य मंत्री श्री. एम. नीललोहितदासन नाटार के करकमलों से पुरस्कार प्राप्त कर रहे हैं। मंच पर (बाँ से) श्री वी. एन. उण्णि श्री. सी. जे. मात्यू, प्रो० पी जे जोसफ और प्रो० एम. जनार्द्दनन पिल्लै।

नाटकीय वेशभूषा में ही
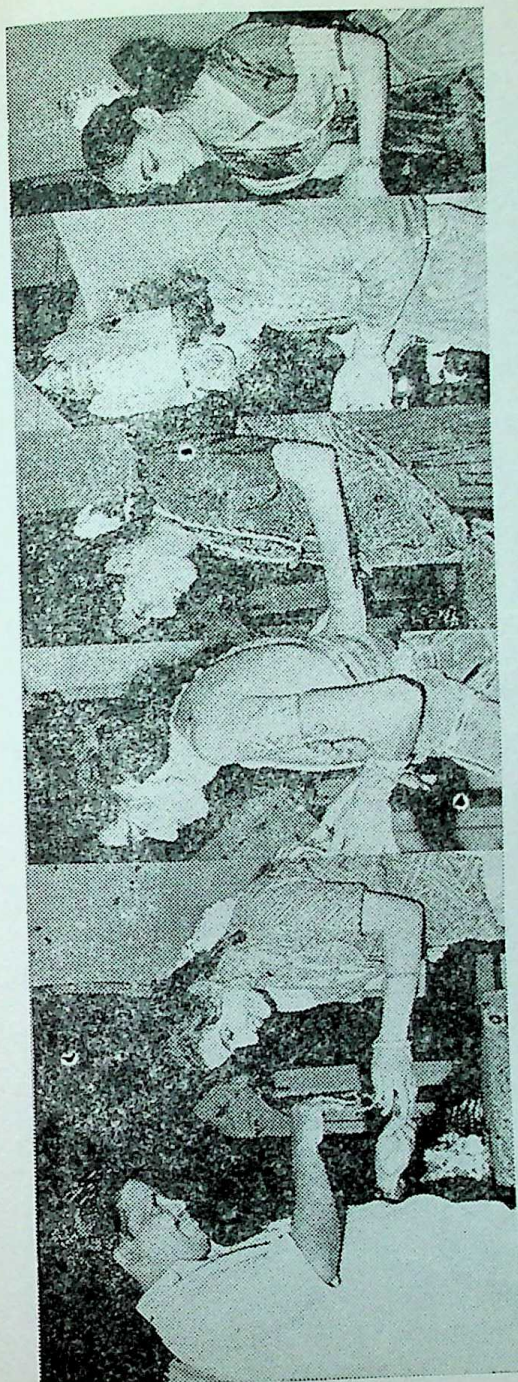
केरल हिन्दी प्रचार सभा भवन में 1988 जनवरी में दिल्ली बाल भवन सोसाइटी द्वारा प्रस्तुत नृत्य नाटक साकेत के कलाकार केरल सरकार के खेल एवं युवाकार्य मंत्री श्री. ए. नीललोहित दासन नाटार से पुरस्कार प्राप्त कर रहे हैं ।
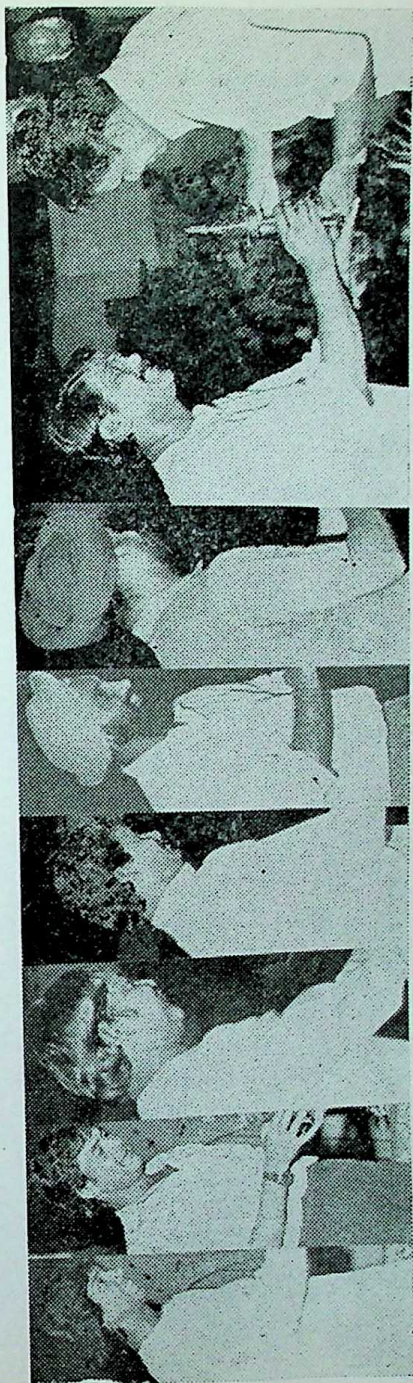
केरल हिन्दी प्रचार सभा भवन में दिल्ली बालभवन सोसाइटी द्वारा प्रस्तुत नृत्य नाटक साकेत के मुख्य कलाकार केरल सरकार के खेल एवं युवाकार्य मंत्री श्री. ए. नीललोहितदासन नाटार से उपहार प्राप्त कर रहे हैं ।

साकेत नृत्य नाटक

केरल हिन्दी प्रचार सभा के तिरुवनन्तपुरम परिसर में 6-1-1988 को बालभवन सोसाइटी, भारत, नई दिल्ली द्वारा राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त जी के महाकव्य 'साकेत' पर आधारित नृत्य नाटक प्रस्तुत किया गया। कार्यक्रम का उद्घाटन केरल संगीत नाटक अकादमी के अध्यक्ष श्री. टी. आर. सुकुमारन नायर की अध्यक्षता में आयोजित सम्मेलन में केरलसरकार के खेल एवं युवाकार्य मंत्री श्री. ए. नीललोहित दासन नाटार ने किया। विख्यात अभिनेता एवं साहित्यकार श्री. मल्लूर रामकृष्णन ने आशीर्वाद भाषण दिया।

इस कार्यक्रम में 32 कलाकारों ने भाग लिया, जिनमें प्रमुख हैं:—

श्रीमती मोहिनी माथुर
(नाटक निदेशन)

श्री. पी. पी. मारार
(संगीत निदेशन)

श्री. गुलाबसिंह वेडी
(रंगमच निदेशन)

श्री जगदीशसिंह वेडी
(सितार)

श्री. रहमत खान
(हार्मोणियम/गायन)

श्री. नाथीलाल
(गायन)

श्री. रविशंकर
(तबला) और

श्री. महेन्द्र सिंह विष्ट
(वायलिन)

मैथिलीशरण गुप्त

साहित्यों और कलाओं का आदान प्रदान हो

श्री. ए. नोल लोहितदासन नाटार
खेल व युवा कार्य मंत्री,
केरल सरकार

[9-1-1988 को केरल हिन्दी प्रचार सभा के तिरुवनन्तपुरम परिसर में दिल्ली बालभवन द्वारा प्रस्तुत नृत्य नाटक 'साकेत' का उद्घाटन करते हुए दिये गये भाषण का सारांश]

स्वागत भाषण में केरल हिन्दी प्रचार सभा के मंत्री श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने इस बात पर काफी प्रकाश डाला है, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी ने और उनकी रचनाओं ने हमारे देश के साहित्य एवं सामाजिक क्षेत्र को कैसे प्रभावित किया। उन्होंने आचार्य महावीर प्रसादजी के संबन्ध में भी बताया।

1857 हमारे राष्ट्रीय जीवन का एक महत्वपूर्ण वर्ष था। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम का वर्ष। यद्यपि इस संग्राम में हम पराजित हुए तो भी, इस संग्राम ने ब्रिटिश साम्राज्य की जड़ें हिला दीं और हमारे राष्ट्रीय जीवन के सभी क्षेत्रों में हलचल मचा दी। सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में परिवर्तन आरंभ हुए। राष्ट्रीय

भाषाओं में राष्ट्रीय बोध और सामाजिक-सांस्कृतिक नवोत्थान से संबन्धित साहित्य रचा जाने लगा। इस पर आधारित कला सृष्टियाँ होने लगीं। इसी समय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका आरंभ की। वे आधुनिक हिन्दी गद्य के पिता माने जाते हैं। उन से प्रेरणा ग्रहण करके, उस युग की चेतना को आत्मसात करके मैथिलीशरण गुप्त जी ने सार्वजनिक क्षेत्र में, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में पदार्पण किया। गत वर्ष उनकी शताब्दी मनायी गयी। अपने वातावरण और परंपरा से आवेश ग्रहण करके आपने अपनी रचनायें कीं। भारत भारती ने उस समय के युवकों में राष्ट्रीय आवेश फूंक देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

भूतपूर्व प्रधान मंत्री चौधरी चरण सिंह ने यों बताया है: "समाज सेवा की प्रेरणा मुझे आर्य समाज और स्वामी दयानन्द से मिली। राष्ट्रीयता का बोध मुझे तब मिला जब सन 1917 में मैंने भारत भारती पढी। तो स्पष्ट है कि उस युग के युवकों में राष्ट्रीय बोध उत्पन्न करने में मैथिलीशरण गुप्तजी की साहित्यक रचनायें अत्यंत सफल हुईं।

उनकी आँखें खुलवाने के लिए और हिन्दी साहित्य से अनभिज्ञ साधारण जनता को हिन्दी की संपदा से परिचित कराने के लिए ऐसे कार्यक्रम अत्यंत आवश्यक हैं।

'साकेत' की रचना का दृष्टिकोण अन्य रामकथाओं से सर्वथा भिन्न था। अयोध्या की साकेतपुरी को केन्द्र बिन्दु बनाकर इस में रामायण कथा गायी गयी है।

इस का मुख्य पात्र उर्मिला है। रामायण के अनेकों कथापात्रों के ज़रिये गुप्तजी ने पारिवारिक संबंधों में त्याग और स्नेह का आदर्श प्रतिष्ठित किया है। इतिहास और पुराणों के यशोधरा जैसे अन्य उपेक्षित पात्रों को भी गुप्तजी ने अपने काव्यों द्वारा चिरप्रतिष्ठा प्रदान की है।

अब सोचना है कि इन काव्यों पर आधारित नृत्य नाटक हमारे देश के विविध भागों में प्रस्तुत करने से लाभ हो सकता है। हिन्दी भाषा और साहित्य के संबंधमें हमारे लोगों में कई प्रकार की गलत धारणायें

हैं। अधिक प्रचलित पत्र पत्रिकाओं में ऐसी गलत धारणायें फैलाने वाले संपादकीय निकले हैं। हिन्दी साहित्य की गरिमा को जानते हुए उन्होंने ये संपादकीय लिखे हैं। सोनेवालों को जगाया जा सकता है। जागे हुओं को कैसे जगायें ? उनकी आँखें खुलवाने केलिए और हिन्दी साहित्य से अनभिज्ञ साधारण जनता को हिन्दी की संपदा से परिचित कराने के लिए ऐसे कार्यक्रम अत्यंत आवश्यक हैं।

यह धारणा बनी हुई है कि हिन्दी केवल हिन्दी भाषी क्षेत्र की, हिन्दी भाषा-भाषियों की भाषा है। यह ठीक नहीं है। आधुनिक युग में हिन्दी का विकास बंगाल में आरंभ हुआ। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी और 'सरस्वती' का केन्द्र बंगाल रहा। हिन्दी का प्राकृत रूप साधारण जनता में फैला हुआ था। देश में एक कोने से दूसरे कोने तक यात्रा करनेवाले व्यापारियों और तीर्थ-यात्रियों की भाषा के रूप में हिन्दी ने जनभाषा का स्थान पा लिया। इसी पृष्ठभूमि में गांधीजी ने राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का प्रचार आरंभ किया।

हिन्दी के संबंध में ऐसी बातें मलयालम भाषाभाषी जनता को समझाना है। प्रेमचन्द और यशपाल जैसे बहुत कम हिन्दी साहित्यकार ही केरल में जाने जाते हैं। मैथिली शरण गुप्त, दिनकर, पन्त, महादेवी जैसे साहित्यकार आज भी केरल के पाठकों केलिए ठीक ठीक परिचित नहीं हैं। इसी प्रकार मलयालम के साहित्यकारों का परिचय हिन्दी जगत में कराना है। इस के लिए योजनाबद्ध कार्यक्रम बनाने हैं जिन के द्वारा हम देश की एकता और अखण्डता को सुदृढ कर सकें।

मैथिली शरण गुप्त और वल्लतोल का तुलनात्मक अध्ययन डा० के. एस. मणी ने किया है। यह ग्रंथ हिन्दी में प्रकाशित हुआ है। इसका प्रकाशन मलयालम में नहीं हो पाया है। ऐसे तुलनात्मक अध्ययन अधिकाधिक संख्या में सभी संबंधित भाषाओं में प्रकाशित किये जायें।

मलयालम की उत्तम साहित्यिक रचनाओं पर आधारित हृद्य कलारूप उत्तर भारत के विविध भागों में प्रस्तुत किये जायें।

कला के क्षेत्र में भी ऐसे आदान प्रदान आवश्यक हैं। मलयालम की उत्तम साहित्यक रचनाओं पर आधारित हृद्य कलारूप उत्तर भारत के विविध भागों में प्रस्तुत किये जायें। हिन्दी साहित्य की 'साकेत' जैसी उत्तम रचनाओं पर आधारित दृश्यकलारूप हिन्दीतर प्रान्तों मे प्रस्तुत किये जायें। देश की आवश्यकताओं की दृष्टि से इन सब का बडा महत्व है।

'साकेत' नृत्य नाटक प्रस्तुत करने केलिए पधारे हुए कलाकारों का मैं अभिनन्दन करता हूँ और इस कार्यक्रम का उद्घाटन करता हूँ।

जय भारत

हिन्दी का ज्ञान राष्ट्रीयता को प्रोत्साहन देता है और हिन्दी अन्य भाषाओं की अपेक्षा सबसे अधिक राष्ट्रभाषा होने के योग्य है।

पं० जवाहरलाल नेहरू

हिन्दी प्रान्तों में भी हिन्दी का पर्याप्त प्रयोग नहीं होता

श्री. ए. नीललोहितदासन नाटार
खेल एवं युवाकार्य मंत्री, केरल सरकार

[केन्द्र मानव संसाधन विकास मंत्रालय की आर्थिक सहायता से केरल हिन्दी प्रचार सभा द्वारा आयोजित हिन्दी टंकण और आशुलिपि प्रतियोगिताओं के विजेताओं के प्रमाण-पत्र वितरण समारोह का उद्घाटन करते हुए 16-1-1988 को दिये गये भाषण का सारांश]

यह बडी लज्जा को बात है, स्वतन्त्रता प्राप्ति के चालीस वर्ष बाद भी अपना राजकाज करने के लिए हमारी अपनी कोई भाषा नहीं है। बताया जाता है कि हमारे देश में कई भाषाएँ हैं और इसलिए किसी एक भाषा को राजभाषा के रूप में स्वीकार करना आसान नहीं है। सोवियत संघ, चीन जैसे राष्ट्रों में भी ऐसी ही समस्या उपस्थित थी। लेकिन वे बिना विलंब अपनी अपनी आम भाषा स्वीकार कर सके। हम अब भी इस बात में सफल नहीं हो सके हैं। यदि पन्द्रह अगस्त उन्नीस सौ सैंतालीस को तत्कालीन नेता यह घोषणा करते कि कल से देश की राजभाषा हिन्दी होगी तो शायद बिना किसी विरोध के हिन्दी भारत की राजभाषा हो जाती।

यदि पन्द्रह अगस्त उन्नीस सौ सैंतालीस को तत्कालीन नेता यह घोषणा करते कि कल से देश की राजभाषा हिन्दो होगी तो शायद बिना किसी विरोध के हिन्दी भारत की राजभाषा हो जाती।

स्वागत भाषण में श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने इस आरोप का जिक्र किया कि हिन्दी थोपी जा रही है। यह आरोप निरर्थक है।

स्वतन्त्रता संग्राम के सदियों पूर्व ही हिन्दी हमारे जन जीवन में एक मुख्य भाषा का स्थान पा गयी थी। तीर्थ यात्रियों और व्यापारियों के माध्यम से यह भाषा सारे भारत में फैल गयी । आज देश की साठ प्रतिशत से भी अधिक जनता हिन्दी जानती है । इसलिए गाँधीजी ने, जो अहिन्दी भाषी थे, बताया कि हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा हो ।

तकनीकी कारणों से या प्रशासनिक कठिनाइयों से नहीं बल्कि राजनीतिक कारणों से दक्षिण भारत के एक प्रांत में हिन्दी का विरोध हुआ ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही साथ हिन्दी हमारी राजभाषा होनी थी । लेकिन एक अवधि निश्चित की गयी। तकनीकी कारणों से या प्रशासनिक कठिनाइयों से नहीं बल्कि राजनीतिक कारणों से दक्षिण भारत के एक प्रांत में हिन्दी का विरोध हुआ। वहाँ के किसी भी नागरिक से अकेले में बात करने पर मालूम होगा कि वहाँ की जनता हिन्दी का विरोध नहीं करती। राजनीतिक स्वार्थों के लिए चलाये जा रहे हिन्दी विरोधी आन्दोलन के दबाव में कई लोग दब जाते हैं। इस कारण उन्हें बडा नष्ट सहना पडता है ।

राजभाषा के रूप में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को सुनिश्चित करने केलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि हिन्दी में टंकण, आशुलिपि, आलेखन, टिप्पण आदि में प्रशिक्षण देने की पर्याप्त सुविधा हो। यह भी आवश्यक है कि केन्द्र सरकार के कार्यालयों में हिन्दी में कार्य आरंभ किया जाये ।

जब से मैं केरल का मंत्री बना तब से मेरा आग्रह रहा है कि दफ्तरी काम काज मलयालम में ही करूँ। अब मैं फाइलों में मलयालम में ही लिखता हूँ। केरल मलयालम भाषा भाषियों का प्रांत है। यहाँ की राज-भाषा के रूप में मलयालम को स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। अखिल भारतीय स्तर पर हिन्दी को राज भाषा का स्थान देने में भी कोई कठिनाई नहीं ।

हिन्दी भाषी क्षेत्रों में भी दफ्तरी काम काज हिन्दी में पूर्ण रूप से नहीं होता । हिन्दी प्रान्तों के लोग भी सामन्ती संस्कृति की प्रेरणा से अंग्रेजी में बोलना और लिखना

संसदीय राजभाषा समिति के सदस्य के नाते मैं ने पाँच वर्षों में केन्द्र सरकारी कार्यालयों का जो निरीक्षण किया उसके आधार पर बता सकता हूँ कि राजभाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग करने में हम अभी बहुत पीछे हैं।

श्रेयस्कर मानते हैं। संसदीय राजभाषा समिति के सदस्य के नाते मैं ने पांच वर्षों में केन्द्र सरकारी कार्यालयों का जो निरीक्षण किया उसके आधार पर बता सकता हूँ कि राजभाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग करने में हम अभी बहुत पीछे हैं। हिन्दी में पर्याप्त मात्रा में आलेखन, टिप्पण या टंकण और आशुलिपि लेखन नहीं होता। आज या कल हिन्दी देश की राजभाषा होगी ही। यह देश की आवश्यकता है। एक राष्ट्र के रूप में, एक जन समूह के रूप में आगे बढने केलिए भी हिन्दी हमारेलिए आवश्यक है। मेरा विश्वास है कि आज या कल सभी शक्तियाँ इस आवश्यकता को समझेंगे और स्वीकार करेंगे। ऐसी राजनीतिक शक्तियाँ भी आज देश की एकता और अखण्डता को प्रमुखता देने लगी है जो पहले इस संबन्ध में निष्क्रिय थी।

केरल एक ऐसा प्रान्त है जहाँ बेकारी की समस्या बहुत ज़्यादा है। इसलिए हिन्दी के कार्य में केरल को आगे आना है। यहाँ के शिक्षित युवकों को हिन्दी में काम करने का प्रशिक्षण देना है। केरल के ही नहीं, इतर प्रान्तों के भी केन्द्र सरकारी कार्यालयों में हिन्दी के जो पद

केरल हिन्दी प्रचार सभा के विभिन्न केन्द्रों में प्रशिक्षण की जो सुविधा है उस को विपुल और व्यापक बनाना है

सृजित होंगे उनमें नियुक्ति केलिए चलायी जाने वाली परीक्षाओं में उन्नत स्थान पाने की क्षमता केरल के युवकों को देनी है। इस केलिए केरल हिन्दी प्रचार सभा के विभिन्न केन्द्रों में प्रशिक्षण की जो सुविधा है उस को विपुल और व्यापक बनाना है। इस प्रकार के प्रशिक्षण केलिए अनुकूल वातावरण बनाने में ऐसी प्रतियोगिताएँ अत्यन्त सहायक सिद्ध होंगी। केरल हिन्दी प्रचार सभा ने ये प्रतियोगितायें आयोजित कीं इस केलिए मैं सभा का अभिनन्दन करता हूँ। इन प्रतियोगिताओं के विजेताओं का अभिनन्दन करते हुए मैं इस सम्मेलन का उद्घाटन करता हूँ।

राजभाषा नीति के कार्यान्वयन में सम्मिलित प्रयास आवश्यक है

श्री. सी. जे. मात्थु
पोस्टमास्टर जनरल
केरल परिमण्डल, तिरुवनन्तपुरम

[केरल हिन्दी प्रचार सभा द्वारा आयोजित हिन्दी टंकण आशुलिपि प्रतियोगिता के प्रमाण-पत्र वितरण सम्मेलन में दिये गये अध्यक्षीय भाषण का सारांश]

श्री सी. जे मात्थु
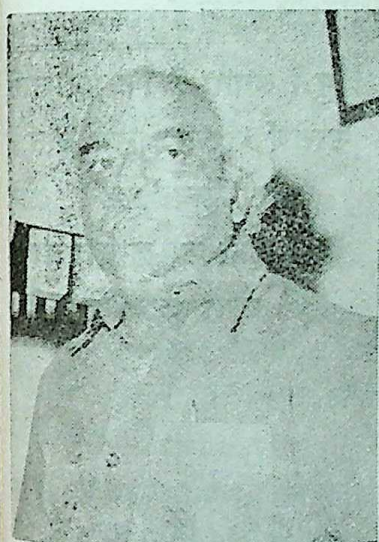
तिरुवनन्तपुरम नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष के नाते केन्द्र सरकारी कार्यालयों में राजभाषा हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने में मैं लगा हुआ हूँ। इसलिए हिन्दी के व्यापक प्रचार में लगी हुई केरल हिन्दी प्रचार सभा के इस सम्मेलन में भाग लेते हुए मुझे अपार हर्ष हो रहा है। मेरा विश्वास है कि सम्मिलित प्रयासों से ही हिन्दी का प्रयोग बढ़ सकेगा। स्वैच्छिक संस्थाओं के सक्रिय सहयोग से ही सरकार की राजभाषा नीति का सफल कार्यान्वयन हो सकेगा।

स्वागत भाषण में सभा के मंत्री श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने आग्रह किया कि केन्द्र सरकार की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन से केरल के शिक्षित युवकों की बेकारी की समस्या सुलझाने में सहायता मिले। केन्द्र सरकारी संस्थाएँ इसी

केरल स्थित केन्द्र सरकारी कार्यालयों में हिन्दी के कुछ पदों का सृजन किया जा सकेगा।

दिशा में आगे बढ रही हैं। यद्यपि नये पदों के सृजन पर केन्द्र सरकार ने रोक लगायी है तो भी राजभाषा संबन्धी पदों के सृजन में थोडी छूट मिली है। हम आशा करते हैं कि केरल स्थित केन्द्र सरकारी कार्यालयों में हिन्दी के कुछ पदों का सृजन किया जा सकेगा।

एक प्रश्न उठता है कि क्या केरल में हिन्दी के प्रयोग में वृद्धि हुई है? पिछले महीने में संसदीय राजभाषा उपसमिति के सदस्य तिरुवनन्तपुरम आये थे, उन्होंने हम से पूछा "केरल के कार्यालयों में हिन्दी जानने वालों की सख्या 80 प्रतिशत है। इनमें 40 से 50 प्रतिशत तक लोग हिन्दी में विशेष योग्यता रखते हैं। तो भी यहाँ के कार्यालयों में हिन्दी का प्रयोग वांछित मात्रा में नहीं होता। ऐसा क्यों? प्रश्न सही है। हम इस का सही उत्तर नहीं दे पाये।

मुझे लगता है कि परीक्षाएँ उत्तीर्ण करना अलग बात है और हिन्दी पढने और समझने की क्षमता प्राप्त करना अलग बात है। हिन्दी का प्रयोग करने की पर्याप्त क्षमता हम ने प्राप्त नहीं की है। इसलिए मेरा सुझाव है कि हिन्दी के पदों के सृजन के साथ साथ हिन्दी की व्यावहारिक क्षमता प्राप्त करने की दिशा में भी हम आगे बढें। अखिल भारतीय प्रतियोगिताओं में उन्नत स्थान पाने की क्षमता हमें प्राप्त करनी है।

केरल हिन्दी प्रचार सभा का और प्रतियोगिताओं के विजेताओं का मैं अभिनन्दन करता हूँ।

मुझे लगता है कि परीक्षाएं उत्तीर्ण करना अलग बात है और हिन्दी पढने और समझने की क्षमता प्राप्त करना अलग बात है।

राजभाषा हिन्दी में अखिल भारतीय प्रतियोगितायें हों

श्री. वी. एन. उण्णि
निदेशक, आकाशवाणी केन्द्र
तिरुवनन्तपुरम

आकाशवाणी का तिरुवनन्तपुरम केन्द्र राज भाषा हिन्दी के प्रगामी प्रयोग में यथा संभव योगदान दे रहा है।

गत हिन्दी सप्ताह समारोह के अवसर पर हम ने अपने विभाग के कर्मचारियों के लिए हिन्दी में निबन्ध भाषण आदि की प्रतियोगिताएँ चलायीं और विजेताओं का अभिनन्दन किया।

हमारे कार्यालय के अनेक फाइलों में हिन्दी में टिप्पण लिखा जा रहा है। केन्द्र सरकार के कई पत्रों के जवाब हिन्दी में दिये जा रहे हैं।

फिल्मोत्सव, खेलकूद जैसे अवसरों पर कमेन्टरी हिन्दी और अंग्रेज़ी में

पिछले राष्ट्रीय खेल के उद्घाटन समारोह की हिन्दी कमन्टरी दो मलयालियों ने दी थी।

दी जाती हैं। अब तक केरल से हिन्दी में कमेन्टरी प्रसारित करने के लिए उत्तर भारत के व्यक्ति बुलाये जाते थे। लेकिन इस के विपरीत पिछले राष्ट्रीय खेल के उद्घाटन समारोह की हिन्दी कमन्टरी दो मलयालियों ने दी थी। इस प्रकार यह प्रमाणित किया गया कि केरलवाले भी लिखित सामग्री का सहारा लिये बिना हिन्दी में भाव संचार कर सकते हैं। इस बात में मुझे गर्व और सन्तोष है कि दो

मलयाली प्रतिभाओं को भारत के हिन्दी प्रसारण क्षेत्र में मैं प्रस्तुत कर सका। हमारे महानिदेशक श्री. शिन्दे ने इस कार्यक्रम की बडा प्रशंसा की।

व्यक्तियों की क्षमता बढाने में प्रतियोगिताओं का बडा महत्व है। यदि प्रतियोगिता नहीं होती तो पी. टी. उषा, विश्वविख्यात नहीं हो पाती। हमें उत्तर-भारतीयों से हिन्दी में प्रतियोगिता करने की क्षमता प्राप्त करनी है। इस के लिए अखिल भारतीय स्तर पर प्रतियोगिताएँ आयोजित करनी हैं। आशा है, केरल हिन्दी प्रचार सभा इस दिशा में आवश्यक कदम उठायेगी।

हिन्दी के प्रचार में भी मिशनरी स्पिरिट और सरकारी प्रोत्साहन का समन्वय हो।

अंग्रेजी भाषा का प्रचार एक ओर मिशनरियों के प्रयत्न से और दूसरी ओर सरकारी प्रयत्न से हुआ। हिन्दी के प्रचार में भी मिशनरी स्पिरिट और सरकारी प्रोत्साहन का समन्वय हो तो अंग्रेज़ी को हटा कर थोडे ही समय में हम भारतीय संस्कृति विकसित कर पायेंगे।

हमारे रास्ते की सब से बडी रुकावट हमारी देशी भाषाओं की कई लिपियाँ हैं। अगर एक सामान्य लिपि अपनाना संभव हो, तो एक सामान्य भाषा का हमारा जो स्वप्न है—अभी तो वह स्वप्न ही है— उसे पूरा करने के मार्ग की एक बडी बाधा दूर हो जाएगी।

—महात्मा गांधी

हिन्दी का प्रचार हिन्दीतर भाषाभाषी करें

प्रो० जी. एन. पणिक्कर
निदेशक, संस्कृत विभाग एवं
विशेषाधिकारी, राजभाषा
केरल सरकार

(केरल हिन्दी प्रचार सभा द्वारा हिन्दी टंकण और आशुलिपि में आयोजित राज्यस्तरीय प्रतियोगिताओं के पुरस्कार वितरण समारोह में 16-1-1988 को दिये गये आशीर्वाद भाषण का सारांश)
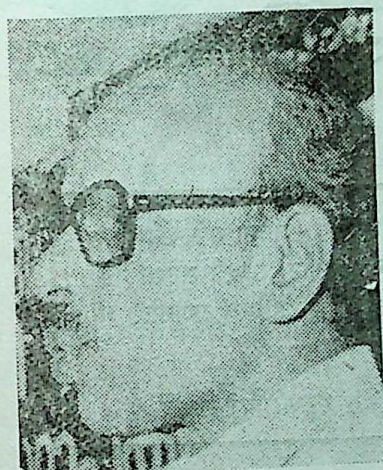
प्रो० जी. एन. पणिक्कर

कुछ वर्ष पहले समाचार-पत्र में एक वार्ता पढकर मुझे बडा आश्चर्य और सन्तोष हुआ था। हमारे इस सम्मेलन के उद्घाटक श्री. ए. नीललोहितदासन नाटार ने अखिल भारतीय कांग्रेस सम्मेलन में हिन्दी में भाषण देकर प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की प्रशंसा पायी थी। समाचार पत्रों में इस वार्ता को प्रमुखता दी गयी थी।

इतने आवेश की आवश्यकता नहीं। इसके बिना ही हिन्दी का प्रचार होगा।

हिन्दी विरोध की बात यहाँ बतायी गयी। यह विरोध कैसे आया? तमिलनाटु की जनता हिन्दी पढ रही थी। विरोध कुछ उत्तर भारतीयों के सीमातीत आवेश के कारण हुआ। इतने आवेश की आवश्यकता नहीं। इसके बिना ही हिन्दी का प्रचार होगा। हिन्दी फिल्मों और नाटकों का बडा प्रभाव यहाँ पड रहा है।

जब हम उत्तर भारत में अंग्रेजी में बोलते ही तो उत्तर मिलता है "हिन्दी में बोलो"। अंग्रेजी जानने वाले उत्तर भारतीय जब हिन्दी से अनभिज्ञ दक्षिण भारतीयों से इस

उत्तर भारत के बन्धु ऐसी मनोवृत्ति छोड दें । हमें हिन्दी पढने के पर्याप्त अवसर प्रदान करें ।

प्रकार बोलते हैं तो हिन्दी का विरोध उत्पन्न होता है । वास्तव में यह विरोध भाषा के प्रति नहीं । हिन्दी हमारी भाषा है भारत की भाषाओं में एक है । यह बात हम मानते हैं । लेकिन जब उसे इतर भाषाओं की अपेक्षा उन्नत स्थान दिया जाए तो लोगों के मन में सहज ही सन्देह हो सकता है कि इसकी मनोवृत्ति प्रभुता की है ।

उत्तर भारत के बन्धु ऐसी मनोवृत्ति छोड दें । हमें हिन्दी पढने के पर्याप्त अवसर प्रदान करें । हम हिन्दीतर भाषा भाषी हिन्दी में बोलने की, भाषण देने की और लिखने की अधिकाधिक दक्षता प्राप्त करें । हिन्दी के प्रचार और प्रयोग में हम अधिक उत्साह दिखायें ।
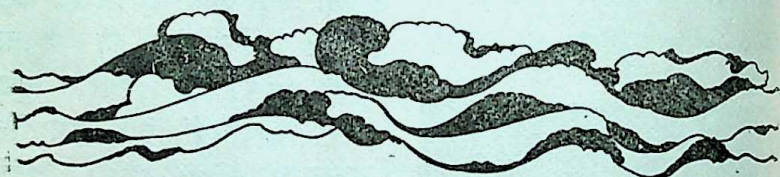
जब तक भारत की सामान्य जनता को एक बार फिर अच्छी शिक्षा, अच्छा भोजन और अच्छी सुरक्षा नहीं प्रदान की जाएगी, तब तक अधिक से अधिक राजनीति भी व्यर्थ होगी ।

स्वामी विवेकानन्द

दृश्य कलारूपों से हिन्दी का प्रचार बढ़ायें
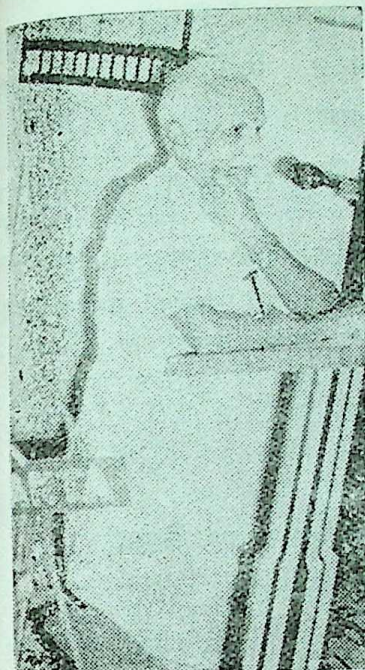
श्री. टी. आर. सुकुमारन नायर
अध्यक्ष, केरल संगीत नाटक अकादमी, तृशूर

[9-1-1988 को दिल्ली बालभवन सोसाइटी, इन्डिया द्वारा केरल हिन्दी प्रचार सभा के तिरुवनन्तपुरम परिसर में प्रस्तुत नृत्य नाटक साकेत के उद्घाटन सम्मेलन में दिये गये अध्यक्षीय भाषण का सारांश]

श्री. टी. आर सुकुमारन नायर

'साकेत' शब्द सुनते ही मुझे स्व० सी. एन श्रीकण्ठन नायर की मलयालम पुस्तक साकेत का स्मरण हो आया। उसमें ऊर्मिला को कोई प्रमुख स्थान नहीं दिया गया था। प्रमुख स्थान दशरथ को दिया गया था। कथा रामकथा है जो साकेत नगरी में घटती है। कथा यों कही गयी थी मानो "अथ केन प्रयुक्तोयं पापं चरति पूरुष, अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय बलादिव नियोजितं" वाले प्रश्न का उत्तर हो। यह साबित करने का प्रयास किया गया था कि दशरथ पर जो विपत्तियाँ आयी उनके मूल में उनके द्वारा जाने या अनजाने किये गये पाप ही थे।

'मामावरेरकर' के नाटक 'भूमिकन्या' के मलयालम अनुवाद का मंचन किया गया था। उस में भाग लेने का भाग्य मुझे भी मिला था।

स्व० सी. एन. श्रीकण्ठन नायर के मलयालम नाटक 'कांचनसीता' में ऊर्मिला को अच्छीतरह प्रोजेक्ट किया गया था।

कई लेखकों ने रामायण की उपेक्षित कथा-पात्र ऊर्मिला की त्यागनिष्ठा को उभारने का प्रयत्न किया है। शाकुन्तलम में

भी प्रियंवदा की उपेक्षा की गयी है। अन्यान्य ग्रंथों में भी ऐसे कई पात्र उपेक्षित रह जाते हैं। मानव चरित्र के मर्मज्ञ उनकी विलक्षणता पर खेलते हैं और वे अपनी रीति से उन कथापात्रों को प्रस्तुत करते हैं जिन का दर्शकों के मन पर गहरा प्रभाव पडता है।

मैथिलीशरण गुप्तजी के महाकाव्य साकेत पर आधारित नृत्य नाटक की मुख्य धारा ऊर्मिला है। यद्यपि यह हिन्दी में यहाँ प्रस्तुत हो रहा है तो भी मलयाली दर्शक इस का भाव ग्रहण कर पायेंगे। दृश्य कलारूपों की भाषा साधारण भाषा के परे है, जिसे रंग भाषा कहते हैं। यही नहीं, केरलीयों की यह विशेषता है कि वे कोई भी भाषा जल्दी सीख लेते हैं। इस बात के प्रमाण हैं कि हिन्दी करीब दो शताब्दीके पहले केरल के संभ्रान्त परिवारों में बोली जाती थी।

पचास वर्ष पहले यहाँ हिन्दी फिल्में बहुत लोकप्रिय हुई थीं। हिन्दी दृश्यकला का आस्वादन करने की जो क्षमता केरलीय जनता में है उसका लाभ उठाना आज विशेष आवश्यक बन गया है। हिन्दी के दृश्य कला रूप हिन्दीतर प्रान्तों में प्रस्तुत किये जाये तो जनता में हिन्दी सीखने का आग्रह विकसित किया जा सकेगा, हिन्दी के लिए अनुकूल वातावरण उत्पन्न किया जा सकेगा। भावात्मक एकता के लिए यह योजना सहायक होगी।

हिन्दी के दृश्य कला रूप हिन्दीतर प्रान्तों में प्रस्तुत किये जाये तो जनता में हिन्दी सीखने का आग्रह विकसित किया जा सकेगा।

आज यहाँ 'साकेत' प्रस्तुत करने वाले दिल्ली बालभवन के कलाकारों का मैं हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ। ★

विख्यात काव्य, विख्यात नृत्य-नाटक

श्री. मल्लूर रामकृष्णन

[9-1-1988 को दिल्ली भवन द्वारा केरल हिन्दी प्रचार सभा भवन में प्रस्तुत नृत्य-नाटक साकेत के उद्घाटन सम्मेलन में दिये गये भाषण का अंश]

मैथिलीशरण गुप्तजी के विख्यात महाकाव्य साकेत पर आधारित दिल्ली बाल भवन ने नृत्य नाटक बनाया है उस की प्रशंसा मैं ने सुनी है। इस उद्यम की सफलता के लिए हर प्रकार का सहयोग देना हमारा कर्तव्य है। इस में भाग लेने वाले कलाकारों में मलयाली भी हैं। इन कलाकारों का मैं अभिनन्दन करता हूँ।

भेंट वार्ता

नकल केलिए भी अकल चाहिए

[अनुवाद पर डॉ० गार्गी गुप्त से बातचीत]

डा० आरसु

प्रश्न: अनुवाद आज एक विकासोन्मुख साहित्यिक शाखा है। आपके ख्याल से इसका आविर्भाव कैसे हुआ ?

गार्गी गुप्त : अनुवाद का प्रश्न वस्तुत: भाषाओं की उत्पत्ति और उनके विकास से जुड़ा हुआ है। हर आठ कोस पर भाषा बदल जाती है । भाषाओं का विकास मानव के सांस्कृतिक विकास से सम्बद्ध है। हम जिन भाषाओं से आज परिचित हैं वे चाहे संस्कृत, ग्रीक, लैटिन, सीरियाई, फारसी, चीनी में से कोई भी भाषा हो, वे सभी उन्नत भाषाएँ हैं। भाषिक प्रतीकों और उनके रूढ़ अर्थों के लिए एक सामुदायिक जीवन का अस्तित्व अनिवार्य है। इसी से जैसे-जैसे अलग-अलग समुदाय अस्तित्व में आते गए होंगे, उनके थोड़े बहुत भेदों के साथ अपनी-अपनी भाषाएँ भी विकसित होती गई होंगी और परस्पर सम्पर्क के लिए उनमें अनुवाद की आवश्यकता भी पड़ने लगी होगी। इस प्रकार यही कहा जा सकता है कि अनुवाद की परंपरा बहुत प्राचीन काल से ही चली आ रही होगी। बाइबिल की एक बड़ी रोचक कहानी है। इसके अनुसार सृष्टि के आरंभ में सभी लोगों की एक ही भाषा थी। उन्होंने सोचा कि शिनार देश में एक सुन्दर नगर बसा मिल-जुलकर रहा जाए। वे लोग वहाँ एक बहुत ऊँची

एक ही भाषा बोलने के कारण कहीं ऐसा न हो कि एक दिन यह लोग इतने सशक्त हो जायें, कि इसके लिए कोई काम असंभव हो न रह जाये।

और शानदार मीनार चाहते थे। जब यहोवा को इनके इस इरादे का पता चला तो वह (हमारे पौराणिक इन्द्र महाराज के समान) आशंकित हो उठा। उसने सोचा कि एक ही भाषा बोलने के कारण कहीं ऐसा न हो कि एक दिन यह लोग इतने

सशक्त हो जायें, कि इनके लिए कोई काम असंभव ही न रह जाये और मेरा अस्तित्व खतरे में पड़ जाये। आशंकित यहोवा धरती पर उतरा और उसने लोगों की भाषा में गड़वड़ी पैदा करके भाषा-भेद कर दिया। अब लोग एक दूसरे की बात नहीं समझते थे। इस तरह न तो कभी वह नगर बना और न ही वह मीनार पूरी हुई। भाषा भेद हो जाने से सब कुछ गड़बड़ा गया, और उस अधूरी मीनार का नाम पड़ गया बॉबल अर्थात गड़बड़।

प्रश्न : यह महज एक कहानी है न? हम वैज्ञानिक पहलू पर बल दे रहे हैं।

गार्गी : यदि हम इसे एक प्रतीक कथा मानें तो इसका अर्थ यही निकलता है कि संसार में विभिन्न भाषाओं का अस्तित्व अनादि काल से चला आ रहा है और विश्व में व्याप्त अधिकांश गड़बड़ी का एक बहुत बड़ा कारण भाषा वैभिन्य भी है। परन्तु मानव अपने नियामक और नियन्ता से सदैव सवाया रहने की कोशिश करता रहा है और विभिन्न भाषा संबन्धो कठिनाइयों को दूर करने के लिए उसने पड़ोसी की भाषा सीख कर

विश्व में व्याप्त अधिकांश गड़बडी का एक बहुत बड़ा कारण भाषा वैभिन्य भी है।

दुभाष अर्थात् अनुवाद का माध्यम ढूँढ़ लिया। दुभाषियों के माध्यम से उसने परस्पर एक दूसरे की बात समझ कर जीवन में आगे बढ़ना शुरू किया, और होते-होते आज वह वैज्ञानिक उन्नति की अकल्पित ऊँचाइयों तक पहुँच गया है।

आज तो कम्पयूटर और इलैक्ट्रानिकी के क्षेत्र में इतनी गति से प्रगति हो रही है कि अमरीका तथा जापान के बीच अनुवाद करनेवाले टेलीफोन बनाने के लिए प्रतिस्पर्धा हो रही है। लन्दन का टैम्पेट कांती एक ऐसे उपकरण के बनाने में लगी हुई है कि बटन दबाने से ही अनुभाषा में अनुवाद हो सके। अनुवाद का बढ़ता हुआ महत्व इसी से स्पष्ट है।

प्रश्न : आपके विचार से भारत में अनुवाद कार्य का आरंभ कब से हुआ?

गार्गी : संस्कृत में अनुवाद शब्द का अर्थ था पश्चात कथन अथवा आवृत्ति कथन। किसी कथन को

संस्कृत से दूसरी भाषाओं में तो बहुत अनुवाद हुए परन्तु स्वयं संस्कृत में दूसरी भाषाओं से अनुवादों के बहुत कम उल्लेखनीय उदाहरण मिलते हैं।

स्पष्ट करने अथवा उसकी व्याख्या करने या श्रोता के मस्तिष्क में किसी बात को पक्के ढंग से बैठाने के लिए जब वक्ता मूल कथन में अतिरिक्त टिप्पणी से पाठक वर्ग के अनुसार सरल अथवा शास्त्रीय भाषा में व्याख्या अथवा किसी के गुणों की बारम्बार चर्चा करता था तो अनुवाद तथा गुणानुवाद का प्रयोग होता था।

संस्कृत विश्व की प्राचीनतम उपलब्ध भाषाओं में से एक है। उपलब्ध-सामग्री के आधार पर कहा जा सकता है कि अर्वाचीन काल में संस्कृत से दूसरी भाषाओं में तो बहुत अनुवाद हुए परन्तु स्वयं संस्कृत में दूसरी भाषाओं से अनुवादों के बहुत कम उल्लेखनीय उदाहरण मिलते हैं। संभवतः इसका मनोवैज्ञानिक कारण यह रहा हो कि भारत में ज्ञान-विज्ञान का स्तर उस समय बहुत ऊँचा रहा होगा और दूसरी भाषाओं तथा उनके साहित्य के प्रति भारतवासी का सामान्य भाव अपेक्षाकृत उपेक्षा का रहा होगा। शायद यही कारण है कि संस्कृत साहित्य में साहित्य की सभी विधाओं के बारे में शास्त्रीय ग्रन्थ मिलते हैं परन्तु अनुवाद के बारे में कोई भी रीति अथवा सिद्धान्त ग्रन्थ नहीं मिलता।

संस्कृत से अनुवाद की परंपरा बहुत पुरानी है। संस्कृत ग्रंथों के चीनी अनुवादों के बारे में हम सभी जानते हैं। चौथी शताब्दी के उत्तरार्ध में फाहियान नामक एक अत्यन्त मेधावी चीनी भिक्षु ने शास्त्रीय ग्रन्थों के चीनी अनुवादों की जांच पड़ताल की और गूढ़ विषयों को स्पष्ट करने के लिए टीकाएं तैयार कीं। 399 ई० से फाहियान ने 25 वर्ष तक भारत में रहकर संस्कृत भाषा, व्याकरण, साहित्य, इतिहास

संस्कृत साहित्य में साहित्य की सभी विधाओं के बारे में शास्त्रीय ग्रन्थ मिलते हैं परन्तु अनुवाद के बारे में कोई भी रीति अथवा सिद्धान्त ग्रन्थ नहीं मिलता।

और दर्शन का अध्ययन किया और अनेक ग्रन्थों की प्रतिलिपियाँ तैयार कीं। चीन लौटकर उन्होंने छः संस्कृत ग्रन्थों का चीनी में भाषान्तर किया।

प्रश्न : उसके प्रभाव और प्रयोजन पर भी कुछ बल दें।

गार्गी : 625 ई० में शुआन-चाङ भारत आये और सोलह वर्ष रहकर नालन्दा विश्वविद्यालय में संस्कृत भाषा, साहित्य तथा बौद्ध धर्म का बड़ी निष्ठापूर्वक अध्ययन किया। कहते हैं कि जब वह चीन वापस जाने लगे तो नालन्दा के प्रधानाचार्य शीलभद्र ने उन्हें रोकना चाहा, परन्तु उन्होंने यह कहकर रुकने से मना कर दिया कि वह चाहते हैं कि उनकी ही तरह उनके देशवासी भी भारतीय दर्शन से परिचित हो सकें, इसलिए वह देश लौटकर भारत के पवित्र ग्रन्थों का चीनी में अनुवाद करना चाहते हैं।

चीनी के अतिरिक्त सैकड़ों संस्कृत ग्रन्थों का तिब्बती भाषा में भी अनुवाद हुआ। अरब के साथ भी भारत का सम्बन्ध बहुत पुराना है। स्वामी दयानन्द ने तो सत्यार्थ प्रकाश में यहाँ तक कहा है कि महाभारत काल में भी भारतवासी अरबी जानते थे। अरबी साहित्य की अनेक विज्ञानपरक तथा साहित्यिक विधाओं के विकास में भारतीय ग्रन्थों के अनुवाद का बहुत बड़ा योगदान है।

प्रश्न : अंग्रेज़ों के आगमन के बाद इस दिशा में और भी कामयाबी हुई थी न?

डा० गार्गी : इस युग में अनुवाद के क्षेत्र में आशातीत प्रगति हुई थी। इसके विकास के दो चरण थे। पहली स्थिति यह थी कि अंग्रेज पादरियों ने भारत आकर इधर की

महाभारत काल में भी भारतवासी अरबी जानते थे।

भाषाएँ सीखीं। उन्होंने हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में बाइबिल के त्वरित अनुवाद किए। ईसाई धर्म के प्रति लोगों को आकृष्ट करने के लिए उन्होंने बाइबिल की प्रतियाँ मुफ्त में भी बांटीं। हाँ, इसका एक परिणाम यह अवश्य हुआ कि भारतीय भाषाओं के गद्य का काफी विकास हुआ।

प्रश्न : दूसरे चरण की विशेषता क्या है?

गार्गी : दूसरा चरण इससे भी अधिक महत्वपूर्ण था। हमारे

विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में अंग्रेज़ी का पठन-पाठन आरंभ हुआ। अंग्रेज शासकों ने भारतवासियों के अंग्रेज़ी पढ़ने पर ज़ोर दिया ताकि वे शासन में बाबुओं के स्तर पर उनकी आवश्यकताएँ पूरी कर सकें। फिर अंग्रेज़ी साहित्य के सौन्दर्य तथा उपादेयता से प्रेरित साहित्यकारों ने अंग्रेज़ी की कुछ उत्कृष्ट रचनाओं को भारतीय भाषाओं में लाने का प्रयत्न किया। शेक्सपियर के नाटक और गोल्ड स्मिथ तथा ग्रे की कवि-

धीरे-धीरे बात-बात पर अंग्रेज़ी से उदाहरण देना हमारे पांडित्य का लक्षण माना जाने लगा और भारतीय साहबों की एक पूरी जाति बनने लगी।

ताएँ तेज़ी से हमारी भाषाओं में अनूदित होने लगीं। इनके पठन-पाठन से हममें अपने साहित्य के प्रति एक हीनता की भावना भी जागने लगी। मृत्यु, प्रेम, युद्ध आदि के दृश्य हमारी नाट्य परंपरा में वर्जित थे परन्तु अंग्रेज़ी नाटकों में ऐसी कोई वर्जना नहीं थी। धीरे-धीरे बात-बात पर अग्रेज़ी से उदाहरण देना हमारे पांडित्य का लक्षण माना जाने लगा और भारतीय साहबों की एक पूरी जाति बनने लगी। ऐसे हिन्दुस्तानी साहबों का मज़ाक उड़ाने के लिए कुछ देशप्रेमी साहित्यकार आगे बढ़े। मोलियर के (फ्रेंच) प्रहसन इसके लिए बड़े समयानुकूल थे। इससे उनका भी अनुवाद हुआ। परन्तु यह अनुवाद फ्रेंच से न होकर अंग्रेज़ी के माध्यम से हुए, अर्थात् अनुवाद से अनुवाद हुए। इसलिए सामाजिक दृष्टि से तो ये अनुवाद बहुत सामयिक थे परन्तु अनुवाद की दृष्टि से बहुत अच्छे नहीं थे।

प्रश्न : आज अनुवाद का महत्व बढ़ रहा है, क्या भारत के लोग इससे अवगत दिखाई पड़ते हैं ?

डा० गार्गी : स्वधीनता के बाद भारत में बड़ी तीव्रगति से औद्योगिक, वैज्ञानिक तथा तकनीकी विकास हुआ है। आवागमन के साधन और अवसर भी बहुत बढ़े हैं। भाषाई तथा राष्ट्रीय एकीकरण के लिए भी हम आज पहले की अपेक्षा बहुत अधिक प्रयत्नशील हैं। इसलिए अनुवाद का महत्व निश्चय ही बढ़ा है। आज अनेक यूरोपीय भाषाओं, अफ्रीकी तथा एशियाई भाषाओं और रूसी भाषाओं के

जिस तरह सुगंध को एक शीशी से दूसरी शीशी में नहीं उलट सकते उसी प्रकार एक कविता के सौन्दर्य को दूसरी भाषा की कविता में ज्यों का त्यों नहीं उलट सकते ।

साहित्य के भारतीय भाषाओं में अनुवाद हो रहे हैं तथा भारत की भी कुछ श्रेष्ठ कृतियों तथा समसामयिक साहित्य का अनुवाद दूसरी भाषाओं में हो रहा है । आज अनेक विदेशी विद्वान भारत की भाषाएँ और भारतवासी विदेश भाषाएँ सीख रहे हैं । इधर अच्छे अनुवादों के महत्व और उसके कलात्मक पक्ष के बारे में भी अनुवादकों में चेतना जागी है । वे जानते हैं कि अनुवाद करना कोई आसान काम नहीं है । बल्कि साधना की मांग करने वाली एक गौरवपूर्ण साहित्यिक विधा है । मौलिक लेखक के प्रति ईमानदार रहना अनुवादकों के लिए अत्यन्त अनिवार्य है, यह बात वे समझने लगे हैं ।

प्रश्न : अनुवाद के अनेक प्रकार माने गये हैं । आप किसको बढ़िया अनुवाद मानती हैं ?

डा० गार्गी: जी हाँ अनुवाद के अनेक प्रकार हैं जैसे स्वच्छन्दानुवाद, भावानुवाद और शब्दानुवाद। अनुवाद कैसे भी हो, यह यों तो मूल सामग्री और अनुवाद के पाठक वर्ग पर निर्भर करता है, तथापि काव्य साहित्य का स्वच्छन्दानुवाद (फ्री ट्रान्सलेशन) ही बेहतर माना जाता है । काव्य का अनुवाद अन्य सभी प्रकार के साहित्य के अनुवाद से अधिक कठिन है । हम पानी को एक पात्र से दूसरे में उलट सकते हैं, परन्तु जिस तरह सुगंध को एक शीशी से दूसरी शीशी में नहीं उलट सकते उसी प्रकार एक कविता के सौन्दर्य को दूसरी भाषा की कविता में ज्यों का त्यों नहीं उलट सकते । सूचनाओं का अनुवाद अपेक्षाकृत सुगम है । परन्तु ललित साहित्य का अनुवाद उतना आसान नहीं होता । क्योंकि उसमें भाषा का चमत्कार भी अन्तर्निहित रहता है। यमक, श्लेष आदि अलंकारों का अनुवाद तो दुधारी तलवार पर चलने के समान कठिन है । स्थानीय मुहावरों, लोकोक्तियों, विश्वासों तथा गालियों आदि का अनुवाद भी इसी कोटि में आता है । इसलिए **अनुवाद की उत्कृष्टता विषय सापेक्ष्य**

होती है। ललित साहित्य का स्वच्छन्द या भावानुवाद हो सकता है पर सूचना और शास्त्रीय साहित्य का शब्दानुवाद ही बेहतर रहता है।

प्रश्न : साहित्यानुवाद के दौरान आने वाली प्रमुख कठिनाइयाँ कौन-कौन सी हैं ?

डा० गार्गी: यदि मूल कृति देश अथवा प्रदेश की भाषा एवं संस्कृति दूसरी भाषा के देश की भाषा एवं संस्कृति से मिलती जुलती हो तब तो अनुवाद करना अपेक्षाकृत आसान होता है। सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक दूरी जितनी-जितनी बढ़ती जाती है, अनुवाद की कठिनता भी उतनी ही बढ़ती जाती है।

साहित्य के अनुवादक के सामने सबसे बड़ी समस्या रहती है मूल भाषा के व्यंजनात्मक एवं लाक्षणिक प्रयोगों को भली-भांति समझना और फिर अनुवाद भाषा में निकट-तम अभिव्यक्ति द्वारा उसे व्यक्त करना। तुल्यरूपता की खोज अनुवाद की एक बहुत कठिन समस्या है। इसलिए मूल में निहित साहित्यिक प्रयोगों का विश्लेषण कर उसके अर्थ को सम्प्रेषित करने पर जोर देकर ही इसका समाधान

ललित साहित्य का स्वच्छन्द या भावानुवाद हो सकता है पर सूचना और शास्त्रीय साहित्य का शब्दानुवाद ही बेहतर रहता है।

किया जा सकता है। हर भाषा के कुछ ऐसे संदर्भ और प्रसंग होते हैं जो देश काल से जुडकर उसका अभिन्न अंग बन जाते हैं। हर भाषा में उस देश के सांस्कृतिक, भौगोलिक तथा ऐतिहासिक संदर्भ रहते हैं और इन सभी सन्दर्भों का संबन्ध भाषा के लाक्षणिक प्रयोगों से जुड़ा होता है। यही कारण है कि ऐसे अवसरों पर कोश भी अनुवादक का साथ छोड़ देते हैं और उसे अपनी सृजनात्मक प्रतिभा के बलबूते पर उनके समानार्थी प्रयोग तलाशने पडते हैं। "वह तो तेरा भी उस्ताद या चाचा है।" यहाँ उस्ताद गुरु और चाचा पिता का छोटा भाई नहीं है।

अमेरिका और यूरोप में बच्चे भी माँ बाप तक को उनके पहले नाम से पुकारते हैं और आपस में "तू" का प्रयोग करके बोलते हैं। यह चाहे हमारी संस्कृति के अनुकूल नहीं है

फिर भी अनुवाद में हम इसे अनदेखा नहीं कर सकते ।

एक भाषा के लाक्षणिक प्रयोगों को अनुवाद के माध्यम से दूसरी भाषा में लाना प्राय: असंभव ही होता है । किसी भाषा के मुहावरे को दूसरी भाषा में ढालना "आ बैल मुझे मार" जैसा है । कविता को तो दूसरी भाषा में ज्यों का त्यों स्थनान्तरिक कर ही नहीं सकते ।

अमेरिका और यूरोप में बच्चे भी माँ बाप तक को उनके पहले नाम से पुकारते हैं और आपस में 'तू" का प्रयोग करके बोलते हैं ।

प्रश्न : आपके अनुसार सफल अनुवादक के गुण क्या-क्या हैं ?

गार्गी : अनुवाद एक सृजनात्मक प्रक्रिया है, मूल का पुनर्कथन नहीं । वह मूल पर आधारित एक पुनर्रचना है । सफल अनुवाद वही होता है जो अनुवाद होकर भी अनुवाद जैसा प्रतीत न हो और एक मौलिक रचना का सा आनन्द दे । इसलिए किसी भी अनुवादक का प्रथम गुण है कि वह मूल में प्रतिपादित विषय से

सफल अनुवाद वही होता है जो अनुवाद होकर भी अनुवाद जैसा प्रतीत न हो और एक मौलिक रचना का सा आनन्द दे।

पूर्णतया परिचित हो । वर्णित विषय की मात्र सतही जानकारी किसी भी प्रकार अनुवादक के लिए पर्याप्त नहीं है । मान लीजिए 'बेसबॉल' सम्बन्धी किसी पुस्तक का अनुवाद करना है तो जब तक अनुवादक इस खेल से पूरी तरह परिचित नहीं होगा, तब तक उसे इस काम को कभी भी हाथ में नहीं लेना चाहिए।

अनुवादक का दूसरा गुण है उसका द्विभाषा ज्ञान । मूल रचना की भाषा और अनुवाद की भाषा दोनों पर समान रूप से उसका अच्छा अधिकार होना चाहिए । इसके अतिरिक्त यदि दोनों भाषाओं की जननी भाषाओं का भी ज्ञान हो तो सोने में सुहाग है । उदाहरण के लिए यदि किसी अंग्रेज़ी पुस्तक का हिन्दी में अनुवाद करना है तो इन दो भाषाओं के साथ साथ यदि उसे लैटिन तथा संस्कृत (उर्दू का भी) का भी थोड़ा ज्ञान हो तो बेहतर होगा ।

जहाँ भारतीय संस्कृति आध्यात्मिक और भावनापरक है वहाँ यूरोपीय संस्कृति भौतिकतावादी और विज्ञानपरक है ।

प्रश्न : भाषा की संरचना भी महत्वपूर्ण है न ?

डा० गार्गी : हर भाषा का अपना इतिहास, वाक्य विन्यास और गठन होता है । हर भाषा में अनेक ऐसे शब्द होते हैं, जिनका दूसरी भाषा में अनुवाद करना कठिन ही नहीं असंभव भी होता है, जैसे हिन्दी में आश्रम, सत्याग्रह, गुरु विभिन्न दिनों के उपवास, समाधि, गीता का कर्म सिद्धान्त, खाने-पीने के अनेक व्यंजन आदि । इन्हें अंग्रेजी में अन्तरित करना इसलिए कठिन है क्यों कि जहाँ भारतीय संस्कृति आध्यात्मिक और भावनापरक है वहाँ यूरोपीय संस्कृति भौतिकतावादी और विज्ञानपरक है । इसी से अनुवादक के सामने उपयुक्त प्रतिशब्द की समस्या हमेशा रहती है । अनुवादक की योग्यता इस बात पर निर्भर करती है कि जहाँ प्रतिशब्द उपलब्ध न हो वहाँ वह इसका समाधान कैसे करता है, मूल विदेशी शब्द को अपनाकर, उसे अपनी भाषा गठन के अनुरूप उसका अनुकूलन करके अथवा नवीन शब्द की रचना करके ।

अनुवादक का एक और अनिवार्य गुण यह भी है कि वह अपने पाठक के ज्ञान एवं भाषा स्तर का ध्यान रखे । अनुवादक की सफलता इसी में है कि अनुदित कृति उसके पाठक की समझ में आये और वह उसका लाभ उठा सके । पाठक, विषय एवं द्विभाषा ज्ञान के साथ साथ यह बात भी बहुत महत्वपूर्ण है कि अनुवादक मूल रचना के सौन्दर्य तथा उपयोगिता से प्रेरित हो । यदि वह केवल धनप्राप्ति के आशय से अनुवाद करता है तो वह उसमें कभी भी मूल की आत्मा नहीं डाल सकता । मूल लेखक के प्रति अपार आदर और निष्ठा का संबल किसी भी पारिश्रमिक से अधिक ऊँचा है । केवल धन के लिए किया गया अनुवाद कभी-कभी विशाल, रंगीन, परन्तु सुगंधहीन गुलाब जैसा हो जाता है ।

केवल धन के लिए किया गया अनुवाद कभी-कभी विशाल, रंगीन परन्तु सुगंधहीन गुलाब जैसा हो जाता है ।

प्रश्न : अनुवाद कला है या विज्ञान ?

डा० गार्गी : अनुवाद का विवेचन और सैद्धान्तिक चर्चा विज्ञान के अन्तर्गत आती है परन्तु अनुवाद विशेष रूप से साहित्यिक कृतियां के अनुवाद की प्रक्रिया कला के अन्तर्गत आती है। अच्छा अनुवाद हमेशा एक कलाकृति होता है।

उड़िया की एक कहावत है कि नकल के लिए भी अकल चाहिए। अनुवादक के बारे में आम तौर पर यह भ्रान्त धारणा बन गई है कि वह केवल भाषा का माध्यम बदल कर मूल की नकल भर कर देता है। वह कर्ता नहीं केवल अनुकर्ता होता है, इसलिए वहाँ कला और मौलिकता का कोई श्रेय ही नहीं है।

कहा जाता है कि आज विज्ञान की द्रुत प्रगति के कारण इतना समय नहीं है कि अनुवादक अपनी कृति को सजाने-संवारने या फलावे (फ्रेंच साहित्यकार) की तरह एक-एक शब्द का नगीना जड़ने के लिए हफ्तों सर खपाता रहे। आज लोगों को अनुवाद महीनों, हफ्तों या दिनों में नहीं चाहिए बल्कि मिनटों में और तत्काल चाहिए। इसीलिए अनुवाद के टेलीफोन यंत्र बन रहे हैं, बटन दबाकर तत्काल अनुवाद करने वाले यंत्रों पर परीक्षण हो रहे हैं परन्तु सच तो यह है कि शुद्ध रूप से तथ्यपरक (डाटा बेस) सामग्री को छोड़कर ये यन्त्र बहुत व्यावहारिक नहीं हैं। व्याकरण की भिन्न संरचना को देखते हुए संदर्भानुसार शब्द अथवा शब्द समुदाय का चयन करने में ये यंत्र अभी असफल हैं। फिर ललित साहित्य के अनुवाद में तो यन्त्रों की कोई सार्थकता भी नहीं। उसके लिए तो मानवीय कला तथा लेखनी की ही अपेक्षा है। भाव तथा प्रसंग के अनुसार शब्दों का चयन करना और अपनी भाषा के अनुकूल अभिव्यक्ति में इस प्रकार बैठाना कि सम्पूर्ण अनूदित कृति मूल की ही तरह कलाकृति प्रतीत हो, इसी में अनुवादक की सार्थकता है और तभी अनुवाद को एक कला माना जा सकता है।

प्रश्न : अनुवाद प्रक्रिया की प्रक्रिया कैसी है ?

डा० गार्गी: अनुवाद का अर्थ किसी वाक्य के एक- शब्द का अर्थ प्रकट करना नहीं बल्कि संपूर्ण रचना के संदर्भ में पूरे-पूरे वाक्यों का समग्र रूप से अर्थ समझकर अपनी भाषा

में सुस्पष्ट और शुद्ध ढंग से प्रस्तुत करना होता है। सामान्य रूप से होता यह है कि अनुवादक रचना को या तो पूरा पढ़ते नहीं या फिर सरसरी नज़र से पढ़ता है और अनुवाद करने बैठ जाता है। फिर एक-एक वाक्य पढ़ता जाता है और साथ-साथ अनुवाद करता जाता है। परिणाम यह होता है कि अनुवाद की भाषा मूल भाषा की संरचना का प्रतिबिम्ब बन जाती है और अपनी भाषा के गठन, व्याकरण और सौन्दर्य को खो बैठती है। सिद्धान्त रूप से तो यह ठीक है कि अनुवाद में मूल का लालित्य, सौन्दर्य एवं ओज पूरी ईमानदारी के साथ अन्तरित होना चाहिए परन्तु अनुवाद की भाषा के अपने लालित्य, सौन्दर्य एवं शक्ति व सीमा को भी साथ-साथ ध्यान में रखना होता है। पृथक्-पृथक् शब्दों का निकटतम प्रबितशब्द हो सकता है परन्तु इसे समग्रवाक्य अथवा वाक्यसमूह के संदर्भ में देखना समझना वहुत ज़रूरी है क्योंकि प्रसंगानुसार एक ही शब्द के अर्थ

अनुवाद में मूल को प्रतोति तथा प्रवाह लाने के लिए एकाध शब्द घटाना या बढाना भो पड सकता है।

बदलते रहते हैं और फिर अनुवाद में मूल की प्रतीति तथा प्रवाह लाने के लिए एकाध शब्द घटाना या बढ़ाना भी पड़ सकता है। यही नहीं आवश्यकतानुसार वाक्य रचना भी आंशिक अथवा पूर्ण रूपेण बदली जा सकती है। एक वाक्य को मिश्रित वाक्य और मिश्रित वाक्यों को कई छोटे छोटे वाक्यों में बदला जा सकता है।

हिन्दी विभाग, कालिकट विश्वविद्यालय
केरल 673635

'केशवीयम्' का आलोचनात्मक अध्ययन

— डा० कटविल चन्द्र

महाकवि के. सी. केशव पिल्लै का जन्म सन् 1867 ई. में कोल्लम तालूके में परवूर मुहल्ले के वा.षविळा नामक घराने में हुआ था। ये श्रीमती लक्ष्मी अम्मा और श्री. रामन पिल्लै के पुत्र थे। गाँव की मलयाळम पाठशाला में पाँच साल की अवस्था में विद्यारंभ हुआ। वे पन्द्रह साल की आयु में संस्कृत सीखने लगे। उन के गुरु थे वरेण्य पंडित श्री. केशवनाशान। उन्होंने ह्रस्व काल की अवधि में माघ, नैषध, मेघसंदेश, शाकुंतल, उत्तर-रामचरित, कुवलयानंद आदि ग्रंथों का गहरा अध्ययन कर काफी दक्षता प्राप्त की। एण्णय्क्काट्टु राजराजवर्मा तंपुरान ने तो उन्हें व्याकरण सिखाया। वे संस्कृत के इतने बडे पंडित थे कि वे उस में सरलता से काव्य-रचना कर सकते थे। इस दरमियान वे अंग्रेजी की जानकारी भी ग्रहण कर चुके थे। वे वर्षों तक संस्कृत-शिक्षक रहे। सन् 1901 में राजघराने के शिक्षक नियुक्त हुए। सन् 1913 को उनका अकस्मात् निधन हुआ।

रचनायें :—

केशव पिल्लै की मौलिक तथा अनूदित रचनायें कुल मिला कर संख्या में अड्तीस से ज़्यादा हैं। संस्कृत और अंग्रेजी से उन्होंने अनुवाद किया है। साहित्य की विभिन्न धाराओं और शाखाओं पर आपकी लेखनी का स्पर्श हुआ है। उनकी रचनाओं में 'केशवीयम्'[1] शीर्षक महाकाव्य और 'आसन्नमरण चिंता-शतकम्' शीर्षक विलाप-काव्य विशेष उल्लेखनीय हैं।

1 रचना-काल :—सन् 1912 ई. (एम. ई. 1088) के लगभग यह काव्य प्रकाशित हुआ था।

काव्य-सृजन के लिए प्रेरणा :—

विवेच्य युग में जब 'द्वितीयाक्षर-प्रास-वाद'[2] नामक जटिल साहित्यिक आन्दोलन चल रहा था तब प्रास-विरोधियों के पक्ष के समर्थन के उप-लक्ष्य में ही के. सी. केशव पिल्लै ने 'केशवीयम्' की रचना की थी। प्रथम सर्ग में तो कवि ने इस बात का खुल्लमखुल्ला प्रस्ताव भी किया है।[3]

कथावस्तु :—

श्रीमद् भागवत के दशम स्कन्ध में 'स्यमंतक-रत्न' की जो कथा वर्णित है सो अत्यंत लोक-प्रचलित है। इसी विषय पर विरचित सम्मोहन काव्य है, 'केशवीयम्'। इस में कवि ने मूल कथा के समस्त प्रसंगों का ज्यों-का-त्यों प्रयोग तो किया ही नहीं है। इस में मौलिक उद्भावनाओं का यथेष्ट उचित प्रयोग मिलता है।

मौलिक उद्भावनायें और उनका औचित्य :—

महाकवि के. सी. ने रस-पुष्टि की दृष्टि से मूल कथा में जहाँ-तहाँ मौलिक-उद्भावनाओं का समीचीन प्रयोग किया है जो विचारणीय है।

1. भागवत में कृष्ण सत्राजित से माँगता है कि यादवों के राजा को भेंटने के लिए यह स्यमन्तक-मणि मुझे दे दो।[4] दूसरे की संपत्ति पर मोह उत्तम नायक के चरित्र पर कलंक लगाता है। इसे 'केशवीयम्' में दूसरे प्रकार से प्रस्तुत किया गया है। कृष्ण का अनुरोध है—तुम्हारी

---

2 'प्रासवाद के समर्थक यह दावा करते थे कि कविता का सौन्दर्य तभी बढेगा जब कि उसकी सभी पंक्तियों के द्वितीय अक्षरों में स्वर-व्यंजनों की एकरूपता हो। अर्थात् सजातीय द्वितीयाक्षर के प्रयोग से ही कविता की शोभा बनी रहेगी। इस पक्ष के उन्नायक केरलवर्मा वलियकोयितंपुरान थे। विपक्षी दल ने इसका खंडन करते हुए घोषणा की कि कवि प्रास-प्रयोग के व्यर्थ-प्रयास में उलझ कर, निरर्थक शब्दों का सन्निवेशकर काव्य के अर्थ का गला ही घोंट डालेंगे। इस मंडली के पताकिक थे, ए. आर. राजराजवर्मा तंपुरान। लंबी अवधि तक चले इस आन्दोलन से मलयालम-कविता दरअसल लाभान्वित ही हो गयी।'

— लेखक

3 "तदुपज्ञं मतं नव्वं—सामंजस्य मनोहरम्
ओरुक्कियेन्नेयिक्काव्य—रचनासाहसत्तिन्नाय्।"

—केशवीयम्, प्रथम सर्ग

4 "स याचितो मणीं क्वापि यदुराजाय शौरिणा।"

— भागवत

कमनीय मणि के दर्शन के लिए मेरा मन लालायित हो रहा है। उसे संभालकर रखने की भी मेरी इच्छा होती है क्योंकि वह कहीं नष्ट न हो जाय। यह भार मुझ पर सौंप दो। मैं उस में से प्राप्त धन नियत समय पर तुम्हारे पास पहुँचाया करूँगा।[5] यह चित्रण नायक के चरित्र को पवित्र रखने में सहायक साबित होता है।

2. मूल-कथा में कृष्ण का भामा-लाभ एक आकस्मिक घटना है। पर 'केशवीयम' के मुताबिक कृष्ण पर अनुरक्त भामा, यह समझ ले कर कि पिता ने उस का विवाह शतधन्वा से करा देने का निश्चय किया है, व्याकुल हो उठती है। कोई दूत कृष्ण को इस की सूचना देता है। कृष्ण तो स्यमन्तक के दर्शन के मिस सत्राजित की राजधानी पहुँचकर भामा को दर्शन-लाभ देते हैं। यह प्रसंग शृंगार की पुष्टि में सहायक है!

3. मूल में सत्राजित स्यमन्तक-रत्न पहनते हुए द्वारका जाता है जहाँ केशवीयम में इस प्रसंग को छोड दिया गया है। इसे मिलाने में कोई विशेष प्रयोजन नहीं है। अलावा इसके कृष्ण को उस रत्न को देखने के बहाने सत्राजित के यहाँ जाने की नौबत भी मिलती है। यह परिवर्तन बिलकुल समीचीन है।

4. भागवत के अनुसार ज्योंही दोषारोपण का समाचार मिलता है त्योंही कृष्ण दो-चार अनुचरों के साथ वास्तविकता की खोज में जंगल को चल देते हैं। 'केशवीयम' में तो गुप्तचर तभी उनको समाचार देते हैं जबकि वे मंत्रशाला में बलभद्र और उद्धव के साथ उपस्थित थे। फिर वहाँ एक अच्छा मंत्र-विचार ही चलता है। इस परिवर्तन के उद्देश्य और औचित्य स्पष्ट हैं।

5. भागवत का जांबवान गुफा-निवासी है। लेकिन केशवीयम् में गुफ़ा की जगह सुन्दर हवेली नजर आती है। कृष्ण लाल रत्न की बढ़ी हुई शोभा के समान चमकते फाटक

---

5 "कामप्रदं निन्मणीं काणुवानेन्
कण्णिनु कौतूहलमुँटु पारम्;
स्थानत्तिल् निन्नायतु पोयिटाते
पालिप्पतिन्नुं परमाग्रहं मे।"

— केशवीयम, सर्ग-2

इसके द्वारा कवि ने सिद्ध किया है कि जांबवान श्रीराम और श्रीकृष्ण दोनों ही का उपासक रहा था ।

गोपुर व बड़े सफ़ेद महल को देख ते हैं ।[6]

6. केशवीयम का गरुड़-प्रसंग मूलकथा में नहीं मिलता । मौलिक-उद्भावनाओं की सृष्टि के क्षेत्र में, भारतीय-साहित्य में, कालिदास सर्वप्रथम और अग्रणी हैं । उन्हीं के पद-चिह्नों का पल्ला पकड़ कर कवि ने उक्त प्रसंग को जन्म दिया है ।

7. कुंचन नंप्यार ने अपनी रचना 'स्यमंतकम् तुल्लल्' में यह परिवर्तन प्रस्तुत किया है कि जांबवान की गुफ़ा की भित्ति में रामायण की कथा खुदवायी गई है । पर केशव पिल्लै ने उसे भी पार कर इसका उल्लेख किया है कि दीवार पर रामायण-कथा के साथ-साथ श्रीकृष्ण चरित भी चित्रित हैं । इसके द्वारा कवि ने सिद्ध किया है कि जांबवान श्रीराम और श्रीकृष्ण दोनों ही का उपासक रहा था । यह प्रसंग भी उचित और मार्मिक है ।[7] संक्षेपतः केशवीयम् की मौलिक उद्भावनायें सोद्देश्य एवं प्रसंगानुकूल हैं ।

'केशवीयम्' में कई मार्मिक प्रसंग देखने को मिलते हैं जहाँ कवि का रचना-कौशल उभर आया है । सत्यभामा का प्रेम-संदेश हृदयहारी है । वह कहला भेजती है कि पिता ने मुझे शतधन्वा से ब्याह देने का निश्चय किया है । मुझे मालूम है कि पित्राज्ञा के उल्लंघन की सोचना ही

6 "चेम्पोन्माण प्रौढ़तर प्रकाशम्
चेरुं मनिलेट्टुकल् गोपुरीघम्
वम्पोत्त वेण्मालिकयेन्निवेल्लाम्
मुम्पिल् तेलिञ्ञम्मुखरि कण्टु ।"

— केशवीयम्. सर्ग-8

7. "यह कवि का सोद्देश्य परिवर्तन ही रहा है । जब जांबवान को इसका पता चलेगा कि मैं ने अपने आराधना-पात्र से ही अठाईस दिनों तक द्वंद्व-युद्ध किया था तभी पश्चाताप की शक्ति बढ़ जायेगी । उसी प्रसंग में अपने अज्ञान के प्रायश्चित् स्वरूप पुत्री को सौंपने का कार्य अनुभव की रसिकता को बढ़ायेगा भी । इन से अनुमान लगाया जा सकता है कि कवि ने अत्यन्त सूक्ष्म कवि-कर्ममर्मज्ञता के साथ ही प्रत्येक प्रसंग में मौलिक उद्भावना का उचित प्रयोग किया है ।"

—ए. डी. हरिशर्मा, महाकवि के. सी. केशव पिल्लै, पृ० 194

घोर पाप है। फिर भी जिस पुरुष पर मन नहीं लगता उसकी पत्नी बनने की अपेक्षा कहीं मृत्यु ही वांछनीय है। अत: मुझ अनाथ को आसरा देने की कृपा करें।[8] इतना ही नहीं, वह अपनी विनय के समर्थन में यह भी सूचित करती है कि तू ने पुण्यशालिनी वैदर्भी का दुःख दूर किया ही नहीं, बल्कि शादी भी नहीं की?[9] भामा की उक्ति से उसकी

जिस पुरुष पर मन नहीं लगता उसकी पत्नी बनने की अपेक्षा कहीं मृत्यु ही वांछनीय है।

कुलीनता स्पष्ट झलकती है। यहाँ व्यंग्य रूप से ही वह कृष्ण की पत्नी बनने की इच्छा प्रकट करती है। उसकी पितृ-भक्ति अथाह है। इसी लिए कृष्ण से उसका निवेदन है कि कृपया मेरे ताप को इस प्रकार दूर करे ताकि मेरे पिता को रंच मात्र भी द्वेष और दोष न होवें।[10]

कृष्ण स्यमंतक देखने के बहाने, अपने मन को चुरा कर छिपी रहने-वाली भामा को ढूँढ निकालने के वास्ते सत्राजित के राजमहल पहुँचते हैं। प्रियतम के दर्शन के लिए आतुर भामा पहले ही हवेली की छत पर उपस्थित हो जाती है। जब स्यमंतक के बारे में चर्चा करके कृष्ण विदा हो लेते हैं तब सत्राजित थोड़ी दूर उनका पीछा करता है तथा कृष्ण के अनुरोध से लौट पड़ता है। इस बीच कृष्ण और भामा की आँखें एक बार उलझ जाती हैं और वह मोहिनी लज्जावश नतमस्तक भी हो जाती है। लेकिन जितनी दूर पीछा कर सकती है, भामा की आँखें उतनी दूर कृष्ण का अनुधावन करती हैं। फिर उस सुंदरी के नयन अपने प्रिय के वर नेत्रों का झट से आलिंगन

---

8. 'केशवीयम्, सर्ग-1

9. "पुण्यशालिनी वैदर्भिक्कन्नु'दच्चोरु संकटम्
पोक्कियेन्नल्लवले नी वेल्क्कयुं चेय्तिल्लयो ?"
—केशवीयम्', सर्ग-1

10. "द्वेषवुं दोषवुं लेशं तातनुंटायिटाते तान्
तापं मम हरिच्चीटान् तिरुवुल्लमुदिक्कणम्।"
—'केशवीयम्', सर्ग-1

फिर उस सुंदरी के नयन अपने प्रिय के वर नेत्रों का झट से आलिंगन करके शनैः शनैः लौट पड़ते हैं।

करके शनैः शनैः लौट पड़ते हैं । इस प्रसंग की स्वाभाविकता और मार्मिकता अनोखी है।

कवि की लोक-निरीक्षण-पटुता और शांति-प्रियता इस काव्य में उपलब्ध हैं। कृष्ण के खिलाफ़ लोक-लांछन को फैलते देख कर बलभद्र अतीव कुपित हो उठता है तथा सत्राजित से बदला लेना चाहता है। उस अवसर नीतिकुशल उद्धव उसे शान्त करते हुए बताता है कि सत्राजित अपने सगे भाई प्रसेन की अकाल मृत्यु व अमूल्य रत्न के नष्ट से उद्भूत शोक में गोता लगाता रहता है। वह पागल-सा हो रहा है। अतः उस पर क्रुद्ध न हो कर उसके प्रति सहानुभूति ही प्रकट करनी चाहिए। हिंसा से दूषण शत-गुना बढ़ ही जायेगा। सत्यता सिद्ध करके ही दोषारोपण से बचना चाहिए।[12] असल में उद्धव की उक्ति कवि की अपनी होती है।

व्यंग्य-चित्रण में के. सी. केशव पिल्लै ने तत्कालीन लगभग अन्य सभी कवियों को मात कर दिया है। यह काव्य व्यंग्य की छटा से सुशोभित है। सत्यभामा कहीं भी इसका सीधा प्रस्ताव नहीं करती कि कृष्ण उसे दुल्हिन बनायें। वह केवल इतना ही कहती है कि हे प्रियतम, लज्जा मेरी जीभ को रोकती है। नहीं तो, हे सर्वज्ञ ! मैं

11. तनिक्कु पोकान कपियुन्न दूरं
वरन्नु ताने पिरके नटन्न्
वरांगि तन् दृष्ट वरेक्षणत्ते-
प्पुणर्न्नु पेट्टेन्नु मटङ्ङि मदं ।"
—'केशवीयम्', सर्ग-2

12 दूषणाभिघजल प्रवाहमी
हिंसयाकुम कोंटु निन्निटा;
अन्वयल्लिविटे हिंस चेय्किलि-
दूषणं शतगुणं वर्कन्निटुं ।"
—'केशवीयम्, सर्ग-5

वह बात ही क्यों कह दूँ ? [13] 'सर्वज्ञ' शब्द यहाँ सार्थक है। इससे रुक्मिणी के कृष्ण के द्वारा उद्धार करने की घटना व्यंजित होती है। इसी प्रकार सत्राजित के संबंध में कृष्ण की यह उक्ति कि कुचला-तरु पर कल्पवल्लरी को फैलाने की चेष्टा करनेवाले लोग अब भी यहाँ ज़िन्दा हैं, सुन्दर व्यंग्य का दृष्टांत है। [14] इस प्रकार के कई उदाहरण इस काव्य से उद्धृत किए जा सकते हैं।

'केशवीयम्' एक दार्शनिक कृति भी है। इस में लोकोक्तियां तथा अन्य वर्णनाओं के ज़रिए भारतीय दर्शन का प्रतिपादन किया गया है। ये समस्त वर्णन अत्यंत रोचक बन पड़े हैं। मृत प्रसेन को देखकर कृष्ण दार्शनिक विचार-धारा में बहते जाते हैं। यहाँ कवि नियतिवाद को प्रमुखता देता है और कृष्ण से कहलवाता है कि विधि की गति अवश्य आश्चर्यजनक है। यही नहीं, आपत्तियों से घिरा, क्षणभंगुर मानव-जीवन अनुपम शोचनीय भी है।

व्यंग्य-चित्रण में के. सी. केशव पिल्लै ने तत्कालीन लगभग अन्य सभी कवियों को मात कर दिया है।

कथानक की संरचना पर संस्कृत के माघ, अभिज्ञान–शाकुंतल, रघुवंश आदि काव्यों का प्रभाव लक्षित होता है। 'माघ' के द्वितीय सर्ग के अनुसार इस काव्य का पाँचवाँ सर्ग बना है। दोनों के कथा-पात्रों तथा 'कार्य-विचार' तक में बडी समानता पायी जाती है।[15]

'केशवीयम्' का अंतिम सर्ग 'अभिज्ञान-शाकुंतल' के ढांचे में डाला गया है। जिस प्रकार तात-कण्व अपनी दत्तक-पुत्री शकुंतला को ससुराल को विदा करते हुए उपदेश देता है उसी प्रकार पति के गृह को

13. "प्रियनेप्परयान् नाणं नाविनेत्तटयुन्नु मे;
अल्लेंकिलायतेंतिन्नु सर्वज्ञ ! परयुन्नु वान् ?"
—'केशवीयम्', सर्ग-1

14 "कारस्कर मर्त्तिकल् कल्पवल्लि पटत्तुवान्
तुनियुं मनुजन्मारङ्ङनियुं भरुबुन्नृवो ?"
— 'केशवीयभ, सर्ग-1

15 ए. डी. हरिशर्मा, "महाकवि के. सी. केशव पिल्लै", पृ. 205-206

प्रस्थान करनेवाली सत्यभामा को उसकी माता आवश्यक उपदेश देती है। उसके उपदेश का सार यह है कि नारियों को ईश और पति का सदा भजन करना चाहिए। वैसे, अत्यंत विनयी भी होना चाहिए।[16]

जिस प्रकार तात-कण्व अपनी दत्तक-पुत्री शकुंतला को ससुराल को विदा करते हुए उपदेश देता है उसी प्रकार पति के गृह को प्रस्थान करनेवाली सत्यभामा को उसकी माता आवश्यक उपदेश देती है।

आलोच्य काव्य के ग्यारहवाँ सर्ग रघुवंश से प्रभावित है। रघुवंश में रावण-वध के उपरांत राम सीता समेत पुष्पक-विमान पर चढ़कर अयोध्या को लौटते हैं। रास्ते में वे अपनी प्रियतमा को प्रत्येक प्रदेश का विवरण सुनाते जाते हैं। इसी प्रकार जांबवती को ब्याह कर द्वारिका को लौटनेवाले कृष्ण गरुड पर सवार हो कर अपनी प्रिया को हर जगह से परिचित कराते जाते हैं।[17]

'केशवीयम्' में नवीन रचना कौशल पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हैं। इसकी रचना में वैदर्भी-रीति को अपनाने का आग्रह कवि ने किया

---

16 "ईशनेयुमतुपोले नारिमार
कांतनेयुमनिशं भजिक्कणं;
पेशलांगि ! तव कांतसेवनं
केवलं मतियिवय्क्कु रंटिनुं
भाग्यवैभवमितिन्नु भूषणं।
बालिके ! विनयमाण;-तेवयुं
श्लाघ्यमां विधमणिञ्ञुकोंटु नी
शाश्वतं सुखमियन्नु वाणुक।"

— 'केशवीयम्', सर्ग-12

17 "......ऐसा लगता है कि कालिदास के 'रघुवंश' के 13 वें सर्ग का प्रभाव 'केशवीयम' के 11 वें सर्ग पर पडा है। .... भागवत में गरुड का प्रसंग नहीं है। यह कवि की अपनी कल्पना-संतान है। कालिदास ने इन सब मौलिक परिवर्तनों का मार्ग-दर्शन किया होगा।"

— ए. डी. हरिशर्मा, "महाकवि के. सी. केशव पिल्लै", पृ. 213

है। उसने कालिदास को अपना पथ-प्रदर्शक भी मान लिया है[18] ए. आर. राजराज वर्मा ने इसे वैदर्भी-रीति के पुनर्जागरण का काव्य कह-कर इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा भी की है।[19] लेकिन उल्लूर ने उक्त काव्य में से कई उदाहरण प्रस्तुत करते हुए इस दावे का खंडन किया है।[20] काव्य की अनुप्रेक्षा से पता चलेगा कि यह काव्य शैली व प्रयोग की दृष्टि से 'माघ' और 'हर्ष' से अनुप्राणित है। केवल 'माघ' और 'हर्ष' ने ही 'अवतरं' को अवतार तथा 'सिन्धु-को चाँद के पर्याय-स्वरूप प्रयुक्त किया है यह प्रयोग व्याख्या-गम्य भी है।

पांडित्य-प्रदर्शन के चक्कर में कर कवि ने कहीं-कहीं साधारणी-करण में बाधा उपस्थित की है। व्याकरण संबंधी एकाध त्रुटियाँ भी मिलती हैं। 'इह', 'इथ', 'हन्त-हन्त' आदि निरर्थक शब्द भी जहाँ-तहाँ घर कर गये हैं। शब्दाडंबर का प्रदर्शन भावात्मक-ध्वनि को अभिव्यंजित होने नहीं देता। अतः इस काव्य में शब्द-भ्रम के कारण अरोचकता यत्र-तत्र खटकती है।[21] इसके उदाहरण छठे और सातवें सर्गों में मिलते हैं। लेकिन ये कमियाँ संपूर्ण काव्य की बढ़ी हुई शोभा के सामने नगण्य हैं।

कवि ने महाकाव्य के लक्षणों के हठ को छोड कर उचित शब्दों

---

18 "कालिदास कवींद्रन्टे कालमखेंदु मरीचिकल्
काव्याब्धाखिल् संचरिक्कुमेनिक्कु वषिकाट्टणं।"
—'केशवीयम्', सर्ग-1

19 ए. आर. राजराज वर्मा, 'केशवीयम्' की प्रस्तावना-पृष्ठ

20 "किसी को इस में मतभेद नहीं हैं कि 'केशवीयम्' एक समंजस महाकाव्य है। पर प्र... में यह भी परखना चाहिए कि प्रास से पंगूकृत हुए बिना काव्याब्ध में स्वच्छ... विहार करनेवाले कवि को क्या-क्या लाभ मिले ?.........इसके श्लोक चमत्कार से एकदम शून्य नहीं हैं। कहने का तात्पर्य यही है कि यह कालिदास का मार्ग हर्गिज नहीं है।"
—उल्लूर एस. परमेश्वरय्यर, "केरल साहित्य चरित्रम्", भा॰ V, पृ. 106

21 पी. के. परमेश्वरन नायर, "आधुनिक मलयाल साहित्यम्", पृ. 326-327.

इसी पद्धति के अनुसार निर्मित प्रथम महाकाव्य की हैसियत से 'केशवीयम' एक महत्वपूर्ण रचना है ।

से काव्य को संवारा है । समस्त वर्णनायें नाति-दीर्घ और नाति ह्रस्व हैं; यह इसका एक विशेष महत्व है । काव्य-लक्षणों की पूर्त्ति के लिए कृत्रिमता का सहारा भी नहीं लिया गया है । द्वितीयाक्षर-प्रास को छोडकर अन्य सभी प्रासों का उचित प्रयोग हुआ है । अर्थालंकारों की छटा, व्यंग, शैली की सरसता और सहजता, रसाभिव्यंजना, दार्शनिकता आदि की रमणीयता देखते ही बनती है ।[22]

केरलवर्मा-युग में मलयालम साहित्य में महाकाव्य की रचना के लिए संस्कृत की घिसी-पिटी शास्त्रीय-पद्धति ही का प्रयोग किया जा रहा था । फलत: कला-पक्ष की पुष्टि होती गयी तथा भाव-पक्ष एकदम शुष्क और नीरस बनता गया । इसकी प्रतिक्रिया के रूप में 'राजराज वर्मा-प्रणाली' प्रचलित हुई । नवीन दृष्टिकोण से महाकाव्य रचने का प्रयास भी हुआ । इसी पद्धति के अनुसार निर्मित प्रथम महाकाव्य की हैसियत से 'केशवीयम्' एक महत्वपूर्ण रचना है ।
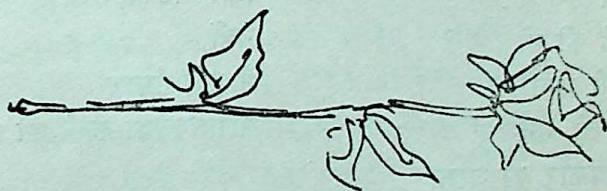
22 पी. के. परमेश्वरन नायर, "आधुनिक मलयाल साहित्यम्", पृ. 326 तथा कुम्मार, "पद्य साहित्य चरित्रम", पृ. 180

क्षमा करो

प्रो. टी. के. भास्कर वर्मा
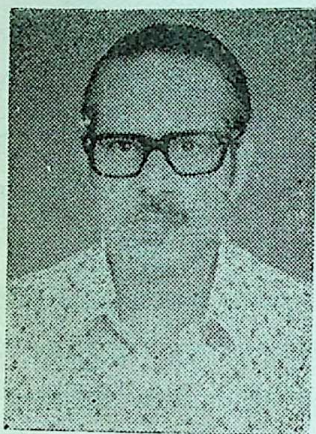
काँपता हाथ,
काँपती लेखनी,
काँपता जी बेवस।
भाव हैं अनेकों,
दिल में,
लाऊँ
कैसे प्रकाश में?
लेखनी की नोक में?
मुझे भी जीना है,
मैं भी तो मनुज हूँ न?
साहित्यकार का जामा
पहने
जीना दूभर लगता,
कुछ भी लिखूँ
कोई बन जाता दुश्मन।

सच्चाई
बंधन में पड़ी;
हाथ हैं बँधे
लेखनी कुंठित,
मुँह पर लगी मुहर,
कुछ भी कहूँ,
बनते कई जानी दुश्मन।
लगता भला
इसमें
कि चुप्पी साधूँ,
विश्राम दूँ
लेखनी को;
ख़ाली करूँ चित्त को
रंग-विरंगी कल्पनाओं से,
क्रांति के उद्गारों से,
धर्म के अन्धाचारों की
भर्त्सना से,
कुशल इसी में
लगता मुझे।
क्षमा करो
प्रिय पाठको,
नहीं,
मैं नहीं तैयार
साहित्यसेवा करने को॥

●

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
सरकारी वनिता कालेज
तिरुवनन्तपुरम

दूरभाष : 61378 तार : "जय हिन्दी"

केरलज्योति

पुष्प 22
दल 12

एक प्रति—1 रु० 50 पं०
वार्षिक—15 रु०

सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका
मार्च 1988

सपादकीय

हिन्दी प्रचार—गत सत्तर वर्षों में

महात्मा गांधी के आह्वान पर केवल रोटी कपडे के प्रतिफल पर दक्षिण में हिन्दी प्रचार करने केलिए जिन स्वयंसेवकों ने अपना नाम लिखाया था उन में सर्व प्रथम थे पं० हृषीकेश शर्मा। आजीवन वे हिन्दी की तपोनिष्ठ सेवा में लगे रहे।

पं० शर्माजी की जयन्ती के अवसर पर केरल हिन्दी प्रचार सभा के तिरुवनन्तपुरम परिसर में आयोजित सम्मेलन में गत सत्तर वर्षों के हिन्दी प्रचार अभियान का सही मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया। सम्मेलन के भाषणों का सारांश इस अंक में प्रकाशित है।

विद्वान वक्ताओं ने बताया कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व स्वतंत्रता संग्राम के अभिन्न अंग के रूप में हिन्दी प्रचार अभियान जब आरंभ हुआ तब इसमें पंडित हृषीकेश शर्मा, देवदूत विद्यार्थी जैसे अनेकों ऐसे कार्यकर्ता जुट गये जो देशप्रेम से प्रेरित हो कर देश की एकता और स्वतंत्रता को लक्ष्य मान कर निस्वार्थ भाव से समाज सेवा के रूप में हिन्दी का प्रचार कार्य करते रहे। हिन्दी का कार्य उन केलिए जीवन व्रत था। धन या यश का लोभ उन्हें छू तक नहीं गया था। स्व० के. वासुदेवन पिल्लै उस कोटि के कार्यकर्ता थे। उस पीढी के इने गिने कार्यकर्ता आज भी जीवित हैं।

आरंभ के चालीस वर्षों में हिन्दी प्रचार में देश प्रेम की जो भावना भरी हुई थी वह बाद के तीस वर्षों में शायद नहीं रही।

इस अंक में

हिन्दी को देश के नवनिर्माण के लिए अपेक्षित रचनात्मक कार्यक्रम की दृष्टि से नहीं, जीविकोपार्जन के एक उपाय की दृष्टि से देखा जाने लगा ।

आज समय आ गया है कि हिन्दी प्रचार की वह खोयी हुई गौरवपूर्ण त्यागनिष्ठ शैली पुनः अपनायी जाये। हिन्दी प्रचारकों की एक ऐसी पीढ़ी तैयार करनी है जो देश की एकता और स्वतंत्रता को बनाये रखने के महान उद्देश्य को लेकर देश सेवा के एक रचनात्मक कार्यक्रम के रूप में हिन्दी प्रचार को अपना जीवन व्रत बना लेगी और अपने निस्वार्थ प्रयत्नों से दूसरों के समक्ष उत्तम आदर्श प्रस्तुत कर सकेगी ।

सम्मेलन में उन कारणों की भी विवेचना की गयी जिनसे हिन्दी प्रचार अपने उन्नत आदर्श-पथ से च्युत होता जा रहा है । एक प्रमुख कारण यह बताया गया कि हिन्दी प्रचार को आज समाज वांछित सम्मान नहीं दे रहा है । स्वतंत्रता संग्राम के अन्य सेनानियों को जैसे सम्मान राष्ट्र ने किया है वैसा सम्मान उन हिन्दी प्रचारकों का नहीं किया गया जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के अभिन्न अंग के रूप में हिन्दी का प्रचार किया था और उस यज्ञ में अपने जीवन का

(शेष पृष्ठ 39 पर)

खुदाई खितमतगार, सीमांत गांधी

खान अब्दुल गफ्फार खाँ

जो अब स्मृतिशेष रह गये

(1890–1988)

राष्ट्रीयता की एक मुख्य आस्ति है हिन्दी

श्री. वर्कला राधाकृष्णन

अध्यक्ष, केरल विधान सभा

[स्व० पं० हृषीकेश शर्मा के 97 वें जन्म दिवस के अवसर पर केरल हिन्दी प्रचार सभा द्वारा 14-1-1988 को सभा के तिरुवनन्तपुरम परिसर में आयोजित सम्मेलन का उदघाटन करते हुए दिये गये भाषण का सारांश।]

भारत का राष्ट्रीयता की एक मुख्य आस्ति है, हिन्दी। यह हमारे स्वतंत्रता संग्राम का एक अभिन्न अंग है। स्वतंत्रता संग्राम के समय ही हम ने निर्णय लिया था कि भारत की एक राष्ट्रभाषा हो। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेज़ का और राष्ट्रीय आन्दोलन का एक मुख्य नारा भी यही था। बाद की घटनाओं ने सिद्ध किया है कि राष्ट्रभाषा स्वतंत्रता के समान ही प्रमुख है।

प्रान्तीय भाषा के प्रति जो अमित प्रेम है, वह कभी कभी भाषायी पागलपन का रूप ले लेता है।

भाषायी पागलपन के दो पहलू हैं। प्रान्तीय भाषा के प्रति जो अमित प्रेम है, वह कभी कभी भाषायी पागलपन का रूप ले लेता है। राष्ट्रभाषा को इतर भाषा-भाषियों पर थोपने का प्रयत्न भी भाषायी पागलपन को जन्म देता है। आज का भाषायी पागलपन इन दोनों का सम्मिलित परिणाम है।

किसी भी कारण हिन्दी थोपी नहीं जानी चाहिए। प्रान्तीय भाषा

के प्रति अमित प्रेम होने के कारण राष्ट्रभाषा का विरोध नहीं किया जाना चाहिए । निर्भाग्यवश ये दोनों स्थितियाँ हमारे देश में आज पायी जाती हैं ।

दक्षिण भारत के दो-तीन राज्यों की राजनीति में प्रविष्ट होकर इस भाषायी पागलपन ने हमारी राष्ट्रीयता को बड़ी क्षति पहुँचायी है । सौभाग्य

दक्षिण भारत के दो-तीन राज्यों की राजनीति में प्रविष्ट होकर इस भाषायी पागलपन ने हमारी राष्ट्रीयता को बडी क्षति पहुंचायी है ।

से केरल में स्थिति अलग है । इस बात में हम केरलीय दूसरों का पथ-प्रदर्शन कर रहे हैं जैसे स्वागत भाषण में बताया गया, हिन्दी के प्रति यहाँ विरोध नहीं है । अनिवार्य भाषा के रूप में हिन्दी को स्वीकार करने में हमें कोई एतराज नहीं । कई वर्षों से केरल में त्रिभाषा सूत्र का कार्यान्वयन हो रहा है ।

भारत की जनसंख्या में अधिक लोगों से बोली जानेवाली भाषा है हिन्दी । ऐसी स्थिति में हिन्दी के अलावा और कोई भी भाषा राष्ट्र-

हिन्दी के अलावा और कोई भी भाषा राष्ट्रभाषा का स्थान नहीं पा सकती ।

भाषा का स्थान नहीं पा सकती । व्यावहारिक दृष्टि से देखें तो इस बात में कोई सन्देह नहीं हो सकता कि हिन्दी ही भारत की आम-भाषा होनी चाहिए । लेकिन आये दिन हिन्दी प्रेम इतना बढ़ गया कि अंग्रेजी के प्रति विरोध भी होने लगा है । अंग्रेजी एक सार्वदेशीय भाषा है । विश्व में जहाँ भी जाएँ अंग्रेजी का ही आश्रय भावसंचार के लिए लिया जा सकता है । अंग्रेजी से भी विरोध नहीं होना चाहिए । यद्यपि वह एक विदेशी भाषा है तो भी सार्वदेशीय भाषा के रूप में अंग्रेजी को स्वीकार करने में और

यद्यपि वह एक विदेशी भाषा है तो भी सार्वदेशीय भाषा के रूप में अंग्रेज़ी को स्वीकार करने में और उसको प्रयोग में लाने में हम सभी प्रतिज्ञा बद्ध हैं ।

उन दिनों व्यक्ति के हृदय रक्त में हिन्दी के प्रति रुचि समायी हुई थी ।

उसको प्रयोग में लाने में हम सभी प्रतिज्ञा बद्ध हैं।

हिन्दी प्रचार के संबन्ध में यदि कहीं अनभिरुचि है तो उसे दूर करने का प्रयत्न राजनीतिक भेद-भाव भूलकर सब ओर से करें।

स्वतन्त्रता संग्राम के समय हर कांग्रेसी कार्यकर्ता केलिए हिन्दी पढना अत्यन्त गौरवप्रद था। उन दिनों व्यक्ति के हृदय रक्त में हिन्दी के प्रति रुचि समायी हुई थी। हर स्वतन्त्रता सेनानी हिन्दी पर गर्व करता था। विदेशी शासन के विरुद्ध, उपनिवेशवादी सत्ता के विरुद्ध, विदेशी वस्त्र बहिष्करण जैसे अभियान जब चलते थे तब अंग्रेजी के थोपे जाने के प्रति जो विरोधी भावना जनमानस में थी उससे हिन्दी के प्रति अधिक अभिरुचि उपजी। उस समय हिन्दी भारतीय जनता को एक रखनेवाली एक कडी थी। स्वतंत्रता सेनानियों को संगठित करने और हमारा राष्ट्रीय बोध विकसित करने में हिन्दी की भूमिका मुख्य थी। राष्ट्रपिता ने भी यही चाहा था कि देश के स्वतंत्र होने पर जनता को जोडने का माध्यम हिन्दी ही रहे।

पर बाद की कुछ घटनाओं ने देशीयता के अन्य घटकों में और हिन्दी प्रेम में क्षति पहुंचायी। इस स्थिति पर नियंत्रण पाना हो तो हमें बडे संतुलन और क्षमता से कदम बढाना होगा।

स्वतत्रता सेनानियों को संगठित करने और हमारा राष्ट्रीय बोध विकसित करने में हिन्दी को भूमिका मुख्य थी ।

हिन्दी प्रचार की वर्तमान शैली में परिवर्तन लाना होगा। हमारे देश में अधिकांश जनता आज भी निरक्षर है। हमारे स्वतंत्र होने के बाद स्वतंत्र हुए अनेक आफ्रिकी राष्ट्र निरक्षरता निवारण में काफी आगे बढ गये। एथ्योपिया में जहा, घोर गरीबी है, सत्तर प्रतिशत जनता साक्षर है। नाइजीरिया सांबिया जैसे देशों में भी इस दिशा में बडी प्रगति हुई।

साक्षरता मनुष्य की एक प्रमुख आवश्यकता है। हमारे देश में यदि अंधविश्वास और धार्मिक विद्वेष

हिन्दी भाषी प्रांत साक्षरता में बहुत पिछड़े हैं। वहाँ भी जनता को हिन्दी पढ़ना लिखना सिखायें।

पनपते हैं तो उसके मूल में निरक्षता है। निरक्षरता निवारण किये बिना हमारा देश प्रगति नहीं पा सकेगा। महात्मा गांधी चाहते थे कि हमारी जनता शत प्रतिशत साक्षर बने। लक्ष्य अभी बहुत दूर है। समय बहुत कम है। केरल साक्षरता में बहुत आगे है। हिन्दी भाषी प्रांत साक्षरता में बहुत पिछड़े हैं। वहाँ भी जनता को हिन्दी पढ़ना लिखना सिखायें। केरल को इस दिशा मे बहुत कुछ करना है। मेरा विश्वास है कि इतर प्रान्त में अपनी अपनी भूमिका निभायेंगे।

स्व० पंडित हृषीकेश शर्मा ने हमारे सामने हिन्दी प्रचार का अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया था। हम उनका अनुगमन करें।
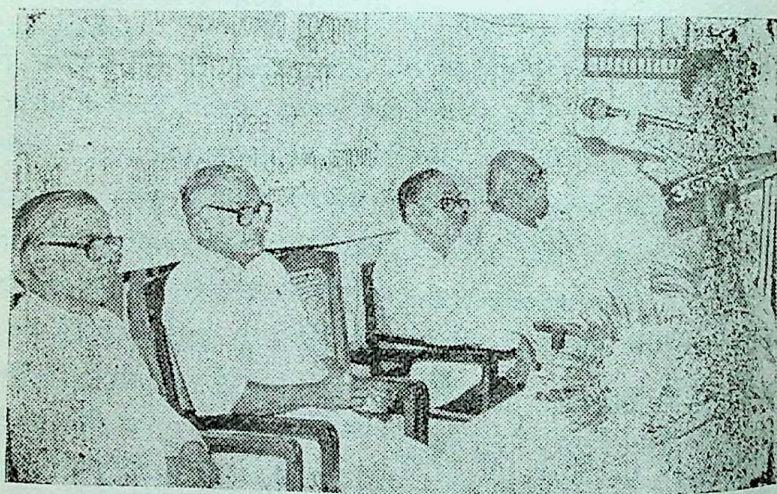
प० हृषीकेश शर्मा की जयन्ती के सिलसिले में केरल हिन्दी प्रचार सभा में आयोजित सार्वजनिक सम्मेलन में अध्यक्षीय भाषण दे रहे हैं श्री. ए नीलमोहित दासन नाटार (खेल एवं युवाकार्य मन्त्री, केरल सरकार)। बैठे हैं (दायें से) प्रो० पी० जे जोसफ (अध्यक्ष, केरल हिन्दी प्रचार सभा)

हिन्दी प्रचार में तीव्रता लायें

श्री. ए. नीललोहितदासन नाटार

[14-2-1988 को पं० हृषीकेश शर्मा के 97 वें जन्म दिवस के अवसर पर केरल हिन्दी प्रचार सभा के तिरुवनन्तपुरम परिसर में आयोजित सम्मेलन में दिये गये अध्यक्षीय भाषण का सारांश]

दक्षिण भारत के हिन्दी प्रचारकों में पं० हृषीकेश शर्मा अग्रगण्य हैं। उनकी पावन स्मृति में अपनी श्रद्धांजली अर्पित करता हूँ।

स्वागत भाषण में श्री एम. के. वेलायुधन नायर ने जैसे बताया, केरल में हिन्दी का प्रचार वर्षों पहले आरंभ हुआ। तीर्थ-यात्रियों और व्यापारियों के ज़रिए हिन्दी दक्षिण भारत की जनता के समीप पहुँची। केरल की तिरुवितांकूर रियासत के महाराजा स्वाति तिरुनाल ने वर्षों पहले हिन्दी में उच्चकोटि के गीत लिखे।

हिन्दी भारत के कोने कोने में पहुँच चुकी थी। इसीलिए स्वतंत्रता संग्राम के समय गांधीजी ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने का आह्वान किया था।

केरल विधान सभा के अध्यक्ष श्री. वर्कला राधाकृष्णन ने बताया कि हिन्दी थोपने का प्रयत्न जान बूझकर कहीं किया जा रहा है। मेरा प्रबल मत है कि यह गलत धारणा है। हिन्दी थोपने का प्रयत्न कभी

केरल की तिरुवितांकूर रियासत के महाराजा स्वाति तिरुनाल ने वर्षों पहले हिन्दी में उच्चकोटि के गीत लिखे।

कहीं नहीं हुआ है। हिन्दी का उपयोग देश भर में व्यापक बनाने का प्रभावी श्रम स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद इन चालीस वर्षों में नहीं हुआ।

पहले से ही शासन की भाषा और जनता की भाषा में अन्तर रहा

हिन्दी थोपने का प्रयत्न कभी कहीं नहीं हुआ है । हिन्दी का उपयोग देश भर में व्यापक बनाने का प्रभावी श्रम स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद इन चालीस वर्षों में नहीं हुआ ।

है । एक ज़माने में शासन की भाषा संस्कृत थी । बाद की स्थिति भी वैसी ही रही । जब तक जन-भाषा में प्रशासन नहीं होता, तब तक न जनता की समस्याओं का समाधान हो सकता है, न प्रशासन से जनता का सामीप्य हो सकता है । यदि 15-8-1947 को यह घोषणा की जाती कि कल से भारत की राजभाषा हिन्दी होगी तो हिन्दी भारत की राजभाषा बन गयी होती । कोई इसका विरोध नहीं करता ।

माननीय विधान सभाध्यक्ष ने कहा कि तमिलनाडु की राजनीति में

जब तक जन-भाषा में प्रशासन नहीं होता, तब तक न जनता की समस्याओं का समाधान हो सकता है न प्रशासन से जनता का सामीप्य हो सकता है ।

भाषाई पागलपन का प्रवेश हो गया है । वास्तव में स्थिति ऐसी नहीं । वहाँ भाषा में राजनीति घुस आयी है ।

माननीय विधान सभाध्यक्ष ने कहा कि अंग्रेज़ी एक अन्तर्देशीय भाषा है । अंग्रेज़ी के सबन्ध में हमारे समाज में यह एक बहुत बड़ी भ्रामक धारणा फैली हुई है । कई विदेशी राष्ट्रों की यात्रा मैं ने की है । इस के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि

विदेशों में व्यवहार करने के लिए हमें अंग्रेज़ी ही नहीं रूसी, जर्मन, फ्रेंच, चीनी जैसी भाषाएँ भी सीखनी हैं ।

ब्रिटेन और अमेरिका को छोड़कर और किसी राष्ट्र में अंग्रेज़ी से काम नहीं चलेगा । हाँ, इतना तो मान सकते हैं कि अंग्रेज़ी अन्तर्देशीय भाषाओं में एक है । विश्व के एक छोटे भाग में ही अंग्रेज़ी का व्यवहार होता है । विदेशों में व्यवहार करने के लिए हमें अंग्रेज़ी ही नहीं, रूसी, जर्मन, फ्रेंच, चीनी जैसी भाषाएँ भी सीखनी हैं ।

गत 70 वर्षों के हिन्दी प्रचार का मूल्यांकन करने पर मुझे लगता है

कि स्वतंत्रता संग्राम के पूर्व के 30 वर्षों में और बाद के 10 वर्षों में इस क्षेत्र में जो उत्साह था वह गत 30 वर्षों में नहीं रहा। पहले के चालीस वर्षों में हिन्दी प्रचारकों ने हिन्दी प्रचार को एक तपस्या के रूप में, एक जीवन व्रत के रूप में अपनाया था। बाद के 30 वर्षों में कुछ निहित स्वार्थ इस क्षेत्र में आ गये। पहले प्रो० पी. जे जोसफ [अध्यक्ष, केरल हिन्दी प्रचार सभा] जैसे अनेक निस्वार्थ हिन्दी प्रचारक स्वतंत्रता संग्राम के अंग के रूप में हिन्दी का प्रचार करते रहे। लेकिन क्या हम उन निस्वार्थ हिन्दी प्रचारकों को उतना आदर दे सके जितना स्वतंत्रता संग्राम की सेनानियों को हम देते रहे हैं? पं० हृषीकेश शर्मा की पीढी के अनेकों हिन्दी प्रचारक अब नहीं रहे। डॉ० पी. के केशवन नायर जैसे बहुत कम हिन्दी प्रचारक आज जीवित हैं जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के रूप में हिन्दी प्रचार का कार्य किया था। इनको भी वैसा ही पेन्शन और सम्मान दिया देना चाहिए, जैसा स्वतंत्रता संग्राम के इतर सेनानियों को देता है।

लेकिन क्या हम उन निस्वार्थ हिन्दी प्रचारकों को उतना आदर दे सके जितना स्वतंत्रता संग्राम की सेनानियों को हम देते रहे हैं?

मेरे विचार में हिन्दी प्रचार की शैली में कालानुसृत परिवर्तन आवश्यक है। राजभाषा हिन्दी के व्यापक प्रयोग के लिए आवश्यक प्रशिक्षण हिन्दी प्रचार संस्थाओं द्वारा दिया जाना चाहिए।

श्री. एम. के. वेलायुधन नायर ने माननीय विधान सभाध्यक्ष से अनुरोध किया है कि विधान सभा में एक हिन्दी विभाग का आरंभ किया जाय। मैं इस सुझाव का समर्थन करता हूं। केरल विधान सभा के सचिवालय में एक हिन्दी विभाग आरंभ किया जाय तो यह सारे देश केलिए अनुकरणीय हो जायगा।

माननीय विधान सभाध्यक्ष ने हिन्दी भाषियों की निरक्षरता दूर करने की आवश्यकता पर जोर

हिन्दी प्रान्तों में साक्षरता अभियान चलाने केलिए हिन्दी जाननेवाले दक्षिण भारतीय वहाँ जाएँ तो उचित होगा।

दिया। मुझे लगता है कि हिन्दी प्रान्तों में साक्षरता अभियान चलाने केलिए हिन्दी जाननेवाले दक्षिण भारतीय वहाँ जाएँ तो उचित होगा। हिन्दी प्रचार संस्थाएँ इस दिशा में भी कदम उठाएँ।

देश के व्यापक हितों को ध्यान में रखकर हिन्दी प्रचारक वर्धित उत्साह और उमंग से आगे बढ़ें।

जय भारत
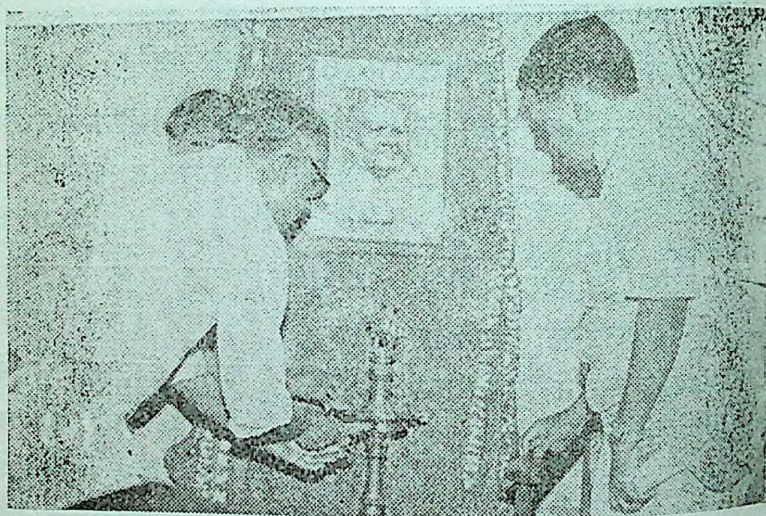
केरल विधान सभा के अध्यक्ष श्री० वर्कला राधाकृष्णन भद्रदीप जलाकर पं० हृषीकेश शर्मा की जयन्ती का उद्घाटन कर रहे हैं। खेल एवं युवाकार्य मंत्री श्री० ए. नीललोहित दासन नाटार पास खड़े हैं।

हिन्दी का सांस्कृतिक प्रभाव बढ़े
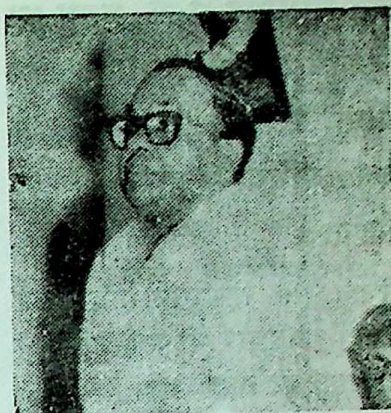
डॉ० वी. के. सुकुमारन नायर
भूतपूर्व कुलपति, केरल विश्वविद्यालय

(14-2-1988 को पं० हृषीकेश शर्मा के97वें जन्म दिवस के अवसर पर केरल हिन्दी प्रचार सभा के तिरुवनन्तपुरम परिसर में आयोजित सम्मेलन में दिये गये भाषण का सारांश)

केरल सरकार के माननीय खेल एवं युवा कार्य मंत्री श्री. नीललोहितदासन नाटार ने अपने अध्यक्षीय भाषण में हिन्दी प्रचार के गत 70 वर्षों के विकास क्रम का अवलोकन करते हुए बताया कि उक्त अवधि के प्रारंभिक 40 वर्षों में जो तीव्रता थी वह बाद के 30 वर्षों में नहीं रही। इस के कारणों पर हमें विचार करना है।

पहले हिन्दी प्रचार और राष्ट्रीय अभियान में अभिन्न संबन्ध था। पं० हृषीकेश शर्मा जैसे हिन्दी प्रचारक राष्ट्रीय अभियान के भी कार्यकर्ता थे। स्वतन्त्रता संग्राम का एक अंग था हिन्दी प्रचार। महात्मा गांधी ने इस का नेतृत्व किया था। लेकिन बाद को यद्यपि हिन्दी को राजभाषा का स्थान मिला तो भी हिन्दी प्रचार की गति मन्द पड गयी।

केवल नियमों के बल पर किसी भाषा का विकास नहीं हो सकता। किसी राष्ट्र में ऐसा नहीं हुआ है। जन अभियानसे ही भाषा का विकास

जन अभियान से ही भाषा का विकास संभव है। हिन्दीतर प्रान्तों में हिन्दी का प्रचार भी जन अभियान द्वारा ही बढ सकेगा।

संभव है। हिन्दीतर प्रान्तों में हिन्दी का प्रचार भी जन अभियान द्वारा ही बढ सकेगा।

केरल में हिन्दी का कोई विरोध नहीं। हिन्दी को राजभाषा बनाने में भी यहाँ कोई विरोध नहीं। केरल की नई पीढी ने हिन्दी का अध्ययन किया है। लेकन यहाँ कितने लोग ऐसे हैं जो हिन्दी की पुस्तकें और पत्र पत्रिकाएँ पढते हैं? हिन्दी साहित्य का कितना प्रभाव मलयालम साहित्य पर पडा है? हिन्दी प्रचार में लगी हुई संस्थाओं को ऐसी बातों पर भी ध्यान देना है।

किसी भाषा के सीखनेवालों की संख्या की वृद्धि से उस भाषा के प्रचार का अनुमान नहीं लगा सकते। यह भी देखना होगा कि उस भाषा का सांस्कृतिक प्रभाव कहाँ तक बढ़ा है। विविध प्रान्तों में जब हिन्दी का सांस्कृतिक प्रभाव ढेगा तो वहाँ की जनता सहज ही अंग्रेजी को छोडने केलिए तैयार हो जाएगी।

हिन्दी का ऐसा सांस्कृतिक प्रभाव हिन्दीतर प्रान्तों में क्यों नहीं पडता? इस के कारणों पर भी हमें विचार करना है। मेरे कई बन्धु ऐसे हैं जिन्होंने हिन्दी पढी है। लेकिन मैं ने उनको हिन्दी की पुस्तकें पढते हुए नहीं देखा है। वे मलयालम की

किसी भाषा के सीखनेवालों की संख्या की वृद्धि से उस भाषा के प्रचार का अनुमान नहीं लगा सकते।

पुस्तकें पढते हैं और अंग्रेज़ी की पुस्तकें पढते हैं। वे हिन्दी की पुस्तकें क्यों नहीं पढते? वे हिन्दी की पत्र–पत्रिकाएँ क्यों नहीं पढते? हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं को यहाँ वैसा सर्कुलेशन क्यों नहीं मिलता, जैसा मलयालम की पत्र-पत्रिकाओं को मिलता है? हिन्दी संस्थाओं को ऐसी बातों पर भी ध्यान देना है। भाषा के अध्ययन के साथ-साथ उस भाषा के साहित्य में रुचि का विकास भी होना है।

प्रान्तों में जब हिन्दी का सांस्कृतिक प्रभाव बढेगा तो वहाँ की जनता सहज ही अंग्रेजी को छोडने केलिए तैयार हो जाएगी ।

विश्वविद्यालय स्तर पर भी हमें हिन्दी के विकास केलिए बहुत सा कार्य करना है। केरल विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग का आरम्भ करने के प्रयत्न हो रहे हैं।

लेकिन हमें जनता में हिन्दी साहित्य के प्रति अभिरुचि विकसित करनी है । इस बात का शोध किया जाना है कि एक सांस्कृतिक भाषा के रूप म हिन्दी का प्रभाव दक्षिण भारतीय प्रान्तों में कहाँ तक पडा है।

भारतीय राजनीति में हिन्दी की बडी उपयोगिता है। ऐसे कोई दक्षिण भारतीय नेता भारत के प्रधान मंत्री नहीं हो सकते जो केवल मलयालम, तमिल या अन्य दक्षिण

वे हिन्दी की पुस्तकें क्यों नहीं पढते ? वे हिन्दी की पत्र-पत्रिकाएँ क्यों नहीं पढते ?

इस बात का शोध किया जाना है कि एक सांस्कृतिक भाषा के रूप में हिन्दी का प्रभाव दक्षिण भारतीय प्रान्तों में कहाँ तक पडा है ।

भारतीय भाषाओं में ही भाषण दे सकते हैं । भारत के प्रधान मंत्री वे ही बन सकते हैं, जो हिन्दी बोल सकते हैं ।

दूरदर्शन के आगमन से हिन्दी का प्रचार बहुत अधिक बढ गया है। ज़ो हिन्दी नहीं जानते वे भी दूरदर्शन में रामायण देखते हैं ।

आवश्यकता इस बात की है, कि पहले के समान हिन्दी प्रचार को राष्ट्रीय अभियान का अभिन्न अंग मान कर हिन्दी के सांस्कृतिक नवोद्धान के प्रयत्न करें ।

भारत के प्रधान मंत्री वे ही बन सकते हैं जो हिन्दी बोल सकते हैं।

दक्षिण में हिन्दी प्रचार—तब और अब

डॉ० एन. ई. विश्वनाथ अय्यर

[14-2-1988 को पं० हृषीकेश शर्माजी के 97 वें जन्म दिवस के अवसर पर केरल हिन्दी प्रचार सभा के तिरुवनन्तपुरम परिसर में दिये गये भाषण का सारांश]

पंडित हृषीकेश शर्माजी केरल के हिन्दी प्रचारकों और प्राध्यापकों में अग्रणी डा० पी. के. केशवन नायर के गुरु थे और इससे उनका हिन्दी प्रचार से जो संबंध है वह स्पष्ट है।

पंडित हृषीकेश शर्माजी केरल के हिन्दी प्रचारकों और प्राध्यापकों में अग्रणी डा० पी. के. केशवन नायर के गुरु थे।

केशवन नायरजी और मैं हम दोनों यूनिवर्सिटी कॉलेज में साथ-साथ पढाते थे और मित्रता की बात-चीत में कहा करते थे कि किस प्रकार हृषीकेश शर्माजी उनको प्रेम से सिखाते थे। हृषीकेश शर्माजी का नाम बताते हुए वे हमेशा अत्यंत आदर भाव से ही उनकी चर्चा करते थे। उसी तरह मैं ने उनका पहला परिचय पाया। बाद में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा की पत्रिका राष्ट्रभारती पत्रिका में कई रचनायें हृषीकेश शर्माजी की पढी थीं और उसके बाद उन्नीस सौ अठावन या उनसठ में मैं नागपुर गया था और नागपुर में पंडित हृषीकेश शर्माजी से मिलने का सौभाग्य मिला था।

डा० एन. इ. विश्वनाथ अय्यर

उनका सादा वेष और केरल से आये हुए व्यक्ति को देखकर के उनके मन में जो प्रेमभाव उमडा था वह सारी बातें मेरे मन में हमेशा स्मरणीय संबल के रूप में अब भी हैं ।

उन दिनों वे और उनकी पत्नी वे दोनों हिन्दी प्रचार में लगे थे । हिन्दी प्रचार समिति के कार्यालय में उनसे भेंट हुई थी । उनका सादा वेष और केरल से आये हुए व्यक्ति को देखकर के उनके मन में जो प्रेम-भाव उमडा था वह सारी बातें मेरे मन में हमेशा स्मरणीय संबल के रूप में अब भी हैं । इसलिए आज हृषीकेश शर्मा जयन्ती मनाने की बात सुनकर मुझे सुखद आश्चर्य हुआ कि हमारे कर्मठ मंत्री श्री. वेलायुधन नायरजी कैसे उचित कार्य इस प्रकार करते जा रहे हैं । हृषीकेश शर्माजी के स्मरण करते हुए मुझे एक बात और याद आयी । किसी भी कार्यक्रम की सफलता, उसका प्रभाव, उसमें लगे हुए लोगों पर निर्भर है । महात्मा गांधी की प्रेरणा से दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार के क्षेत्र में पहली बार जो आये थे हरिहर शर्मा, हृषीकेश शर्मा, देवदूत विद्यार्थी आदि, उनका व्यवहार, उनका आदर्श, उनकी साधना सब लोगों पर प्रभाव डालनेवाली थी। इसीलिए सार्वजनिक क्षेत्र के लोग—वकील, डाक्टर, इंजीनियर, बडे-बडे पद पर रहनेवाले सारे लोग उनके पास गये, हिन्दी सीखने केलिए गये और उनसे हिन्दी सीख कर के देश प्रेम का पाठ उन्होंने सीखा। उन लोगों का व्यक्तित्व त्यागपूर्ण व्यक्तित्व था। आपको शायद मालूम होगा कि उन दिनों हिन्दी प्रचार के अध्यापकों को चार आने महीने फीस देते थे । आजकल एल. के. जी. के विद्यार्थी को तो 50-100 रुपये शायद किसी किसी बढिया स्कूल में फीस देते हैं और किसी को बताये बिना चुपचाप कवर में 2000-3000 मैंनेजमेन्ट को भी देते हैं। यह है आजकल का जमाना। उन दिनों उनका हिन्दी अध्यापन साधना थी। उन साधकों के प्रयत्न से यह हुआ।

छोटे माली और बडे माली लोग तो छोटे-छोटे पौधे लगाते हैं, पानी देते हैं और उर्वरक देते हैं और तब तो तरह-तरह के रंग-विरंगे छोटे-बडे पौधे लगते हैं फूलों से फुलवारी

चमक उठती है। दक्षिण भारत के हिन्दी प्रचार की फुलवारी को सजानेवाले ऐसे मालियों में एक थे हृषीकेश शर्मा जी। ऐसे हृषीकेश शर्माजी के प्रति आज हम सचमुच नतमस्तक हैं। उनकी तो सेवा का फल उन्होंने नहीं देखा। उन्होंने जो साधना की उसका फल हम लोग हिन्दी के क्षेत्र में भोग रहे हैं और हिन्दी उनके कारण इस प्रकार फैल रही है। दक्षिण भारत के सत्तर साल के हिन्दी प्रचार का मूल्यांकन

दक्षिण भारत के हिन्दी प्रचार की फुलवारी को सजानेवाले ऐसे मालियों में एक थे हृषीकेश शर्माजी।

वेलायुधन नायर जी कराना चाहते थे। उत्तर भारत के हिन्दी कार्यकर्ता, हिन्दी साहित्यकार, हिन्दी के प्राध्यापक सब को हम एक नयी दृष्टि देने में सफल हुए। हिन्दी उनकी मातृभाषा है और उनके सामने हिन्दी ही सब कुछ है। हिन्दी को छोडकर और किसी भाषा को भी सीखने वाले कम हैं। लेकिन दक्षिण भारत के हिन्दी अध्यापक, हिन्दी प्रोफसर और प्रचारक लोगों ने उनको यह

साथ ही साथ हम लोग उनको बता सके हैं कि मलयालम, तमिल, तेलुगु, कन्नड आदि भाषाओं और साहित्य में किस प्रकार साहित्य का विकास हुआ, किस प्रकार यहाँ नयी दृष्टि हुई है।

सिखाया है कि दूर की दृष्टि से हम लोग हिन्दी को किस प्रकार देखते हैं, तर्क युक्त दृष्टि से, विकासात्मक दृष्टि से हिन्दी को किस प्रकार देखना है, और हिन्दी में कैसा परिवर्तन लाना है। साथ ही साथ हम लोग उनको बता सके हैं कि मलयालम, तमिल, तेलुगु, कन्नड आदि भाषाओं और साहित्य में किस प्रकार साहित्य का विकास हुआ है, किस प्रकार यहाँ नयी दृष्टि हुई है। इस दृष्टि को देखते हुए, इस विकास को देखते हुए वे अपनी हिन्दी और साहित्य का पुनः मूल्यांकन करने के लिए तैयार होते जा रहे हैं।

वे ये मानते हैं कि मलयालम साहित्य में कहानी साहित्य जितना विकसित हुआ है उतना हिन्दी में नहीं हुआ है। मलयालम सिनेमा

में जितना विकास हुआ है उतना हिन्दी फिल्मों में नहीं हुआ है। जहाँ वे अति मानुषों को ही देखते हैं साधारण मानवों को नहीं देखते हैं। इस प्रकार अपनी चीज को, अपनी हिन्दी को, नयी दृष्टि से देखने की दृष्टि हम लोग उनको दे सके हैं। मैं आदरणीय डा० सुकुमारन नायर जी की बातों से सर्वथा सहमत हूँ कि हम लोगों ने हिन्दी का प्रचार किया, हिन्दी पढायी, लोग बहुत बडी-बडी डिग्री लेते हैं, सब कुछ ठीक है। लेकिन उसके बाद हिन्दी पुस्तकें कम पढते हैं। हिन्दी साहित्यिक पत्रिकायें कम पढते हैं। हिन्दी साहित्यिक पत्रिकायें यहाँ नहीं होती। अगर साहित्यिक पत्रिकायें होती हैं तो जल्दी वे समाप्त हो जाती हैं। ये सारी बातें ठीक हैं। इस तरफ हम लोगों को ध्यान देना पडेगा। हम उनके उपदेश केलिए आभारी हैं। स्वर्ण जयंती है केरल हिन्दी प्रचार सभा की। इस स्वर्ण जयंती का एक स्वर्णिम फल भी होना चाहिए। केरल ज्योति हिन्दी प्रचार की पत्रिका है। इस में साहित्यिक सौरभ्य भी है, साहित्यिक सुगंध भी मिल रही है। एक हिन्दी साहित्यिक

केरल ज्योति हिन्दी प्रचार की पत्रिका है। इसमें साहित्यिक सौरभ्य भी है, साहित्यिक सुगंध भी मिल रही है।

त्रैमासिक या चौमहिकी ही सही वर्ष में दो ही सही, ऐसी एक पत्रिका केरल हिन्दी प्रचार सभा से क्यों न निकालें जिस में केरल के हिन्दी साहित्य की मौलिक रचनायें और अनुवाद, शोध परक लेख आदि हों। साहित्यिक पत्रिका 'मंगलम' की तरह लोकप्रिय नहीं होगी। 'मंगलम' पढनेवालों की संख्या तेरह लाख या चौदह लाख है। 'नाना' पढनेवालों की संख्या भी करीब उतनी होगी। लेकिन मलयालम की बहुत अच्छी पत्रिका 'भाषा-पोषिणी' की संख्या अब दो हज़ार या चार हज़ार से अधिक नहीं। तो साहित्यिक पत्रिकाओं की स्थिति वही है। हिन्दी साहित्य की एक पत्रिका हम निकालेंगे तो उसकी संख्या बडी नहीं होगी, लेकिन वह ठोस होगी। मैं यह प्रार्थना करना चाहता हूँ कि कि स्वर्ण जयंती वर्ष में हमारे वेलायुधन नायरजी और हिन्दी प्रचार सभा की कार्यकारिणी

कुत्ता

डा० एस. षण्मुखन्

वह कुत्ता
बुरी तरह भौंकता है,
जब कोई कंपित पत्ता
सहमकर गिरता है/और तत्काल
उसकी नींद उचट जाती है।
वह संघर्ष करता है
अनजाने गले में आ पड़े
जंज़ीर से
और खरोंचता है
ज़मीन को
यत्रणा से
वह दुम हिलाता है
सिर्फ उसके आगे
जिसके साथ उसका नाता है
सिर्फ रोटी का।
वह शौर्य दिखाता नहीं है
औरत जाति से,
वह लड़ता है—
वीरों से
और प्यार करता है
खुल्लम–खुल्ला।
अब,
हर वक्त उसे देखते रहता
मेरी यही हविस है
काश, यह कितना अच्छा होता
मैं भी कुत्ता होता !
और कुत्तों क राज आता !

मिति इस पर विचार करें और उसका ठोस फल निकले।

ऐसे अच्छे हिन्दी प्रेमी नीललोहितदास जैसे हिन्दी प्रेमी मंत्री हमें मिल गये। जितनी कुशलता से और जितनी प्रेम से उन्होंने समर्थन किया हिन्दी का, और यह अच्छा जवाब दिया, वह हम लोगों को सचमुच बडी प्रेरणा दे रहा है। हमारे मन में कभी-कभी कुछ कमज़ोरी होती जा रही है। लेकिन वह कमज़ोरी भी अब इस प्रकार की बातें सुनकर दूर हो जा रही है।

भारतीय नव जागरण और स्वामी श्रद्धानन्द

श्री. विष्णु प्रभाकर

(पूर्व प्रकाशित से आगे)
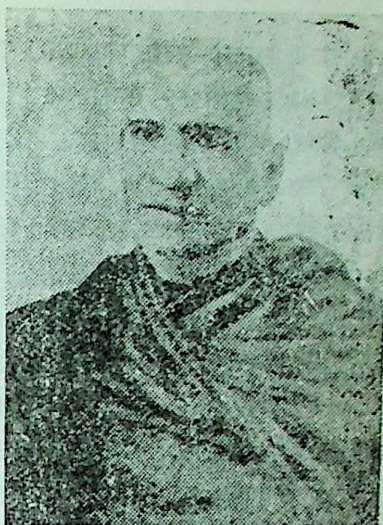
पिताजी ने बड़े प्रेम से कहा, "क्या जल्दी थी। समाज का अधिवेशन समाप्त करके ही आना चाहिए था।"

मुंशीराम चकित थे। हुआ यह कि आते समय वे सत्यार्थप्रकाश और पंच महायज्ञ विधि पिताजी के कमरे में छोड आए थे। पिताजी ने उन्हें देखा। अपने एक मित्र से उन्हें पढ़वा कर सुना। इतने प्रभावित हुए कि बोले, "हम तो अविद्या में पडे रहे। निरर्थक क्रिया-कर्म करते रहे। हमारा मोक्ष कैसे होगा। अब हम वैदिक साधना करेंगे।"

पुत्र ने पिता की जीवनधारा बदल दी थी। यहाँ तक कि मृत्यु शैया पर भी उन्होंने ईशोपनिषद् और वैदिक हवन कराने की इच्छा प्रकट की थी। घर में ही नहीं, समाज में भी वे सारे विरोधों के बावजूद सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ते

श्री. विष्णु प्रभाकर

जा रहे थे। लाला साईदास की अन्तर्बेधी दृष्टि ने जिस ऊर्जा को पहचान लिया था वह निर्जीव ऊर्जा नहीं थी। वह सजीव शक्ति थी जिसे दिशा की खोज नहीं करनी पड़ती बल्कि दिशा स्वयं चलकर उसके पास आती है। इसलिए मुंशीराम जहाँ भी गये नवजागरण का सन्देश लेकर गये। शब्दों के द्वारा नहीं बल्कि अर्थ अर्थात् कर्म के द्वारा। उस क्षण से वे सदा दूसरों के लिए ही जिए।

उन दिनों शास्त्रार्थ खूब होते थे और वे संस्कृत में ही होते थे। और प्राय: वे व्यक्ति ही शास्त्रार्थ करते थे जो जन्म से ब्राह्मण होते थे। लेकिन मुंशीराम ने निश्चय किया कि वे स्वयं शास्त्रार्थ करेंगे। उन्होंने वेदों का अध्ययन किया। धर्म शास्त्र पढ़े और अपनी विवेक बुद्धि के द्वारा सत्य अर्थ को जान लिया।

अब उन्होंने आर्य समाज के सिद्धांतों के प्रचार के साथ-साथ पण्डितों को चुनौती देनी आरंभ कर दी। समाज में खलबली मच गयी। पर वे विचलित नहीं हुए। वे अपनी दृष्टि खुली रखते थे। जो शुभ और शुद्ध होता उसे ग्रहण करने में उन्होंने कभी आनाकानी नहीं की। यही कारण था कि आर्यसमाज के तत्कालीन नेता पं० गुरुदत्त और आर्य मुसाफिर पं० लेखराम से उन्हें बहुत सहयोग मिला। पं० गुरुदत्त तो उनके पथप्रदर्शक ही थे। पर शीघ्र ही ये दोनों महानुभाव यह संसार छोड़कर चले गये। मुंशीराम जी की वेदना का पार न था। पर वे नाना रूपों में नाना प्रकार से आर्य समाज का प्रचार करते रहे। सड़क पर खडे होकर भाषण दिया, घर-घर जाकर चंदा मांगा। वे रूढ़ियों पर प्रबल प्रहार करते थे। जन्म के स्थान पर उन्होंने गुणकर्म के अनुसार वर्ण-व्यवस्था की स्थापना पर ज़ोर दिया। वे अपने विश्वासों को जीने में विश्वास करते थे। उन्होंने अपने विचारों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए 'सद्धर्म प्रचारक' नामक पत्रिका भी उर्दू में निकालनी शुरू की।

इन सब बातों के कारण उन्हें लोग उग्र क्रान्तिकारी कहने लगे थे। जालन्धर के आर्य समाजी इसी कारण एक 'स्ट्रीम रैडिकल पार्टी' के नाम से प्रसिद्ध हो गये थे। लेकिन जब किसी समाज की शक्ति बढ़ जाती है, पग-पग पर सफलता उसके चरण चूमने लगती है, वह नये प्रकाश, नई ज्योति से भासमान होने

'मेरे अपराध क्षमा करना। आपको तो मुझसे अधिक पढ़ी-लिखी और रूपवती सेविका मिल जाएगी पर इन बच्चों को न भूलना।"

लगता है तब उसे बाहरी खतरों से उतना डर नहीं रहता जितना अन्दर के खतरों से। किसी भी समाज की प्रगति और अगति का कारण उसके अपने भीतर छिपा रहता है। आर्य समाज के साथ भी यही हुआ।

उसकी चर्चा करने से पूर्व उनके पारिवारिक जीवन की एक झलक देख लेना भी आवश्यक है। वे तीव्र गति से आगे बढ़ रहे थे। काम करने की अद्भुत क्षमता थी उनमें। उन्हें जालन्धर आर्य समाज का प्रधान चुना गया और शीघ्र ही वह महात्मा मुंशीराम के नाम से विख्यात हो गये। इसी समय उनकी पत्नी का देहावसान हो गया। उनका अन्तिम संदेश था, 'मेरे अपराध क्षमा करना। आपको तो मुझसे अधिक पढ़ी-लिखी और रूपवती सेविका मिल जाएगी पर इन बच्चों को न भूलना।"

मुंशीराम अपनी पत्नी को पहचानते थे, जानते थे कि दुर्दिनों में उसी ने उनकी रक्षा की थी। उन्होंने निश्चय किया वे दूसरा विवाह नहीं करेंगे। पिता के साथ वे बच्चों की माँ भी बनेंगे। बाद में उनके बड़े भाई ने उन्हें बच्चों की चिन्ता से मुक्त कर दिया और इस प्रकार सब बन्धनों से मुक्त होकर उन्होंने अपने जीवन को पूर्ण रूप से समाज की सेवा में अर्पित कर दिया।

x x x x

भारतीय नव जागरण में स्वामी श्रद्धानन्दजी की क्या भूमिका रही है इसका आकलन करने से पूर्व उन्नीसवीं सदी के भारत पर एक दृष्टि डाल लेना उचित होगा। यह सदी भारतीय मेधा की सबसे बड़ी पहचान है। वहाँ मात्र प्रश्न ही नहीं गूँजते बल्कि, उन प्रश्नों को उठाने वाले कर्म की तूफानी लहरों से जूझते भी दिखाई देते हैं। तमस के विरुद्ध बेलाग लड़ाई लड़ने और आत्म-बलिदान करने की अद्भुत क्षमता दिखाई देती है उनमें।

भले ही अपने स्वरूप में सामन्ती रहा हो पर सन् 1857 का स्वाधीनता-संग्राम न केवल नये भारत के निर्माण का प्रतीक है बल्कि उस जागृति का भी प्रतीक है, जो अपने ही भीतर पनप रही अन्धकार की शक्तियों से जूझने की राह दिखाती

है । अंग्रेजों [illegible] द्वारा हमारे स्वधीनता संग्राम को दबा जरूर दिया परन्तु उसी के कारण जहाँ एक ओर 'एक देश' की प्राचीन कल्पना फिर से रूप लेती दिखाई देती है, वहीं दूसरी ओर यह अनुभूति भी तीव्र होती है कि राजनैतिक स्वतंत्रता से पहले हम अपने ही अन्तर में पनप रहे नाना रूप अन्ध-विश्वासों, सामाजिक कुरीतियों और अविद्या के अन्धकार से मुक्ति पानी होगी । एक के बाद एक उभरने वाले सुधार आन्दोलन इसी अनुभूति का परिणाम है । ये आन्दोलन हमें अपने उज्ज्वल भूत और विकृत होते वर्तमान की समझ ही नहीं देते, बल्कि एक गरिमामय भविष्य बनाने की प्रेरणा भी देते हैं ।

सन् 1857 की क्रांति से पूर्व सन् 1828 ई० में नव जागरण के अग्रदूत राजा राममोहन राय ने जिस ब्रह्मसमाज की स्थापना की थी वह पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित था । उसने सती-प्रथा, बाल-विवाह, जन्ममूलक वर्ण-व्यवस्था आदि सामाजिक कुरीतियों का घोर विरोध किया और स्त्री शिक्षा, विधवा विवाह आदि का प्रबल समर्थन किया । बम्बई में इसी [illegible] आधार पर प्रार्थना समाज की नींव पड़ी । उसके नेताओं में प्रमुख थे डा० भंडारकर और न्यायमूर्ति रानाडे । इसके अतिरिक्त शेष उत्तर भारत में जिस आन्दोलन का व्यापक प्रभाव हुआ वह आर्य समाज के झण्डे के नीचे आरम्भ हुआ था । इस समाज की स्थापना स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सन् 1875 में की थी। स्वामीजी जन्म से गुजराती थे और राजा राममोहन राय के विपरीत प्राच्य सभ्यता के उपासक थे । वे संस्कृत के पण्डित थे । उन्होंने वेदों के आधार पर बाल विवाह, अनमेल विवाह, अशिक्षा, छूतछात, मूर्ति-पूजा और जन्ममूलक वर्ण-व्यवस्था का प्रबल विरोध किया और विधवा विवाह, अन्तर्जातीय विवाह, स्त्री शिक्षा, कर्मानुसार वर्ण-व्यवस्था तथा विदेश-यात्रा का पूर्ण समर्थन किया ।

मुंशीराम ने खूब देख-परख कर अपने को इसी उभरती हुई शक्ति के प्रति समर्पित कर दिया था और यह समर्पण सम्पूर्ण था । लेकिन जैसा हमने कहा है कि निरन्तर विकसित होती हुई शक्तियों को बाहरी संकटों से उतना डर नहीं

होता जितना आन्तरिक संकटों से। यह संकट पहले मतभेद के रूप में उभरता है। मतभेद जब तक रचनात्मक रूप में रहते हैं वे किसी भी समाज की शक्ति ही बनते हैं लेकिन जाने-अनजाने ऐसा भी होने लगता है कि उन मतभेदों के साथ व्यक्ति का अहम् जुड़ जाता है, तब वे ही मतभेद जो प्रगति का मार्ग प्रशस्त कर सकते थे, घुन बनकर समाज को अन्दर ही अन्दर कमजोर करने लगते हैं।

दुर्भाग्य से आर्य समाज के साथ भी कमोबेश ऐसा ही हुआ। वह शीघ्र ही दो दलों में बंट गया। इतिहास साक्षी है कि दोनों दलों के अग्रणी नेताओं ने उन मतभेदों को रचनात्मक रूप देने की पूरी कोशिश की। इसलिए जहां एक ओर पंजाब केसरी लाला लाजपतराय के सरंक्षण में दयानन्द एंग्लो वैदिक शिक्षा संस्थाओं का उदय हुआ वहीं दूसरी ओर स्वामी श्रद्धानन्द के प्रयत्नों से गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ने जन्म लिया। पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति ने, जिन्होंने अपने पिता महात्मा मुंशीराम को बहुत पास से देखा था और मतभेद होने पर अपनी स्वतन्त्र सत्ता बनाये रखने का साहस भी दिखाया था, उन्होंने अपनी पुस्तक 'मेरे पिता' में लिखा है "पिताजी के जीवन में क्रान्ति के बीज बहुत काल से बोये जा चुके थे। बरेली में ऋषि दयानन्द के दर्शनों से क्रान्ति का जो बीज बोया गया वह धीरे-धीरे अंकुरित होकर पल्लवित हो रहा था। उस घटना चक्र ने, जिसकी अन्तिम सामाजिक घटना, आर्य पथिक पं० लेखराम जी की मृत्यु के बाद आर्य समाज का महात्मा और कालिज पार्टियों में घरू संघर्ष का फिर भी फूट पड़ना था और अन्तिम पारिवारिक घटना डा० गुरुदत्तजी का विवाह था, पिताजी के जीवन को एकदम नई धारा में डाल दिया। क्रान्ति का प्रवाह तीव्र हो गया जिसकी टक्कर से घर-गिरस्थी की रिवाजी दीवारें धड़ाधड़ गिरने लगीं।[1] "

उन्होंने परिजनों के तीव्र विरोध करने पर भी डा० गुरुदत्त का विवाह एक विधवा श्रीमती सुमित्रा देवी से कराया था। इन्द्रजी के शब्दों में कहूंगा "उस समय विधवा विवाह हिन्दुओं के लिए ही नहीं,

---

१. अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द : मेरे पिता—इन्द्र विद्यावाचस्पति, पृ० ४८-४९

लाला मुंशीराम से अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द बनने तक की यह रोमांच यात्रा मनुष्य के अजेय विश्वासों और संकल्पों की विजय यात्रा है।

आर्य समाजियों के लिए भी एक नयी और साहसिक चीज थी। नयी और साहसिक चीज को कर डालना पिताजी का स्वभाव था।"[२]

इसी स्वभाव ने ही तो एक समय ऐश्वर्य और विलास में डूबे रहने वाले लाला मुंशीराम को अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द बना दिया। लाला मुंशीराम से अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द बनने तक की यह रोमांच यात्रा मनुष्य के अजेय विश्वासौ और संकल्पों की विजय यात्रा है। उन्होंने एक दिन प्रतिज्ञा की कि जब तक गुरुकुल बनाने के लिए तीस हजार रुपये इक्ट्ठा न कर लूंगा तब तक घर में पैर न रखूंगा। यद्यपि उस इतनी बड़ी राशि इक्ट्ठा करना, वह भी गुरुकुल केलिए, असम्भव जैसा था पर मुंशीरामजी ने 6 महीने के भीतर ही उस राशि की सीमा को पार कर लिया।

कालेज दल के मित्र देश में प्रचलित शिक्षा-पद्धति के सहारे आगे बढ़ना चाहते थे परन्तु महात्मा दल के मित्रों का विश्वास था कि हम प्राचीन वैदिक शिक्षा प्रणाली को अपनाकर स्वामी दयानन्द के सपनों के भारत का निर्माण कर सकते हैं। यह संघर्ष मांस खाने या न खाने के समर्थन विरोध के संघर्ष से कहीं तीव्र और उग्र था और दूरगामी भी। इसके पक्ष-विपक्ष में प्रचार करने से कितना लाभ, कितनी हानि हुई यह खतिया कर देखने की बात अभी रहने दें। अभी तो हम यही जानना चाहते हैं कि भारत के नवजागरण में स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा स्थापित गुरुकुल कांगड़ी का कितना योगदान रहा है या रहा भी है।

(क्रमशः)

२. वही पृष्ठ, ४७

सीमान्त गांधी—एक समर्पित जीवन

डा. मो. दि. पराडकर
कुलपति, बंबई विद्यापीठ

सीमान्त गांधी भारतरत्न खान अब्दुल गफ्फार खाँ के चले जाने से अजेय कर्मठता के प्राचीन युग का एक अध्याय समाप्त हुआ। 'बादशाह खाँ' यह उपाधि उन्हें लोगों ने प्रदान की थी। वे स्वयं अपने को 'खुदाई खिदमतगार' याने ईश्वर का सेवक ही कहते थे। क्योंकि जनसेवा को ही ईश्वर की सेवा मानना उनका प्रण रहा।

ईश्वर के इस सेवक का जन्म सन् 1891 में पेशावर के नजदीक उत्तमानजाई नामक गांव में हुआ था। इनके पिता बहिराम खान गांव के मुखिया थे, खुदा के सम्बन्ध में ही सोचने वाले शख्स। पहले इनको शिक्षा पेशावर के मिशन स्कूल में और बाद में अलीगढ़ में हुई। अलीगढ़ में ही डॉ. अंसारी अली बंधु और मौलाना अब्दुल कलम आजाद जैसे नेताओं के संपर्क में आए। इस युवक की जिन्दगी पर मौलाना आजाद के लेखन का बहुत असर पड़ा। गफ्फारखान खुद कहते थे, मुझे माँ से विरासत में धार्मिक

> **अलीगढ़ में ही डॉ. अंसारी अलीबंधु और मौलाना अब्दुल कलम आजाद जैसे नेताओं के संपर्क में आए।**

प्रवृत्ति और पिता से अहिंसा के प्रति आकर्षण प्राप्त हुआ।' मदरसे में उन्हें अध्ययन में रुचि मालूम नहीं हुई फिर भी भूमिति उनका प्रिय विषय रहा। उनके बचपन में उन के परिवार की माली हालत अच्छी रही। अलीगढ़ में आकर उनका सम्पर्क जैसा कि अभी बताया गया, बड़े नेताओं के साथ हुआ।

90 वर्षीय पिता बहिराम खान उन्हें जेल में पहुँचाने के लिए बडे गर्व के साथ मौजूद थे।

फिर भी शिक्षा में उन्हें रुचि नहीं मालूम हुई। लंदन जाने के इरादे से अलीगढ़ से बिदा होकर वे उत्त-मझाई पहुंचे। माँ से बिदा होने के समय उसकी आँखों से बहनेवाले आँसुओं को देखकर उन्होंने लन्दन जाने का इरादा बदल दिया। सन् 1912 में मेहेरखान से विवाह हुआ और सन् 1915 तक मेहेरखान ने उनका साथ दिया। पहले बेटे 'गनी' को फ्लू से बचाने केलिए उनकी माँ ने खुदा से कहा 'उसे बचाओ और मुझे ले लो'। संयोग से गनी बच गये और मेहरखान चल बसी। सन् 1920 में उनका दूसरा विवाह राबिया से हुआ। लेकिन वह भी हज की यात्रा से लौटते वक्त दुर्घटना का शिकार हो गई। तीसरा विवाह करना उन्होंने नामंजूर किया।

गफ्फार खान अपने पुश्तेनी इलाके में लौटकर उस समय बदनाम रौलट कानून के खिलाफ छेड़े गये आंदोलन में शरीक हुए। इस आंदोलन के मुकदमे ने उन्हें जेल में पहुँचा दिया। 90 वर्षीय पिता बहिराम खान उन्हें जेल में पहुँचाने के लिए बडे गर्व के साथ मौजूद थे। असल में भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास का एक स्वर्णिम अध्याय सीमा प्रदेश में लिखने का गौरव इस सेनानी को प्राप्त है। उनके खुदाई खिदमदगार संगठन ने पठानों में नई जान फूंक दी। खुदा के अलावा और किसी से डरना मजहब के खिलाफ है यह भावना पठानों में बादशाह खान के कारण पनप सकी। देखते-देखते संगठन बढ़ता गया। एक छोटे से इलाके में एक लाख खुदाई खिदमद-गारों की सेना खड़ी हो गयी। यह एक चमत्कार था। अंग्रेज अधिकारियों ने कहा—"अहिंसक पठान हिंसाचारी पठान से ज्यादा खतरनाक है।' 1919 में सशस्त्र प्रतिकार के आंदोलन में उत्तमझाई की सभा में तीस हजार रुपियों का सामूहिक दंड तुरन्त भरने वाले गफ्फारखान को एक बडे जिर्गे में बादशाह खान की उपाधि दी गयी। सन् 1921 में उन्होंने अपने मुल्क में आजाद शालाएँ शुरू कीं। सन् 1922 से लेकर सन् 1947 तक इस नेता का अधिकांश समय जेल में ही बीता। सन् 1928 में उन्होंने 'पख्तून' नाम के अखबार का आरम्भ किया।

सन् 1924 में लोगों ने उन्हें 'फख्रे-अफ़गान' की उपाधि से सम्मानित किया। यह याद रखना जरूरी है कि उन्हीं अहिंसक नेता के प्रभाव के कारण इनके मुल्क में मुसलमानों की आबादी के 95 फीसदी होने के बावजूद न फसाद होते थे न लूट-मार, अगर कुछ होता था तो वह अंग्रेजों के खिलाफ़ आन्दोलन था। खुदाई खिदमदगार संगठन के नियमों मे और राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के विचारों में बहुत बड़ी समता है।

सत्य के प्रति निष्ठा, मातृभूमि पर शीश चढ़ाने को तैयारी मानव जाति की सेवा को भावना और व्यक्तिगत स्वार्थ से परे रहने का प्रण ये सभी गुण इस खुदाई खिदमदगार संगठन की देन है।

सत्य के प्रति निष्ठा मातृभूमि पर शीश चढ़ाने की तैयारी मानव जाति की सेवा की भावना और व्यक्तिगत स्वार्थ से परे रहने का प्रण ये सभी गुण इस खुदाई खिदमदगार संगठन की देन है। स्मरण रखना होगा कि महात्मा गांधी के संपर्क में आने के पहले ही इन नियमों को

हिंदू मुस्लिम एकता का यह अनूठा चित्र था जिसके चितेरे थे बादशाह अब्दुल गफ्फार खान।

इस महान नेता ने अपनाने की बात सोची थी। पेशावर में 23 अप्रैल 1930 को जो भीषण हत्याकांड हुआ उसके विरोध में वायव्य सीमान्त मुल्क में बादशाहखान ने भडे पैमाने पर लोगों को इकट्ठा किया।

24 अप्रैल को बादशाहखान को फिर जेल में डाला गया। 1931 तक खुदाई खिदमतगारों की तादाद एक लाख से भी ऊपर पहुँची और बादशाहखान अफगानों के साथ पठानों के देवता बने। कोई अचरज नहीं कि उन दिनों मुसलमान देश-भक्तों पर गोलियाँ बरसाने के हुक्म के खिलाफ़ खड़ी होनेवाली हिन्दुओं की पलटण भी तैयार हुई। हिंदू मुस्लिम एकता का यह अनूठा चित्र था जिसके चितेरे थे बादशाह अब्दुल गफ्फार खान।

अहिंसक पठानों की फौज को काँग्रेस में मिला देनेवाले इस महान् नेता से महात्मा गांधी ने एक बार कहा, 'आप के पास लाख सैनिक हैं

अगर कांग्रेस के पास इस तरह की श्रद्धा से भरे हुए लोग रहते तो पूरा नक्शा बदल सकता था।' सन् 1946 के अप्रैल में पेशावर शहर में गुंडों ने पुलिस चौकी के सामने हिन्दुओं पर हमला करना शुरू कर दिया। तब खान अब्दुल गफ्फार खान का हुक्म मिलते ही बाईस घंटों के भीतर दस हज़ार 'लाल कुर्ता' पहने हुए खुदाई खिदमदगार मदद के लिए आ पहुंचे। और गुंडों के छक्के छूट गये।

यह सच है कि मानवता का नारा बुलंद करनेवाले इस अहिंसक नेता ने भारत विभाजन का जी जान से विरोध किया। काँग्रेस ने आखिरकार जब बंटवारा कबूल कर लिया तब लंबी आह भरते हुए इस नेता ने काँग्रेस के नेताओं से कहा, आप हमें भेड़ियों के सामने ढकेल रहे हैं। और हुआ भी वही। मुस्लिमलीग का दो राष्ट्रोंवाला सिद्धान्त मानना पठानों के मुल्क को मंजूर नहीं था हालांकि इस मुल्क की आबादी में मुसलमानों की संख्या 90 फी-सदी थी। उनकी पख्तुनिस्तान की माँग पाकिस्तान के शासनकर्ता भला कैसे मानते? नतीजा यह हुआ कि सन 1948 में पाकिस्तान के शासकों ने इस नेता को जेल की राह बतलायी। इस प्रकार 30 जुलाई 1947 को दिल्ली की भंगी कॉलनी में महात्मा गांधी से बड़े दुःख के साथ बिदा होने वाले बादशाह खान सन् 1948 में पाकिस्तान के कैदी बने। सन् 1964 तक बादशाह खान को पाकिस्तान के कैदी की ज़िन्दगी बितानी पड़ी। सन् 1964 में

चालीस वर्षों तक पाकिस्तान की सरकार से असहयोग का आंदोलन शांत भाव से चलानेवाले बादशाह खान उस धातु से बने थे जो टूटना जानता था; लेकिन झुकना नहीं।

बीमारी के कारण उन्हें लंदन भेजा गया। और तभी भारत सरकार एवं भारतीय नेताओं से फिर सम्पर्क स्थापित हुआ। अचरज की बात तो यह है कि चालीस वर्षों तक पाकिस्तान की सरकार से असहयोग का आंदोलन शांत भाव से चलानेवाले बादशाह खान उस धातु से बने थे जो टूटना जानता था; लेकिन झुकना नहीं।

"ऐसा कोई शख्स इस शताब्दी में पृथ्वी पर पैदा हुआ था इस बात का विश्वास आगे आने वाली पीढ़ियाँ नहीं कर पाएँगी।"

यह एक सचाई है कि पाकिस्तान के निर्माण के बाद सीमान्त गांधी का संगठन धीरे-धीरे दुर्बल होता गया। इस मुल्क के पाकिस्तानी शासक कयूमखान ने इस संगठन की आत्मा को दबोचने की कोशिश की। फिर भी पख्तून के बाजिब हकों के खातिर बादशाह खान पाकिस्तान से लगातार जूझते रहे। 1 अगस्त 196, से फरमरी 1970 के काल में सीमान्त गांधी भारत के मेहमान रहे थे। महात्मा गांधी की जन्म शताब्दी के इन दिनों में बादशाह खान को सम्मानित करके भारत ने सचमुच अपना फर्ज पूरा किया। वास्तव में देशभक्ति, बलिदान, साहस और मानव की एकात्मता को एक सीधी एवं सरल प्रतिमा के रूप में विराजमान बादशाह खान धन की ओर से बिलकुल लापरवाह थे। जैन मुनियों ने उन्हें एक लाख का पारितोषिक देना चाहा था, लेकिन उन्होंने कहा—'मैं इतनी राशि से क्या करूँगा मुझे इसकी कोई जरूरत नहीं है।' समाज के विकास के लिए एकत्रित धन राशि को चुनावों के मामले में खर्च करना नामंजूर करने वाले ऐसे नेता आज कहाँ मिलेंगे! असल में बादशाह खान की पूरी जिंदगी मानवता के लिए समर्पित थी। भारत के स्वंत्रता आँदोलन का वे चलता–फिरता इतिहास थे। सबसे बड़ी बात तो यह है कि वे एक सही इन्सान थे। डॉ. आईनस्टिन ने गांधीजी के निधन पर जो कहा उसी को उनके संबंध में दुहराना समीचीन होगा। आईनस्टिन ने उचित ही कहा था-"ऐसा कोई शख्स इस शताब्दी में पृथ्वी पर पैदा हुआ था इस बात का विश्वास आगे आने वाली पीढ़ियाँ नहीं कर पाएँगी।"

('भारती' से साभार)

●

मलयालम कविता

किससे बिदा लूँ ?

मूलकवि : प्रो० ओ. एन. वी. कुरुप
अनु० : वी. के. एस. नम्पूतिरी

(तीन दशकों के कॉलिज के अपने अध्यापक-जीवन से निवृत्त कवि द्वारा अपने बिदाई–समारोह के अवसर पर प्रस्तुत कविता। कवि अपने सहाध्यापकों और शिष्यों से पूछ रहे हैं—"किससे बिदा लूँ मैं ?")

प्रो० ओ. एन. वी. कुरुप
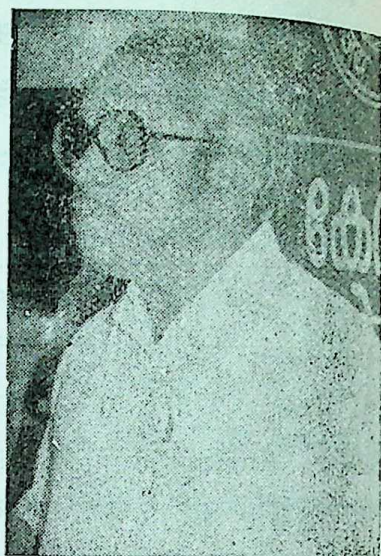
किससे बिदा लूँ मैं ?
उस बिन्दु में-जहाँ
माह और वर्ष
कदम-ब-कदम उठा आये—वहाँ
इस भीड़ भरी गाड़ी ने उतारा
मुझे व्यर्थ गठरी समझ,
अपना अमृत-पाथेय और
पुरानी गाँठ
छाती से लगाये-जब
खड़ा रहता मैं यहीं,
पथ, अपार के मधुर क्षण-सम
खड़े हाथ फैलाये,
न जाने किसके कर
आलिंगन कर रहे मुझे
नदी को सागर-सम-तब
किससे बिदा लूँ मैं, और
किससे बिदा लूँ ?

x x x

कितने सहयात्री
समहृदयवाले
ज्ञान-दु:खों के भागीदार
मधुराक्षरों में भरे मधु पीने को
लोभी हृदय, विलोल,
वे जिन्होंने
सामगीतों की साधना की
धरती से प्यार करने की
शिक्षा दी
मिट्टी की आर्द्र गहराई की
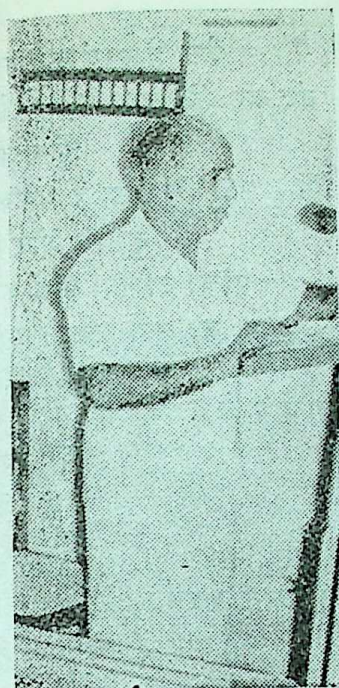
वी. के. एस. नम्पूतिरी

खोज की
नभ की दीप्त ऊँचाइयों की
तलाशी ली
सामने से बहते वे दृश्य—जब
अन्तर्नयनों को
करते आज भी आर्द्र
बीते कल, स्मृतियों में
जागते फिर से
सब सत्य ही रह जाते, तो
किससे विदा लूँ मैं, और
किससे बिदा लूँ ?

x x x x

किससे बिदा लूँ मैं ?
वाणी की अतल गहराई में
प्राच्य मनों की गाड़ी निधि ढूँढे-और
उस रस-तन्त्र-मन्त्र को ढूँढे-जो
जीवन का कटुनीर स्वेदन से
कर मीठे-और
उस वाङ्मय-सूर्य को ढूँढे-जो
अर्थ के ऊपर अर्थ-किरणें बिखेरते
फूल के फल को ढूँढे,
फल के तरु को ढूँढे,
आग के शीत को ढूँढे,
शीत की आग ढूँढे,
अणु के अणु में
सौर-मण्डल को ढूँढे,
मनुज में महाभारत को ढूँढे—
उस प्रिय पथ से ?-जहाँ
कितने मित्रों के साथ घूमे-फिरे-अब
किससे बिदा लूँ, और
किससे विदा लूँ मैं ?

x x x x

पश्चिम की ओर बढ़ती छायाएँ
भागती हैं पीछे मुड़ अनुक्षण
झिझकती हैं, सिकुड़ती हैं पगों में
ढूँढती हैं फिर गोद पूर्व की,
उन बागों से ?-जहाँ
इस सत्य को निहारता रहा
छाया नाटक सम,
उस गलियारी से ?-जहाँ
नन्हे पैर उछल-कूद भरते रहे

उन तरु-छायाओं से ?-जो
कड़ी धूप की गर्मी पीकर
चाँदनी-सम शीत बिछा रहे,
उन सीढ़ियों से ?-जहाँ
छोटे-छोटे दु:ख
निगूढ-मध्याह्न?-क्षुधा को
लोरी गा-गा सुलाकर
बिखरे धान-मणि ढूँढते,
उन आरण्य रम्यांगनों से ?-जहाँ
सर्वस्व जलाकर
नवयुग-निर्माण-यज्ञों में
मात्र नव्य दूब बनने को
तारुण्य के मोह स्वयं तप रहे-
अब
किससे बिदा लूँ मैं, और
किससे बिदा लूँ ?

x x x x

किससे बिदा लूँ ?
तप्त मेरी आत्मा में जब
तुम रहते डेरा डाले-और जब
बैठा हूँ स्वयं अनजान
बंद कर पंचेन्द्रियों के झरोखे-
और जब
बैठा हूँ अकेला
बुझाये ज़ोर से
पाँचों बत्तियाँ फूंक कर
जो सदा जलती रहीं
और जब
जग-मग जगमग हज़ारों दीप सा तुम
दिल में सदा,
जानता हूँ खुद
उस स्नेहधारा का छोटा कण मैं,
जिसे आर्द्र करती हैं बत्तियाँ ही
बाट जोहते खड़ा हूँ
उस धन्य मुहूर्त केलिए-जो
जल जलकर
एक बूँद प्रकाश सा फूट पडे
तब
किससे बिदा लूँ मैं ? और
किससे बिदा लूँ? ❀

अगर हम भारतीयों के नैसर्गिक अधिकारों के सिद्धान्त को स्वीकार करते हैं तो हमें उस भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करना चाहिए जो देश के सब से बडे हिस्सों में बोली जाती है।

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर

मैथिलीशरण गुप्त की 'यशोधरा' में बाल-जीवन

श्री. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी

मैथिलीशरण गुप्त

पाणिनी व्याकरण में 'वल-प्राणने' धातु परिगणित है; इसका अर्थ स्वांस लेना होता है। इस धातु से कर्ता-अर्थ में बाल: और बालक. रूपों की सिद्धि होती है। बाल या बालक का तदनुसार अर्थ बनता है—जीवन में या विश्व में आरंभिक स्वांस लेने वाला प्राणी। अमरकोश में लिखा है—'बालस्तु स्याद् माणवक:' अर्थात्—छोटे वच्चे को बाल कहा जाता है। अमरकोश में बाल शब्द के अनेक अर्थ दिये हैं, उन्हीं में से एक अर्थ 'अज्ञ'—कमजानकारी रखने वाला व्यक्ति भी बताया है। तथापि यह स्पष्ट है कि छोटी आयु के या छोटी बुद्धि के व्यक्ति को बाल कहा जाता है। अत: भारत की प्राचीन विचारधारा के अनुसार जिस सुदृढ़ जीवन-रूपी वृक्ष की कल्पना की गई है तथा जिसको ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वान-प्रस्थ एवं सन्यास आश्रमों में विभक्त किया गया है, बाल्यावस्था उस वृक्ष का सर्वप्रथम प्रस्फुटित होनवाला अंकुर मूलतन्तु है। जितनी ही गहराई में यह सिंचित होकर इसका
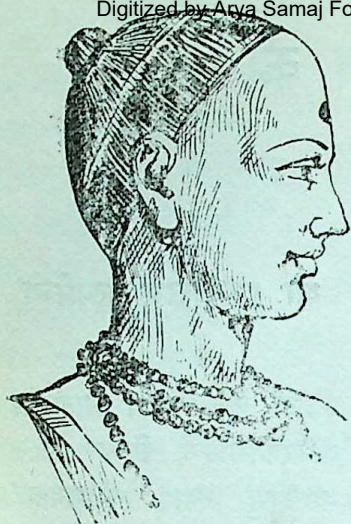
तुलसीदासजी

मूल विकसित होगा, जीवन-वृक्ष उतना ही सुदृढ़ एवं सुन्दर होगा ।

भारतीय संस्कृति में राम और कृष्ण का अप्रतिम स्थान है । आदि-कवि वाल्मीकि के वीरोचित गुणों से संपन्न राम मध्यकालीन भक्तिधारा में तुलसी के ब्रह्म निरूपित राम में रूपायित हो जाते हैं । राम का संपूर्ण जीवन आदर्शमय है, जिसके कारण उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम भी कहा जाता है । फिर भी, उन का बचपन आज भी प्रत्येक बालक के लिए अनुकरणीय है । तुलसीदासजी ने राम का बाल छवि चित्रण बहुत ही सुन्दर, मनोहारी एवं सजीव रूप में किया है । तुलसी के राम से भी

तुलसी के राम से भी अधिक बालकृष्ण के रूप-सौन्दर्य, उनकी बाल-सुलभ चेष्टाओं, विभिन्न सामाजिक संस्कारों, और अलौकिक घटनाओं के चित्रण में सूरदासजो ने काई कसर नहीं छोड़ी है ।

अधिक बालकृष्ण केरूप-सौन्दर्य, उन की बाल-सुलभ चेष्टाओं,विभिन्न सामाजिक संस्कारों और अलौकिक घटनाओं के चित्रण में सूरदासजी ने कोई कसर नहीं छोडी है । बालकृष्ण के रूप तथा मनोविज्ञान का जितना विस्तृत और गहनतम चित्रण सूरदास ने किया है, उतना अन्य किसी कवि ने नहीं । यह दुर्भाग्य ही

सूरदासजी

हिन्दी साहित्य के प्रवर्तक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने बाल-साहित्य-सृजन की दिशा में स्तुत्य प्रयास किये।

है कि जिस भावधारा को सूरदास ने गहराई से अवतरित किया, वह धारा आगे चलकर प्रायः सूख गयी और इतने लम्बे अन्तराल में कहीं बाल-जीवन की ऐसी सुखद मनोहारी झांकियाँ दृष्टिगत नहीं होती हैं।

स्वतंत्रता से पूर्व हिन्दी का नव-जागरण युग देशभक्तिपूर्ण साहित्य का समय था। उस समय में हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत जो भी कृतियाँ एवं रचनाएँ सृजित हुईं एवं प्रकाशित हुईं, उनमें केवल राष्ट्रीयता एवं स्वाधीनता का स्वर ही मूल रूप में था। उस काल विशेष में यदि हिन्दी बाल-साहित्य की समुचित प्रगति नहीं हुई, तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। फिर भी, बाल-साहित्य के लेखन का प्रारम्भ इसी राष्ट्रीय नव-जागरण के युग में हुआ। हिन्दी साहित्य के प्रवर्तक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने बाल-साहित्य-सृजन की दिशा में स्तुत्य प्रयास किये। इन्हीं का प्रभाव राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त पर भी पड़ा। फलस्वरुप गुप्तजी ने अपनी 'यशोधरा' काव्य कृति में राहुल की बाल चेष्टाओं का चित्रण बहुत ही मनोवैज्ञानिक ढंग से किया प्रतीत होता है।

यशोधरा के पति द्वारा त्याग दिये जाने एवं अज्ञात-काल के लिए अज्ञातवास का दुःख तो रहता ही है, पुत्र के पालन–पोषण व सुरक्षा का भार भी कम नहीं रहता। अतः वह अपने लाल की लीलाओं से अपना हृदय बहला लेती है –

दैव बनाए रक्खे,
राहुल, बेटा, विचित्र तेरी क्रीड़ा।
तनिक बहल जाती है,
उसमें मेरी अधीर पीड़ा व्रीड़ा।

राहुल के दुखित हो रुदन करने पर जननी यशोधरा स्वयं के भाग्य को कोसती है और उसे चुप कराने के प्रयत्न करती है –

चुप रह, चुप रह हाय अभागे
रोता है अब किसके आगे?

तुझे देख पाते वे रोता
मुझे छोड़ जाते क्यों सोता?
अब क्या होगा? तब कुछ होता
सोकर हम खोकर ही जागे!

चुप रह, चुप रह हाय अभागे ।

बेटा, मैं तो हूँ रोने को
तेरे सारे मल धोने को ।
हंस तू, है सब कुछ होने को,
भाग्य आएँगे फिर भी भागे ।

चुप रह, चुप रह हाय अभागे ।

यशोधरा शिशु राहुल को चन्द्र-खिलौना देने का कहकर अपने अपने पास बुलाती है —

यह छोटा-सा छौना ।
कितना उज्ज्वल, कैसा कोमल,
क्या ही मधूर सलौना
क्यों न हंसूँ-रोऊँ-गाऊँ मैं, लगा
मुझे यह टोंना ।
आर्यपुत्र, आओ, सचमुच मैं दूँगी
चन्द्र–खिलौना ।

शिशु राहुल अपने पैरों के बल खड़ा होने, चलने-फिरने लगा है, उसकी दुग्ध-दन्तावली प्रकट होने लगती है तब जननी यशोधरा का हृदय पुलकित हो उठता है—

किलक अरे, मैं नेक निहारूँ,
इन दांतों पर मोती वारूँ ।
पानी भर आया फूलों के मुँह
में आज सबेरे,
हाँ, गोपा का दूध जमा है
राहुल ! मुख में तेरे ।
लटपट चरण, चाल झटपट-सी
मन भाऊ है मेरे,
तू मेरी अंगुली धर अथवा मैं
तेरा कर धारूँ ।
इन दांतों पर मोती वारूँ ।

'आंचल में है दूध और आँखों में पानी' की नायिका यशोधरा का शिशु राहुल किलकारी भरते हुए 'अम्ब-अम्ब' कहने लगा है तथा अपनी परछाई से भयभीत-कंपकंपाने लगता है और अपनी माता की गोद में सिमट जाता है । उसका चित्र गुप्तजी ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है —

ओ माँ आगंन में धिरता था
कोई मेरे संग लगा,
आयो ज्योंही मैं अलिन्द में
छिपा न जाने कहाँ भगा
अम्ब भीति क्या ? मृषा भ्रान्ति वह,
रह तू रह तू प्रीति पगा ।

x x x

आ मेरे अवलम्ब, बता क्यों 'अम्ब-
अम्ब' कहता है ?
'पिता, पिता' कह बेटा, जिनसे
घर सूना रहता है ।
दहता भी है, बहता भी है, यह
जी सब सहता है ।

इस प्रकार यशोधरा राहुल की बाल-क्रीड़ाओं में डूबती-उतराती अपने हृदय को बहलाने का प्रयास करती है। राहुल के क्रमिक विकास के साथ ही साथ माँ यशोधरा का दुःख बंटने लगता है, किन्तु उसे राहुल के बाल-सुलभ प्रश्न विचलित करने लगते हैं—

राहुल पलकर जैसे-तैसे
करने लगा प्रश्न कुछ वैसे
मैं अबोध, उत्तर दूँ कैसे?

यह वैज्ञानिक सत्य है कि जिस प्रकार किसी भी प्रकार का गाना सुनने से पूर्व हमारे मन में एक विचार या कल्पना होती है, इसी प्रकार ध्वनि भी तंतु की भांति मानसिक गुण के चारों ओर एक लय और ताल के समान बहती रहती है तथा उसके बाद एक 'स्फोटन' की भांति भाषा का निर्माण हो जाता है और बालक बोलना सीख जाता है। प्रारम्भ में ध्वनि बच्चे की आन्तरिक जागृति में एक 'कंपकंपी—सी' प्रारम्भ कर देती है। बच्चे के आन्तरिक जीवन का यह अनुभव प्यार का अनुभव है और इसीलिए वह अपनी माँ से एक पल भी दूर रहना नहीं चाहता। इस प्रकार मानसिक शक्ति की अवतारण होने पर उसमें जिज्ञासा भाव उत्पन्न होता है। राहुल अपनी माता यशोधरा के समक्ष प्रश्नों की झड़ी लगा देता है, शिशु राहुल पपीहे—चातक की ध्वनि सुनकर उसके विषय में जानने की उत्कंठा से तुरन्त प्रश्न करता है।

"यह पक्षी कौन बोलता है मीठा बड़ा।"

'बेटा यह चातक है' कहकर उसकी माता बेटे की जिज्ञासा का शमन करती है। शिशु के कुछ बड़े होने पर धीरे-धीरे जिज्ञासामयी भावना क्रियात्मक हो उठती है और उसमें वैज्ञानिक बातों को भी जानने की अभिरुचि जागृत हो जाती है। बच्चों को प्रत्येक वस्तु के प्रति उत्सुक्ता बहुत होती है, प्रत्येक बातको जानने सुनने और देखने को उत्कंठा होती है। राहुल भी अपनी माता यशोधरा से पूछता है - "अम्ब! मेरी बात कैसे तुझ तक जाती है?" तब यशोधरा उत्तर देती है—"बेटा! वह वायु पर बैठ उड जाती है।" यशोधरा समय-समय पर राहुल को कहानी सुनाती हैं, बहलाकर भोजन कराती है और लोरी गाकर उसे सुलाती है,यह सब उसके जीवन के अभिन्न अंग बन गये

हैं इसलिये राहुल भी अल्पायु में ही माता के सुख-दुःख का भागीदार बनना चाहता है।

माँ, कह एक कहानी
बेटा, समझ लिया क्या तूने
मुझ को अपनी नानी ?

राहुल : अम्ब, मन करता है, पत्र लिखूँ तात को।

यशोधरा : क्या लिखेगा बेटा, सुनूँ मैं भी उस बात को।

राहुल : *मैं लिखूंगा, तात, तुम तपते*
हो बन में।
हम हैं तुम्हारा नाम जपते भवन में।
आओ यहाँ, अथवा बुला लो
हम को वहाँ।

यशोधरा : किन्तु बेटा, कौन जाने तेरे तात हैं कहाँ ?

राहुल : *अम्ब, क्या पिता ने यहीं*
जन्म नहीं पाया है ?
क्यों स्वदेश छोड, परदेश
उन्हें भाया है ?

यशोधरा : *बेटा, घर छोड वे गये हैं*
अन्य दृष्टि से.
छोड लिया नाता है उन्होंने सब
सृष्टि से।
हृदय विशाल ओर उनका उदार है,
विश्व को बनाना चाहता जो परिवार
है।

x x x

गाती है मेरे लिये, रोती उनके अर्थ,
हम दोनों के बीच तू पागल-सो
असमर्थ।

इस प्रकार बालक राहुल आयु की प्रौढता की ओर बढता है और उसकी समझ विकसित होती है। समस्या के कारण या कार्य को निश्चित रूप से जानने का प्रयास भी तभी आरंभ होतो है। इस कार्य कारण संबन्ध का स्पष्ट ठोस आधार खोज लेना प्रत्येक बालक का लक्ष्य होता है और समाधान प्राप्त कर लेने के उपरान्त ही सन्तोष की अनुभूति होती है। अब राहुल किशोर होने को है, उसी समय उसके पिता गौतम बुद्ध भिक्षु के भेष में उनके घर आते हैं। सात्विक माता यशोधरा द्वारा पालित-पोषित राहुल अपनी माता के स्वर में स्वर मिलाकर गौतम बुद्ध के चरणों में पडकर अनुरोध करता है—

"पैतृक दाय दो, निज शील सिखला
दो मुझे।

राहुल अपनी माता के संस्कारों के कारण तथा अपनी माँ की अबला जीवन की कहानी के फल-स्वरूप न अब शूर-वीर होने का आकांक्षी है और न राजकीय वैभव का ही, सांसारिक सुखों के प्रति भी

उसे कोई मोह नहीं रह गया है इसलिए वह अपने पिता से मिलने पर प्रार्थना करता है -

"असत से सत में, तिमिर से ज्योति
में लाओ मुझे।
मृत्यु से तुम अमृत में हैं पूज्य,
पहुँचाओ मुझे।"

इस प्रकार राहुल अपने पिता का संसर्ग-सुख भिक्षु बनकर प्राप्त करता है, उसी के कारण यशोधरा भी अपनी महत्ता को प्राप्त करती है। राहुल ही उसके जोवन का संबल बन गया है। यशोधरा के जाया एवं जननी के द्वन्द्व में जननी के रूप को महत्व मिला और 'यशोधरा' काव्य को ये पंक्तियाँ अमर हो गई -

"अबला जीवन हाय, तुम्हारी यही
कहानी।
आंचल में है दूध और आंखों में
पानी॥"

20, बागपुरा, सांवेर रोड,
उज्जैन (म. प्र.)

(पृष्ठ 2 से आगे)

सब कुछ बलिदान किया था। कहते हैं कि वे जेल नहीं गये। वे इसलिए जेल से बचे रहे कि गांधीजी ने उन्हें जेल जाने से रोका था। जैसे प्रो० एम. पी. मन्मथन कहा करते हैं, उन दिनों के वे हिन्दी प्रचारक फटा पुराना खादी का कपडा पहने, भूख प्यास सहते हुए, हाथ में लालटेन लिये गाँवों की पगडंडियों से मीलों चलकर, पुलिस की नजर बचा कर बच्चों और प्रौढों में हिन्दी पढने की अभिप्रेरणा उत्पन्न करते थे और प्रतिफल की परवाह किये बिना हिन्दी पढाते थे। उस जमाने के जो प्रचारक आज जीवित हैं उनमें अधिकांश आर्थिक संकट में हैं। उनको उसी तरह सम्मानित और आश्वस्त करना है जिस तरह स्वतंत्रता संग्राम के अन्य सेनानियों को सम्मानित और आश्वस्त किया गया है। यह राष्ट्र का महान कर्तव्य है। *

पत्रिका सम्बन्धी घोषणा पत्र

फार्म 4

1. प्रकाशन स्थान	:	तिरुवनन्तपुरम
2. प्रकाशन अवधि	:	मासिक
3. मुद्रक का नाम	:	एम. के. वेलायुधन नायर
क्या, भारत का नागरिक है	:	हाँ, भारतीय
पता	:	मंत्री, केरल हिन्दी प्रचार सभा, तिरुवनन्तपुरम-695 014
4. प्रकाशक का नाम	:	एम. के. वेलायुधन नायर
क्या, भारत का नागरिक है	:	हाँ, भारतीय
पता	:	मंत्री, केरल हिन्दी प्रचार सभा, तिरुवनन्तपुरम-695 014
5. संपादक का नाम	:	के. जी. बालकृष्ण पिल्लै
क्या, भारत का नागरिक है	:	हाँ, भारतीय
पता	:	के. जी. बालकृष्ण पिल्लै, केरल हिन्दी प्रचार सभा, तिरुवनन्तपुरम-695 014
6. उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार-पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों	}	केरल हिन्दी प्रचार सभा, तिरुवनन्तपुरम-695 014

मैं, एम. के. वेलायुधन नायर, एतद्द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

ता० 1–3–1988 (ह०)

प्रकाशक के हस्ताक्षर